दृष्टि

The Vision

अर्थव्यवस्था

by

D. KUMAR

2013

भारतीय अर्थव्यवस्था: कक्षा योजना
(Indian Economy: Class Plan)

कक्षा संख्या (Class No.)	इकाई संख्या (Unit No.)	विषय (Topic)	उप-विषय (Sub-topics)
1, 2	1	अर्थव्यवस्था: आरम्भिक परिचय (Economy: An Overview)	अर्थव्यवस्था (Economy) क्या है? अर्थव्यवस्था के प्रकार, बाज़ार में वस्तुओं की कीमत (Price) कैसे निर्धारित होती है? विश्व के विभिन्न देशों का उनकी अर्थव्यवस्थाओं के अनुसार वर्गीकरण, उत्पादन के विभिन्न कारक (Different Factors of Production); उत्पादन के विभिन्न क्षेत्र (Different Sectors of Production), भारतीय अर्थव्यवस्था की विशेषताएँ, भारत में गरीबी (Poverty) की समस्या, आय का चक्रीय प्रवाह (Cyclic flow of Income) (कीमतों में वृद्धि होने के कारण, इत्यादि)। उत्पादन, रोज़गार व गरीबी में अंतर्संबंध (Inter-relation among Production, Employment and Poverty); उत्पादन, बचत व निवेश में अंतर्संबंध (Inter-relation among Production, Saving and Investment); उत्पादन (Production) व उपभोग (Consumption) में शासन-तंत्र की भूमिका; विदेशी व्यापार (Foreign Trade) की धारणा तथा घरेलू अर्थव्यवस्था पर इसके प्रभाव; विदेशी निवेश (Foreign Investment) की धारणा तथा घरेलू अर्थव्यवस्था पर इसके प्रभाव।
3, 4	2	आयोजन (Planning)	भारत में आयोजन (Planning) का इतिहास व महत्व, आयोजन (Planning) के विभिन्न प्रकार, योजना आयोग (Planning Commission), राष्ट्रीय विकास परिषद् (NDC-National Development Council), 1991 से पूर्व की पंचवर्षीय योजनाओं का संक्षिप्त परिचय व मूल्यांकन।
5	2	1991 के बाद का आयोजन तथा औद्योगिक क्षेत्र (Planning after 1991 and Industrial Sector)	1991 के बाद आयोजन में आए संरचनात्मक बदलाव तथा उनका मूल्यांकन; [illegible] आयोजन प्रक्रिया। औद्योगिक सुधार (Industrial Reforms), लघु क्षेत्र: [illegible] और चुनौतियाँ, सार्वजनिक क्षेत्र (Public Sector), भारतीय अर्थव्यवस्था [illegible] समस्याएँ; विनिवेश (Disinvestment) की नीति, औद्योगिक रुग्णता (Industrial Sickness) की समस्या, हालिया समय में औद्योगिक वृद्धि दर में गिरावट के निहितार्थ, श्रम समस्याएँ (Labour Problems इत्यादि।
6, 7	3	आर्थिक/उत्पादन लेखांकन (Economic/Production Accounting)h	सूक्ष्म स्तर (Micro Level) का आर्थिक लेखांकन तथा उसके लिए आगत-निर्गत विधि (Input-Output Method) का प्रयोग। समष्टि स्तर (Macro Level) का आर्थिक लेखांकन- राष्ट्रीय आय (National Income) की विभिन्न धारणाएँ, जैसे-सकल घरेलू उत्पाद (GDP-Gross Domestic Product), सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP-Gross National Product), शुद्ध घरेलू उत्पाद (NDP-Net Domestic Product), शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद (NNP-Net National Product) इत्यादि; क्रय शक्ति क्षमता (Purchasing Power Parity) के आधार पर राष्ट्रीय आय की गणना; राष्ट्रीय आय में अनिवासी भारतीयों (NRIs- Non-Resident Indians), भारतीय मूल के निवासियों (PIOs- Perosns of Indian origin), समुद्रपारीय निगम निकाय (OCB-Oversees Corporate Bodies) का योगदान; हरित लेखांकन (Green Accounting), हरित सकल घरेलू उत्पाद (Green GDP) इत्यादि।

641, प्रथम तल, मुखर्जी नगर, दिल्ली-9. दूरभाष : 27604128, 8800367905, 9891761002, 9560362210, 9313988616
ई-मेल: drishtiacademy@gmail.com, वेबसाइट: drishtifoundation.com

Copyright – Drishti The Vision Foundation

8, 9, 10	4	सामाजिक-आर्थिक लेखांकन (Socio-Economic Accounting)	लॉरेंज वक्र (Lorenz Curve), गिनी गुणांक (Gini Coefficient), मानव विकास सूचकांक (HDI-Human Development Index), लैंगिक विकास सूचकांक (GDI-Gender-related Development Index), लैंगिक सशक्तीकरण के उपाय (Gender Empowerment Measures), जीवन की शारीरिक गुणवत्ता का सूचकांक (PQLI-Physical Quality of Life Index), जीवन-गुणवत्ता का सूचकांक (QLI-Quality of Life Index), संविधान के अनुच्छेद 14, 19, 21 तथा 39 अर्थव्यवस्था की दृष्टि से महत्त्व; मानवीय निर्धनता सूचकांक-1 (HPI-1-Human Poverty Index-1), मानवीय निर्धनता सूचकांक-2 (HPI-2-Human Poverty Index-2), बहुआयामी निर्धनता सूचकांक (Multidimensional Poverty Index), फिलिप्स वक्र (Phillips Curve), दयनीयता/विपन्नता सूचकांक (Misery Index), त्याग अनुपात (Sacrifice Ratio), एंजल्स वक्र (Engel's Curve), कुज़्नेत्स वक्र (Kuznets Curve)।
11	5	पूंजी निर्माण (Capital Formation)	बचत, निवेश तथा संवृद्धि के निर्धारक-तत्त्व (Determinants of Saving, Investment and Growth); पूंजी-निर्गत अनुपात (COR-Capital Output Ratio) तथा वर्धमान पूंजी निर्गत अनुपात (ICOR-Incremental Capital Output Ratio) के निर्धारक-तत्त्व। भारत में पूंजी निर्माण (Capital Formation) से जुड़ी प्रमुख समस्याएँ तथा उनके समाधान के उपाय।
12, 13, 14	6	बैंकिंग तथा वित्त प्रणाली (Banking and Finance)	पूंजी के रूप-टियर-1, टियर-2; आरक्षित नकद अनुपात (CRR-Cash Reserve Ratio), वैधानिक तरलता अनुपात (SLR-Statutory Liquidity Ratio), बैंक दर/पुनर्बट्टा दर (BR-Bank Rate/Rediscount Rate) आदि, रेपो दर (Repo Rate), प्रतिलोम रेपो दर (Reverse Repo Rate), खुले बाज़ार की क्रियाएँ (Open Market Operations), गैर-निष्पादक परिसंपत्तियाँ (Non Performing Assets), पूंजी जोखिम परिसंपत्ति अनुपात (CRAR-Capital Risk-weighted Assets Ratio), पूंजी पर्याप्तता अनुपात (CAR-Capital Adequacy Ratio), वरीयता क्षेत्र वित्तीयन/ऋणदान (Priority Sector Lending), विभेदकारी ब्याज-दर स्कीम (Differential Rate of Interest Scheme), स्वयं सहायता समूहों (SHG-Self Help Groups) तथा बैंकों को जोड़ने का कार्यक्रम, बैंकिंग क्षेत्र सुधार (Banking Reforms)
15	7	शेयर बाज़ार (Share Market)	शेयर बाज़ार से जुड़ी शब्दावली; सेबी (SEBI-Securities and Exchange Board of India): कार्य, महत्व, आलोचना और प्रस्तावित सुधार, राउंड ट्रिपिंग (Round Tripping) की अवधारणा इसका भारतीय संदर्भ में महत्व।
16, 17, 18	8	मौद्रिक नीति (Monetary Policy)	मौद्रिक नीति: उद्देश्य, प्रकार और उपाय; मुद्रा और मुद्रास्फीति (Inflation) की अवधारणा; भारतीय रिज़र्व बैंक (RBI-Reserve Bank of India) के कार्य, विशेषकर मुद्रा नियंत्रण संबंधी भूमिका; ऋण निर्माण और नियंत्रण, सब-प्राइम संकट, अमेरिकी आर्थिक मंदी (Recession) की प्रकृति, प्रभाव, कारण और उबरने के विभिन्न उपाय; समूह 20 (G 20 Group 20) का महत्व और शिखर वार्ताएँ।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

19, 20	9	राजकोषीय नीति (Fiscal Policy)	कर ढाँचा (Tax Structure) और उससे जुड़ी विभिन्न शब्दावलियाँ; मूल्य-वर्धित कर (Value Added Tax), प्रत्यक्ष कर संहिता (Direct Tax Code); वस्तु तथा सेवा कर (Goods and Service Tax): अवधारणा और महत्व; केंद्र-राज्य वित्तीय सम्बन्ध; तेरहवें वित्त आयोग की अनुशंसाएँ; बजट और राजकोषीय नीति की समीक्षा; विभिन्न घाटे जैसे राजस्व घाटा (Revenue Deficit), राजकोषीय घाटा (Fiscal Deficit), बजट घाटा (Budget Deficit), प्राथमिक घाटा (Primary Deficit), मौद्रीकृत घाटा (Monetised Deficit); घाटे का वित्तीय प्रबंधन (Deficit Financing), वर्तमान राजकोषीय नीति की समीक्षा विशेषकर राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजटीय प्रबंधन अधिनियम 2003/(FRBM Act- Fiscal Responsibility and Budgetary Management Act) के सन्दर्भ में।
21, 22, 23	10	भारत के अंतर्राष्ट्रीय जगत से आर्थिक सम्बन्ध-1 (India's Economic Relations with the International Community-1)	भुगतान संतुलन (BOP-Balance of Payments) की अवधारणा और सम्बद्ध मुद्दे; व्यापार घाटा (Trade Deficit), चालू खाते का घाटा (Current Account Deficit) और अन्य घाटे, भुगतान संतुलन से जुड़े समसामयिक मुद्दे, भारतीय विदेश व्यापार (Foreign Trade) की दशा और दिशा, विदेशी निवेश (Foreign Investment) का महत्व, विशेषकर संवृद्धि और गरीबी तथा बेरोजगारी उन्मूलन हेतु; 2009-2014 के लिए घोषित विदेश व्यापार नीति की समीक्षा, विनिमय दर (Exchange Rate) की अवधारणा, प्रकार और महत्व; स्थिर परिवर्तनशील और प्रबंधनीय विदेशी मुद्रा व्यवस्था; परिवर्तनीयता (Convertibility): व्यापार खाते (Trade account), चालू खाते (Current account) और पूंजीगत खाते (Capital account) की परिवर्तनीयता से आशय; तारापोर कमिटी-1 और 2 की तत्संबंधी अनुशंसाएं (Recommendations)।
24, 25, 26	11	भारत के अंतर्राष्ट्रीय जगत से आर्थिक सम्बन्ध-2 (India's Economic Relations with the International Community-2)	भूमंडलीकरण (Globalisation) से आशय, इसका महत्व और इस पर उठाये गये सवाल, विश्व व्यापार संगठन (World Trade Organisation): सिंगापुर और दोहा दौर के निष्कर्ष- कृषि और गैर कृषि उत्पादों की बाजार पहुँच का मुद्दा; क्षेत्रीय व्यापार समझौते-मुक्त व्यापार क्षेत्र (Free Trade Area), कस्टम संघ (Custom Union), साझा बाजार (Common Market) आदि, 1991 की नवीन आर्थिक नीति; विशेष आर्थिक क्षेत्रों (Special Economic Zones), निर्यात संवर्धन क्षेत्रों (Export Promotion Zones)का निर्माण और इनका तार्किक आधार, मध्यम, लघु और माइक्रो क्षेत्र के उद्यमों (Medium, Small and Micro Sector Enterprises) के लिए नीति निर्माण, प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDI Foreign Direct Investment) बढ़ाने के उपाय, निजीकरण (Privatisation) का प्रभाव
27	12	बेरोजगारी (Unemployment)	भारत में बेरोजगारी के प्रकार, तत्संबंधी आंकड़ों का विश्लेषण, बेरोजगारी के कारण और इसको दूर करने के सरकारी प्रयत्नों की समीक्षा
28	13	गरीबी (Poverty)	गरीबी की अवधारणा और इसके प्रकार, भारत में गरीबी के आँकड़ों का विश्लेषण और गरीबी के कारण, गरीबी उन्मूलन की रणनीति: नीचे टपकन सिद्धांत (Trickle Down Theory) और निर्देशित पैकेज कार्यक्रम (Targetted Package Programme) में तुलना के बिंदु।
29, 30	14	शेष विषय तथा प्रश्नोत्तर सत्र (Remaining Topics and Question-Answer Sessions)	केंद्रीय बजट (Central Budget) का विश्लेषण; आर्थिक सर्वेक्षण (Economic Survey) का विश्लेषण; अन्य सभी प्रश्नों के लिए प्रश्नोत्तर सत्र (Question-Answer Session)।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–1 (Unit–1)

अर्थव्यवस्था : एक परिचय
(Economy : An Introduction)

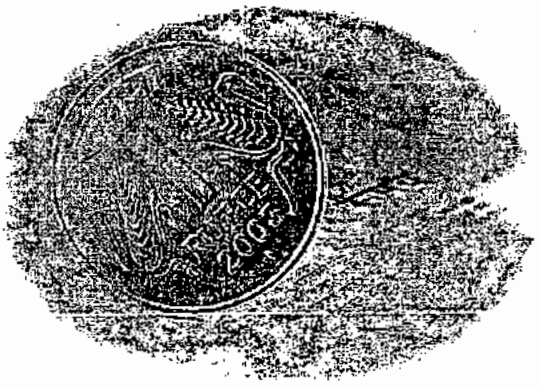

कक्षा संख्या : 1, 2

1.1 अर्थव्यवस्था (Economy) क्या है?

1.2 अर्थव्यवस्था के प्रकार।

1.3 बाज़ार में वस्तुओं की कीमत (Price) कैसे निर्धारित होती है?

1.4 विभिन्न देशों का उनकी अर्थव्यवस्थाओं के अनुसार वर्गीकरण।

1.5 उत्पादन के विभिन्न कारक (Different Factors of Production)

1.6 उत्पादन के विभिन्न क्षेत्र (Different Sectors of Production)

1.7 भारतीय अर्थव्यवस्था की विशेषताएँ।

1.8 भारत में गरीबी (Poverty) की समस्या।

1.9 गरीबी रेखा (Poverty Line) की अवधारणा।

1.10 गरीबी के विभिन्न माप (Different Measurements of Poverty)

1.11 गरीबी के अनुमान (Estimates of Poverty)

1.12 अखिल भारतीय स्तर पर गरीबी से जुड़े कुछ अद्यतन (Latest) अनुमान।

1.13 गरीबी के कारण (Causes of Poverty)

1.14 आय का चक्रीय प्रवाह (Cyclic Flow of Income)

641, प्रथम तल, मुखर्जी नगर, दिल्ली-9. दूरभाष : 27604128, 8800367905, 9891761002, 9560362210, 9313988616
ई-मेल: drishtiacademy@gmail.com, वेबसाइट: drishtifoundation.com

1.1 'अर्थव्यवस्था' क्या है? *(What is 'Economy'?)*

किसी राष्ट्र द्वारा अपने नागरिकों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों (Socio-economic conditions) में सुधार करने के उद्देश्य से, उपलब्ध संसाधनों (Available Resources) का समुचित नियोजन (Appropriate Planning) करते हुए अर्थ (Money) को केन्द्र में रखकर बनाई गई व्यवस्था ही अर्थव्यवस्था (Economy) कहलाती है। वास्तव में 'अर्थव्यवस्था' एक अधूरा शब्द है जब तक कि इससे पूर्व किसी देश या किसी क्षेत्र विशेष का नाम न जोड़ा जाए, जैसे- भारतीय अर्थव्यवस्था, चीनी अर्थव्यवस्था, अमेरिकी अर्थव्यवस्था, विकासशील विश्व (Developing world) की अर्थव्यवस्था इत्यादि। अर्थव्यवस्था किसी देश या क्षेत्र विशेष में अर्थशास्त्र (Economics) का गतिशील (Dynamic) चित्र है जो किसी विशेष अवधि तक ही सीमित होता है। यदि हम कहते हैं- 'समसामयिक (Contemporary) भारतीय अर्थव्यवस्था' तो इसका तात्पर्य होता है- वर्तमान समय में भारत की सभी आर्थिक गतिविधियों का वर्णन।

1.2 अर्थव्यवस्था के प्रकार (*Types of Economy*)

अर्थव्यवस्था के मूल में जो विचारधारा (Ideology), 'वाद' (Ism) या दर्शन (Philosophy) कार्य करता है, वही अर्थव्यवस्था का मूल चरित्र या प्रकार निर्धारित करता है। अर्थव्यवस्था के प्रकारों पर विवाद की शुरुआत ऐडम स्मिथ की पुस्तक 'द वेल्थ ऑफ नेशन्स' (The Wealth of Nations - 1776) से मानी जाती है। इस विषय पर एकमत होने में विश्व को 200 से भी अधिक वर्ष लग गए। समकालीन विश्व में अर्थव्यवस्था के मूलतः तीन प्रकार अस्तित्व में हैं-

अर्थव्यवस्था के प्रकार (Type of Economy)

- **पूंजीवादी अर्थव्यवस्था (Capitalist Economy)**
  - अहस्तक्षेप की नीति (Laissez Faire)
  - प्रतियोगिता पर बल (Emphasis on Competition)
  - मांग व आपूर्ति का नियम (Law of Demand & Supply)
  - बाज़ार की शक्तियाँ केंद्र में (Market Mechanism)
  - श्रम विभाजन व विनिमय (Division of Labour & Exchange)
- **समाजवादी अर्थव्यवस्था (Socialist Economy)**
  - समाजवादी व साम्यवादी प्रारूप (Socialist & Communist Formats)
  - बाज़ार, बाज़ार की शक्तियाँ, मांग-आपूर्ति, प्रतियोगिता जैसे तत्व अनुपस्थित (Absence of market forces, Demand-Supply rule, Competition etc.)
  - योग्यता और आवश्यकता के अनुसार वितरण (Distribution as per need and ability)
  - अंतिम निर्णायक : 'सरकार' (Government : The final decision maker)
  - निजी स्वामित्व की धारणा नहीं (No private ownership)
- **मिश्रित अर्थव्यवस्था (Mixed Economy)**
  - राज्य और निजी दोनों क्षेत्रों का स्वामित्व (State & Private Ownership)
  - बाज़ार और गैर-बाज़ार दोनों घटक एक साथ (Presence of Market and Non-market Factors at the same time)
  - प्रशासित मूल्य पद्धति (Administered Price Mechanism)
  - कल्याणकारी अर्थव्यवस्था (Welfare Economy)

1.3 वस्तुओं की कीमत कैसे निर्धारित होती है? *(How are the prices of the goods determined?)*

कीमतों का निर्धारण (Determination of Prices)

- बाज़ार कीमत क्रियाविधि (Market Price Mechanism)
- प्रशासित कीमत क्रियाविधि (Administered Price Mechanism)
- मिश्रित कीमत क्रियाविधि (Mixed Price Mechanism)

- **बाज़ार कीमत क्रियाविधि (MPM - Market Price Mechanism) :** इसमें बाज़ार शक्तियों अर्थात् मांग व आपूर्ति (Demand and Supply) द्वारा कीमत निर्धारित होती है।

- **प्रशासित कीमत क्रियाविधि (APM - Administered Price Mechanism)** : इसमें प्रशासनिक शक्तियों (Administrative Powers) द्वारा कीमत निर्धारित होती है।
- **मिश्रित कीमत क्रियाविधि (Mixed Price Mechanism)** : इस क्रियाविधि में बुनियादी निर्णय (Fundamental Decisions) प्रशासनिक शक्तियों द्वारा तथा गौण निर्णय (Secondary Decisions) बाज़ार द्वारा लिये जाते हैं।

भारत में 1950-1991 तक मिश्रित कीमत क्रियाविधि (Mixed Price Mechanism) लागू थी लेकिन 1991 के बाद क्रियाविधि तो मिश्रित ही रही लेकिन उसकी रणनीति में परिवर्तन की कोशिश की गई है। इसलिए, पुरानी आर्थिक प्रणाली में बदलाव आया है।

1.4 विभिन्न देशों का उनकी अर्थव्यवस्थाओं के अनुसार वर्गीकरण *(Classification of the different countries according to their economies)*

पहली दुनिया के देश (First World Countries): विकसित (Developed) देशों का समूह, जहाँ बाज़ार कीमत क्रियाविधि (Market Price Mechanism) प्रचलित अर्थव्यवस्था की प्रवृत्ति के आधार पर विशिष्ट देशों को चार प्रकारों में बाँटा जाता है– पहली दुनिया के देश कहलाते हैं, जैसे- अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया आदि।

दूसरी दुनिया के देश (Second World Countries): विभिन्न देशों का वह समूह, जहाँ प्रशासित कीमत क्रियाविधि (Administrative Price Mechanism) है, दूसरी दुनिया के देश कहलाते हैं, जैसे- 1990 से पहले का सोवियत संघ, वर्तमान चीन आदि। आजकल ऐसी अर्थव्यवस्था संक्रमणशील अर्थव्यवस्थाएं (Transitional economies) कहलाती हैं क्योंकि ये अर्थव्यवस्थाएँ धीरे-धीरे खुले बाजार (Open Market) की नीति अपना रही हैं।

तीसरी दुनिया के देश (Third World Countries) : द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद आजाद हुए अधिकांश देशों ने विकास के लिए मिश्रित अर्थव्यवस्था (Mixed Economy) को अपनाया, जिन्हें तीसरी दुनिया के देश कहते हैं, जैसे- भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका, नेपाल आदि। इन्हें 'Less developed countries - LDC' भी कहते हैं।

चौथी दुनिया के देश (Fourth World Countries) : विश्व में कई देशों का एक समूह है जो विकास के मार्ग के लिए द्वंद्व (Conflict) की स्थिति में हैं। ऐसे देशों में प्रगति के पथ पर यात्रा अभी शुरू भी नहीं हुई है। इन्हें अति निर्धन देश (Least developed countries) कहते हैं, जैसे- युगांडा, सूडान, रवांडा आदि।

1.5 उत्पादन के कारक *(Factors of Production)*

उत्पादन के कारक का अर्थ है– वे सभी तत्व जिनके एक साथ मिलने से उत्पादन अर्थात् मूल्य-वृद्धि (Value addition) का कार्य पूरा होता है। ये चार माने जाते हैं–

उत्पादन के कारक (Factors of Procution)

- श्रम (Labour)
  - शारीरिक श्रम (Physical Labour)
  - बौद्धिक श्रम (Intellectual Labour)
- भूमि (Land)
- पूंजी (Capital)
  - भौतिक पूंजी (Physical Capital)
  - वित्तीय पूंजी (Financial Capital)
  - बौद्धिक पूंजी (Intellectual Capital)
- उद्यमशीलता (Enterprenecurship)

(i) श्रम (Labour) : मानव शरीर या बुद्धि में निहित कार्य-क्षमता द्वारा किए गए प्रयत्नों को श्रम (Labour) कहते हैं।

(ii) भूमि (Land) : नैसर्गिक एवं प्राकृतिक संसाधनों (Natural Resources) में छिपी कार्यक्षमता को भूमि कहते हैं।

(iii) पूंजी (Capital) : मानव निर्मित संसाधनों (Man made resources) में निहित कार्यक्षमता को पूंजी कहते हैं। पूंजी के तीन रूप माने जाते हैं–

- **भौतिक पूंजी (Physical Capital)** : नहर, सड़क, भवन, पुल, मशीन, वाहन इत्यादि।
- **वित्तीय पूंजी (Financial Capital)** : मुद्रा (Currency) या साख (Credit) को वित्तीय पूंजी कहते हैं, जैसे नकद धनराशि, आभूषण, चल व अचल संपत्ति आदि।
- **बौद्धिक पूंजी (Intellectual Capital)** : साहित्यिक विचार, वैज्ञानिक विचार, कलात्मक विचार, धार्मिक विचार व आविष्कार इत्यादि।

पुनः बौद्धिक पूंजी के स्वामित्व के भी तीन रूप माने जाते हैं–

- कॉपीराइट (Copyright) : किताबों, लेखकों या चित्रों आदि के स्वामित्व को कॉपीराइट कहते हैं।
- पेटेंट (Patent) : प्रौद्योगिकी या आविष्कार के स्वामित्व को पेटेंट कहते हैं।
- ट्रेड मार्क (Trade mark) : व्यावसायिक/व्यापारिक चिह्न के स्वामित्व को ट्रेड मार्क कहते हैं।

(iv) उद्यमशीलता (Enterprenеurship) : व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूह में निहित वह क्षमता जिसके आधार पर वे अन्य सहयोगी कारकों को संगठित करके किसी निश्चित दिशा में पहल करते हैं तथा इसमें निहित जोखिम को सहते हैं, उद्यमशीलता (Enterpreneurship) कहलाती है।

1.6 उत्पादन के विभिन्न क्षेत्र *(Different Sectors of Production)*

उत्पादन किस तरीके से होता है, इसके आधार पर उत्पादन क्रियाओं को तीन क्षेत्रों में बाँटा जाता है–

- **प्राथमिक क्षेत्र (Primary Sector)** : नैसर्गिक संसाधनों (Natural Resources) के प्रत्यक्ष दोहन (Direct Utilisation) द्वारा जिन वस्तुओं का उत्पादन किया जाए उन्हें प्राथमिक वस्तुएं (Primary Goods) कहते हैं तथा ऐसी वस्तुओं के उत्पादन में संलग्न संस्थागत संरचना (Institutional structure) को प्राथमिक क्षेत्र कहते हैं।
- **द्वितीयक क्षेत्र (Secondary Sector)** : प्राथमिक वस्तुओं में परिवर्तन द्वारा जिन नयी वस्तुओं का उत्पादन किया जाए, उन्हें द्वितीयक वस्तुएं (Secondary goods) कहते हैं तथा ऐसी वस्तुओं के उत्पादन में संलग्न संस्थागत संरचना को द्वितीयक क्षेत्र (Secondary Sector) कहते हैं।
- **तृतीयक क्षेत्र (Tertiary Sector)** : अदृश्य सेवाओं (Invisible Services) को तृतीय वस्तुएं (Tertiary Goods) कहते हैं तथा सेवाओं के उत्पादन में संलग्न संस्थागत संरचना को तृतीयक क्षेत्र कहते हैं।

केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन (CSO-Central Statistical Organisation) द्वारा उत्पादन क्षेत्रों का वर्गीकरण

- प्राथमिक क्षेत्र
  - कृषि एवं संबद्ध क्षेत्र (Agriculture and allied sectors)
  - वानिकी (Forestry)
  - मत्स्य पालन (Fishrery)
  - खनन एवं उत्खनन (Mining and Excavation)
- द्वितीयक क्षेत्र
  - विनिर्माण (Manufacturing)
  - निर्माण (Construction)
  - जल विद्युत एवं गैस आपूर्ति (Hydroelectricity and Gas supply)
- तृतीयक क्षेत्र
  - होटल, रेस्तराँ एवं व्यापार (Hotel, Restaurant and Trade)
  - परिवहन (Transportation), संचार (Communication) एवं भंडारण (Warehousing)
  - बैंकिंग एवं बीमा (Banking and Insurance)
  - वास्तविक संपदा तथा वाणिज्यिक आवासों एवं सेवाओं का स्वामित्व (Real estate and Ownership of corporate houses and services)
  - लोक प्रशासन एवं प्रतिरक्षा (Public administration and Defence)
  - अन्य सेवाएँ (Other services)

1.7 भारतीय अर्थव्यवस्था की विशेषताएँ *(Salient features of Indian Economy)*

भारतीय अर्थव्यवस्था की विशेषताएँ

एक अल्पविकसित (Less-developed) अर्थव्यवस्था के रूप में

- राष्ट्रीय आय (National Income) एवं प्रति व्यक्ति आय (Per Capita Income) का निम्न स्तर
- आय का असमान वितरण (Unequal distribution)
- व्यापक गरीबी (Wide spread poverty)
- बेरोजगारी (Unemployment)
- कृषि की प्रधानता
- जनसंख्या में तीव्र वृद्धि (Population explosion)
- पूंजी की कमी (Scarcity of capital)
- मानव विकास (Human development) का निम्न स्तर
- उद्यमिता (Entrepreneurship) की भावना की कमी
- तकनीक (Technology) का पिछड़ापन

एक विकासशील (Developing) अर्थव्यवस्था के रूप में

- निवल राष्ट्रीय उत्पाद (Net National Product) में वृद्धि
- प्रति व्यक्ति आय (Per Capita Income) में वृद्धि
- सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product) में सकारात्मक परिवर्तन
- रोजगार संरचना (Employment Structure) में धीमी गति से परिवर्तन
- बैंकिंग आदि वित्तीय (Financial) संस्थाओं का विकास
- आधारभूत उद्योगों (Basic Industries) का विकास

1.8 भारत में गरीबी की समस्या *(The Problem of Poverty in India)*

किसी समाज में व्यक्तियों का बहुत बड़ा भाग जब सभी प्रकार के प्रयत्न करने के बाद भी जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं (Minimum needs) को पूरा करने में असफल रहता है, इस स्थिति को गरीबी या निर्धनता (Poverty) कहते हैं। उन सभी अल्पविकसित देशों में जहाँ प्रति व्यक्ति आय (Per capita income) बहुत कम है, आय की असमानताओं ने कई बुराइयों को जन्म दिया है जिनमें से सबसे गंभीर बुराई गरीबी है। भारत में योजना अवधि के दौरान तमाम आर्थिक विकास के बावजूद 2004-05 में 41.6% जनसंख्या विश्व बैंक द्वारा परिभाषित 1.25 डॉलर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन [क्रयशक्ति समता (Purchasing power parity) के आधार पर 21.6 रुपये शहरी क्षेत्र में तथा 14.3 रुपये ग्रामीण क्षेत्र में] की गरीबी रेखा से नीचे थी। जनसंख्या का यह बड़ा हिस्सा आज भी तमाम अभावों की जिन्दगी जी रहा है।

1.9 गरीबी रेखा की अवधारणा *(The Concept of Poverty Line)*

तेन्दुलकर समिति के अनुसार गरीबी रेखा की अवधारणा, मूल मानवीय आवश्यकताओं को पूरा कर पाने की असमर्थता से जुड़ी हुई है। ये मूल मानवीय आवश्यकतायें हैं- पर्याप्त पौष्टिक आहार (Sufficient nutritional diet) प्राप्त करना, पहनने के लिए उपयुक्त वस्त्र तथा रहने के लिए उपयुक्त स्थान होना, परिहार्य (Avoidable) बीमारियों से बचने की क्षमता, न्यूनतम आवश्यक स्तर (Minimum required level) तक शिक्षित होना तथा सामाजिक-पारस्परिक (Socio-mutual) क्रिया के लिए एवं आर्थिक गतिविधियों में हिस्सा लेने के लिए गत्यात्मकता (Mobility) है। अतः गरीबी की अवधारणा बहुआयामी (Multi-dimensional) है परन्तु इस 'बहुआयामी' संकल्पना को आधार बना कर गरीबी रेखा को एक न्यूनतम आय स्तर (Minimum Income level) के रूप में परिभाषित करना संभव नहीं है क्योंकि इस संकल्पना में कई ऐसी बातें शामिल की गई हैं जिन्हें मापा नहीं जा सकता। अतः गरीबी रेखा को एक ऐसे न्यूनतम उपभोग स्तर (Minimum consumption level) के रूप में परिभाषित किया जाता है, जो जीवन का एक निम्नतम स्तर प्राप्त करने के लिए व मूल मानवीय आवश्यकताओं को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति या परिवार को उपलब्ध होना चाहिए। इसे भारत में योजना आयोग ने ग्रामीण क्षेत्रों में 2400 कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रति दिन व शहरी क्षेत्रों में 2100 कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रति दिन स्वीकार किया गया है। 2004-05 में पूरे देश के लिए गरीबी रेखा को ग्रामीण क्षेत्रों में 356.30 रु. प्रति व्यक्ति प्रति माह व शहरी क्षेत्रों में 538.60 रु. प्रति व्यक्ति प्रति माह माना गया है।

गरीबी शब्द का प्रयोग दो अर्थों में किया जाता है - (a) सापेक्ष (Relative) तथा (b) निरपेक्ष (Absolute)।

(a) सापेक्ष गरीबी (Relative Poverty) का संबंध समाज के विभिन्न वर्गों के मध्य आय वितरण की असमानता (Unequal distribution of Income) से है। यह पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का अभिन्न अंग है। इसे कम तो किया जा सकता है परन्तु समाप्त नहीं किया जा सकता है।

(b) निरपेक्ष गरीबी (Absolute Poverty) का संबंध एक ऐसे आर्थिक पहलू (Economic Dimension) से है जो समाज के वर्ग विशेष को जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं यथा–भोजन, कपड़ा, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि से वंचित रखता है तथा केवल निर्वाह स्तर पर जीने को मजबूर करता है।

1.10 गरीबी के विभिन्न माप *(Various Measurement of Poverty)*

(i) निरपेक्ष गरीबी (Absolute Poverty) की माप कैलोरी ग्रहण क्षमता (Calorie consumption capacity) व विभिन्न खाद्य वस्तुओं के उपभोग व ऊर्जा उपभोग (Energy consumption) के आधार पर की जाती है।

(ii) सापेक्ष गरीबी (Relative Poverty) की माप हेतु लॉरेंज वक्र (Lorenz curve) व गिनी गुणांक (Gini coefficient) जैसी सांख्यिकीय विधियों (Statistical Methods) का प्रयोग किया जाता है।

(iii) एच.सी.आर. पद्धति (Head count ratio method)

$$\text{एच.सी.आर.} = \frac{\text{बीपीएल की जनसंख्या}}{\text{कुल जनसंख्या}}$$ [BPL (Below Poverty Line) = गरीबी रेखा से नीचे]

(iv) लॉरेन्ज वक्र (Lorenz Curve) – किसी अर्थव्यवस्था में आय के वास्तविक वितरण को दर्शाने के लिए जिस वक्र का प्रयोग किया जाता है उसे लॉरेंज वक्र कहते हैं। यह समाज में आय के आर्थिक वितरण व आर्थिक विषमता की माप हेतु एक ज्यामितीय विधि (Geometrical method) है, जिसमें परिवारों की संख्या के संचयी प्रतिशत और परिवार के पास उपलब्ध संसाधनों के संचयी प्रतिशत (राष्ट्रीय आय में अंश संचयी भारिता) के मध्य एक ग्राफ खींचा जाता है। इसे 1905 में Max O Lorenz ने विकसित किया। इस वक्र (Curve) का प्रत्येक बिन्दु उन परिस्थितियों या व्यक्तियों को प्रदर्शित करता है जो एक निश्चित आय के प्रतिशत के नीचे हैं। यह वक्र निरपेक्ष रेखा से आय के वास्तविक वितरण के विचलन (Deviation) को दर्शाती है।

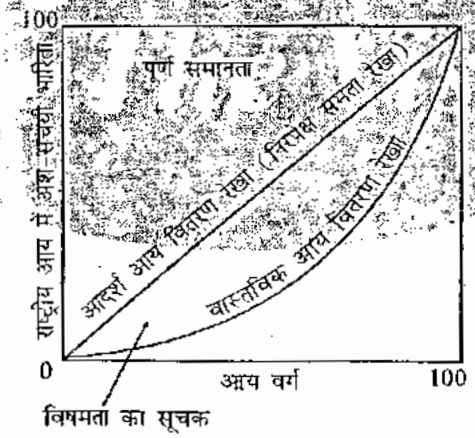

(v) गिनी गुणांक (Gini Coefficient) – लॉरेन्ज वक्र द्वारा अभिव्यक्त गणितीय मान को गिनी गुणांक कहा जाता है। यह सापेक्ष गरीबी (Relative Poverty) मापने की विधि है। इसे वर्ष 1912 में इटैलियन सांख्यिकीविद् कोरेडो गिनी ने विकसित किया। लॉरेन्ज वक्र विधि की सबसे बड़ी कमी यह है कि यह वक्र केवल यह बताता है कि असमानता बढ़ रही है या घट रही है परन्तु यह वक्र यह नहीं बता पाता है कि कितनी असमानता बढ़ रही है या घट रही है? लॉरेन्ज वक्र की इसी कमी को गिनी गुणांक दूर करता है। अतः लॉरेन्ज वक्र द्वारा अभिव्यक्त गणितीय मान को गिनी गुणांक कहते हैं। इसका अधिकतम मूल्य (Max. Value = 1) व न्यूनतम मूल्य (Min. Value = 0) होता है। शून्य समानता को दर्शाता है व 1 अधिकतम असमानता को।

गिनी गुणांक – $\frac{ACA}{ACDA}$

गरीबी रेखा पर आधारित इस दृष्टिकोण में प्रमुख कमी यह है कि हमारे लिए यह जानना पर्याप्त नहीं है कि कितने लोग निर्धन हैं, बल्कि यह जानना आवश्यक है कि निर्धन लोग कितने निर्धन हैं? इसके लिए गरीबी की माप हेतु निम्न धारणा का विकास किया गया है-

(vi) गरीबी अन्तराल अनुपात (Poverty Gap Ratio)

$$R = \frac{Z-Z_p}{Z}$$

गरीबी अन्तराल सूचकांक (Poverty Gap Index)

$$I = \frac{M \times R}{N}$$

यहाँ Z = गरीबी रेखा, Z_p = गरीबों का औसत उपभोग व्यय, M = गरीबी रेखा से नीचे की संख्या, N = कुल जनसंख्या, R = गरीबी अंतराल अनुपात, I = गरीबी अंतराल सूचकांक

(vii) सेन गरीबी सूचकांक – किन गरीबों को अधिक सहायता दी जाए तथा किनको कम सहायता दी जाये, इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर सेन गरीबी सूचकांक का विकास किया गया। इस सम्बन्ध में नीति निर्धारण करने में सेन विधि काफी उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

$$P = H\,[I + (1-I)\,G]$$

P = सेन का गरीबी गुणांक, H = हेडकाउण्ट अनुपात, I = गरीबी अन्तराल अनुपात, G = गिनी गुणांक

1.11 गरीबी के अनुमान (Estimates of Poverty)

भारत में गरीबी का अध्ययन विभिन्न विद्वानों यथा – दाण्डेकर, रथ, मिन्हास तथा अहलूवालिया द्वारा किया गया परन्तु इनकी गरीबी की संकल्पना भिन्न-भिन्न थी, अतः परिणाम भी काफी असंगत निकले। किसी ने गरीबी में बढ़ने की प्रवृत्ति बतायी किसी ने घटने की तो किसी ने स्थिर रहने की। इसके साथ-साथ ही इन विद्वानों द्वारा गरीबी अध्ययन के लिये ली गई अवधि भी काफी छोटी थी। अहलूवालिया का अध्ययन महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इन्होंने सबसे लम्बी अवधि वर्ष 1957-58 से वर्ष 1973-74 के लिए अनुमान प्रस्तुत किए। अहलूवालिया ने 1960-61 की कीमतों पर ग्रामीण क्षेत्र के लिए गरीबी रेखा को 15 रुपये प्रतिमास परिभाषित किया तथा प्रतिवर्ष बदलती कीमतों के प्रभाव के अनुरूप इसे समायोजित किया, जैसे – खेतिहर मजदूरों का उपभोक्ता कीमत सूचकांक (Consumer Price Index of Agricultural labourers)। अहलूवालिया के अनुसार ग्रामीण गरीबी का अनुमान – वर्ष 1956-57 में 54.1%, वर्ष 1960-61 में 38.9% तथा वर्ष 1973-74 में 46.1% रहा।

- U.N.O. की 1996 के रिपोर्ट में 'गरीबी मापक सूचकांक' (Poverty Measurement Index) के आधार पर भारत में गरीबी का सूचकांक 61.5 प्रतिशत है। इसमें 101 विकासशील देशों को शामिल किया गया जिसमें भारत का स्थान 89वाँ है। U.N.O. की 1997 की रिपोर्ट में मानव गरीबी सूचकांक (Human Poverty Index) का प्रयोग पहली बार किया गया। इस आधार पर भारत में 36.7 प्रतिशत गरीबी है तथा 128 विकासशील देशों में भारत का स्थान 47वाँ है।
- योजना आयोग ने छठी पंचवर्षीय योजना में गरीबी रेखा के निर्धारण का आधार प्रतिव्यक्ति उपभोग (Per Capita Consumption) के स्तर को बनाया।

प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन उपभोग (कैलोरी में) – 2400 कैलोरी – ग्रामीण निर्धनता रेखा (Rural Poverty Line)
2100 कैलोरी – शहरी निर्धनता रेखा (Urban Poverty Line)

NSSO (National Sample Survey Organization) के सर्वेक्षण के आधार पर योजना आयोग ने 1993-94 में 18.96 प्रतिशत जनसंख्या को गरीब (Poor) के रूप में परिभाषित किया। गरीबी के विकराल रूप का यह सूक्ष्म प्रदर्शन महज राजनीतिक चालबाजी तथा आंकड़ों की जादूगरी प्रतीत होता है। योजना आयोग द्वारा गठित विशेषज्ञ दल के अध्यक्ष प्रो. डी.टी. लकड़ावाला ने इन आँकड़ों पर प्रश्नचिन्ह लगाया तथा वैकल्पिक फॉर्मूले का प्रयोग कर प्रत्येक राज्य के लिए पृथक निर्धनता रेखा निर्धारित की। इस विस्तृत भौगोलिक विषमता तथा आर्थिक असमानता वाले देश के लिए यह उचित ही है। लकड़ावाला ने शहरी निर्धनता के आकलन हेतु औद्योगिक श्रमिकों के उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (Consumer Price Index of Industrial Labourers) तथा ग्रामीण निर्धनता के लिए कृषि मजदूरों के उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (Consumer Price Index of Agricultural Labourers) को आधार बनाया। योजना आयोग ने इसे स्वीकार किया तथा इस आधार पर 1993-94 में गरीबी रेखा के नीचे के लोगों का प्रतिशत 35.97 प्रतिशत था जो 1994-95 में 35.88 प्रतिशत हो गया तथा 96-97 में 36 प्रतिशत। मोटे तौर पर वर्ष (99-2000) के अनुसार 260 मिलियन गरीब भारत में हैं।

हाल ही में पाँच व्यक्ति वाले परिवार के लिए शहरी क्षेत्र में 11850 रुपये की वार्षिक आय तथा ग्रामीण क्षेत्रों में 11060 रुपये की वार्षिक आय को गरीबी रेखा के रूप में मान्यता दी गई है।

1.12 अखिल भारतीय स्तर पर गरीबी से जुड़े कुछ अद्यतन अनुमान *(Recent estimates related to Poverty on All India Level)*

(i) योजना आयोग का अनुमान (2005)
2004-05 मूल्यों पर - 27.5%
ग्रामीण क्षेत्र में - 28.3%
शहरी क्षेत्र में - 25.7%

(ii) अर्जुन सेन गुप्ता पैनल (20 रूपये प्रतिदिन के अनुसार)- 2004-05 मूल्यों पर - 77%

(iii) एन.सी. सक्सेना कमेटी (2009) (ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा नियुक्त) - 50%

(iv) विश्व बैंक (2008) रिपोर्ट (1.25 डालर प्रतिदिन के अनुसार)- 2005 में 41.6%

(v) सुरेश तेंदुलकर (2009) 2004-05 मूल्यों पर - 37.2%
ग्रामीण - 41.8% शहरी - 25.7%

(vi) मानव विकास रिपोर्ट (Human Development Report) (2010)
बहुआयामी गरीबी सूचकांक (Multi-dimensional Price Index) पर आधारित 55.4%

(vii) हाशिम समिति - शहरी क्षेत्रों में गरीबी के अनुमान हेतु योजना आयोग द्वारा नियुक्त।

(viii) NSSO के 66वें चक्र ने तेंदुलकर कमेटी फार्मूले (2004-05) के ही आधार पर यह स्थापित किया है कि 2009-10 में गरीबी 37.2% से घटकर 32% हो गयी है।

1.13 गरीबी के कारण *(Causes of Poverty)*

गरीबी के अनेक कारण हैं जिनमें मुख्य कारण निम्न हैं-

- तीव्र जनसंख्या वृद्धि (Rapid Population growth)
- कृषि से भिन्न (Non-agriculture) रोजगारों का अभाव
- धीमी औद्योगिक संवृद्धि (Slow industrial growth)
- शिक्षा का अभाव (Lack of education)
- पूंजी का अभाव (Lack of capital)
- श्रम गतिशीलता (Mobility of labour) का अभाव
- आय-वितरण (Income-distribution) में असमानता
- सूचना प्रणाली (Information system) का कमजोर होना
- भूमि-सुधार (Land reforms) की असफलता
- कृषि का मौसमी स्वरूप
- बढ़ता मूल्य स्तर आदि।

32 रुपये में गुजारा करने वाला गरीब नहीं।

योजना आयोग ने सुप्रीम कोर्ट को बताया है कि खानपान पर शहरों में 965 रुपये और गांवों में 781 रुपये प्रति महीना खर्च करने वाले शख्स को गरीब नहीं माना जा सकता है। गरीबी रेखा की नई परिभाषा तय करते हुए योजना आयोग ने कहा कि इस तरह शहर में 32 रुपये और गांवों में हर रोज 26 रुपये खर्च करने वाला शख्स बीपीएल परिवारों को मिलने वाली सुविधा को पाने का हकदार नहीं है।

अपनी यह रिपोर्ट योजना आयोग ने सुप्रीम कोर्ट को हलफनामे के तौर पर दी है। इस रिपोर्ट पर खुद प्रधानमंत्री ने हस्ताक्षर किए हैं। आयोग ने गरीबी रेखा पर नया क्राइटीरिया सुझाते हुए कहा है कि दिल्ली, मुंबई, बेंगलुरु और चेन्नई में चार सदस्यों वाला परिवार यदि महीने में 3860 रूपये खर्च करता है, तो वह गरीब नहीं कहा जा सकता। इस हास्यास्पद परिभाषा पर हो-हल्ला मचना शुरू हो चुका है।

रिपोर्ट के मुताबिक, एक दिन में एक आदमी प्रति दिन अगर 5.50 रुपये दाल पर, 1.02 रुपये चावल-रोटी पर, 2.33 रुपये दूध, 1.55 रुपये तेल, 1.95 रुपये साग-सब्जी, 44 पैसे फल दर, 70 पैसे चीनी पर, 78 पैसे नमक व मसाली पर, 1.51 रुपये अन्य खाद्य पदार्थों पर, 3.75 रुपये ईंधन पर खर्च करे तो वह स्वस्थ जीवन यापन कर सकता है। साथ में एक व्यक्ति अगर 49.10 रुपये मासिक किराया दे तो आराम से जीवन बिता सकता है और उसे गरीब नहीं कहा जाएगा।

योजना आयोग की मानें तो हैल्थ सर्विसेज पर 39.70 रुपये प्रति माह खर्च करके आप स्वस्थ रह सकते हैं। एजुकेशन पर 99 पैसे प्रतिदिन खर्च करते हैं तो आपको शिक्षा के संबंध में कतई गरीब नहीं माना जा सकता। यदि आप 9.6 रुपये चप्पल और 28.80 रूपये बाकी पर्सनल सामान पर खर्च कर सकते हैं तो आप योजना आयोग की नजर में बिल्कुल भी गरीब नहीं कहे जा सकते।

आयोग ने यह डाटा बनाते समय 2010-11 के इंडस्ट्रियल वर्कर्स के कंज्यूमर प्राइस इंडेक्स और तेंदुलकर कमेटी की 2004-05 की कीमतों के आधार पर खर्च का हिसाब-किताब दिखाने वाली रिपोर्ट पर गौर किया है। हालांकि, रिपोर्ट में अंत में कहा गया है कि गरीबी रेखा पर अंतिम रिपोर्ट (NSSO) सर्वेक्षण 2011-12 के बाद पेश की जाएगी।

साभार- 'नवभारत टाइम्स' 21 सितंबर 2011

18 Jan

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–1 (Unit–1)

अर्थव्यवस्था : एक परिचय, भाग-2
Economy : An Introduction, Part-2

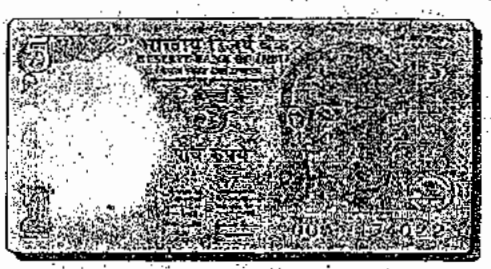

1.8 आय का चक्रीय प्रवाह : कीमतों में वृद्धि होने के कारण इत्यादि
(Cyclic Flow of Income : Reasons of Inflation etc.)

1.9 आय के चक्रीय प्रवाह का वर्गीकरण
(Distribution of Circular Flow of Income)

1.10 आय के चक्रीय प्रवाह को अस्थिर करने वाली शक्तियाँ
(Factor Which Cause Fisturbance to the Circular Flow of Income)

1.11 अवस्फीति के कारण *(Cause of Deflation)*

1.12 बचत की अवधारणा *(Concept of Saving)*

1.13 निवेश की अवधारणा *(Concept of Investment)*

1.14 निर्यात बढ़ाने के फायदे *(Benefits of Export)*

1.15 निर्यात के नुकसान *(Losses of Export)*

1.16 निर्यात नियंत्रण के उपाय *(Measures to Control Export)*

1.17 आयात बढ़ाने के फायदे *(Benefits of Import)*

1.18 आयात के नुकसान *(Losses of Import)*

1.19 आयात नियंत्रण के उपाय *(Measures to Control Import)*

1.20 बाह्योन्मुखी विदेशी निवेश के लाभ *(Benefits of Outward Foreign Investment)*

1.21 बाह्योन्मुखी विदेशी निवेश के हानि *(Losses of Outward Foreign Investment)*

1.22 बाह्योन्मुखी विदेशी निवेश के उपाय
(Measures to Control Outward Foreign Investment)

1.23 अन्तर्मुखी विदेशी निवेश के लाभ *(Benefits of Inward Foreign Investment)*

1.24 अन्तर्मुखी विदेशी निवेश के हानि *(Losses of Inward Foreign Investment)*

1.25 अन्तर्मुखी विदेशी निवेश के नियंत्रण के उपाय
(Measures to Control Inward Foreign Investment)

1.26 World Economic Forum (WEF)

1.27 World Social Forum (WSF)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

1.8 आय का चक्रीय प्रवाह : कीमतों में वृद्धि होने के कारण इत्यादि
(Cyclic Flow of Income : Reasons of Inflation etc.)

आय का चक्रीय प्रवाह (Cyclic flow of income) :- कारक सेवाओं का प्रवाह (Flow of factor services) तथा अंतिम वस्तुओं एवं सेवाओं के प्रवाह (Flow of final goods and services) को आय का चक्रीय प्रवाह (Cyclic flow of income) कहते हैं क्योंकि ये दोनों एक दूसरे पर निर्भर रहते हुए एक चक्र (Cycle) के रूप में कार्य करते हैं।

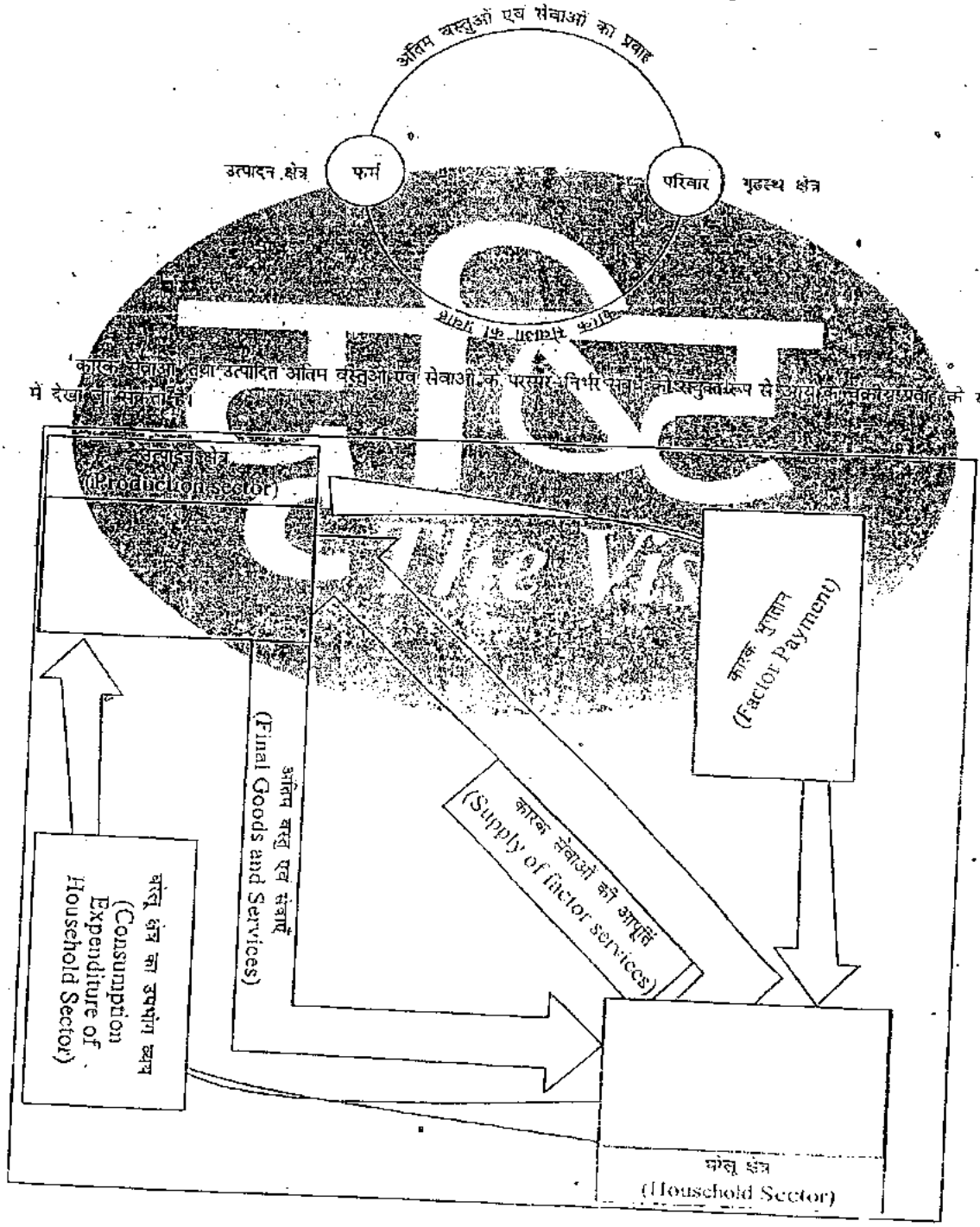

Copyright – Drishti The Vision Foundation

उत्पादन क्षेत्र तथा घरेलू क्षेत्र के संबंधों को जानने के लिए 'कारक आय' की अवधारणा स्पष्ट करना आवश्यक है। कारक आय से अभिप्राय किसी व्यक्ति द्वारा अर्जित उस आय से है जो उसे कारक सेवा के बदले में प्राप्त होती है। यह उसके श्रम के बदले में मजदूरी, उसकी भूमि के लिए लगान, पूंजी के लिए ब्याज तथा उद्यमिता (Entrepreneurship) के लिए लाभ के रूप में हो सकती हैं इसमें ऐसी कोई भी आय शामिल नहीं होती जो अर्जित नहीं की गई है अथवा जिसके बदले में कोई सेवा प्रदान नहीं की गई है। जैसे कि वरिष्ठ नागरिकों को प्राप्त होने वाली वृद्धावस्था पेंशन अर्जित आय (Earned Income) नहीं है। ऐसी प्राप्तियों या भुगतानों को हस्तांतरण प्राप्तियाँ या हस्तांतरण भुगतान (Transfer Receipts or Transfer Payment) कहा जाता है। इसको राष्ट्रीय आय के अनुमान में शामिल नहीं किया जाता।

1.9 आय के चक्रीय प्रवाह का वर्गीकरण *(Distribution of Circular Flow of Income)*

आय के चक्रीय प्रवाह को दो प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है:

- स्वरूपगत लक्षण के आधार पर वर्गीकरण (Classification on the basis of traits)
  - नाममात्र आय के चक्रीय प्रवाह (Circular Flow of Nominal Income)
  - वास्तविक आय का चक्रीय प्रवाह (Circular Flow of Real Income)
- गुणात्मक वर्गीकरण (Functional/Qualitative classification)
  - आय का सुचक्र (अच्छा चक्र) (Virtuous Circular Flow of Income)
  - आय का कुचक्र (Vicious Circular Flow of Income)

1.10 आय के चक्रीय प्रवाह को अस्थिर करने वाली शक्तियाँ *(Factor Which Cause Disturbance to the Circular Flow of Income)*

आय के चक्रीय प्रवाह को अस्थिर करने वाली शक्तियाँ हैं:

- बाह्य जन्य चुनौती (External Challenges) (जो चुनौतियाँ आर्थिक प्रणाली के बाहर से उत्पन्न होती है)
  जैसे-(i) बाह्य आक्रमण/ या आक्रमण का खतरा (जैसे 18-19 वीं शताब्दी में ईस्ट इण्डिया कंपनी का भारत पर शासन)
  (ii) आंतरिक अस्थिरता या अराजकता (माओवाद, नक्सलवाद दिन-प्रतिदिन के अपराध)
  (iii) न्याय का अभाव/ विलंबित न्याय (भारत के न्यायालयों में 3.2 करोड़ मामले विलंबित)
- अंतः जात चुनौती (Internal Challenges) (जो चुनौतियाँ आर्थिक प्रणाली के अन्दर से उत्पन्न होती है)
  जैसे (i) कीमत विचलन (Price Instability)
  कीमत विचलन दो दिशाओं में होता है।
  - (Upward) ऊर्ध्वमुखी विचलन को मुद्रास्फिति (Inflation) या महंगाई कहते हैं।
  - (Downward) अधोमुखी को अवस्फिति (Deflation) कहते हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

महँगाई अपने कारण के आधार (Basis of reason) पर दो प्रकार की होती है

मांग प्रेरित महँगाई (Demand pull Inflation)

किसी वस्तु की आपूर्ति के मुकाबले उसकी मांग के आधिक्य के कारण उत्पन्न होने वाली महँगाई को मांग प्रेरित महँगाई कहते हैं।

लागत जन्य महँगाई (Cost push Inflation)

उत्पादन की लागतों में वृद्धि के कारण किसी वस्तु की कीमत में होने वाली वृद्धि को लागत जन्य महँगाई कहते हैं।

उदाहरण:- 1. नरेगा 2. कच्चा तेल

लागत (लगान, मजदूरी, ब्याज, लाभ) कच्चा माल

1. मांग प्रेरित (Demand pull): यदि वस्तुओं की आपूर्ति (Supply) की अपेक्षा वस्तुओं की मांग (Demand) में आधिक्य उत्पन्न हो तो क्रेता (Buyers) या उपभोक्ता (Consumers) आपस में प्रतिस्पर्धा करते हुए वस्तु की कीमत को बोली लगाते हैं जिससे कीमत बढ़ जाती है। इसलिए इसे मांग प्रेरित वृद्धि (Demand Pull Inflation) कहते हैं।

मांग प्रेरित वृद्धि के मुख्य कारण:

- उपभोक्ता के सापेक्ष जनसंख्या में तीव्रतर वृद्धि
- उत्पादन के सापेक्ष मुद्रा आपूर्ति (Supply of Money) में अधिक वृद्धि
- सरकार की आय प्राप्ति के सापेक्ष उच्चतर व्यय (Higher expenditure)
- विदेशों से प्राप्त अतिरिक्त मुद्रा स्रोत
- आय वितरण में असमानता
- काले आय या काली आय से भी महँगाई आती है।

एक अनुमान के आधार पर भारतीय अर्थव्यवस्था में कानूनी अर्थव्यवस्था 2/3 है तथा 1/3 अर्थव्यवस्था गैर कानूनी अर्थव्यवस्था है। काले धंधे एवं काले आय से संचालित अर्थव्यवस्था को समानांतर अर्थव्यवस्था (Parallel Economy) कहते हैं।

2. लागत प्रेरित (Cost-Push): कारक सेवाओं (Factor Services) को एक निश्चित मात्रा के बदले में किए गए कारक भुगतान (Factor Payment) की मात्रा में यदि वृद्धि की जाए अर्थात् उत्पादन लागत (Cost of Production) बढ़ जाए तो उत्पाद की कीमत (Price of Product) बढ़ जाती है जिसे लागतजन्य मुद्रास्फीति (Cost Push Inflation) कहते हैं। पूरी अर्थव्यवस्था में श्रम लागत (Labour Cost) में वृद्धि होने पर मंहगाई बढ़ जाती है, इसके अलावा कुछ अन्य कारक भी इसके लिए जिम्मेदार हो सकते हैं, जैसे-

- मजदूरी लागत (Labour cost)
- कर लागत (Tax of cost)
- उद्योगपतियों को ज्यादा आय
- परोक्ष करों (Indirect Taxes) की लागत

3. **उपभोग स्तर में गिरावट (Decline in the level of consumption):** यदि निम्न आय वर्ग का उपभोग स्तर (Consumption level) गिर जाता है तो इससे औसत उपभोग स्तर (Average Consumption level) में गिरावट होगी और संसाधनों की क्षमता का स्तर गिरेगा। चूँकि महंगाई से संपूर्ण चक्रीय प्रवाह मंदित (Slow) होता है, इसलिए इसे एक समस्या माना जाता है।

1.11 अवस्फीति के कारण *(Cause of Deflation)*

- यदि मांग (Demand) के सापेक्ष आपूर्ति अधिक हो या आपूर्ति के सापेक्ष मांग कम हो तो अवस्फीति (Deflation) उत्पन्न होती है।
- यदि कानूनी उपाय (Legal methods) द्वारा सरकार कीमतों को कम करे तो अवस्फीति (Deflation) उत्पन्न होती है।

641, प्रथम तल, मुखर्जी नगर, दिल्ली-9. दूरभाष : 27604128, 8800367905, 9891761002, 9560362210, 9313988616
ई-मेल: drishtiacademy@gmail.com. वेबसाइट: drishtifoundation.com

Copyright – Drishti The Vision Foundation

- यदि उत्पादकों (Producers) के बीच स्पर्द्धा (Competition) अधिक हो तो कीमतें गिर जाती हैं।
- यदि सरकार टैक्स (Government Tax) अवकाश की घोषणा करे तो भी अवस्फीति (Deflation) उत्पन्न हो सकती है।

सरकारी क्षेत्र तथा उत्पादन और घरेलू क्षेत्र से इसका संबंध
(Govt. Sector and its relation with production & Household Sectors)

उत्पाद से वस्तुओं एवं सेवाओं क्रय और उनसे करों की उगाही (Purchase of goods & services from producers and Collection of taxes from them)

उपभोक्ता छूटों को जरूरतमंदों तक पहुँचाना और मध्य तथा धनी वर्ग से व्यक्तिगत आयकर का संग्रहण। (Transfer of consumer subsidies to needy members of household and Collection of personal income taxes from middle & upper Classes)

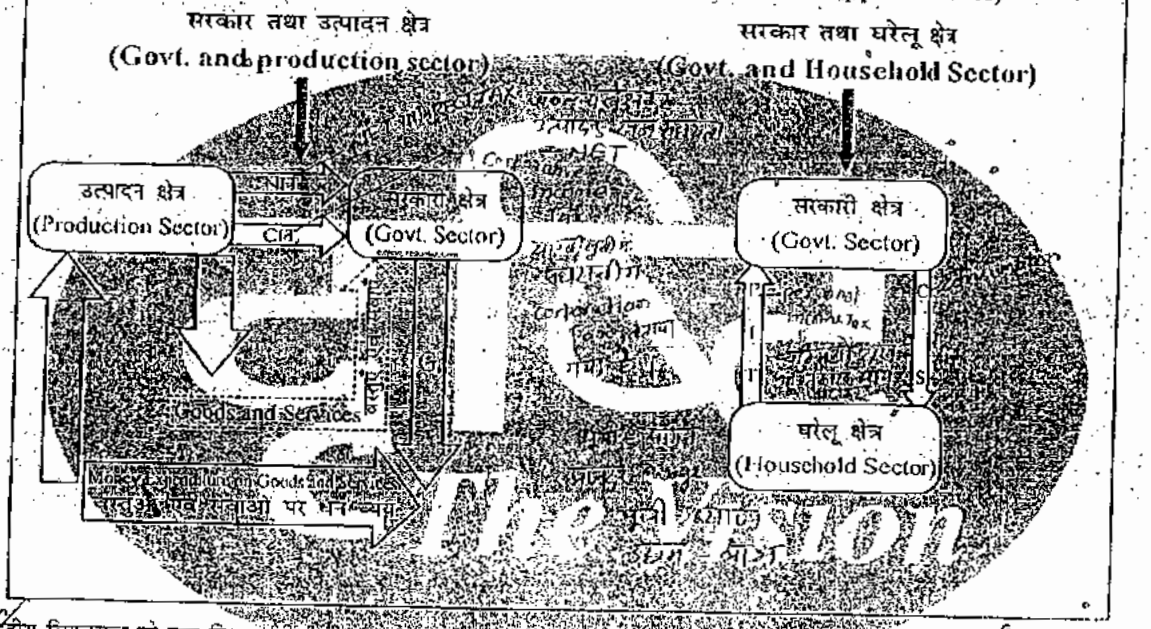

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विश्व की सभी सरकारों ने कल्याणकारी राज्य (Welfare state) की अवधारणा पर सर्वाधिक ध्यान दिया और इसके लिए निम्नलिखित चार कार्य/प्रकार्य की व्यवस्था की गई

- प्रतिरक्षा (Defence)
- कानून व्यवस्था (Law and Order)
- न्याय (Justice)
- कल्याण (Welfare)

यह संस्थागत व्यवस्था वैश्विक/अंचल विशेष में की जा सकती है।

- पूरे विश्व के लिए- वैश्विक (Global) शासन व्यवस्था (संयुक्त राष्ट्र संघ, विश्व बैंक)
- एक राष्ट्र के लिए - राष्ट्रीय (National) शासन व्यवस्था (कार्यपालिका, न्यायपालिका, विधायिका)
- प्रांत (राज्य) के लिए - प्रांतीय (Provincial) शासन व्यवस्था (कार्यपालिका, न्यायपालिका, विधायिका)
- स्थानीय स्तर के लिए - स्थानीय (Local) शासन व्यवस्था (जिला परिषद, प्रखंड और पंचायत)

शासन के उदय से वर्तुलाकार उर्द्धगामी दबाव (Spiral up pressure) पड़ता है, अर्थात् उत्पादन बढ़ाने की प्रेरणा मिलती है। इस प्रकार, रोजगार के अवसर बढ़ते हैं और समाज (गृह क्षेत्र-Domestic sector) की आय भी बढ़ती है, जिससे वह अधिक उपभोग करने में समर्थ हो पाता है। परिणामस्वरूप संपूर्ण अर्थव्यवस्था का चक्रीय प्रभाव ऊपर (आय का सुचक्र) की ओर बढ़ता है।

641, प्रथम तल, मुखर्जी नगर, दिल्ली-9. दूरभाष : 27604128, 8800367905, 9891761002, 9560362210, 9313988616
ई-मेल: drishtiacademy@gmail.com, वेबसाइट: drishtifoundation.com
Copyright – Drishti The Vision Foundation

[सरकार अपने व्ययों के पोषण के लिए दो प्रकार के कर लगाती है।]

प्रत्यक्ष कर
(Direct tax)

जैसे- CIT (Corporate Income Tax) कारोबारी संस्था द्वारा अर्जित लाभ राशि पर आरोपित कर को निगम कर कहते हैं। PIT (Personal Income Tax)

अप्रत्यक्ष/परोक्ष कर
(Indirect tax)

जैसे- NIT (Net Indirect Tax)
Excise Duty (उत्पाद शुल्क)
Sale Tax (विक्रय कर)
Service Tax. (सेवा कर)

जिस देश की अर्थव्यवस्था सुदृढ़ होती है वहाँ कर आय भी अधिक होती है। साथ ही, जिस देश की सरकार अपने व्यापारियों एवं उत्पादकों को उत्साहित करती है वहाँ भी कर आय अधिक होती है। अतः कि सी देश के आर्थिक स्थायित्व (Economic Stability) का सीधा संबंध देश के राजनीतिक स्थायित्व (Political Stability) से होता है।

1.12 बचत की अवधारणा (Concept of Saving)

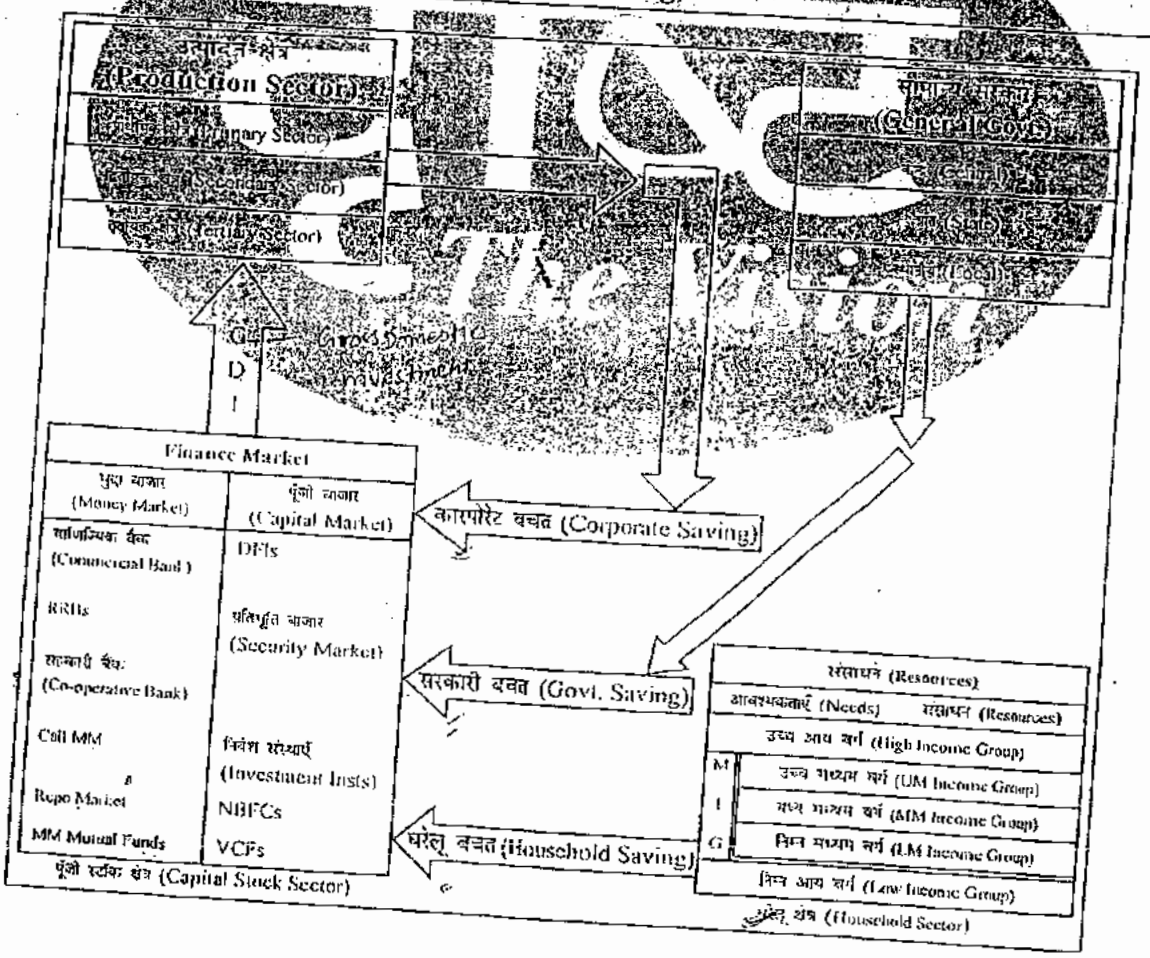

Copyright – Drishti The Vision Foundation

बचत (Saving) :- वर्तमान आय का वह अंश जिसे भविष्य (Future) में उपभोग के लिए बचा लिया जाए अर्थात् आज उपभोग (Consumption) पर व्यय न किया जाए उसे **बचत (Saving)** कहते हैं।

$$Y \text{ (आय)} = C \text{ (उपभोग)} + S \text{ (बचत)}$$

बचत की उपस्थिति (Presence of Saving) के आधार पर आय दो प्रकार की होती है:

निर्वाह आय या गुजारा आय (Substances Income)

यदि आय की मात्रा इतनी कम हो कि किसी प्रकार से वर्तमान जरूरतों की पूर्ति हो जाए तो ऐसी आय को निर्वाह आय कहते हैं।

अधिशेष आय (Surplus Income)

यदि आय की मात्रा इतनी अधिक हो कि वर्तमान जरूरतों की पूर्ति के बाद आय का एक उल्लेखनीय अंश भविष्य की जरूरतों के लिए शेष रह जाए तो ऐसी आय को अधिशेष आय कहते हैं।

जिस देश/राज्य/जिले के ज्यादातर उत्पादकों की आय 'निर्वाह स्तर' (Subsistenced Level) की हो वहाँ की अर्थव्यवस्था 'निर्वाह अर्थव्यवस्था' होती है। वहीं जिस देश/राज्य/जिले के ज्यादातर उत्पादकों की आय अधिशेष स्तर की हो वहाँ की अर्थव्यवस्था 'अधिशेष अर्थव्यवस्था' (Surplus Economy) होती है।

वित्त क्षेत्र के नजरिये से बचत के प्रकार (Types of Savings according to financial sectors)

घरेलू बचत (Household saving - S_h)

देश के गृह क्षेत्र द्वारा की गई कुल बचत को घरेलू बचत कहते हैं।

सरकारी बचत (Saving of Government - S_g)

सरकार द्वारा की गई कुल बचत को सरकारी बचत कहते हैं।

निगम बचत (Corporate Saving - S_c)

देश के सम्पूर्ण निगम क्षेत्र (India incorporate) द्वारा की गई कुल बचत को निगम बचत कहते हैं।

- सार्वजनिक निगम बचत (Public sector savings)
- निजी निगम बचत (Private sector savings)

$$S_h > S_c > S_g$$

देश में घरेलू बचत का मान सर्वाधिक है उसके बाद क्रमशः निगम और सरकारी बचत आते हैं। साधारणतः सरकारी बचत (S_g) का मान ऋणात्मक होता है और इस ऋणात्मक राशि को राजकोषीय घाटा (Fiscal deficit) कहते हैं। क्योंकि, पैसे को उदासीन (Nutral) रखने का कोई लाभ नहीं है, अतः इसका उत्पादन कार्य में निवेश किया जाना चाहिए, जिसे सकल घरेलू निवेश (Gross Domestic investment) कहते हैं।

$$\text{Gross Domestic saving (GDS)} = S_h + S_c + S_g$$

Copyright – Drishti The Vision Foundation

1.13 निवेश की अवधारणा (*Concept of Investment*)

ऐसा व्यय जिससे उत्पादन बढ़ाने में मदद मिलती है, निवेश कहलाता है। इसकी तुलना साधारणतः उपभोग व्यय (C) से की जाती है। उपभोग व्यय : ऐसा व्यय जिससे मानवीय जरूरतों की प्रत्यक्ष पूर्ति हो, उसे उपभोग व्यय कहते हैं। निवेश व्यय का अधिकतम मान बचत के बराबर होता है।

$I \geq S$

निवेश का उत्पादन पर दो प्रकार का प्रभाव पड़ता है।

अल्पकालिक प्रभाव
(Short term influence)

यदि निवेश द्वारा वर्तमान उत्पादन क्षमता का दोहन (Utilization) में सुधार किया जाए तो उत्पादन में अल्पकालिक वृद्धि (Short term growth) होती है। जैसे- यदि किसान खेत में अच्छा बीज और उर्वरक का इस्तेमाल करता है तो उस वर्ष फसल अच्छी होती है।

दीर्घकालिक प्रभाव/सतत् प्रभाव
(Subsistance income)

ऐसा निवेश जिससे उत्पादन क्षमता में विस्तार हो तो उत्पादन का सतत् वृद्धि का कारण बनता है, जैसे- किसान [illegible] तक उसकी सेवा लेकर उत्पादन बढ़ा सकता है।

सतत् विकास के लिए दो उपकरण
(Two Tools for Sustainable development)

शासन में सुधार | निवेश में सुधार

दोनों उपकरणों में रेखीय (Linear) संबंध न होकर चक्रीय (Circular) संबंध है अर्थात् शासन में सुधार के साथ निवेश में वृद्धि (Growth in investment) होती है और अर्थव्यवस्था में सुधार के साथ शासन में सुधार होता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

1.14 निर्यात बढ़ाने के फायदे *(Benefits of Export)*

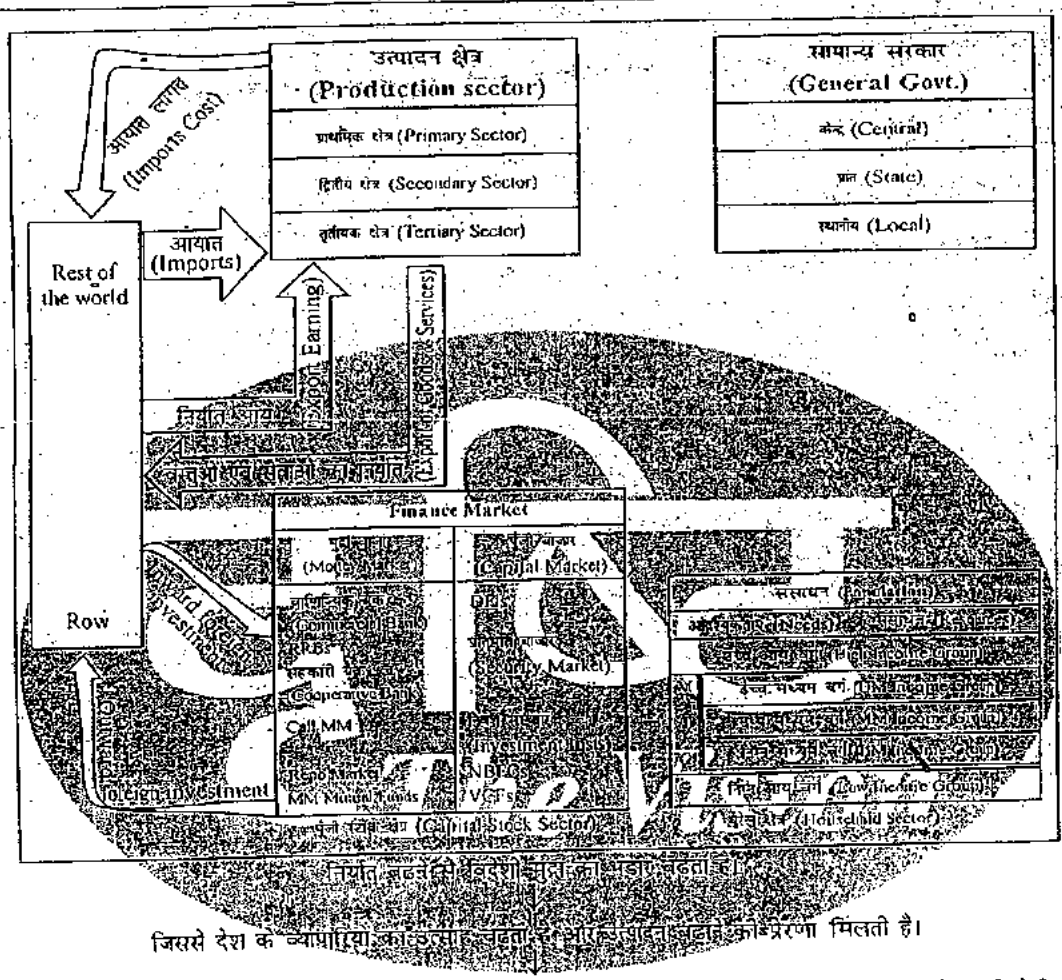

जिससे देश के व्यापारियों का कौशल बढ़ता है और रोजगार बढ़ाने को प्रेरणा मिलती है।

सेज (Special Economic Zone-SEZ) स्थापित कर निर्यात बढ़ायेंगे तो उत्पादकों को निर्यात बढ़ाने की प्रेरणा मिलेगी परिणामस्वरूप निवेश बढ़ेगा।

↓

निवेश बढ़ने से क्रमिक रूप से (Serialize) रोजगारों की संख्या बढ़ेगी।

↓

रोजगारों की संख्या बढ़ने के परिणामस्वरूप समाज की आय बढ़ेगी।

↓

समाज की आय बढ़ने से समाज का उपभोग स्तर बेहतर होगा और लोग गरिमामय जीवन (Life full of dignity) के लिए अग्रसर होंगे।

↓

लोगों को बचत बढ़ाने की प्रेरणा मिलेगी और इस प्रकार बचत का निवेश (Investment of saving) करके ब्याज कमा सकेंगे।

↓

इस प्रकार पुनः आय बढ़ेगी और इस प्रकार संपूर्ण प्रक्रिया की परिणति (Result) आय के सुचक्र (बतुलकार उर्द्धमुखी दबाव-Spiral up pressure) में होगी।

↓

इस प्रकार निर्यात बढ़ाने का फायदा (Profit of maximizing export) व्यापारियों को पहले प्रत्यक्ष रूप से और फिर आम जनता को समय के साथ क्रमिक रूप से मिलेगा।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

1.15 निर्यात के नुकसान *(Losses of Export)*

- यदि देश में वस्तुओं की उपलब्धता कम होगी तो उस वस्तु के निर्यात को प्रोत्साहित (Incourage) करने से देश में वस्तु की आपूर्ति कम होगी और इस प्रकार मंहगाई बढ़ेगी।
- निर्यात बढ़ाने से विदेशी मुद्रा (Foreign Currency) का भंडार बढ़ेगा जिसकी परिणति घरेलू मुद्रा (Domestic Currency) की मात्रा बढ़ने में होगी और इस प्रकार मंहगाई बढ़ेगी।

↓

मंहगाई बढ़ने से जनता के उपभोग स्तर में अनियमितता आयेगी।

- निर्यात बढ़ाने से निर्यात क्षेत्र की आय बढ़ेगी और वहाँ कार्यरत मजदूर, मजदूरी बढ़ाने का दबाव बनायेंगे जिससे आय (Income inequality) विषमता बढ़ेगी।
- गैर-नवीकरणीय (Non-renewable) भंडार का निर्यात बढ़ायेंगे तो सतत् विकास की प्रक्रिया में मुश्किलें बढ़ेंगी।

कई कच्चे मालों (लौह अयस्क आदि) जिनकी उपलब्धता (Availability) हमारे देश में पहले से ही कम है उनका निर्यात बढ़ाने पर घरेलू उद्योगों (Domestic industries) पर दुष्प्रभाव (Negative impact) पड़ेगा।

↓

जिस देश को निर्यात किया जायेगा वहाँ के उत्पादकों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

↓

उस देश के व्यापारियों की आय कम होगी और वहाँ रोजगार में कमी आयेगी।

↓

जिससे उस देश के साथ संबंधों में तनाव (Irritance) आ सकता है।

- निर्यात बढ़ने से अन्य देशों पर निर्भरता (Dependency) बढ़ जाती है और वहाँ मंदी (Slow-Down) आने से घरेलू अर्थव्यवस्था में भी मंदी आयेगी।

1.16 निर्यात नियंत्रण के उपाय *(Measures to Control Export)*

- निर्यात सीमित होना चाहिए जिससे घरेलू अर्थव्यवस्था (Domestic economy) पर दुष्प्रभाव न पड़े। साथ ही गैर-नवीकरणीय संसाधनों (Non renewable resources) के निर्यात के स्थान पर सेवा निर्यात और फसलों के निर्यात को वरीयता देनी चाहिए।
- क्योंकि, शहरों की आय पहले से ही ज्यादा है इसलिए निर्यात को एक ऐसे उपकरण (Instrument) की तरह इस्तेमाल करना चाहिए जिससे शहर और गाँव के मध्य विषमता में कमी आये।

1.17 आयात बढ़ाने के फायदे *(Benefits of Import)*

- जिन वस्तुओं का उत्पादन देश में नहीं होता (सोना, चाँदी, कच्चा तेल) उनका आयात करने से देश का उत्पादन बढ़ेगा।

↓

उत्पादन बढ़ने से देश का उपभोग स्तर उन्नत (Develop) होगा।

↓

उपभोग स्तर उन्नत होने से जनता गरिमामय जीवन (Dignified Life) की ओर अग्रसर होगी तथा पुनः आय के साथ अपना बचत बढ़ायेगी और बचत का निवेश करेगी।

↓

निवेश बढ़ने से क्रमिक रूप से रोजगारों की संख्या बढ़ेगी।

↓

रोजगारों की संख्या बढ़ने के साथ समाज की आय बढ़ेगी।

- जिन प्रौद्योगिकियों (Technologies) का उत्पादन हमारे देश में नहीं होता उसका आयात करने पर तकनीकी उन्नति (Technical development) होगी।

↓

मशीन का आयात करके विशेष आर्थिक क्षेत्र (Special Economic Zone-SEZ) स्थापित करने से उत्पादन क्षमता विस्तार करेंगे और वस्तुओं का निर्यात कर पुनः रोजगार बढ़ायेंगे।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

- आयात करने से घरेलू उत्पादकों में प्रतिस्पर्धा (Competition) बढ़ेगी। जिससे वस्तुओं की गुणवत्ता में वृद्धि होगी, साथ ही मंहगाई में कमी आयेगी।
- आयात बढ़ने से सरकार को कर प्राप्ति होगी और सरकार पूंजी प्राप्त कर बेहतर ढंग से 'कल्याणकारी कार्य' कर सकेगी।
- तत्काल उत्पादन क्षमता में सुधार कर अनुसंधान और विकास (Research and development) की प्रक्रिया को बढ़ावा देंगे।
- वैध रूप से आयात की अनुमति मिलने से अवैध आयात (तस्करी/Smuggling) की प्रवृत्ति पर रोक स्वतः लगेगी।

1.18 आयात के नुकसान *(Losses of Import)*

- आयात उदारीकरण से अंतर्राष्ट्रीय निर्भरता बढ़ेगी जो भारत के बाह्य संप्रभुता के लिए दबाव उत्पन्न करेगा।
- यदि ऐसी वस्तुओं का आयात किया जायेगा, जिसकी पर्याप्त उपलब्धता पहले से ही देश में है तो घरेलू उत्पादकों को नुकसान होगा। इससे कई उत्पादक इकाईयाँ बंद हो सकती है और बेरोजगारी बढ़ सकती है।
- केवल आयात करने से एवं भारत उत्पादन की उपेक्षा करने से घरेलू उत्पादन बंद होगा जो देश की अर्थव्यवस्था पर कुप्रभाव प्रभाव पड़ेगा।
- आयात बढ़ने से विदेशी मुद्रा भंडार (Foreign currency reserve) कम होगा।
- यदि विदेशी मुद्रा का भंडार कम होगा तो विदेशी सरकारों पर आयात हेतु निर्भरता (Dependency) बढ़ेगी और इससे देश को कूटनीतिक (Diplomatic) नुकसान हो सकता है।
- अत्यधिक आयात से विदेशी सरकार के प्रति अंध-श्रद्धाभाव (Blind faith) बढ़ सकता है।

1.19 आयात नियंत्रण के उपाय *(Measures to Control Import)*

- आयात उदारीकरण से उत्पन्न होने वाली चुनौतियों को निपटने के लिए अनावश्यक आयात (Unwanted import) पर नियंत्रण रखने के साथ आयात उदारीकरण (Liberalization) की नीति लागू करनी चाहिए। इस प्रकार अंधी-दौड़ में शामिल न होकर विवेकसंगत निर्णय (Prudential decision) लेना चाहिए।

1.20 बाह्योन्मुखी विदेशी निवेश के लाभ *(Benefits of Outward Foreign Investment)*

देशी बचत राशि का विदेशों में निवेश बाह्योन्मुखी विदेशी निवेश कहलाता है।

↓

इससे विदेशों से लाभ और ब्याज कमाने में मदद मिलती है।

↓

अन्य देशों में अपने प्रशिक्षित कामगारों (Trained workers) को रोजगार दिलाने में मदद मिलती है।

↓

इससे देश को कूटनीतिक फायदा होता है क्योंकि साझेदार देश में उत्पादन और रोजगार बढ़ाने में मदद मिलती है।

↓

मित्र देशों में खाद्य, पूँजी आदि द्वारा सहायता पहुँचाने से बाह्य संप्रभुता (Sovereignty) भी सशक्त होती है।

↓

और इस प्रकार समर्थक देशों की संख्या बढ़ती है और अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं में भारत की साझेदारी को वास्तविक धरातल (Real ground) प्राप्त होता है।

- इससे सांस्कृतिक फायदा (Cultural benefits) भी मिलता है क्योंकि इससे हमारी संस्कृति विश्वभर में फैलती है और दूसरे देशों में हमारी छवि बेहतर होती है।

641, प्रथम तल, मुखर्जी नगर, दिल्ली-9. दूरभाष : 27604128, 8800367905, 9891761002, 9560362210, 9313988616
ई-मेल: drishtiacademy@gmail.com, वेबसाइट: drishtifoundation.com
Copyright – Drishti The Vision Foundation

1.21 बाह्योन्मुखी विदेशी निवेश के हानि *(Losses of Outward Foreign Investment)*

- ज्यादा बाह्योन्मुखी विदेशी निवेश (Outward foreign investment) से देशी निवेश के लिए निधि (Funds) की उपलब्धता कम हो सकती है, अतः घरेलू बचत राशि (Domestic saving amount) पर्याप्त हो तभी ऐसी नीति अपनाई चाहिए। अन्यथा देश में वस्तुओं की खपत गिरेगी जिससे घरेलू उत्पादकों को नुकसान होगा। अतः मितव्ययता बढ़ाकर ज्यादा बाह्योन्मुखी विदेशी निवेश किया जाना चाहिए।
- स्पर्धात्मक कूटनीतिक युग (Competitive diplomatic era) में कुछ देशों को मदद करने पर अन्य देश बुरा मान सकते हैं। अतः देश को कूटनीतिक नुकसान (Diplomatic loss) हो सकता है।
- जिस देश में निवेश को बढ़ावा मिलेगा वहाँ के नागरिक-समाज (Civil society) में हमारे प्रति गलतफहमी पैदा हो सकती है और अन्य देश इसका दुष्प्रचार कर सकते हैं।
- यदि हमारी संस्कृति (Culture) का अन्य देश में विस्तार होता है तो उस देश की संस्कृति पर दबाव पड़ता है।
- सहायता राशि का भी अन्य देश द्वारा दुरुपयोग किया जा सकता है।
- साथ ही, वहाँ के स्थानीय कामगारों (Local workers) में इन विदेशी कामगारों के प्रति अवांछित प्रतिस्पर्धा (Unwanted competition) की भावना का विकास हो सकता है।

1.22 बाह्योन्मुखी विदेशी निवेश के उपाय *(Measures to Control Outward Foreign Investment)*

- बाह्योन्मुखी विदेशी निवेश से प्रभावित देश के नागरिक समाज को विश्वास में लेना चाहिए साथ ही इसे पारदर्शी (Transparent) तरीके से शामिल करना चाहिए। इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि इसमें दुष्प्रचार (Rumors) न फैलाया जाए।

1.23 अन्तर्मुखी विदेशी निवेश के लाभ *(Benefits of Inward Foreign Investment)*

- अन्य देशों से देश में अंदर आने वाले निवेश को अन्तर्मुखी विदेशी निवेश (Inward foreign investment) कहते हैं, इससे घरेलू निवेश की बचत राशि से ऊपर उठाने में मदद मिलती है।

↓

बेरोजगारी का त्वरित गति से ह्रास (Rapid decline) होता है और उत्पादन एवं आय बढ़ाने में मदद मिलती है।

↓

लोगों की आय बढ़ने से सरकारी की कर-प्राप्ति में वृद्धि होती है।

↓

विदेशी निवेश से आधारभूत संरचना (Basic infrastructure) का तेजी से विकास होता है और घरेलू बुनियादी ढाँचा सुदृढ़ (12वीं पंचवर्षीय योजना में आधारभूत ढाँचे के विकास के लिए एक हजार अरब डॉलर की आवश्यकता) होता है।

↓

इस प्रकार संपूर्ण आर्थिक क्रियाकलाप (Economic activities) में तेजी आती है।

↓

पूँजी भंडार क्षेत्र (Capital reserve sector) में सक्रियता बढ़ती है।

✓ विदेशी धन का निवेश यदि ग्रामीण क्षेत्रों में किया जाता है तो गाँवों की उन्नति के साथ लोगों का शहर की ओर पलायन (Migration) कम होता है और इस प्रकार 'भारत' और 'इंडिया' का द्वैत कम करने में मदद मिलती है।

↓

परंपरागत (Traditional) लघु और कुटीर उद्योगों में विदेशी निवेश को प्रोत्साहित करने तथा उन्हें पुनर्जीवित करने में मदद मिलती है।

Copyright -- Drishti The Vision Foundation

- निर्यात को प्रोत्साहित करने वाले जितने कार्यक्रम हैं यदि उनमें विदेशी निवेश आता है तो निर्यात संवर्द्धन (Export expansion) में मदद मिलती है।
- जिन देशों से वित्त (Finance) आयात होता है उनसे कूटनीतिक संबंधों (Diplomatic relation) में सुधार होता है।

1.24 अन्तर्मुखी विदेशी निवेश के हानि (*Losses of Inward Foreign Investment*)

- ज्यादा अन्तर्मुखी विदेशी निवेश से विदेशों से निर्भरता बढ़ती है और स्वतंत्र विदेशी नीति (Independent foreign policy) में बाधा आती है।
- यदि विलासितापूर्ण वस्तुओं (Luxurious goods) के उत्पादन में विदेशी निवेश को बढ़ावा देते हैं तो देश की उपभोक्तावादी संस्कृति को भी बढ़ावा मिलता है।
- विदेशी ऋण का भार भारत बढ़ सकता है और ऋण पर ब्याज का दायित्व आगे चलकर असह्य (Intolerable) हो सकता है।
- यदि पिछड़े अंचलों के बजाय निवेश विकसित अंचलों में किया जाए तो आंचलित विषमता (Inequality) बढ़ सकती है।
- सतर्क नीति के बजाय अविवेकपूर्ण उदारीकरण (Irrational liberalization) की नीति अपनाने से संसाधनों के दोहन के स्थान पर शोषण (Exploitation) की प्रवृत्ति (पर्यावरणीय प्रदूषण का बढ़ना) बढ़ सकती है।
- इससे सामाजिक राजनीतिक विचलन (Socio-political deviation) भी आ सकता है यदि विदेशी मुद्रा का निवेश ऐसे क्षेत्रों में किया जाये जो मूलतः रोजगार/श्रम गहन है तो बरोजगारी बढ़ने की आशंका हो सकती है।
- विदेशी निवेशों का अविवेकपूर्ण उदारीकरण करने से उत्पादकों पर असह्य दबाव पड़ सकता है जिससे कई बंद हो सकते हैं और नव-उपनिवेशवाद (New-colonialism) का खतरा हो सकता है।

1.25 अन्तर्मुखी विदेशी निवेश के नियंत्रण के उपाय (*Measures to Control Inward Foreign Investment*)

- विदेशी निवेश से पहले उसकी चुनौतियों से निपटने के लिए विनियामक संस्था (Regulating institution) स्थापित करनी चाहिए ताकि वह स्वयं स्वतन्त्रात्मक रूप से विदेशी मुद्रा का अनुमोदन करे। साथ ही विवाद निपटाने के लिए अलग से अधिकरण (Tribunal) बना दें।
- देश के कमजोर उत्पादन क्षेत्र को वित्तीय, कौशल और प्रौद्योगिकीय सशक्तिकरण करें। साथ ही अनावश्यक आशंका को रोकने के लिए देश में जागरूकता का विकास (Development of awakening) भी होना चाहिए।

1.26 *World Economic Forum (WEF)*

इस फोरम की नींव 1971 में जेनेवा (Jeneva) में Klaus Schwab द्वारा दी गई। शुरूआत में इस संस्था का नाम European Management Forum था, जिसे 1987 में बदलकर World Economic Forum कर दिया गया। यह पूंजीवादियों का मंच है, जिसका उपयोग अब अंतर्राष्ट्रीय विवादों के निपटारे के लिए भी होने लगा है। यह फोरम शेष उद्योगपतियों, अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त नेताओं, कुछ चुने हुए शिक्षाविदों तथा पत्रकारों को वैश्विक संवेदनशील मुद्दों (Globalised Sensitive Issues), मूलतः आर्थिक (Mainly Economy), गौणतः स्वास्थ्य (Secondly Health) तथा पर्यावरण (Environment) आदि पर विचारों के आदान-प्रदान का मौका देता है।

आलोचना (Critism):

1990 के दशक के अंत में वैश्विकरण (Globlisation) के विरोधियों ने World Economic Forum के साथ विश्व बैंक (World Bank), अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF), G-7, World Trade Organization (WTO) की कड़ी आलोचना की। इनका कहना है कि बढ़ती हुई पूंजीवादी (Capitalism) मानसिकता तथा वैश्विकरण (Globalisation), पर्यावरण का विनाश कर रहे हैं तथा गरीबी को बढ़ावा दे रहे हैं। लगभग 10,000 प्रदर्शनकारियों ने मेलबर्न (Melbourne) ऑस्ट्रेलिया में चल रही WEF (World Economic Forum) की बैठक का विरोध, वहाँ भाग लेने आए 200 प्रतिभागियों का रास्ता रोककर किया।

वैश्विक प्रतिस्पर्धा रिपोर्ट (Global Competitiveness Report-GCR)

GCR, World Economic Forum द्वारा प्रकाशित वार्षिक रिपोर्ट है, जिसमें विश्व के विभिन्न देशों की अर्थव्यवस्थाओं का मूल्यांकन किया जाता है। 2008 की वैश्विक मंदी से पहले अमेरिका की अर्थव्यवस्था सबसे प्रतिस्पर्धात्मक थी, लेकिन इन दिनों स्विट्जरलैंड को सबसे अधिक प्रतिस्पर्धात्मक देश का दर्जा प्राप्त है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

World Social Forum (WSF)

यह दुनिया के विभिन्न वामपंथ (Leftist), कम्यूनिस्ट, समाजवादी (Socialist) अर्थात् वंचितों (have not's) का मंच है। विश्व के सभी सिविल सोसायटी संस्थाओं की वार्षिक बैठकें इस मंच के अंतर्गत आयोजित की जाती है। इसका पहला सम्मेलन 2001 ब्राजील (Porto Alegre) में हुआ। हालाँकि इसका कोई मुख्यालय नहीं है, लेकिन World Economic Forum (WEF) का विरोध प्रदर्शन करने हेतु हर वर्ष के जनवरी माह में इसकी बैठकें WEF की बैठकों के समय ही होती हैं।

इस संस्था की स्थापना वैश्विकरण (Globlization) तथा नवउपनिवेशवाद (Neo-colonialism) के विरोधस्वरूप में हुआ है। समीर अमीन नामक व्यक्ति इस संस्था के Brain Child माने जाते हैं। इस संस्था ने अंतर्राष्ट्रीय निर्भरता सिद्धांत (International Dependency Story) को फोकस किया है, जिसके अनुसार दुनिया के अधिकांश विकासशील (Developing) तथा अविकसित (Non-developing) देश यूरोपीय तथा पश्चिमी देशों पर निर्भर होते जा रहे है। भूमंडलीकरण (Globlisation) के कारण विकासशील तथा अविकसित देशों की निर्भरता विकसित देशों पर बढ़ती जा रही है और साम्राज्यवाद के इस नये रूप को ही नवउपनिवेशवाद कहा जा रहा है।

दृष्टि The Vision

Copyright – Drishti The Vision Foundation

आयोजन: भाग–1
(Planning : Part-1)

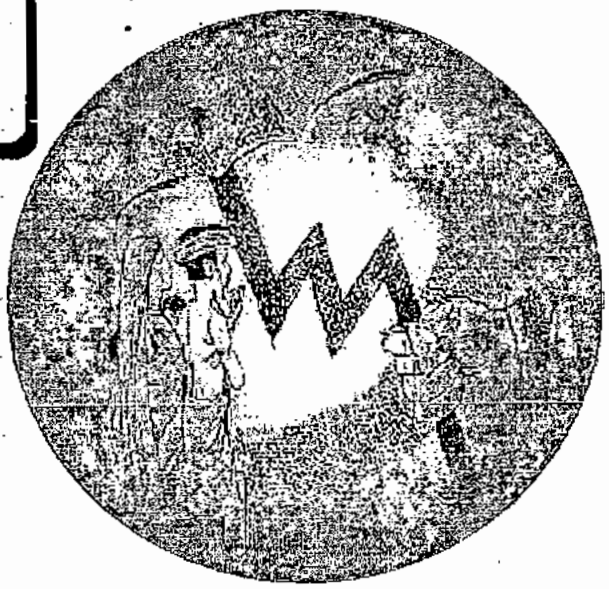

1. आयोजन : 'क्या'?
   Planning : 'What'?
2. आयोजन : 'क्यों'?
   Planning : 'Why'?
3. भारत में आयोजन का इतिहास : एक दृष्टि में
   History of Planning in India-At a glance
4. आयोजन के विभिन्न प्रकार
   Different types of planning
5. आर्थिक आयोजन के उद्देश्य
   Objectives of economic Planning
6. भारतीय आर्थिक आयोजन की प्रमुख विशेषताएँ
   Key Features of Indian Economic Planning
7. भारतीय आयोजन की रणनीति
   Strategy of Indian Planning
8. पंचवर्षीय योजनाएँ एवं उनके लक्ष्य
   Five year plans & their objectives

आयोजन (Planning)

आयोजन : क्या? (Planning : What?)

राज्य के नेतृत्व में संपूर्ण अर्थव्यवस्था का ऐसा प्रबंधन (Management) जिससे राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उपलब्ध देशी तथा विदेशी संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग (Optimum Utilization) सुनिश्चित हो सके, साथ ही दीर्घकालिक निरंतरता (Long-Term Continuity) सुनिश्चित हो, आयोजन कहलाता है।

वर्तमान में कल्याणकारी राज्य (Welfare State) की अवधारणा में आर्थिक आयोजन (Economic Planning) के द्वारा समाज को विकसित करने का लक्ष्य रखा जाता है। लगभग 200 वर्षों के अंग्रेजी शासन के दौरान भारत की अर्थव्यवस्था को जान-बूझकर अल्पविकसित बनाने के उद्देश्य से ब्रिटेन की अर्थव्यवस्था के साथ इस तरह जोड़ दिया गया था कि भारत की अर्थव्यवस्था पूरी तरह से उस देश की अर्थव्यवस्था पर निर्भर हो गई थी। देश के औपनिवेशिक शोषण (Colonial Exploitation) और अल्पविकास की वजह से यहां जो आर्थिक समस्याएं पैदा हुई उनमें बेरोजगारी (Unemployment) और गरीबी (Poverty) सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण हैं। अतः बाजार-तंत्र (Market-system) पर पूरी तरह निर्भर रहकर न तो देश की समस्याओं को हल किया जा सकता था और न ही लम्बे अर्से से रुकी हुई विकास-प्रक्रिया (Development-Process) को फिर से शुरु कर पाना संभव था। अतः भारत के नीति निर्माताओं (Policy makers) ने प्रारंभ से ही आर्थिक आयोजन का समर्थन किया। इसी पृष्ठभूमि में भारत में सन् 1951 ई. में आर्थिक आयोजन की प्रक्रिया शुरु हुई।

आयोजन क्यों? (Planning : Why?)

व्यापक गरीबी (Wide-spread Poverty), बेरोजगारी (Unemployement), निम्न उपभोग स्तर (Low Consumption Level), गरिमाहीन जीवन (Dignityless Life), उद्योगों का अभाव (Lack of Industries), व्यापार का अभाव (Lack of Trade), कौशल का अभाव (Lack of Skills), वित्तीय संसाधनों का अभाव (Lack of Financial Resources) आदि ऐसे कई कारण थे, जिन्होंने भारत में आयोजन की प्रक्रिया को जन्म दिया। आयोजन की प्रक्रिया को समझने से पहले हमें उत्पादन ढाँचे (Production Structure) को समझना होगा। उत्पादन ढाँचे का गुणात्मक वर्गीकरण (Qualitative Classification) दो प्रकार से किया जाता है।

1. उत्पादन संरचना के आधार पर (On the basis of Production Structure)

- उत्पादन संरचना - किसी देश या अंचल (Region) के कुल उत्पादन (Production) में उत्पादन के विभिन्न क्षेत्रों के प्रतिशत अंशदान की संरचना को उत्पादन संरचना कहते है।

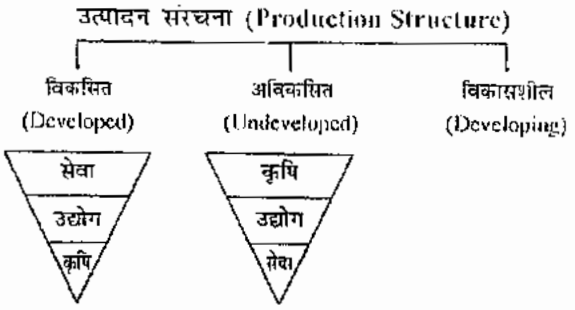

- **विकसित उत्पादन संरचना:** यदि किसी देश की उत्पादन संरचना में कृषि का प्रतिशत अंश न्यूनतम (Minimum), उद्योग का उससे अधिक और सेवा क्षेत्र का अंश सर्वाधिक (Maximum) हो तो उसकी उत्पादन संरचना को विकसित उत्पादन संरचना कहते हैं।
- **अविकसित उत्पादन संरचना:** यदि किसी देश की उत्पादन संरचना में सेवा का प्रतिशत अंश न्यूनतम, उद्योग का उससे अधिक और कृषि क्षेत्र का अंश सर्वाधिक हो तो उसकी उत्पादन संरचना को अविकसित उत्पादन संरचना कहते हैं।
- **विकासशील उत्पादन संरचना:** यदि किसी देश की उत्पादन संरचना में कृषि का प्रतिशत अंश कम होता जा रहा हो तथा उद्योग एवं सेवा क्षेत्र का प्रतिशत अंश बढ़ता जा रहा हो तो उसे विकासशील उत्पादन संरचना कहते हैं।

2. पेशागत संरचना के आधार पर (On the basis of Professional Structure)

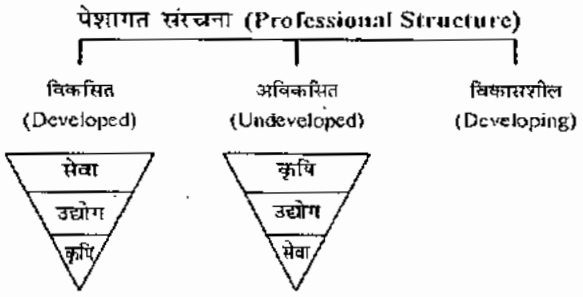

- **पेशागत संरचना:** किसी देश या अंचल के कुल रोजगार में उत्पादन के विभिन्न क्षेत्रों के प्रतिशत अंशदान की संरचना को पेशागत संरचना कहते है।
- **विकसित पेशागत संरचना:** यदि किसी देश के कुल उपलब्ध रोजगार (Total available employement) में कृषि क्षेत्र में उपलब्ध रोजगार का प्रतिशत अंश न्यूनतम हो और उद्योग एवं सेवा में उत्तरोत्तर बढ़ता (Increasingly) जा रहा हो तो ऐसी संरचना विकसित पेशागत संरचना कहलाती है।
- **अविकसित पेशागत संरचना:** यदि किसी देश के कुल उपलब्ध रोजगार में सेवा क्षेत्र में उपलब्ध रोजगार का प्रतिशत अंश न्यूनतम हो और उद्योग एवं कृषि में उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा हो तो ऐसी संरचना अविकसित पेशागत संरचना कहलाती है।
- **विकासशील पेशागत संरचना:** यदि किसी देश के कुल उपलब्ध रोजगार में कृषि का प्रतिशत अंश कम होता जा रहा हो तथा उद्योग एवं सेवा क्षेत्र का प्रतिशत अंश बढ़ता जा रहा हो तो इस प्रकार की संरचना को विकासशील पेशागत संरचना कहते हैं।
- किसी क्षेत्र विशेष के आर्थिक विश्लेषण (Economic Analysis) के लिए उत्पादन संरचना एवं पेशागत संरचना को ही आधार बनाया जाता है और इस परिप्रेक्ष्य (Reference) में भारत की स्थिति एक विकासशील देश के रूप में है।

भारत में आयोजन का इतिहास-एक दृष्टि में (History of Planning in India-At a glance)

प्रस्तावक	वर्ष	माध्यम	उपलब्धि
सर एम. विश्वेश्वरैया	1934	पुस्तक 'Planned Economy for India'	मात्र परिकल्पना तक ही सीमित रही
जवाहर लाल नेहरु	1938	राष्ट्रीय आयोजन समिति	पूर्णत: सफल नहीं रही
बम्बई के 8 उद्योगपतियों द्वारा समन्वयित प्रयास	1944	बम्बई आयोजन	क्रियान्वयन नहीं हो सका
आचार्य श्रीमन्नारायण	1944	गांधीवादी आयोजन	क्रियान्वयन नहीं हो सका
एम. एन. राय	1945	पीपुल्स प्लान	पूर्णत: सफल नहीं रही
अंतरिम सरकार का गठन	1946	उच्चस्तरीय सलाहकारी आयोजन आयोग	स्थायी आयोजन आयोग की संस्तुति
जय प्रकाश नारायण	जनवरी 1950	सर्वोदय योजना	कार्यान्वित नहीं हो सकी।
भारत सरकार	15 मार्च 1950	प्रस्ताव पारित	योजना आयोग का गठन

आयोजन के विभिन्न प्रकार (Different types of planning)

वस्तुत: आर्थिक आयोजन के विभिन्न प्रकारों के निर्धारण का कोई निश्चित और तार्किक (Rational) आधार नहीं हो सकता है, फिर भी परंपरागत रूप से (Traditionally) मुख्यत: तीन प्रकार के आयोजन मॉडलों को स्वीकार किया गया है। पहला, विकसित पूँजीवादी देश में आयोजन का मॉडल; दूसरा, अल्प विकसित देशों में अपनाया जाने वाला आयोजन का मॉडल, जो विकास की सम्भावनाओं को वास्तविकता में बदलने का लक्ष्य रखता है और तीसरा, समाजवादी देशों में अपनाए जाने वाले आयोजन का मॉडल। एक अन्य दृष्टि से देखें तो आयोजन का वर्गीकरण पाँच आधारों पर किया जाता है–

आयोजन का वर्गीकरण

- अर्थव्यवस्था में राज्य के हस्तक्षेप (Interference) की मात्रा एवं गुणवत्ता (Amount and Quality) के आधार पर
- आयोजन की अवधि (Duration of Planning) के आधार पर
- संसाधन आकलन (Calculation of Resources) एवं लक्ष्य निर्धारण (Setting up targets) की इकाई (Unit) के आधार पर
- आयोजन की क्षेत्रीय व्यापकता (Regional Expansion) के आधार पर
- लक्ष्य प्राप्ति की रणनीति (Strategy of achieving targets) के आधार पर

अर्थव्यवस्था में राज्य के हस्तक्षेप की मात्रा (Amount of Interference) एवं गुणवत्ता (Quality) के आधार पर आयोजन के प्रकार

आदेशात्मक (Imperative)

(i) यह केन्द्रीकृत व्यवस्था (Centralized System) है तथा इसमें राज्य/सरकारी संस्थाओं का व्यापक एवं प्रत्यक्ष हस्तक्षेप (Comprehensive and Direct interference) होता है।

(ii) चूँकि क्रियान्वयन में राज्य की प्रत्यक्ष भूमिका है, इसलिए एक विशाल प्रशासनिक ढाँचा (Large Administrative Structure) विकसित किया जाता है।

(iii) प्रशासनिक ढाँचे को सक्रिय (Active) रखने के लिए इसका प्रयोग होता है, ताकि क्रियान्वयन की गुणवत्ता (Quality of Application) में सुधार हो। इसमें मुख्यत: दण्ड नीति (Policy of Stick) का उपयोग किया जाता है। चूँकि प्रशासन के लिए कठोर लक्ष्य (Rigid Targets) तय किये जाते हैं, इसलिए इसे लक्ष्य आयोजन (Target Policy) भी कहते हैं।

(iv) यहाँ वितरण प्रणाली (Distribution System) में प्रशासन की प्रत्यक्ष भूमिका होती है, इसलिए प्रशासित कीमत क्रियाविधि [Administered Price Machanism (APM)] का प्रयोग किया जाता है।

(v) राज्य की बुनियादी मान्यता होती है कि उपभोक्ता विवेकशील (Rational) नहीं है, इसलिए राज्य उपभोग ढाँचे पर भी नियंत्रण करता है। अत: उपभोक्ता के लिए सीमित विकल्प (Limited Options) होते हैं। (जैसे- डबल ब्रांड, सिंगल ब्रांड इत्यादि)

निदेशात्मक/सांकेतिक/प्रेरक (Indicative)

(i) यह विकेन्द्रीकृत व्यवस्था (Decentralized System) है तथा इसमें राज्य संस्थाओं का सांकेतिक एवं परोक्ष हस्तक्षेप होता है। इसमें निजी क्षेत्र की व्यापक भागीदारी (Comprehensive Participation) होती है, इसलिए इसे भागीदारी आयोजन (Participatory Planning) भी कहते हैं। चूंकि सरकार केवल नीतियाँ बनाने का कार्य करती है और क्रियान्वयन निजी क्षेत्र द्वारा होता है, इसलिये इसे नीतिगत आयोजन (Policy-based planning) भी कहते हैं।

(ii) चूँकि निजी संस्थाओं या बाजार संस्थाओं द्वारा क्रियान्वयन होता है, इसलिए लघु प्रशासनिक ढाँचा (Small Administrative Structure) तैयार किया जाता है।

(iii) वहीं यहाँ प्रेरणा विधि (Inspirational Theory) द्वारा निजी संस्थाओं की गतिशीलता बढ़ाई जाती है, ताकि क्रियान्वयन में सुधार हो। (जैसे-SEZ, कम ब्याज पर ऋण, कर में छूट इत्यादि)

(iv) वहीं यहाँ वितरण प्रणाली (Distribution System) में प्रशासन की परोक्ष भूमिका होती है, इसलिए बाजार कीमत क्रियाविधि (Market price mechanism-MPM) का प्रयोग किया जाता है।

(v) राज्य की बुनियादी मान्यता होती है कि निजी जरूरतों के सन्दर्भ में उपभोक्ता (Consumer) पर्याप्त विवेकशील हैं, इसलिए उत्पादन ढाँचे का विविधीकरण (Diversification) करते हैं, इस प्रकार विकल्प बढ़ाये जाते हैं। (जैसे-मल्टी ब्रांड) इत्यादि,

भारत में 1991 से पहले आदेशात्मक (Impretative) अर्थव्यवस्था की स्थिति थी, वहीं 1991 के व्यापक आर्थिक सुधार (Comprehensive Economics Reforms) के बाद यह निदेशात्मक (Indicative) अर्थव्यवस्था के ज़्यादा नज़दीक है।

आयोजन की अवधि के आधार पर आयोजन के प्रकार
(Types of planning on the basis of duration of planning)

बंद अवधि (Closed Duration)

- **अल्पकालिक (Short-Term) (वार्षिक)**
- **मध्यमकालिक (Middle-Term) (पंचवर्षीय)**
  - भारत में इसे ही आयोजन की बुनियादी अवधि के रूप में अपनाया गया है। (पड़ोसी देशों की स्थिति कुछ इस प्रकार है--चीन-पाँच वर्ष, पाकिस्तान-सात वर्ष, श्रीलंका-दस वर्ष।)
- **दीर्घकालिक/दिशाबोधक/दिष्ट (Perspective Planning)**
  - (i) राष्ट्रीय जनसंख्या नीति में जनसंख्या स्थिरीकरण (Stabilization) का उद्देश्य पहले वर्ष 2000 2045 तक था लेकिन तत्कालीन परिस्थितियों को देखते हुए इसे बदलकर 2000-2077 कर दिया गया है।)
  - (ii) राष्ट्रीय कृषि नीति (National Agriculture Policy) (2000- 2020)।
  - (iii) राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति (National Health Policy) (2002-17)।
  - (iv) राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकीनीति (National Science & Technology Policy) (2003- 2020)

अनवरत (Rolling Planning)

जनता पार्टी की सरकार ने पाँचवी पंचवर्षीय योजना को उसकी निर्धारित अवधि (Planned Duration) के एक वर्ष पूर्व ही अर्थात चार वर्षों (1974-78) में ही समाप्त करके 01 अप्रैल 1978 से एक नई योजना प्रारंभ कर दी थी। इस योजना को अनवरत योजना (Rolling Plan) का नाम दिया गया। इसके लिए प्रथम चरण के रूप में 01 अप्रैल 1978 से पाँच वर्षों (1978-1983) के लिए छठी योजना प्रारंभ की गई, किन्तु 1980 में छठी योजना (अनवरत योजना) को समाप्त कर दिया गया, तथा एक नई छठी योजना प्रारंभ की गई, जिसकी अवधि (1980-85) रखी गई।

संसाधन आकलन एवं लक्ष्य निर्धारण की 'इकाई' के आधार पर आयोजन के प्रकार
(Types of planning on the basis of calculation of resources and unit of target setting)

भौतिक आयोजन
(Physical Planning)

- देश के जिस अंचल (Region) में मुद्रा का प्रचलन नहीं है, उसके लिए संसाधनों का आकलन और लक्ष्यों का निर्धारण भौतिक इकाईयों (Physical Units) में किया जाता है।
- लोक-सेवकों की संख्या के निर्धारण में भी इसका प्रयोग होता है।

वित्तीय आयोजन
(Financial Planning)

- यदि संसाधनों के आँकलन और लक्ष्यों का निर्धारण मौद्रिक आधार (Monetary Basis) पर हो, तो इसे वित्तीय आयोजन (Financial Planning) कहते हैं।
- शहरी (Urban) और अर्द्ध-शहरी (Semi-urban) इलाकों के आर्थिक क्रियाकलापों (Economic activities) के लिए इसका प्रयोग होता है।

भारत में दोनों का क्रियान्वयन (Execution) समान रूप से हो रहा है।

आयोजन की क्षेत्रीय व्यापकता के आधार पर आयोजन के प्रकार
(Types of planning on the basis of regional expansion of planning)

- समष्टि स्तरीय/ राष्ट्रीय आयोजन (Macro Planning)
- मध्यवर्ती/प्रांतीय/ राज्यस्तरीय आयोजन (Meso Level Planning)
- स्थानीय या व्यष्टि स्तरीय आयोजन (Micro Planning)
  - जिला स्तरीय (District-Level)
  - प्रखण्ड स्तरीय (Block-Level)
  - पंचायत के स्तर पर (Panchayat-Level)

लक्ष्य प्राप्ति की रणनीति के आधार पर आयोजन के प्रकार
(Types of planning on the basis of strategy of achieving targets)

संरचनात्मक आयोजन (Structural Planning)

यदि लक्ष्य प्राप्ति के लिए संसाधनों का वर्तमान स्वामित्व ढाँचा (Current Ownership Structure), उत्पादन की विधि (Method of Production) एवं संस्थागत व्यवस्था (Institutional System) में आमूल-चूल (Overall) परिवर्तन हो, तो इसे संरचनात्मक आयोजन कहते हैं। उदाहरण-भूमि सुधार (Land Reform)

प्रकार्यात्मक आयोजन (Functional Planning)

यदि लक्ष्य प्राप्ति के लिए संसाधन स्वामित्व के ढाँचे, उत्पादन विधि या संस्थागत व्यवस्था को छेड़ने (Fiddle) के बजाय उसके अनुकूलतम दोहन (Optimum Utilization) की रणनीति अपनाई जाये तो उसे प्रकार्यात्मक आयोजन कहते हैं। उदाहरण- हरित क्रांति (Green Revolution)

आर्थिक आयोजन के उद्देश्य (Objectives of economic Planning)

सामान्यत: किसी भी देश के संदर्भ में आर्थिक आयोजन का उद्देश्य आत्मनिर्भरता (Self dependence) और गरीबी निवारण (Poverty Alleviation) होता है, लेकिन इसमें और भी तथ्य शामिल होते हैं। भारत में विभिन्न विकास योजनाओं के अंतर्गत मुख्य रूप से 6 उद्देश्यों का उल्लेख मिलता है जो इस प्रकार हैं- 1. आर्थिक समृद्धि (Economic prosperity) 2. आत्मनिर्भरता (Self dependence) 3. पूर्ण रोजगार (Absolute employment) 4. आर्थिक विषमताओं में कमी (To minimize economic inequalities) 5. गरीबी निवारण (Poverty Alleviation) 6. आधुनिकीकरण (Modernization)।

यद्यपि सभी योजनाओं में इन उद्देश्यों को महत्त्व नहीं दिया गया है, तथापि प्रारंभिक योजनाओं में विशेषत: आर्थिक समृद्धि और विकास पर बल दिया गया। पांचवीं पंचवर्षीय योजना में विकास के साथ-साथ आत्मनिर्भरता और गरीबी निवारण को महत्त्व दिया गया। छठी योजना में रोजगार पर बल दिया गया तो सातवीं योजना में आधुनिकीकरण पर।

भारतीय आर्थिक आयोजन की प्रमुख विशेषताएँ (Key Features of Indian Economic Planning)

भारतीय आर्थिक आयोजन की प्रमुख विशेषताओं को निम्नलिखित प्रकार से चिह्नित किया जा सकता है -

- **भारतीय आर्थिक आयोजन का चरित्र निर्देशात्मक (Indicative)** है। योजना आयोग मात्र परामर्शदात्री संस्था (Consulting institution) है, जो आयोजन की रूपरेखा निर्धारित करती है।
- **भारतीय आर्थिक आयोजन** आदेशात्मक **(Imperative) नहीं है।** आर्थिक क्रियाओं के संपादन में आदेशों (Commands) के स्थान पर प्रोत्साहन (Encouragement) से कार्य किया जाता है। निजी क्षेत्र को विकास की गति (Speed) और दिशा (Direction) का संकेत दिया जाता है किंतु उसे बाध्य नहीं किया जाता।
- **भारतीय आर्थिक आयोजन का स्वरूप केन्द्रीकृत न होकर विकेन्द्रीकृत (Decentralized)** है। राष्ट्रीय महत्त्व के कुछ महत्त्वपूर्ण विषयों को छोड़कर अन्य सभी विषयों पर निर्णय का स्वरूप विकेन्द्रीकृत है।
- भारतीय आर्थिक आयोजन में **समाजवादी (Socialist) और पूँजीवादी तत्वों (Capitalist factors) का समन्वय** है।
- भारतीय अर्थव्यवस्था मिश्रित अर्थव्यवस्था (Mixed Economy) है और इसमें निजी (Private) तथा सार्वजनिक (Public) दोनों ही क्षेत्रों की महत्वपूर्ण भूमिका है, यद्यपि आर्थिक आयोजन में **सार्वजनिक क्षेत्र को अधिक महत्त्व** दिया गया है।
- भारतीय आर्थिक आयोजन में ढाँचागत (Infrastructural) और आधारभूत (Basic) **भारी उद्योगों की स्थापना पर बल दिया**

गया है।

- भारतीय आर्थिक आयोजन की प्रकृति मूलतः वित्तीय (Financial) न होकर भौतिक (Physical) है अर्थात् पहले भौतिक लक्ष्यों को निर्धारित किया जाता है और फिर उसके आधार पर वित्तीय संसाधनों (Financial resources) की व्यवस्था की जाती है।
- भारतीय आर्थिक आयोजन सामाजिक आयोजन (Social Planning) भी है अर्थात् यह विशुद्ध आर्थिक लक्ष्यों (Net Economic Goals) तक सीमित न होकर, सामाजिक लक्ष्यों (Social Goals) से भी प्रेरित होता है।

भारतीय आयोजन की रणनीति Strategy of Indian Planning

जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि आर्थिक आयोजन निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए संसाधनों के बेहतर उपयोग के आयोजन को कहते हैं। इसी संदर्भ में भारतीय आयोजन का मुख्य उद्देश्य आर्थिक संवृद्धि (Economic Growth) में वृद्धि करना तथा गरीबी (Poverty) एवं असमानता (Inequality) को दूर करना है। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए ही विभिन्न योजनाओं में विभिन्न प्रकार की रणनीति अपनाई गई।

पंचवर्षीय योजनाएँ, उनके लक्ष्य एवं उनका निष्पादन (Five year plans, their objectives & their performance)

प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56) [First five year plan (1951-56)]

प्रथम पंचवर्षीय योजना 1 अप्रैल, 1951 से प्रारंभ हुई। उस समय भारतीय अर्थव्यवस्था के समक्ष कई समस्याएँ थीं, जिनमें शरणार्थी समस्या (Refugee problem), खाद्यान्न संकट (Food crisis) तथा मुद्रास्फीति (Inflation) प्रमुख थीं। इन समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में शरणार्थियों के पुनर्वास (Resettlement) तथा भूमि सुधार (Land reforms) और सामुदायिक विकास कार्यक्रमों (Community Development Programmes) के माध्यम से कृषि क्षेत्र का विकास प्रमुख लक्ष्य थे। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य लक्ष्य भी थे, जो निम्न हैं -

- द्वितीय विश्वयुद्ध तथा देश के विभाजन के फलस्वरूप हुई क्षतिग्रस्त अर्थव्यवस्था का पुनरुत्थान (Re-emergence of damaged economy) करना।
- स्फीतिकारक (Inflationary) प्रवृत्तियों को रोकना।
- देश की अर्थव्यवस्था को इस प्रकार से सबल बनाना कि भविष्य में द्रुत गति से आर्थिक विकास संभव हो सके अर्थात् सड़कों का निर्माण, परिवहन एवं संचार की सुविधाएँ (Facilities related to transportation and telecommunication) उपलब्ध कराना, सिंचाई (Irrigation) एवं जल विद्युत (Hydro-electricity) परियोजनाओं का निर्माण करना आदि।
- उत्पादन-क्षमता (Production capacity) में वृद्धि करना तथा आर्थिक विषमता (Economic inequality) को यथासंभव कम करना।
- कच्चे मालों (Raw goods), विशेषकर पटसन एवं रुई की उत्पादन-स्थिति (Production condition) को सुधारना।
- ऐसी प्रशासनिक एवं अन्य संस्थाओं का निर्माण करना, जो कि देश के विकास कार्यक्रमों को लागू करने के लिए आवश्यक हों।

इस योजना में प्राप्ति का स्तर लक्ष्य से अधिक था। राष्ट्रीय आय में 3.6% वृद्धि दर (लक्ष्य 2.1% था) तथा प्रति व्यक्ति आय में 1.8% की वृद्धि दर प्राप्त हुई तथा वृद्धिमान पूँजी उत्पाद अनुपात (Incremental Capital Output Ratio- ICOR) 2.95 : 1 रहा। इसके साथ ही, कृषि, सिंचाई और सामुदायिक विकास (Community development) के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण सफलता प्राप्त की गई।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-61)

द्वितीय पंचवर्षीय योजना महालनोबिस मॉडल पर आधारित थी। इस योजना में तीव्र औद्योगीकरण (Rapid industrialization) के माध्यम से देश की अर्थव्यवस्था को तीव्र आर्थिक विकास की स्थिति में पहुँचाने का लक्ष्य रखा गया। इस योजना में आधारभूत

और भारी उद्योगों पर विशेष बल देते हुए उन्हें सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई।

साथ ही 1956 में घोषित औद्योगिक नीति में समाजवादी मॉडल के समाज की स्थापना को स्वीकार किया गया। इसके अतिरिक्त इस योजना के अन्य लक्ष्य इस प्रकार थे –

- नागरिकों के जीवन-स्तर (Living standards) को ऊंचा उठाने के लिए 5 वर्षों में राष्ट्रीय आय में 25% की वृद्धि करना।
- रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना तथा आय एवं संपत्ति की असमानता (Inequality of income and property) को कम करना और आर्थिक शक्ति का संतुलित एवं समान वितरण करना।
- पूँजी निवेश की दर को 7% से बढ़ाकर 11% करना।

इस योजना में कृषि के स्थान पर उद्योगों को प्राथमिकता देने के परिणामस्वरूप खाद्यान्न तथा अन्य कृषि उत्पादनों में भारी कमी हुई, मुद्रास्फीति बढ़ी और इस कारण विदेशी मुद्रा (Foreign currency) का संकट पैदा हो गया। किंतु आर्थिक विकास की दिशा में कुछ महत्त्वपूर्ण सफलताएं भी प्राप्त हुईं। जैसे-सार्वजनिक क्षेत्र (Public sector), औद्योगिक क्षेत्र (Industrial sector) में उत्प्रेरक (Catalyst) के रूप में उभरा। ऊर्जा (Energy), परिवहन (Transport) व संचार (Telecommunication) के क्षेत्र में आधारभूत ढाँचे का विस्तार (Extension of basic infrastructure) हुआ जिससे भविष्य में तीव्र औद्योगिक विकास के लिए आधार तैयार हुआ। राष्ट्रीय आय में वृद्धि 4.5 के लक्षित दर के स्थान पर 4.0% वार्षिक वृद्धि दर ही रही। प्रति व्यक्ति आय की वृद्धि दर 1.9% रही एवं ICOR अनुपात 3.40 : 1 रहा।

तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961-66)

यह योजना 1961 से लागू की गई। इसमें भारतीय अर्थव्यवस्था को आत्मनिर्भर बनाने तथा आर्थिक गतिशीलता (Economic mobility) की अवस्था तक पहुँचने का लक्ष्य रखा गया था। इस योजना के प्रमुख उद्देश्य निम्न थे –

- राष्ट्रीय आय में 5% से अधिक वार्षिक वृद्धि प्राप्त करना तथा 5 वर्षों में 30% वृद्धि करना।
- प्रति व्यक्ति आय में इसी अवधि में 17% वृद्धि करना।
- खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता (Self dependency in food grain production) प्राप्त करना तथा उद्योग एवं निर्यात की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए (Industry and export) कृषि उत्पादन को बढ़ाना।
- आधारभूत उद्योगों जैसे – इस्पात (Steel), रासायनिक उद्योग (Chemical industry), ईंधन एवं शक्ति का विस्तार करना (Extension fuel and energy) तथा मशीन निर्माण (Machinery production) क्षमता स्थापित करना।
- देश की श्रम शक्ति का अधिकतम उपयोग (Maximum usage) करना तथा रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना।
- अवसर की समानता को अधिकाधिक बढ़ाना तथा आय और धन के वितरण की असमानता (Inequality of distribution) को कम करना एवं आर्थिक शक्ति का समान वितरण करना।

इसके बावजूद खाद्यान्न उत्पादन (Food grain production) में 6% की औसत वार्षिक वृद्धि के स्थान पर 2% की वृद्धि प्राप्त की जा सकी तथा औद्योगिक उत्पादन में 14% वार्षिक वृद्धि की जगह यह बहुत कम प्राप्त हुई। राष्ट्रीय आय की वृद्धि दर 5.6% के विरूद्ध 2.2% रही तथा प्रति व्यक्ति आय की वृद्धि दर मात्र 0.2% ही रही।

इसका मुख्य कारण: 1962 में चीन से तथा 1965 में पाकिस्तान के साथ युद्ध रहा, जिस कारण रक्षा क्षेत्र में अधिक व्यय करना पड़ा। इसके अतिरिक्त, अकाल की स्थिति (Situation of drought) भी पैदा हुई। अन्ततः कृषि और उद्योग दोनों ही क्षेत्रों में प्रतिकूल रूप से प्रगति प्रभावित हुई।

तीन वार्षिक योजनाएँ/योजना विराम/योजना अवकाश (Three Annual Plans/Planning gap)

इन तीन वार्षिक योजनाओं की अवधि 1966 से 1969 तक थी। पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार चौथी पंचवर्षीय योजना वर्ष 1966 में तैयार थी लेकिन वित्तीय स्थिति (Financial condition) बिगड़ जाने तथा चीन से पराजित हो जाने के कारण देश का मनोबल थोड़ा कमजोर हुआ और जिसका प्रभाव यह हुआ कि 1966-67 के लिए एक वर्षीय योजना (One year plan) का निर्णय लिया गया। सरकार ने आगामी दो वर्षों में भी इसी वार्षिक योजना की नीति को अपनाया, परिणामस्वरूप तीन वार्षिक योजनाएं अस्तित्व में आयीं। चूँकि योजना पाँच वर्षों के लिए बनाई जाती थीं, अतः इन वार्षिक योजनाओं की अवधि को योजना प्रक्रिया का अंतराल (Gap in planning process) कहा जाता है। कुछ अर्थशास्त्रियों ने इसे 'योजना अवकाश' या 'योजना विराम' की संज्ञा दी है।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (1969-74)

चौथी योजना का प्रारंभ 1969 में हुआ। इसके मूल उद्देश्य थे- स्थिरता के साथ आर्थिक विकास (Economic development with stability), आत्मनिर्भरता की अधिकाधिक प्राप्ति (Maximum gain of self dependency), अर्थव्यवस्था का न्यायपूर्ण विकास (Justified development of economy) तथा संतुलित क्षेत्रीय विकास (Balanced regional development)। इनकी प्राप्ति के लिए निम्न लक्ष्य निर्धारित किये गये -

- अर्थव्यवस्था में (राष्ट्रीय आय में) 5.7% की वार्षिक दर से आर्थिक विकास।
- कृषि तथा औद्योगिक उत्पादन में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना। कृषि उत्पादन में 5% की वार्षिक दर से तथा औद्योगिक उत्पादन में 8% से 10% की वार्षिक दर से वृद्धि करना।
- निर्यात में 7% की वार्षिक वृद्धि दर प्राप्त करना व सार्वजनिक क्षेत्र का विकास (Development of public sector) करना।
- मूल्य स्तर में स्थायित्व प्राप्त करने के उद्देश्य से मुद्रा-प्रसार संबंधी तत्वों (Elements related to currency expansion) को नियंत्रित करना।
- सामान्य उपभोग (General Consumption) की वस्तुओं के उत्पादन को प्रोत्साहित करना।
- कृषि उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ देश में बफर स्टॉक का निर्माण करना, ताकि कृषि पदार्थों की निरन्तर आपूर्ति (Continuous Supply) सुनिश्चित की जा सके तथा मूल्यों को भी स्थिर रखा जा सके।
- जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण लगाने तथा जीवन स्तर में सुधार लाने के लिए परिवार नियोजन (Family planning) के कार्यक्रमों को लागू करना।
- रोजगार के अधिकाधिक अवसरों का सृजन करना, पिछड़े क्षेत्रों का अधिकाधिक विकास करना और क्षेत्रीय विषमता (Regional inequality) को दूर करना।
- समाज में आर्थिक समानता (Economic equality) तथा न्याय (Justice) की स्थापना करना।

इसके बावजूद इस योजना-काल में खाद्यान्नों का औसत वार्षिक उत्पादन (Average annual production) मात्र 2.7% की दर से तथा औद्योगिक उत्पादन (Industrial production) 4% की दर से ही बढ़ा, जो निर्धारित लक्ष्य से बहुत कम था। राष्ट्रीय आय में वृद्धि की दर 3.3% तथा प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि की दर 1.1% रही। इतना ही नहीं मुद्रास्फीति की दर भी ऊँची रही।

इसके निम्न कारण थे - आधारभूत संरचना की कमी, कच्चे माल की अनुलब्धता, औद्योगिक उत्पादनों की खराब स्थिति, 1971 ई. का भारत-पाक युद्ध, बांग्लादेश से आए हुए शरणार्थियों की समस्या (Number of refugees), 1972 ई. का तेल संकट जिसके कारण मुद्रास्फीति (Inflation) बढ़ी तथा बेरोजगारी (Unemployment) और बढ़ती हुई जनसंख्या की समस्या आदि।

पाँचवीं पंचवर्षीय योजना (1974-79)

इस योजना का मुख्य उद्देश्य गरीबी-उन्मूलन (Poverty-elevation), आत्मनिर्भरता (Self dependency) तथा आर्थिक संवृद्धि (Economic growth) को प्राप्त करना था जिसके लिए निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किए गए -

- राष्ट्रीय आय में 5.0% की सामान्य वार्षिक वृद्धि प्राप्त करना।
- उत्पादन व रोजगार के अवसरों का विस्तार करना एवं सामाजिक कल्याण (Social justice) का विस्तृत कार्यक्रम बनाना।
- प्राथमिक शिक्षा, पीने का पानी, ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा, पौष्टिक आहार, भूमिहीन श्रमिकों के लिए मकान हेतु भूमि अधिग्रहण, ग्रामीण सड़कें एवं विद्युतीकरण आदि का विस्तार तथा गंदी बस्तियों की उन्नति एवं सफाई सम्मिलित हैं।
- कृषि एवं जनोपयोगी वस्तुओं (Goods for Public usage) का उत्पादन करने वाले उद्योगों पर बल।
- निर्धन वर्गों को उचित एवं स्थिर मूल्यों पर अनिवार्य उपभोग की वस्तुएं उपलब्ध कराने के लिए पर्याप्त वसूली एवं वितरण-प्रणाली (Distribution-system) तथा एक न्यायपूर्ण मजदूरी नीति का विकास।
- निर्यात-प्रोत्साहन (Encouragement to import) एवं आयात-प्रतिस्थापन (Import-replacement) पर बल।
- सामाजिक, आर्थिक, क्षेत्रीय असमानताओं को कम करने के लिए संस्थागत (Institutional), राजकोषीय (Fiscal) एवं

अन्य उपाय।

खाद्यान्न और सूती वस्त्र के क्षेत्र में उत्पादन में तो संतोषजनक वृद्धि हुई किंतु अन्य लक्ष्यों को प्राप्त करने में यह योजना सफल नहीं हुई। सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जी.डी.पी.-Gross domestic product) में 4.9% की वृद्धि जबकि प्रति व्यक्ति आय में 0.75% की वृद्धि रही। सरकार द्वारा इस योजना को एक वर्ष पूर्व ही (1977-78 में) समाप्त घोषित कर दिया गया।

पुरानी छठी पंचवर्षीय योजना/अनवरत् योजना (Rolling Plan) - 1978 में जनता पार्टी के शासन काल में छठी योजना के दृष्टिकोण पत्र (Approach Paper) का अनुमोदन हुआ। 1978-83 की अवधि के लिए अनवरत योजना (Rolling Plan) बनाई गई थी लेकिन सरकार के गिर जाने से इसका क्रियान्वयन नहीं हो पाया। अतः 1980 में नई छठी योजना अपनाई गई। अनवरत् योजना को बीच में ही समाप्त किए जाने के बावजूद इसमें निम्नलिखित नीतिगत उपाय (Policy Based Efforts) किए गए थे-

1. काले धन की मात्रा को कम करने के लिए उच्च मूल्य की मुद्राओं (1000 का नोट) की वैधता समाप्त कर दी गई।
2. पूरे देश में शराब के उत्पादन, व्यापार, विक्रय एवं उपभोग पर पाबंदी लगा दी गई। (राष्ट्रव्यापी शराब बंदी)
3. जन वितरण प्रणाली (Public Distribution System) में अनाज के अलावा चीनी, कैरोसिन तथा कपड़ों की आपूर्ति (Supply) शुरू की गई।
4. जनता बीमा योजना शुरू की गई।
5. आर्थिक उदारीकरण की नीति लागू करने के लिए पश्चिमी देशों से संबंध बेहतर करने की कोशिश की गई।
6. 42वें संविधान संशोधन से आने वाली केन्द्रीकरण (Centralization) की प्रवृत्ति को बदलकर विकेन्द्रीकरण (Decentralization) को बढ़ावा देने के लिए 44वाँ संविधान संशोधन किया गया।

छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85)

छठी योजना कई वर्षों की लंबी अवधि के अनुभवों और आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर बनाई गई। इस योजना में कृषि और उद्योग दोनों ही क्षेत्रों में साथ-साथ आधारभूत ढाँचे (Basic infrastructure) को सुदृढ़ करने की रणनीति अपनायी गई ताकि उत्पादन (Production), निवेश (Investment) और निर्यात (Export) के क्षेत्र में तीव्र वृद्धि दर प्राप्त की जा सके। इस योजना में कुल 10 उद्देश्य सामने रखे गए -

- आर्थिक विकास दर में पर्याप्त वृद्धि, संसाधनों के प्रयोग से संबंधित कार्य-कुशलता (Work efficiency) में सुधार तथा उत्पादन को बढ़ाना।
- आर्थिक और तकनीकी आत्मनिर्भरता (Economic and technical self dependency) को प्राप्त करने के लिए आधुनिकीकरण (Modernisation) को बढ़ावा देना।
- गरीबी तथा बेरोजगारी की व्यापकता (Prevalence) में लगातार कमी करना।
- घरेलू ऊर्जा क्षेत्रों (Domestic energy sectors) का तेजी से विकास करना तथा ऊर्जा के संरक्षण (Conservation of energy) और कार्य-कुशल उपयोग पर बल देना।
- न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम (Minimum Requirement Programme) के माध्यम से लोगों के जीवन में गुणात्मक सुधार लाना।
- सार्वजनिक नीतियों (Public policies) और सेवाओं को ऐसा रूप देना जिससे आय और संपत्ति की असमानताएँ कम हों।
- विकास की गति और तकनीकी लाभों के प्रसार में क्षेत्रीय असमानताओं (Regional inequalities) में कमी करना।
- जनसंख्या में वृद्धि पर नियंत्रण के लिए विविध नीतियों को प्रोत्साहन देना।
- विकास के अल्प और दीर्घकालीन लक्ष्यों में समन्वय (Coordination) स्थापित करना और उसके लिए वातावरण संबंधी परिसंपत्तियों (Environmental Assets) को संरक्षण देना तथा उनमें सुधार करना।

छठी योजना आर्थिक वृद्धि दर (Economic growth Rate) के लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल रही जिसमें कृषि और सेवा क्षेत्र की महत्वपूर्ण भूमिका थी। सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जी.डी.पी.-Gross domestic product) की वार्षिक वृद्धि दर 5.2% तथा प्रति व्यक्ति आय (Per capita income) की वार्षिक वृद्धि दर 3% प्राप्त की गई। इसके साथ ही खाद्यान्न उत्पादन भी 4.3% प्राप्त किया

गया जिसका लक्ष्य 3.8% था। मुद्रास्फीति की दर 16.7% से घटकर 5% रह गयी। किंतु इस योजना का एक कमजोर पक्ष था- औद्योगिक और खनिज उत्पादन में कमी, जो अपने लक्ष्य 6.9% वार्षिक वृद्धि दर की तुलना में 3.7% रहा। छठी योजना की एक विशिष्ट बात यह थी कि इसी योजना से ही गरीबी और बेरोजगारी से संबंधित कई कार्यक्रम आरम्भ किए गए।

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-90)

यह योजना 15 वर्षों (1985-2000) की दीर्घावधि को ध्यान में रखकर बनाई गई थी। इस दीर्घावधि की योजना में कुछ क्षेत्रों को विशेष महत्व दिया गया जिनमें प्रमुख हैं- रोजगार में वृद्धि (Growth in employment), जनसंख्या की वृद्धि दर में कमी (Decrease in growth rate of population), पोषण का पर्याप्त स्तर (Sufficient level of Nutrition), ऊर्जा-प्रबंधन (Energy management) आदि। आर्थिक वृद्धि (Economic growth), आधुनिकीकरण (Modernization), आत्मनिर्भरता (Self dependency) और सामाजिक न्याय (Social justice) को मूल उद्देश्य माना गया। उत्पादक रोजगार का सृजन इस योजना की प्रमुख विकास नीति थी। अन्य लक्ष्य इस प्रकार थे -

- समता एवं न्याय पर आधारित सामाजिक प्रणाली (Social system) की स्थापना करना। सामाजिक और आर्थिक असमानताओं (Economic inequalities) को प्रभावी रूप से कम करना।
- औद्योगिक विकास (Industrial development) में कृषि क्षेत्र से आने वाली बाधाओं को दूर करना।
- अर्थव्यवस्था के ढाँचागत अवरोधों (Infrastructural hurdles) को ध्यान में रखते हुए नई क्षमताओं (New capabilities) को विकसित करने और उपलब्ध क्षमताओं के पूर्ण उपयोग पर विशेष बल देना तथा देशी तकनीकी विकास (Technical development) के लिए सुदृढ़ आधार तैयार करना।
- 5% वार्षिक विकास दर प्राप्त करना तथा खाद्यान्नों के उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि करना।
- निर्यात संवृद्धि (Export growth) तथा आयात प्रतिस्थापन (Import replacement) द्वारा आत्मनिर्भरता को प्रोत्साहन देना।
- ऊर्जा संरक्षण (Energy conservation) और गैर-परंपरागत ऊर्जा स्रोतों (Non-traditional energy sources) का विकास तथा पारिस्थितिकीय (Ecological) और पर्यावरणीय (Environmental) संरक्षण करना।

सातवीं योजना में सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Production) में वृद्धि का लक्ष्य 5% था जबकि वास्तविक वृद्धि 5.8% रही। प्रति व्यक्ति आय में भी 3.6% वार्षिक की दर से वृद्धि हुई। कुछ क्षेत्रों में वृद्धि दरें लक्ष्य से कुछ कम रहीं परन्तु मुख्य क्षेत्रों में समग्र वृद्धि संतोषजनक (Satisfactory) रही।

■■■

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–2 (Unit–2)

आयोजन : भाग–2
Planning : Part-2

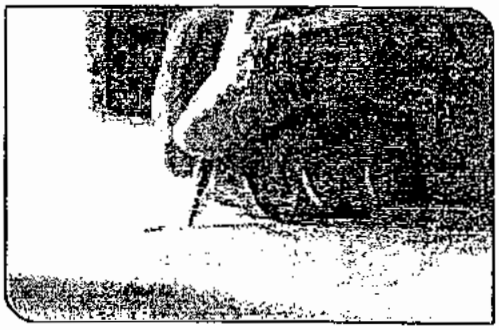

2.1 1991 के बाद आयोजन में आए संरचनात्मक बदलाव तथा उनका मूल्यांकन
(Structural Changes of Planning after 1991 and its Evaluation)

2.2 1991 की आर्थिक नीति के आयाम *(Dimensions of New Economic Policy 1991)*

2.3 आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992–97) *8th Five Year Plan (1992-97)*

2.4 नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997–2002) *9th Five Year Plan (1997-2002)*

2.5 दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002–2007) *10th Five Year Plan (2002-2007)*

2.6 ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007–2012) *11th Five Year Plan (2007-2012)*

2.7 ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना का मूल्यांकन *(Evaluation of 11th Five Year Plan)*

2.8 ग्यारहवीं योजना में अतिरिक्त ऊर्जा क्षमता विकास का लक्ष्य
(Targeted Capacity Addition in Eleventh Plan : Source-wise)

2.9 ग्यारहवीं योजना के अन्त में संभावित ऊर्जा उत्पादक क्षमता
(Anticipated Installed Capacity at the End of Eleventh Plan)

2.10 बारहवीं पंचवर्षीय योजना (दृष्टिकोण-प्रपत्र) *[12th Five Year Plan (Approach Paper)]*

2.11 नई विकास-नीति (1991 के बाद से) *[New Economic Policy (after 1991)]*

2.12 द्वितीय पीढ़ी के सुधार *(Second Generation Reforms)*

2.13 समावेशी संवृद्धि *(Inclusive Growth)*

2.14 इंडिया विज़न–2020 *(India Vision 2020)*

2.15 आर्थिक योजना एवं विकास से संबद्ध सरकारी संस्थाएँ
(Government Agencies Related to Economic Planning and Development)

2.16 राष्ट्रीय विकास परिषद् *(National Development Council)*

2.17 अंतर्राज्यीय परिषद् *(Inter-state Council)*

2.18 औद्योगिक रुग्णता *(Industrial Sickness)*

2.19 सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में विनिवेश *(Disinvestment in Public Sector Enterprises)*

2.20 भारत के वित्त मंत्री एवं उनका कार्यकाल (सन् 1946 से 2011 तक)
[Finance Ministers of India and their tenures (1946 to 2011)]

1991 के बाद आयोजन में आए संरचनात्मक बदलाव तथा उनका मूल्यांकन *(Structural Changes of Planning after 1991 and its Evaluation)*

सत्तर के दशक में आयोजन (Planning) और नीति निर्माण व्यवस्था (Policy Making System) में कई विकृतियाँ (Deformation) आ गई थी। साथ ही सोवियत संघ (USSR) के विघटन के कारण 1991 के बाद अन्तर्राष्ट्रीय परिवेश (International Sphare) में भी व्यापक परिवर्तन आ गया था, इसलिए आयोजन में समायोजन (Coordination in Planning) की जरूरत हुई। 1990-91 के आर्थिक संकट में आयोजन में शीघ्र सुधार की जरूर पैदा कर दी थी। राजस्व-घाटा (Revenue Deficit), बजट-घाटा (Budget Deficit) और राजकोषीय-घाटा (Fiscal Deficit) बहुत अधिक था। ऐसे में भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री पी. वी. नरसिंह राव (21 जून 1991) और मनमोहन सिंह की अध्यक्षता में नयी आर्थिक नीति (Economic Policy) का लक्ष्य निर्धारित किया गया। जिसे राव-मनमोहन पैक्ट का नाम भी दिया जाता है। व्यापक आर्थिक सुधार की प्रक्रिया के साथ आर्थिक सुधारों को राजनीतिकरण से मुक्त रखना इसके उद्देश्यों में प्रमुख थे।

90 के दशक के आर्थिक संकट का सामना करने के लिए भारत सरकार ने आर्थिक सुधारों के लिए कई कार्यक्रम चलाये, जिसे नई आर्थिक नीति के नाम से जाना जाता है।

(i) उद्योग और व्यापार के लिए 'लाइसेंसिंग' (Licensing-L) के स्थान पर उदारीकरण (Liberalisation-L) की नीति।
(ii) उद्योगपतियों के लिए 'कोटा' (Quota-Q) प्रणाली के स्थान पर निजीकरण (Privatisation-P) की नीति।
(iii) आयात तथा निर्यात के लिए 'परमिट' (Permits-P) के स्थान पर वैश्वीकरण (Globalisation-G) की नीति।

1991 के पहले की योजनाओं का मूल उद्देश्य यह था कि अर्थव्यवस्था में निजी एकाधिकार को बढ़ावा ना दिया जाये तथा साथ ही घरेलू उद्योग को अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा से संरक्षित किया जाये। यह सत्य है कि प्रारम्भिक समय में लाईसेंस, परमिट तथा कोटा नीति कई सकारात्मक परिणाम प्राप्त करने में सहायक हुई लेकिन अंत में परिणाम निराशाजनक थे। सार्वजनिक उद्योग भ्रष्टाचार तथा लालफीताशाही का केन्द्र बन गया था और प्रतिस्पर्धा के अभाव में निजी क्षेत्र में भी विविधता तथा आधुनिकीकरण नहीं आ पा रहा था। 90 के दशक में स्थिति यह थी कि भारतीय अर्थव्यवस्था धीरे-धीरे गतिहीन हो चली थी, और इसी का परिणाम था कि जून 1991 के अन्त में देश को अभूतपूर्व आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा। स्थिति इतनी भयानक थी कि विदेशी मुद्रा का भंडार महज दो सप्ताह के आयात के लिए बचा था, विदेशों से नये ऋण प्राप्त नहीं हो रहे थे और अन्य देशों का भारतीय अर्थव्यवस्था से विश्वास उठ चुका था।

नई आर्थिक नीति या आर्थिक सुधारों के आवश्यकता की व्याख्या निम्न बिन्दुओं के आलोक में आवश्यक हो गई थी:

(i) गैर समावेशी (Non Inclusive) तथा गैर विकासात्मक (Non Developing) खर्चों के कारण सरकार के राजकोषीय घाटे (Fiscal Deficit) में अत्यधिक वृद्धि।
(ii) भुगतान शेष [निर्यात (X)-आयात (M)] की प्रतिकूल स्थिति [Adverts balance of payments (BOP)]
(iii) कीमतों में अत्यधिक वृद्धि (High rise in prices)
(iv) 1990-91 के खाड़ी संकट (Gulf Crises) के कारण पेट्रोल की कीमतों में अत्यधिक वृद्धि।
(v) 1990-91 में भारत के विदेशी विनिमय कोष (Foreign Exchange Reserve) में अत्यधिक कमी।
(vi) सार्वजनिक उद्योगों का खराब प्रदर्शन (Poor performance of public sector undertakings)

आर्थिक सुधार इस मान्यता पर आधारित थे कि सरकारी नियंत्रण की अपेक्षा बाजार की शक्तियाँ अर्थव्यवस्था को समृद्धि और विकास के पथ पर आगे बढ़ाकर ले जा सकती है। संसार के अन्य अल्पविकसित देशों जैसे कोरिया, थाईलैंड, सिंगापुर आदि ने भी उदारीकरण के फलस्वरूप तेजी से आर्थिक विकास किया है।

1991 की आर्थिक नीति के आयाम *(Dimensions of New Economic Policy 1991)*

1991 की आर्थिक नीति के दो प्रमुख आयाम (Dimensions) थे:

1) स्थिरीकरण उपाय

2) संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम या आर्थिक सुधार कार्यक्रम (Structural Co-ordination Programme or Economic Reforms Programme)

संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम को दो चरणों में पूरा किया गया–

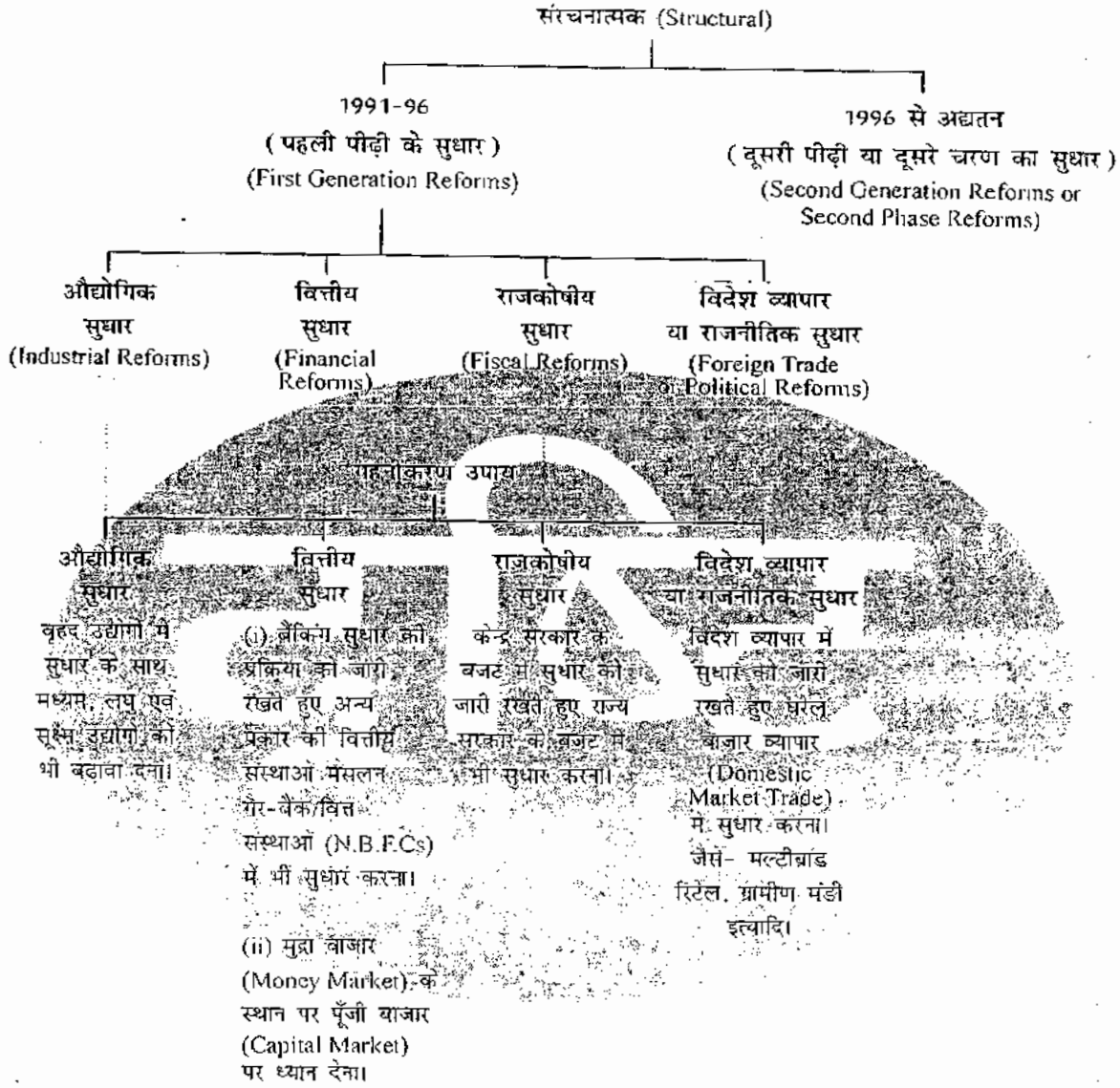

1. औद्योगिक सुधार (Industrial Reforms)

(i) नई आर्थिक नीति की घोषणा के बाद केवल छः उद्योगों को छोड़कर बाकी सभी उद्योगों में लाइसेंसों को समाप्त कर दिया गया (Abolition of Industrial Licensing) और जिन उद्योगों के लिए लाइसेंस की जरुरत थी, वे उद्योग हैं– शराब (Liquor), सिगरेट (Cigarette), औषधियाँ (Herbs), रक्षा उपकरण (Defence Equipments), औद्योगिक विस्फोटक (Industrial Explosives) एवं खतरनाक रसायन (Dangerous Chemical)।

(ii) नई आर्थिक नीति की घोषणा के बाद, क्या उत्पादन करना है और कितना उत्पादन करना है, इसका निर्धारण अब बाजार शक्तियों (Market Forces) के आधार पर होता है। उत्पादन क्षमता (Production Capacity) को पहले लाइसेंसिंग से जोड़ा जाता था, उसे अब मुक्त कर दिया गया।

(iii) नई आर्थिक नीति की घोषणा के बाद अपने तकनीक (Technology) तथा उत्पादन (Production) की प्रक्रिया को आधुनिक बनाने के लिए उद्योगपतियों को पूँजीगत वस्तुओं (Capital Goods) के आयात (Import) पर छूट दी गई ताकि अंतर्राष्ट्रीय तकनीकों (International Technologies) आदि में सरकार से किसी प्रकार की अनुमति (Permission) की आवश्यकता न रहे।

2. वित्तीय सुधार (Financial Reforms)

नई आर्थिक नीति की घोषणा के बाद भारत में रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया (RBI) की भूमिका वित्तीय क्षेत्र के नियामक (Regulator) के स्थान पर सहायक (Facilitator) की बन गई। एक सहायक के रूप में (RBI) बाजार शक्तियों की अन्तर्क्रिया को सरल बनाता है और ब्याज दर आदि के निर्धारण का निर्णय वाणिज्यिक बैंकों (Commercial Banks) पर छोड़ देता है।

उदारीकरण के पश्चात् ही भारतीय वित्त बाजार में विदेशी संस्थात्मक निवेशकों (Foreign Institutional Investors-FII) को अनुमति देता है और 1991 की उदारीकरण का ही नतीजा है कि भारतीय अर्थव्यवस्था का चौतरफा विकास हो रहा है।

3. राजकोषीय सुधार (Fiscal Reforms)

राजकोषीय सुधारों का संबंध मूलतः कर सुधारों से होता है, उदारीकरण के पूर्व देश की कर-प्रणाली (Tax-structure) बहुत जटिल तथा अस्पष्ट थी। कर के भारी बोझ के कारण करवंचना काफी प्रचलित थी, 1991 के बाद कर-प्रणाली को सरल बनाया गया और इस प्रकार देश के कर राजस्व को बढ़ाया गया।

4. विदेशी व्यापार या राजनीतिक सुधार (Foreign Trade or Political Reforms)

1991 के आर्थिक सुधार के बाद भारतीय मुद्रा का दो बार अवमूल्यन (Devaluation) किया गया और भारतीय रुपये को अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा बाजार में विनिमय मूल्य के निर्धारण के लिए बाजार शक्तियों पर छोड़ दिया गया। आयात तथा निर्यात के अन्य क्षेत्रों में सीमा शुल्क (Tariff) में अत्यधिक कमी की गई और घरेलू उद्योगों को संरक्षण देने की नीति में ढील प्रदान की गई।

दूसरी पीढ़ी के दौरान पहली पीढ़ी के चारों सुधारों के साथ तीन अन्य सुधारों का लक्ष्य जोड़ा गया, जिसका प्रमुख उद्देश्य सुधारों का गहनीकरण और विस्तारीकरण था।

गहनीकरण (In-depth)- पहली पीढ़ी के सुधारों को जारी रखते हुए निचले स्तर के संस्थाओं में भी इसे लागू करना।

विस्तारीकरण (Expansion)- जिन क्षेत्रों में पहली पीढ़ी के दौरान सुधार नहीं हुए थे, वहाँ भी सुधार प्रक्रिया को शुरू करते हुए सुधार के दायरे को व्यापक बनाना।

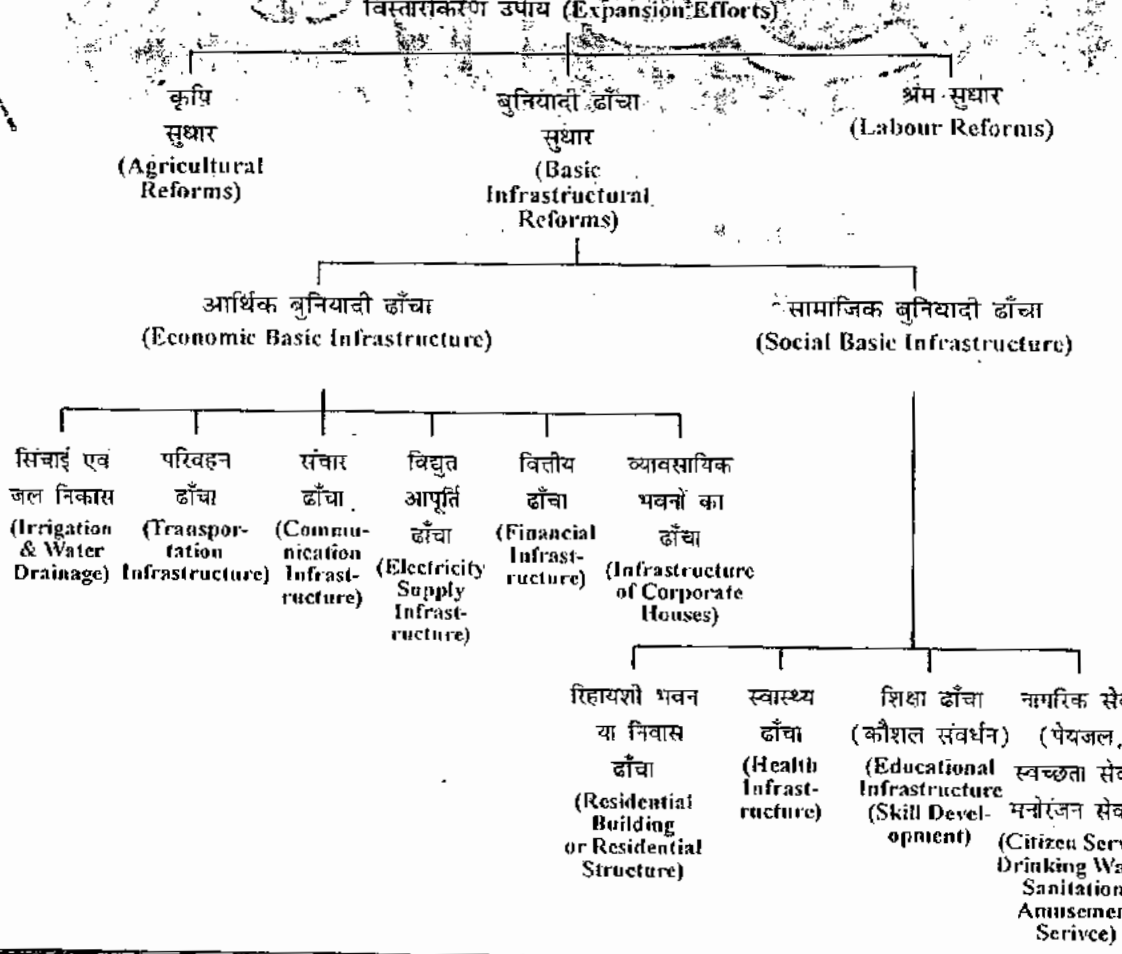

पहली पीढ़ी के सुधार, जिन्हें पाँच वर्षों (1991-96) में लागू किया गया, सभी संघ सूची (Union List) के विषय थे। अतः, उनका कार्यान्वयन (Implementation) तुलनात्मक रूप से आसान रहा। लेकिन, दूसरी पीढ़ी के सुधारों में ज्यादातर विषय राज्य सूची (कृषि आदि) तथा समवर्ती सूची (Concurrent List) (बुनियादी ढाँचा, शिक्षा आदि) के हैं, अतः केन्द्र सरकार के साथ राज्य सरकारों को भी विश्वास में लेने की आवश्यकता बनी रही। यही कारण है कि 15 वर्षों (1996-2011) के बाद भी दूसरी पीढ़ी के सुधार कार्यक्रम जारी हैं।

1991 में न केवल आर्थिक सुधारों में परिवर्तन आया, बल्कि विधायिका (Legislature), न्यायपालिका (Judiciary) आदि में भी संरचनात्मक सुधारों (Structural Returns) की प्रक्रिया शुरू हुई। जैसे-

- 1991 में स्थानीय शासन (Local Administration) को सुदृढ़ बनाया गया तथा पंचायतों को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया (73rd, 74th संशोधन)
- 1991 से ही आदर्शात्मक विदेश नीति (Idealistic Foreign Trade) के स्थान पर व्यवहारपरक विदेश नीति (Pragmatic Foreign Policy) की शुरूआत की गई।
- 1991 से ही न्यायिक सक्रियता (Judicial Activism) का सिद्धांत अपनाया गया।
- 1991 से ही समिति आधारित विधायन की नई नीति अपनाई गई। अब विधेयक को संसद में आने से पूर्व विशेषज्ञ समिति (Expert Committee) को सौंपा जाता है (1991 के पूर्व यह आवश्यक नहीं था)।
- 1991 से ही टी.एन. शेषण की अध्यक्षता में सुधार की प्रक्रिया के साथ राजनीतिज्ञों के आचरण को सम्यक बनाने का प्रयास किया गया।
- 1991 के बाद ही कई नये विधेयक आए-
  - राष्ट्रीय महिला आयोग कानून (1993)
  - राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं जनजाति कानून (1993)
  - राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग कानून (1993)
  - राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग कानून (1993)
- क्रमिक रूप से लाइसेंसिंग की प्रक्रिया में ढील दी गई तथा Public Private Partnership (PPP) Model को बढ़ावा दिया गया।

कुल मिलाकर 1991 के बाद से शासन में एक व्यापक सुधार की प्रक्रिया की शुरूआत हुई, ताकि आर्थिक सुधार कार्यक्रम कारगर रूप से लागू हो सके। 11वीं तथा 12वीं पंचवर्षीय योजनाओं के 'समावेशी विकास' (Inclusive Growth) के लक्ष्य की झलक भी 1992 के 8वीं पंचवर्षीय योजना में ही मिलती है क्योंकि 8वीं योजना के सभी उद्देश्यों का सार 'मानव संसाधन विकास' (Human Resources Development) ही था।

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) *8th Five Year Plan (1992-97)*

आठवीं योजना में भी सातवीं योजना की दिशा के अनुसार ही नीतियाँ और कार्यक्रम बनाए गए। 'उत्पादक रोजगार के समुचित अवसर उत्पन्न कर मानव विकास करना' ही इस योजना का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण लक्ष्य था। इन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निम्न प्राथमिकताएँ दी गई -

- शताब्दी के अंत तक लगभग पूर्ण रोजगार के स्तर को प्राप्त करने की दृष्टि से पर्याप्त रोजगार का सृजन करना।
- प्रोत्साहन एवं हतोत्साहन की प्रभावी योजना द्वारा जन सहयोग के माध्यम से जनसंख्या-वृद्धि पर रोक लगाना।
- प्रारंभिक शिक्षा को सर्वव्यापक बनाना तथा 15 से 35 वर्ष की आयु के लोगों में निरक्षरता को पूर्णतः समाप्त करना।
- सभी गाँवों एवं समस्त जनसंख्या के लिए पेयजल की समुचित व्यवस्था तथा टीकाकरण सहित प्राथमिक चिकित्सा-सुविधाओं का प्रावधान करना तथा भंगियों द्वारा मैला (मानव मल) ढोने की प्रथा को पूर्णतः समाप्त करना।
- खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता एवं निर्यात योग्य बचत प्राप्त करने के लिए कृषि का विकास एवं विस्तार करना।
- विकास-प्रक्रिया को स्थायी आधार पर समर्थन देने के लिए आधारभूत ढाँचे ऊर्जा, परिवहन, संचार, सिंचाई आदि को मजबूत करना।

आठवीं योजना की विकास-नीति की प्रमुख व्यवस्थाएँ या प्राथमिकताएँ निम्नलिखित प्रकार से देखी जा सकती हैं-

- दूसरी योजना में प्रारंभ की गई महालनोबिस की विकास-नीति से हटकर नीति बनाई गई, जिसमें कृषि और ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को विशेष महत्व दिया गया। कृषि व सहायक गतिविधियाँ, ग्रामीण विकास, विशिष्ट क्षेत्र के कार्यक्रम तथा सिंचाई और बाढ़-नियंत्रण हेतु कुल सार्वजनिक व्यय का 22.2% उपलब्ध कराया गया।

- इस योजना में भी ऊर्जा-क्षेत्र को प्राथमिकता दी गई तथा सार्वजनिक परिव्यय का 26.6% इस मद में उपलब्ध कराया गया।
- वित्तीय संसाधन के मामले में घरेलू संसाधनों पर निर्भरता पर बल दिया गया और तदनुरूप कुल सार्वजनिक परिव्यय में से 88.8% इन संसाधनों में व्यय करने की योजना बनाई गई।
- इस योजना में पहली बार सार्वजनिक योजना परिव्यय में पूर्व की योजनाओं के दोगुने से अधिक की वृद्धि की गई।
- सातवीं योजना के समान ही इस योजना में भी निजी क्षेत्र को सार्वजनिक क्षेत्र की तुलना में वरीयता दी गई।

आठवीं योजना में सकल घरेलू उत्पाद (GDP) की वार्षिक वृद्धि-दर का लक्ष्य 5.6% था, जबकि वास्तविक वृद्धि-दर इससे अधिक (6.8%) रही। इसी प्रकार, कृषि क्षेत्र में भी लक्ष्य (3.1%) से अधिक वृद्धि-दर (3.6%) प्राप्त की गई। औद्योगिक क्षेत्र में वार्षिक वृद्धि-दर (8.1%) रही, जो लक्ष्य (8.5%) से कम रही।

नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002) *9th Five Year Plan (1997-2002)*

नौवीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण प्रपत्र के अनुसार इस योजना के लिए कुल योजना-व्यय 8,75,000 करोड़ रुपए निर्धारित किया गया था। घरेलू बचत-दर 26.2%, चालू खाता घाटा 2.4% और अतिरिक्त पूँजी-उत्पाद अनुपात 4.08% रखा गया। इसके अनुसार, सकल घरेलू उत्पाद (GDP) की विकास-दर 7% रखी गई। औद्योगिक विकास-दर 9.3%, कृषि विकास-दर 4.5%, निवेश वृद्धि-दर 28.6%, आयात वृद्धि-दर 15.3% तथा निर्यात वृद्धि-दर 14.5% निर्धारित की गई थी।

किंतु नौवीं योजना के संशोधित मसौदे में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन किए गए। नौवीं योजना में पहले वर्ष में सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में वृद्धि-दर 5.1% रहने तथा 1998-99 में भी इसके 6% रहने के अनुमान के आधार पर इस योजना में औसत वार्षिक वृद्धि-दर का लक्ष्य घटाकर 6.5% कर दिया गया। साथ ही, सार्वजनिक क्षेत्र का परिव्यय भी 8,75,000 करोड़ रुपए से घटाकर 8,59,000 करोड़ रुपए 1996-97 की कीमतों पर कर दिया गया।

योजना के तहत बचत, निवेश, निर्यात एवं आयात के लक्ष्यों को पूर्व निर्धारित लक्ष्यों से कुछ कम कर दिया गया। इस क्रम में वार्षिक निर्यात वृद्धि-दर का लक्ष्य वार्षिक 11.8% तथा आयात का 10.8% रखा गया। संशोधित 9वीं योजना में सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में 6.5% की औसत वार्षिक वृद्धि प्राप्त करने के लिए कृषि क्षेत्र में 3.9%, उद्योग क्षेत्र में 8.5%, खनन में 7.2%, विनिर्माण में 8.2%, विद्युत क्षेत्र में 9.3% तथा सेवाओं के क्षेत्र में 6.5% वार्षिक वृद्धि प्राप्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। कृषि क्षेत्र में 3.9% वृद्धि का लक्ष्य मूल्य-वर्द्धन तथा मात्रात्मक आधार पर 4.5% रहा।

न्यायपूर्ण वितरण एवं समानता के साथ विकास को नौवीं पंचवर्षीय योजना का मुख्य लक्ष्य वस्तुतः निर्धारित किया गया था, जिसे प्राप्त करने के लिए इस योजना में राज्य-नीति के चार महत्त्वपूर्ण आयामों पर विशेष बल दिया गया, जो इस प्रकार हैं -

(i) **जीवन की गुणवत्ता (Quality of life)** - इसके अंतर्गत निर्धनता उन्मूलन तथा न्यूनतम प्राथमिक सेवाएँ उपलब्ध कराने के लिए ऐसे उपायों को शामिल करना, जिनके माध्यम से निर्धनों के लिए परिसंपत्तियों का सृजन किया जा सके तथा निरंतर विकास के लिए शेष अर्थव्यवस्था के साथ ऐसे क्षेत्रों को बेहतर ढंग से एकीकृत या समायोजित किया जा सके।

(ii) **रोजगार संवर्द्धन (Augmentation of employment)** - श्रम बहुल क्षेत्रों, उप-क्षेत्रों तथा प्रौद्योगिकियों पर ध्यान केंद्रित करके विकास-प्रक्रिया के द्वारा ही रोजगार के अतिरिक्त अवसर उत्पन्न करना।

(iii) क्षेत्रीय असंतुलन दूर करने के लिए अल्प विकसित तथा पिछड़े क्षेत्रों में औद्योगीकरण की प्रक्रिया को तेज करना। पिछड़े राज्यों में सार्वजनिक क्षेत्रों में अधिक निवेश की व्यवस्था के साथ ही ग्रामीण क्षेत्र में कृषि तथा अन्य सहायक क्रियाओं का आधुनिकीकरण करना।

(iv) विभिन्न क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए निम्न क्षेत्रों में विशेष प्रयास किए जाएँगे -

- भुगतान-संतुलन की स्थिति को सुनिश्चित करना।
- विदेशी ऋण-भार को बढ़ने से रोकना तथा उसमें कमी लाना।
- खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना।
- प्राकृतिक संसाधनों का समुचित उपयोग तथा संरक्षण करना।
- प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता हासिल करना।

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007) *10th Five Year Plan (2002-2007)*

दसवीं पंचवर्षीय योजना 1 अप्रैल 2002 ई० से शुरू की गई थी। इस योजना में 8% औसत वार्षिक-वृद्धि दर का लक्ष्य रखा गया था। 10वीं पंचवर्षीय योजना में 8% वृद्धि-दर के अतिरिक्त मानव विकास के गुणात्मक पहलुओं पर भी बल दिया गया। इसके अंतर्गत गरीबों की प्रतिशतता में कमी करना, श्रमिकों को लाभकारी रोजगार उपलब्ध कराना आदि की व्यवस्था शामिल की गई। दसवीं योजना के विकास-युक्ति के मुख्य तत्व निम्नलिखित हैं:-

1. **सरकार की भूमिका की पुनर्व्याख्या (Redefinition of role of the government)** : 10वीं योजना के अनुसार नये बदलते आर्थिक परिप्रेक्ष्य में सरकार की भूमिका की पुनर्व्याख्या करना जरूरी हो गया। पिछले वर्षों में सरकार ने अपने ऊपर बहुत सी जिम्मेदारियाँ ले रखी थीं जिससे उसकी वित्तीय तथा प्रशासनिक क्षमताओं पर अत्यधिक दबाव बन गया था। सरकार की अत्यधिक भूमिका की आवश्यकता उन हालत में हो सकती है जब निजी क्षेत्र अविकसित हो। परन्तु अब समय के साथ स्थिति काफी बदल चुकी है और भारतीय अर्थव्यवस्था में एक सक्षम व मजबूत निजी क्षेत्र जड़ पकड़ चुका है। इसलिए अब सरकारी नीतियों को रूप बदल देना चाहिए और इन नीतियों का उद्देश्य निजी क्षेत्र के लिए एक उचित आर्थिक वातावरण तैयार किया जाना होना चाहिए।

   परन्तु योजना में दो क्षेत्रों की चर्चा की गई है जिनमें सरकार की भूमिका महत्वपूर्ण है। पहला सामाजिक क्षेत्र और दूसरा आधारिक संरचना। योजना में आधारिक संरचना को दो हिस्सों में बाँटा गया है:- दूरसंचार, बिजली, बंदरगाह इत्यादि। जिनमें निजी क्षेत्र को ज्यादा अवसर प्रदान करने की बात कही गई है तथा ग्रामीण आधारित संरचना एवं सड़क विकास इत्यादि जिसमें सरकार को नेतृत्व अपने हाथ में लेना चाहिए।

2. **आर्थिक प्रबंधन व्यवस्था का पुनर्मूल्यांकन (Re-evaluation of the economic management system)** : इसके अंतर्गत मौद्रिक तथा राजकोषीय नीतियों को और लचीला बनाने की बात कही गई और इस हेतु किए गए व्यवस्थाओं से कालांतर में देश की मौद्रिक तथा विदेशी विनिमय-दर की नीति में काफी लचीलापन आया। यद्यपि राजकोषीय नीतियाँ पुरानी जड़ बजटीय कार्य-प्रणाली के जाल से बाहर निकलने में वस्तुतः असफल रहीं इसलिए यह जरूरी हो गया कि बदलते आर्थिक परिप्रेक्ष्य के अनुरूप राजकोषीय प्रबंधन व्यवस्था में उचित परिवर्तन और लचीलापन लाया जाए।

3. **राज्य-स्तर पर लक्ष्यों की व्यवस्था (Setting targets on state level)** : भारतीय अर्थव्यवस्था के अंतर्गत योजनाओं में अभी तक राष्ट्रीय-स्तर पर लक्ष्य निर्धारित करने की व्यवस्था रही है। चूँकि देश में क्षेत्रीय असंतुलन अधिक मात्रा में पाया जाता है, इसलिए दसवीं पंचवर्षीय योजना में राज्य-स्तर पर विशेष लक्ष्य निर्धारित किए गए। आशा की गई कि राज्य-स्तर पर योजना-प्रणाली में नए प्राण फूँके जा सकेंगे। इसके पीछे तर्क यह दिया गया कि राज्यों के विभिन्न जिलों के विकास-स्तरों में व्यापक अंतर पाया जाता है। राज्य-स्तर पर लक्ष्य निर्धारित करने से राज्य के भीतर विभिन्न जिलों के लिए बेहतर विकास-परियोजनाएँ बनाने में मदद मिलेगी।

4. **समानता तथा सामाजिक न्याय के लिए नीति (Policy for Equality and Social Justice)** : इस योजना में उच्च आर्थिक सम्वृद्धि के साथ समानता और सामाजिक न्याय प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित नीतियाँ अपनाने की बातें कही गई-

   1. कृषि विकास को दसवीं योजना का मूल तत्व/उद्देश्य माना जाना चाहिए, क्योंकि इस क्षेत्र के विकास का ग्रामीण गरीब वर्ग पर सीधा और सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है।
   2. उन क्षेत्रों में तेजी से विकास किया जाना चाहिए, जिनमें रोजगार प्रदान करने की ज्यादा संभावनाएँ हैं। इनमें कृषि, निर्माण, पर्यटन, परिवहन, लघु उद्योग, फुटकर, सूचना प्रौद्योगिकी और संचार क्षेत्र से संबंधित सेवाएँ आदि हैं।
   3. ऐसे विशिष्ट लक्षित वर्गों के लिए विशिष्ट कार्यक्रम और नीतियाँ बनाना आवश्यक है, जिन्हें सामान्य आर्थिक सम्वृद्धि और विकास योजनाओं से या तो लाभ नहीं मिल पाता है या बहुत कम लाभ मिलता है।

दसवीं योजना में लक्षित सम्वृद्धि-दर की प्राप्ति मुख्य रूप से इस बात पर निर्भर रही कि किस प्रकार वृद्धिमान पूँजी-उत्पादन अनुपात (ICOR) को कम करके 3.58% लाया जाए एवं निवेश-दर में वृद्धि की जाए। दसवीं योजना के लिए सार्वजनिक योजना परिव्यय 15,92,300 करोड़ रुपये रखा गया, जिसमें केंद्र सरकार का हिस्सा 9,21,291 करोड़ रुपये तथा राज्य सरकारों का हिस्सा 6,71,009 करोड़ रुपये निर्धारित (आवंटित) किया गया था।

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-2012) · *11th Five Year Plan (2007-2012)*

इस योजना के प्रारूप को योजना आयोग ने 8 नवम्बर, 2007 ई॰ को व राष्ट्रीय विकास परिषद् ने 9 दिसम्बर, 2007 ई॰ को बैठक में अंतिम मंजूरी दी।

इस योजना में 9% की औसत वृद्धि-दर के साथ अंतिम वर्ष 2011-12 में 10% वृद्धि का लक्ष्य एवं 9% वार्षिक विकास-दर के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु सन् 2007-12 के दौरान कृषि में 4% व उद्योग तथा सेवाओं में 9-11% वार्षिक की दर से वृद्धि का लक्ष्य निर्धारित किया गया था।

निर्धनता-निवारण, शिक्षा, महिलाओं एवं बच्चों के स्वास्थ्य की समुचित देखभाल, आधारभूत संरचना व पर्यावरण आदि के मामलों में राष्ट्रीय स्तर पर 27% व राज्यों के लिए 13% लक्ष्य योजना में निर्धारित किए गए हैं।

ग्यारहवीं योजना के दृष्टिकोण-प्रपत्र के प्रमुख बिंदु

- तीव्रतर विकास के साथ अधिक समावेशी सम्वृद्धि की दोतरफा रणनीति।
- निर्धनता-अनुपात में सन् 2007 तक 5% तथा सन् 2012 तक 15.4% की कमी लाना।
- न्यूनाधिक रूप से ग्यारहवीं योजना में होने वाली श्रम-बल-वृद्धि को उच्च गुणवत्ता युक्त रोजगार उपलब्ध कराना।
- सन् 2001-2011 तक के दशक में जनसंख्या सम्वृद्धि की दशकीय वृद्धि को घटाकर 16.24% के स्तर पर लाना।
- इस योजना-अवधि में साक्षरता-दर को बढ़ाकर 75% करना।
- सन् 2012 तक देश के सभी गाँवों में स्वच्छ पेयजल की उपलब्धता सुनिश्चित करना।
- योजना-अवधि में रोजगार के 7 करोड़ नए अवसर सृजित करना।

वित्तीय ढाँचा

कुल परिव्यय – 36,44,715 करोड़ रुपये (सन् 2006-07)

क्षेत्र के अनुसार आवंटन
- सामाजिक सेवाएँ – 30.24 %
- ऊर्जा – 23.43 %
- परिवहन – 15.17 %
- कृषि – 18.29 %

समष्टि आर्थिक दर – कुल सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की संवृद्धि-दर 9 % वार्षिक (मध्यवधि समीक्षा में 8%)
- निवेश दर – 36.72 %
- बचत दर – 34.4 %
- चालू खाते का घाटा – 1.88 %
- वृद्धिमान पूँजी-उत्पाद अनुपात (ICOR) – 4.1 %

प्रमुख युक्तियाँ

- समूह दृष्टिकोण (Group approach) के माध्यम से किसानों का समावेशन सुनिश्चित करना।
- कृषि आयोजन की पुनःसंरचना।
- बेहतर औद्योगिक विकास के लिए आधारभूत संरचना को मजबूत बनाना तथा कौशल-कमियों (Skill Deficit) को दूर करना।
- श्रम-कानूनों में लचीलापन।
- लघु क्षेत्र के उद्यमों को अधिक साख (Credit) उपलब्ध कराना।
- आधारभूत संरचना में निवेश को, जो सन् 2006-07 में जीडीपी का 5% था, सन् 2011-12 तक 9% तक बढ़ाना।
- विद्युत-उत्पादन (Electricity-Generation) के क्षेत्र में 8,577 MW अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य।
- ऐसी विकास प्रक्रिया का परिचालन, जो पर्यावरण की सुरक्षा कर सके।
- स्त्री-पुरुष के बीच भेदभाव को कम करने का प्रयास।
- अभिशासन में सुधार, जिसके मुख्य तत्व हैं- जवाबदेही तथा पारदर्शिता।

दसवीं योजना (2002-07) तथा ग्यारहवीं योजना (2007-12) के दौरान सार्वजनिक क्षेत्र के संसाधनों का क्षेत्रीय आवंटन

(2006-07 की कीमतों पर करोड़ रुपए में)

क्रम	क्षेत्र	केन्द्र, राज्य तथा संघीय प्रदेशों का कुल व्यय	
		दसवीं योजना (वास्तविक)	ग्यारहवीं योजना (प्रस्तावित)
1.	कृषि तथा संबद्ध गतिविधियाँ	60702	136381
2.	ग्रामीण विकास	137710	301069
3.	विशेष क्षेत्र कार्यक्रम	16423	26329
4.	सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण	112415	210326
5.	ऊर्जा	363635	854123
6.	उद्योग एवं खनिज	64655	153600
7.	परिवहन	263934	572443
8.	संचार	82945	195380
9.	विज्ञान, तकनीकी एवं पर्यावरण	28673	87933
10.	सामान्य आर्थिक सेवाएँ	30349	62523
11.	सामाजिक सेवाएँ	436529	1102327
12.	सामान्य सेवाएँ	120489	42283
	कुल व्यय	1618460	3644718

स्रोत: ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-12)

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना का मूल्यांकन *(Evaluation of 11th Five Year Plan)*

हालाँकि 11वीं पंचवर्षीय योजना हेतु संवृद्धि दर का लक्ष्य 9% रखा गया था, लेकिन 2007-08 में आई वैश्विक मंदी के बाद संवृद्धि दर 2007-08 के 9.2% से 2008-09 में 6.7% पहुँच गई और 2009-10 में 7.4% आँकी गई। वैश्विक मंदी को देखते हुए 2010-11 में 8.5% के संवृद्धि दर का लक्ष्य रखा गया और मध्यावधि समीक्षा के पश्चात् 9% के लक्ष्य को संशोधित कर नया लक्ष्य 8.1% स्वीकार किया गया।

प्रमुख क्षेत्र :-

1. कृषि (Agriculture) :- क्योंकि, भारत की अधिकांश जनसंख्या कृषि पर निर्भर है, अत: 'समावेशी विकास' (Inclusive growth) के लक्ष्य प्राप्ति हेतु कृषि को केन्द्र में रखना आवश्यक है। समावेशी विकास (Inclusive growth) के अभिन्न अंग के रूप में 11वीं पंचवर्षीय योजना के लिए कृषि विकास की दर के लक्ष्य को 4% रखा गया। 2007-08 (पहले वर्ष) में कृषि विकास दर 4.7% रही, लेकिन 2008-09 में भयावह सूखे (अंतिम 37 वर्षों में सबसे भयावह) के कारण कृषि विकास दर 1.6% पर पहुँच गई और खरीफ फसलों में ज्यादा नुकसान होने के कारण खाद्य सामग्रियों के मूल्य में भी काफी वृद्धि हुई। 4% के पंचवर्षीय लक्ष्य को बनाए रखने के लिए आने वाले दो वर्षों (2010-12) में कृषि विकास का लक्ष्य 7% प्रति वर्ष रखा गया। इस अति महत्वाकांक्षी लक्ष्य को हालाँकि पूरा नहीं किया जा सका, लेकिन 1996-97 से 2003-04 में औसत कृषि विकास दर जहाँ 2.6% रही, वहीं 2004-05 से 2009-10 के बीच यह 3.4% रही।

2. उद्योग (Industry) :- समावेशी विकास (Inclusive growth) के लक्ष्य को हासिल करने के लिए अधिक से अधिक रोजगार सृजन की आवश्यकता थी। अत: 11वीं पंचवर्षीय योजना में विनिर्माण (Manufacturing) और निर्माण (Construction) क्षेत्र में विकास दर का लक्ष्य 10-11% रखा गया जो कि 10वीं पंचवर्षीय योजना से 2% अधिक था।

विनिर्माण क्षेत्र में 2007-08 में वृद्धि दर 9% रही, लेकिन वैश्विक मंदी के कारण 2008-09 में गिरकर 2.6% रह गई। 2009-10 में देश के विशाल घरेलू बाजार के कारण विनिर्माण क्षेत्र (Manufacturing Sector) में विकास दर 10% के स्तर को छूने में सफल रही। लेकिन वैश्विक मंदी के प्रकोप के कारण सरकार द्वारा लक्षित 7 करोड़ नए रोजगार सृजित करने का लक्ष्य 5.4 करोड़ तक सिमट कर रह गया।

3. अवसंरचना (Infrastructure) :- किसी भी देश के विकास के लिए उसकी आधारभूत अवसंरचना का विकास प्रथम सीढ़ी मानी जाती है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए 10वीं पंचवर्षीय योजना में भौतिक अवसंरचना के विकास के लिए GDP का 5% व्यय किया गया, वहीं 11वीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक यह राशि GDP के 9% तक पहुँच गई। पुन: PPP (Public Private Partnership) के कारण 10वीं पंचवर्षीय योजन में निजी क्षेत्र का योगदान 20% था, वहीं 11वीं पंचवर्षीय योजना में इसका लक्ष्य 30% रखा गया। लेकिन, वास्तविकता में एक कदम आगे बढ़ते हुए 11वीं पंचवर्षीय योजना के पहले 2 वर्षों में यह क्रमश: 34.32% और 33.73% रहा।

(i) सड़क (Road) :- प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना (PMGSY) के कारण राज्यों द्वारा सड़क निर्माण में राशि निवेश की मात्रा बढ़ गई है, तो राष्ट्रीय उच्चपथ विकास कार्यक्रम (National Highway Development Programme, NHDP) के 20 किलोमीटर प्रतिदिन उच्चपथ निर्माण में भी तेजी आई है। निजी क्षेत्रों की सहभागिता बढ़ने के कारण धीरे-धीरे इसके निर्माण में और तेजी आई है और संभवत: इसका सुखद फल 12वीं पंचवर्षीय योजना में देखने को मिलेगा।

(ii) संचार क्षेत्र (Communication Sector) :- संचार क्षेत्र में 11वीं पंचवर्षीय योजना के लक्ष्य से 34% अधिक वृद्धि आँकी गई। ऐसा निजी क्षेत्र द्वारा अनुमानित निवेश से 60% अधिक होने के कारण हुआ।

4. ऊर्जा (Energy) :- चूँकि भारत विश्व के सबसे तेज गति से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में से एक है, अत: इस विकास की गति को बनाए रखने के लिए ऊर्जा की पर्याप्त उपलब्धता अनिवार्य है।

2009 में 'समेकित ऊर्जा नीति' (Integrated Energy Policy) को पुष्टि मंत्रिमंडल ने की और इस प्रकार 10वीं पंचवर्षीय योजना की तुलना में 11वीं योजना में ऊर्जा उत्पादन में वांछित वृद्धि का प्रयास किया गया। 11वीं योजना में 62,374 मेगावाट (MW) अतिरिक्त ऊर्जा उत्पादन का लक्ष्य रखा गया लेकिन वास्तविकता में इससे कहीं अधिक वृद्धि 11वीं योजना के अंत में देखी गई।

ग्यारहवीं योजना में अतिरिक्त ऊर्जा क्षमता विकास का लक्ष्य

(Targetted Capacity Addition in Eleventh Plan : Source-wise)

(in MW)

क्षेत्र (Sector)	जल ऊर्जा (Hydro)	ताप ऊर्जा (Thermal)	परमाणु ऊर्जा (Nuclear)	कुल ऊर्जा (Total)
केन्द्र	2,922	14,920	3,380	21,222 (34%)
राज्य	2,854	18,501	-	21,355 (34%)
निजी क्षेत्र	2,461	17,336	-	19,797 (32%)
कुल	8,237	50,757	3,380	62,374 (100%)
	13.21%	81.37%	5.42%	

स्रोत (Source): योजना आयोग रिपोर्ट (Planning Commission Report)

ग्यारहवीं योजना के अन्त में संभावित ऊर्जा उत्पादक क्षमता
(Anticipated Installed Capacity at the End of Elevent Plan)

(in MW)

	जल ऊर्जा (Hydro)	ताप ऊर्जा (Thermal)	परमाणु ऊर्जा (Nuclear)	कुल ऊर्जा (Total)
31 मार्च 2007 की क्षमता	34,654	86,015	3,900	1,24,569
11वीं पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य	15,627	59,693	3,380	78,700
11वीं योजना में अतिरिक्त ऊर्जा उत्पादन	8,237 (52.71%)	50,757 (85.03%)	3,380 (100%)	62,374
अनुमानित अतिरिक्त ऊर्जा उत्पादन 31 मार्च 2012 तक	42,891	1,36,772	7,280	1,86,943

स्रोत (Source): योजना आयोग रिपोर्ट (Planning Commission Report)

बारहवीं पंचवर्षीय योजना (दृष्टिकोण-प्रपत्र)
12th Five Year Plan (Approach Paper)

बारहवीं पंचवर्षीय योजना में योजना आयोग के समक्ष आर्थिक-वृद्धि हेतु दो वैकल्पिक लक्ष्य हैं। इनमें पहला लक्ष्य ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में लक्षित 9% विकास दर को हासिल करना है, जो वास्तविक रूप में अभी भी अप्राप्य बना हुआ है। इसके बावजूद बारहवीं पंचवर्षीय योजना में योजना आयोग ने ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के लक्षित वृद्धि-दर को ध्यान में रखते हुए विकास की दर 9.5% निर्धारित की है। इस उद्देश्य-प्राप्ति हेतु आयोग विभिन्न वृहद् (Macro) आर्थिक तकनीकों को अपनाकर आंतरिक अनुरूपता और अंत:क्षेत्रीय संतुलन की संभाविकता की जाँच कर रहा है। क्षेत्रवार विकास की संभावित दरें 9% और 9.5% के वैकल्पिक रूपों में निर्धारित की गई है। कृषि, विद्युत उत्पादन, गैस, जल-आपूर्ति और यहाँ तक कि उत्पादन के क्षेत्र में 9% का लक्ष्य विकास के लिए इन क्षेत्रों में आवश्यक है। अपने देश में कृषि क्षेत्र में वृद्धि को सदैव एक प्रमुख उपकरण (क्षेत्र) के रूप में देखा जाता है।

तात्कालिक अनुभव तो यह दर्शाता है कि कृषि क्षेत्र में वांछनीय वृद्धि के बिना सकल घरेलू उत्पाद का स्तर देश में महँगाई को बढ़ाता है जो निश्चित रूप से व्यापक वृद्धि-प्रक्रिया पर विपरीत प्रभाव डालता है। यद्यपि यह भी सच है कि यदि कृषि क्षेत्र की लक्षित वृद्धि को प्राप्त कर लिया जाए तो यह क्षेत्र अतिरिक्त श्रम-संसाधन को नियोजित कर लेगा, अत: बढ़ते श्रमिक वर्ग को उत्पादन के साधनों एवं निर्माण तथा सेवा क्षेत्र में समाहित करने के लिए अतिरिक्त रोजगार का सृजन करना होगा। खनन क्षेत्र का लक्ष्य मुख्यत: कोयला और प्राकृतिक गैस के उत्पादन से है, जिनकी अत्यधिक माँग होने के बावजूद आवश्यकता इस बात की है कि इनकी प्राप्ति पर्याप्त आयात के बिना प्राथमिक ऊर्जा की आवश्यकताओं के अनुरूप हो।

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में क्षेत्रवार उपलब्धियों की वृद्धि दर (% में)					
क्रम	योजना अवधि	कृषि क्षेत्र	उद्योग क्षेत्र	सेवा क्षेत्र	औसत वृद्धि क्षेत्र
1.	पहली योजना	2.71	5.54	4.17	3.50 (2.1)
2.	दूसरी योजना	3.15	5.59	4.94	4.21 (4.5)
3.	तीसरी योजना	-0.73	6.28	5.26	2.72 (5.6)
4.	तीन वार्षिक योजनाएँ	4.16	1.42	4.10	3.90
5.	चौथी योजना	2.57	4.91	3.22	3.20 (5.7)
(क)	1951-74 का औसत	2.20	2.81	4.36	3.33
6.	पाँचवीं योजना	3.28	6.55	5.66	4.70 (4.4)
7.	छठी योजना	2.52	5.32	5.41	5.54 (5.2)
8.	सातवीं योजना	3.47	6.77	7.19	5.60 (5.0)
(ख)	1974-90 का औसत	2.89	5.81	5.69	4.63
9.	दो सालाना योजनाएँ	1.01	0.10	5.94	3.40
10.	आठवीं योजना	4.72	7.29	7.28	6.54 (5.6)
11.	नौवीं योजना	2.44	4.29	7.87	5.52 (6.5)
(ग)	1990-99 का औसत	4.32	3.95	6.90	5.32
12.	दसवीं योजना	2.30	9.17	9.30	7.74 (7.9)
13.	ग्यारहवीं योजना का लक्ष्य	4.0	10.5	10.0	9.0
14.	कुल औसत (पहली से नौवीं योजना तक)	2.58	5.27	5.39	4.13

नोट: कोष्ठक में लक्षित वृद्धि दर को दर्शाया गया है।

स्रोत: ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-12)

नई विकास-नीति (1991 के बाद से) *New Economic Policy (after 1991)*

नई विकास नीति को तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री और वित्त मंत्री राव-मनमोहन का मॉडल भी कहा जाता है। इसके अंतर्गत सर्वप्रमुख रूप से उदारीकरण (Liberlisation), निजीकरण (Privatisation) एवं वैश्वीकरण (Globalisation) पर बल दिया गया था। उपर्युक्त विशेष नीतियों या उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु निम्न व्यवस्थाओं/प्रावधानों पर विशेष बल दिया गया-

1. राजकोषीय सुधार
2. व्यापार-नीति में सुधार
3. औद्योगिक व्यवस्था में उदारीकरण
4. सार्वजनिक क्षेत्र में सुधार

आलोचना

इस विकास नीति की अपनी कुछ सीमाएँ हैं, जो इस प्रकार हैं-

- इसका क्षेत्र बहुत सीमित है। यह मुख्यत: निगम-क्षेत्र तक ही सीमित है, जो कुल सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का 10% है।
- इस मॉडल में कृषि तथा अन्य कृषि आधारित उद्योगों की उपेक्षा की गई और रोजगार आधारित उद्योगों का विकास बहुत ही सीमित रहा।
- उपभोग-वस्तु क्षेत्र में बहुराष्ट्रीय कंपनियों को प्रवेश की स्वीकृति देने के कारण लघु क्षेत्र के उद्योगों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।

द्वितीय पीढ़ी के सुधार *(Second Generation Reforms)*

'द्वितीय पीढ़ी के सुधार' शब्द का उल्लेख पहली बार वित्त मंत्री यशवंत सिन्हा द्वारा भाषण में किया गया था। उन्होंने इस शब्द की औचित्यता या आवश्यकता की व्याख्या करते हुए कहा था, "वृद्धि अपने आप में लक्ष्य नहीं मानी जा सकती। यह रोजगार के विस्तार और जनता के जीवन-स्तर को उन्नत करने का माध्यम होना चाहिए, विशेषकर गरीब वर्गों के लिए।"

पहली पीढ़ी के सुधार सन् 1991 में भुगतान-संतुलन एवं बढ़ते हुए राजकोषीय घाटे में सुधार करने के कारण लागू किए गए थे। पहली पीढ़ी के सुधार के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था में काफी हद तक स्थिरता कायम हो चुकी है। अतः भारतीय अर्थव्यवस्था में तीव्र वृद्धि के लिए द्वितीय पीढ़ी का सुधार लाना अनिवार्य हो गया है। इसके लिए कृषि आधारित उद्योगों, लघु स्तर के उद्योग, आधारभूत/मूलभूत संरचना एवं सामाजिक सेवाएँ, जैसे- स्वास्थ्य, शिक्षा एवं सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर अधिक जोर देना होगा। इस सुधार में राज्य सरकारों को भी सम्मिलित करना होगा। अनावश्यक अनुदान (Non-merit subsidy) में कमी करनी होगी तथा सिंचाई, बिजली और सड़क परिवहन सेवाओं में लागत-वसूली की व्यवस्था करनी होगी।

समावेशी संवृद्धि *(Inclusive Growth)*

योजना आयोग के अनुसार समावेशी संवृद्धि की युक्ति परम्परागत युक्ति नहीं है, जिसमें समावेशी के तत्व शामिल कर लिए गए हैं, अपितु यह एक ऐसी युक्ति है जिसमें एक ऐसी विशिष्ट प्रकार की संवृद्धि प्रक्रिया को प्राप्त करने का प्रयास किया जाएगा, जो समावेशी हो तथा दीर्घकालीन और विशेष रूप से सभी के लिए लाभप्रद सिद्ध हो सके।

इसके लिए यह आवश्यक है कि यह युक्ति मजबूत समष्टि आर्थिक नीतियों पर आधारित हो जो तीव्र संवृद्धि को समष्टि आर्थिक पूर्व शर्तों को स्थापित कर सके तथा इस संवृद्धि के मुख्य प्रेरकों को अधिक शक्ति प्रदान कर सके। इसमें इस प्रकार की क्षेत्र विशेष नीति (Sector-specific policy) भी शामिल होनी चाहिए, जो यह सुनिश्चित कर सके कि संवृद्धि को जो भी ढाँचा तैयार हो रहा है तथा जिस संस्थागत वातावरण में वह लाग हो रहा है, वह समावेशन के उद्देश्य की प्राप्ति में उसके संपूर्ण आयामों में स्थान प्राप्त कर सके।

समावेशी संवृद्धि के अंतःसंबंधित कारक (Inter-related factors of inclusive growth)

- तीव्र संवृद्धि, जो गरीबी कम कर सके तथा रोजगार अवसरों का सृजन कर सके।
- स्वास्थ्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में गरीब वर्ग के लोगों को अनिवार्य सुविधाओं की उपलब्धि।
- सभी को समान अवसर।
- शिक्षा एवं कौशल द्वारा सशक्तीकरण।
- रोजगार के अवसरों में वृद्धि।
- पर्यावरण की सुरक्षा।
- स्त्री-शक्ति की अधिकाधिक स्वीकृति।
- बेहतर अभिशासन।
- आर्थिक विकास को संचालित करने वाली संस्थाएँ।

इंडिया विज़न-2020 *(India Vision 2020)*

योजना आयोग के सदस्य श्री श्याम प्रसाद गुप्त की अध्यक्षता में विशेषज्ञ समिति द्वारा तैयार किए गए इंडिया विज़न-2020 दस्तावेज में यह दर्शाया गया है कि आने वाले दो दशकों में देश में क्या-क्या प्राप्त हो सकता है। यद्यपि निकट भविष्य के 20 वर्षों के लिए स्पष्ट पूर्वानुमान लगाना संभव नहीं है, किंतु सकारात्मक नीतियों के कार्यान्वयन व दृढ़ इरादों के साथ क्या कुछ नहीं प्राप्त किया जा सकता है। मुख्य रूप से इसी तथ्य को इंडिया विज़न-2020 में दर्शाने का प्रयास किया गया है। इंडिया विज़न-2020 के द्वारा निम्नलिखित क्षेत्रों में क्षेत्रवार उच्च विकास-दर प्राप्त करने का लक्ष्य रखा गया है, जो अग्रलिखित हैं-

क्षेत्र		2020 का संभावित लक्ष्य
वार्षिक वृद्धि-दर (जीडीपी में)	-	9%
कृषि	-	6%
उद्योग	-	34%
सेवा	-	60%
बीपीएल	-	13%
बेरोजगारी-दर	-	6.8%
वयस्क पुरुष साक्षरता	-	96%
वयस्क महिला साक्षरता	-	94%
जन्म के समय जीवन प्रत्याशा		69%
शिशु मृत्यु-दर (प्रति 1000 जीवित जन्म)		22.5%
जीडीपी का शिक्षा पर व्यय		4.9%
जीडीपी का स्वास्थ्य पर व्यय		3.4%
कुपोषण-दर		8%
शहरी जनसंख्या		40%
भारत की कुल जनसंख्या		135 करोड़

आर्थिक योजना एवं विकास से संबद्ध सरकारी संस्थाएँ
(Government Agencies Related to Economic Planning and Development)

योजना आयोग (Planning Commission)

योजना आयोग का भारतीय संविधान (Indian Constitution) में कोई उल्लेख नहीं है। अतः इसका गठन एक परामर्शदात्री (Advisory) तथा विशेषज्ञ (Specialized) संस्था के रूप में सरकार के एक प्रस्ताव द्वारा किया गया है। इसलिए इसे गैर-संवैधानिक संस्था (Non-constitutional Institution) कहा जाता है। इसके स्वरूप और संगठन में आवश्यकतानुसार समय-समय पर परिवर्तन (Changes) किए जाने का कारण यही है।

योजना आयोग का प्रथम अध्यक्ष तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू को बनाया गया। अध्यक्ष की सहायता के लिए 5 पूर्णकालीन सदस्य (Full-time Members) मनोनीत किए गए। आयोग के सदस्यों एवं उपाध्यक्ष का कोई निश्चित कार्यकाल नहीं होता है और न ही सदस्यों के लिए कोई निश्चित योग्यता (Certain Eligibility) होती है। प्रधानमंत्री को इसके अध्यक्ष के रूप में नियुक्त किया जाता रहा है। यहाँ यह ज्ञातव्य/उल्लेखनीय है कि आयोग के सदस्यों की संख्या सरकार की इच्छानुसार परिवर्तित होती रहती है। योजना आयोग के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं -

- देश के भौतिक (Physical), पूँजीगत (Capitalstic) एवं मानवीय संसाधनों (Human Resources) का अनुमान लगाना।
- राष्ट्रीय संसाधनों (National Resources) के अधिक से अधिक प्रभावी (More Effective) एवं संतुलित उपयोग (Balanced Use) के लिए योजनाएँ तैयार करना।
- योजना के विभिन्न चरणों का निर्धारण करना एवं प्राथमिकता के आधार पर संसाधनों के आवंटन का प्रस्ताव करना।
- आर्थिक विकास में बाधक तत्वों/कारकों (Disturbing Elements/Factors) को इंगित करना एवं उन व्यवस्थाओं का निर्धारण करना, जो वर्तमान सामाजिक (Social) एवं राजनीतिक परिस्थितियों (Political Situations) में योजना के कार्यान्वयन के लिए आवश्यक हैं।
- योजना के प्रत्येक चरण के क्रियान्वयन के फलस्वरूप प्राप्त सफलता (Success) की नियमित समीक्षा (Constant Invitization) करना एवं सुधारात्मक सुझाव देना। केंद्र सरकार एवं राज्य सरकारों द्वारा विशेष समस्या/समस्याओं पर राय माँगने पर अपनी सलाह देना।

योजना आयोग द्वारा अब तक दस पंचवर्षीय योजनाएँ तथा सात वार्षिक योजनाएँ बनाई जा चुकी हैं।

राष्ट्रीय विकास परिषद् *(National Development Council)*

राष्ट्रीय विकास परिषद् एक गैर-संवैधानिक निकाय (Non-constitutional Body) है, जिसका गठन मुख्य रूप से आर्थिक नियोजन (Economic Planning) हेतु राज्यों एवं योजना आयोग के बीच सहयोग का वातावरण (Co-operative Environment) बनाने के लिए किया गया था। केंद्र सरकार ने एक प्रस्ताव द्वारा 6 अगस्त, 1952 ई॰ को इसका गठन किया। प्रधानमंत्री इसका पदेन अध्यक्ष तथा योजना आयोग का सचिव (Secretary) ही इसका सचिव होता है।

परिषद् (Council) के प्रारंभिक प्रावधानों के तहत राज्यों के मुख्यमंत्री ही इसके सदस्य होते थे, किंतु 1967 ई॰ के उपरांत केंद्रीय मंत्रिपरिषद् के सभी सदस्य, केंद्र-शासित प्रदेशों के प्रशासक तथा योजना आयोग के सभी सदस्य भी इस परिषद् के सदस्य होते हैं।

योजना आयोग का कार्य 'योजना निर्माण' तक ही सीमित है, जबकि यह संस्था सहकारी संघवाद का सर्वोत्तम उदाहरण माना जा सकता है। श्री के. संथानम ने इसे सर्वोच्च मंत्रिपरिषद् की संज्ञा दी है। राष्ट्रीय विकास परिषद् के निम्न प्रमुख कार्य हैं-

- राष्ट्रीय योजना के संचालन का नियमित मूल्यांकन (Regular Evaluation) करना।
- राष्ट्रीय विकास को प्रभावित करने वाली सामाजिक (Social) और आर्थिक नीतियों (Economic Policies) की समीक्षा करना।
- राष्ट्रीय योजना में निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सुझाव (Advice) देना तथा राष्ट्रीय नियोजन (National Planning) में अधिक से अधिक जन-सहयोग प्राप्त करना।
- प्रशासनिक दक्षता (Administrative Efficiency) में अधिकाधिक सुधार लाना।
- अल्पविकसित एवं पिछड़े वर्गों और उनके क्षेत्रों के विकास के लिए आवश्यक परियोजनाओं का सुझाव देना।
- राष्ट्रीय विकास (National Development) के लिए संसाधनों का निर्माण करना।
- योजना आयोग द्वारा तैयार की गई योजना की समीक्षा के उपरांत उसे अंतिम रूप प्रदान करना। इसकी स्वीकृति के बाद ही योजना का प्रारूप प्रकाशित होता है।

अंतर्राज्यीय परिषद् *(Inter-state Council)*

अंतर्राज्यीय परिषद् एक संवैधानिक संस्था (Constitutional Institution) है। केंद्र तथा राज्यों के मध्य समन्वय (Balance) स्थापित करने के लिए राष्ट्रपति ऐसी परिषद् का गठन कर सकता है। संविधान के अनुच्छेद 263 में ऐसी परिषद् की स्थापना एवं कार्यों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

यह परिषद् पूर्णतः सलाहकारी (Advisory) है। परिषद् का अध्यक्ष केंद्रीय गृहमंत्री होता है। संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार राज्य के मुख्यमंत्री (Chief Minister) व राज्यपाल (Governor) द्वारा नामजद दो अन्य मंत्री भी इसमें शामिल होते हैं। राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1951 के तहत केंद्रीय, उत्तरी, दक्षिणी, पश्चिमी तथा पूर्वी क्षेत्रीय परिषदों का गठन किया गया है।

यहाँ यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि सरकारिया आयोग ने एक स्थायी परिषद् के गठन का सुझाव दिया था। परिणामतः अप्रैल, 1990 ई॰ में इस परिषद् की स्थापना की गई। अंतर्राज्यीय परिषद् के प्रमुख कार्य इस प्रकार हैं -

- राज्य और केंद्र के मध्य उत्पन्न विवाद/ विवादों की समुचित जाँच करके उचित सलाह देना।
- राज्यों तथा केंद्र के पारस्परिक हित से संबंधित विषयों पर अनुसंधान करना।
- उपर्युक्त विषयों के बारे में बेहतर समन्वय हेतु कार्यवाही की सिफारिश करना।

औद्योगिक रुग्णता *(Industrial Sickness)*

औद्योगिक रुग्ण इकाई वह है, जो बहुत दिनों से हानि पर काम कर रही हो। औद्योगिक रुग्णता के सम्बन्ध में 1985 में तिवारी समिति की सिफारिशों पर रुग्ण औद्योगिक कम्पनी अधिनियम (Sick Industrial Companies Act-SICA) पारित किया गया, जो 15 मई 1987 से प्रभावी हुआ तथा मई 1987 में औद्योगिक एवं वित्तीय पुनर्निर्माण बोर्ड (Board for Industrial and Financial Reconstruction-BIFR) की स्थापना की गयी।

कुछ महत्वपूर्ण तथ्य (Some Important Facts):

- BIFR मूलतः निजी कम्पनियों (Private Companies) की रुग्णता (Sickness) से सम्बन्धित था पर 1992 में इसे सार्वजनिक क्षेत्र (Public Sector) की रुग्ण इकाइयों को देखने के लिए कह दिया गया।

- अप्रैल 1993 में औद्योगिक रुग्णता (Industrial Sickness) पर विचार हेतु ओंकार गोस्वामी की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गयी जिसने अपनी रिपोर्ट में औद्योगिक रुग्णता को नये सिरे से परिभाषित करने, SICA में आमूलचूल परिवर्तन तथा BIFR की भूमिका में परिवर्तन की बात कही।
- 1993 में रुग्णता अधिनियम (SICA) में संशोधन किया गया, जो 1994 से लागू हुआ।
- कम्पनियों के दिवालियापन, रुग्ण इकाइयों के पुनर्वास, ऋण की पुनःअदायगी आदि की समस्या पर विचार करने के लिए बालकृष्ण इराडी समिति ने अपनी रिपोर्ट सरकार को 31 अगस्त 2000 को दी, जिसने BIFR को समाप्त करने तथा राष्ट्रीय कम्पनी लॉ ट्रिब्यूनल (National Company Law Tribunal-NCLT) की स्थापना का सुझाव दिया।
- कम्पनी अधिनियम 2002 (दूसरा संशोधन) ने कम्पनियों के सम्बन्ध में दो महत्वपूर्ण विशिष्ट संस्थाओं की स्थापना की है। ये हैं- नेशनल कम्पनी लॉ ट्रिब्यूनल (NCLT) तथा नेशनल कम्पनी लॉ अपेलेट ट्रिब्यूनल (NCLAT)। (NCLT) की स्थापना के बाद कम्पनी लॉ बोर्ड अपेलेट अथॉरिटी फॉर इन्डस्ट्रियल एण्ड फाइनेन्सियल रिकन्स्ट्रक्सन (Appelet Authority for Industrial and Financial Reconstruction-AAIFR) तथा BIFR को समाप्त कर दिया गया है।
- उच्चतम न्यायालय (Supreme Court) के रोक के कारण NCLT को BIFR का कार्य नहीं सौंपा जा सका है। कम्पनी ऐक्ट में परिवर्तन के बाद BIFR का कार्य कम्पनी लॉ बोर्ड को सौंप दिया जाएगा।

रुग्ण इकाई वह है:-

(i) जिसकी किसी वित्तीय वर्ष (Financial Year) में संचित हानियाँ पिछले चार वित्तीय वर्षों के औसत निवल सम्पत्ति मूल्य (Turnover) के 50% के बराबर या अधिक हो, (निवल सम्पत्ति मूल्य = सकल सम्पत्ति-कुल दायित्व) अथवा

(ii) जो निरन्तर तीन तिमाहियों में अपने देनदारों के ऋण को चुकाने में विफल रही हो।

NCLT को यह शक्ति प्राप्त है कि वह रुग्ण कम्पनियों में जाँच के बारे में कारगर व्यवस्था करे तथा निवारण हेतु आवश्यक कार्यवाही करे। यदि रुग्ण कम्पनियों का उद्धार सम्भव नहीं हो तो उनके विलय, पुनर्गठन, परिसमापन के लिए यथास्थिति आदेश पारित करे।

रुग्ण कम्पनियों के पुनर्वास हेतु कम्पनी ऐक्ट में संशोधन के द्वारा पुनर्वास निधि (Rehabilitation fund) की स्थापना की गयी है, जिसका निर्माण कम्पनियों की वार्षिक बिक्री या सकल प्राप्ति पर 0.5 से 1% के उपकर (Cess) के द्वारा होगा।

उल्लेखनीय है कि पूर्ववर्ती व्यवस्था के अनुसार रुग्ण कम्पनी वह होगी, जिसकी किसी वित्तीय वर्ष के अन्त में संचित हानियाँ उसके सम्पूर्ण निवल मूल्य (Turnover) से अधिक हो या बराबर हो, यह आवश्यक है कि ऐसी कम्पनी कम से कम 5 वर्ष पूर्व समापेलित हो। ये दोनों व्यवस्थाएँ नयी व्यवस्था में नहीं हैं।

ऐसा अनुमान है कि औद्योगिक रुग्णता, संख्या की दृष्टि से लगभग 28 प्रतिशत वार्षिक की दर से बढ़ रही है। 2 लाख से ऊपर इकाइयाँ रुग्ण हैं। लगभग 29000 इकाइयाँ प्रतिवर्ष रुग्ण इकाइयों में सम्मिलित होती हैं और इनमें से 33% रुग्ण इकाइयाँ लघु क्षेत्र में हैं।

(कम्पनी विधेयक-2009)

चौदहवीं लोक सभा भंग होने के कारण निष्प्रभावी (Ineffective) हुए कम्पनी विधेयक-2008 को सरकार ने 3 अगस्त, 2009 को नए सिरे से कम्पनी विधेयक-2009 के रूप में लोक सभा में पेश किया था। उस समय के कम्पनी मामलों के मंत्री सलमान खुर्शीद ने इस विधेयक को सदन में पेश किया। संसद से पारित और अधिसूचित होने के बाद यह कम्पनी कानून, 1956 का स्थान लेगा।

सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में विनिवेश
(Disinvestment in Public Sector Enterprises)

भारत में सार्वजनिक उपक्रमों (Public Sector) में विनिवेश (Disinvestment) की प्रक्रिया 1991 में प्रारम्भ हुई थी। तब से लेकर जुलाई 2007 तक सार्वजनिक उपक्रमों में विनिवेश व इनकी रणनीतिक बिक्री (Strategic Sale) से कुल मिलाकर 51608 करोड़ रुपए केन्द्र सरकार को प्राप्त हुए थे। इनमें उपक्रमों की रणनीतिक बिक्री से प्राप्त राशि 6344.35 करोड़ रुपए रही थी।

वर्ष 2010-11 के दौरान विनिवेश

कम्पनियों द्वारा प्रारम्भिक सार्वजनिक निर्गमों (Initial Public Offerings-IPOs) व अनुवर्ती सार्वजनिक निर्गमों (Follow on Public Offers-FPOs) के जरिए पूँजी जुटाने के मामले में बीते वर्ष 2010 में पिछले सभी रिकॉर्ड भंग हुए हैं। सन्दर्भित वर्ष में रिकॉर्ड 67,594.62 करोड़ रुपए इन निर्गमों के जरिए कम्पनियों ने प्राथमिक बाजार (Primary Market) से जुटाए हैं, जो अब तक की सबसे बड़ी राशि है।

उल्लेखनीय है कि वर्ष 2010 के दौरान सार्वजनिक क्षेत्र की दिग्गज कम्पनी कोल इण्डिया लि. ने आईपीओ के जरिए 15199.

44 करोड़ रुपए जुटाए हैं, जो देश में अब तक का सबसे बड़ा आईपीओ रहा है। वर्ष के दौरान 14 आईपीओ व एफपीओ ऐसे रहे जिनका आकार 4,000 करोड़ रुपए से अधिक का था।

राष्ट्रीय श्रम आयोग:-

प्रथम राष्ट्रीय श्रम आयोग का गठन 1966 में किया गया था, जिसने श्रम समस्याओं के सभी पहलुओं का अध्ययन करने के बाद 1969 में अपनी रिपोर्ट पेश की। उसके बाद से अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हो चुके हैं। संगठित क्षेत्र में श्रमिकों से सम्बन्धित वर्तमान कानूनों को युक्तिसंगत बनाने तथा असंगठित क्षेत्र के कामगारों को एक निश्चित स्तर पर संरक्षण सुनिश्चित करने के लिए व्यापक कानून तैयार करने के उद्देश्य से सरकार ने रविन्द्र वर्मा की अध्यक्षता में 15 अक्टूबर, 1999 को दूसरे राष्ट्रीय श्रम आयोग का गठन किया। जिसने अपनी रिपोर्ट 29 जून, 2002 को प्रस्तुत की। सरकार ने यह रिपोर्ट 7 सितम्बर, 2002 को सार्वजनिक किया। आयोग ने अपनी रिपोर्ट में श्रम सन्नियमों में व्यापक सुधारों के सुझाव दिए हैं। संगठित क्षेत्र के साथ-साथ असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के कार्य की दशाओं को सुधारने के लिए भी इसमें सुझाव दिए गए हैं। राजनीतिक दलों (Political Parties), श्रम संघों व जनसामान्य के विचार-विमर्श के लिए इसे सार्वजनिक किया गया है। रिपोर्ट पर विभिन्न वर्गों के विचार जानने के पश्चात् इसके कार्यान्वयन की दिशा में कदम सरकार द्वारा उठाए जाएँगे। वैश्वीकरण (Globalization) व नई प्रौद्योगिकी (Technology) के मौजूदा समय की माँग के अनुरूप आयोग ने मुख्यत: अग्रलिखित सिफारिशें अपनी रिपोर्ट में प्रस्तुत की हैं-

1. श्रम संघ आंदोलन को अधिक रचनात्मक एवं उद्देश्यपूर्ण बनाने के लिए श्रम संघों की बहुलता पर अंकुश लगाया जाना चाहिए। जाति आधारित श्रम संघों को कोई सुविधा या अधिकार न प्रदान करने की सिफारिश आयोग ने अपनी रिपोर्ट में की है।
2. आंदोलनों के 'धीरे काम करो' (Go Slow) व 'नियमानुसार कार्य' (Work to Rule) आदि स्वरूपों को कदाचार (Misconduct) की संज्ञा देने को आयोग ने कहा है।
3. औद्योगिक संस्थानों में कर्मचारियों की छँटनी (Retrenchment and Lay off) आदि के लिए सरकार की पूर्वानुमति की आवश्यकता को समाप्त किया जाना चाहिए। इसके लिए संस्थान के आकार या कर्मचारियों की संख्या आदि की कोई शर्त नहीं हो।
4. सभी मौजूदा श्रम सन्नियमों का वर्गीकरण औद्योगिक सम्बन्ध (Industrial Relations), मजदूरी (Wage), सामाजिक सुरक्षा (Social Security), सुरक्षा एवं कल्याण (Safety and Welfare) तथा कार्य की दशाएँ (Working Conditions) आदि के तहत करने को आयोग ने कहा है।
5. देश में सार्वजनिक अवकाशों (Public Holidays) की अधिक संख्या के प्रति चिन्ता व्यक्त करते हुए आयोग ने कहा है कि सरकारी कार्यालय बंद रहने से सरकारी विभागों पर आधारित समस्त क्रियाकलापों में ठहराव आ जाता है। इस परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय अवकाशों (National Holidays) की संख्या केवल तीन (26 जनवरी, 15 अगस्त व 2 अक्टूबर) रखने को आयोग ने कहा है। इनके अतिरिक्त दो प्रादेशिक व 10 प्रतिबन्धित अवकाश रखे जा सकते हैं।
6. काम के घण्टों के सम्बन्ध में रिपोर्ट में कहा गया है कि एक दिन में 9 घण्टों व सप्ताह में 48 घण्टों से अधिक कार्य की क्षतिपूर्ति की जानी चाहिए।
7. जलापूर्ति जैसी आवश्यक सामाजिक सेवाओं में हड़ताल के मामलों में मतदान की आवश्यकता आयोग ने बताई है। आयोग के अनुसार हड़ताल के लिए मतदान में कम-से-कम 51 प्रतिशत कर्मचारियों की भागीदारी आवश्यक होनी चाहिए।
8. श्रमिकों के लिए राष्ट्रीय स्तर पर मजदूरी का न्यूनतम स्तर (National Floor Level Minimum Wage) निर्धारित करने की संस्तुति करते हुए आयोग ने कहा है कि प्रत्येक राज्य एवं केन्द्रशासित क्षेत्र को अपने स्तर पर भी न्यूनतम मजदूरी (Minimum Wage) निर्धारित करने का अधिकार हो। आयोग के अनुसार, राज्यों/केन्द्र शासित क्षेत्रों द्वारा निर्धारित न्यूनतम मजदूरी राष्ट्रीय न्यूनतम से कम नहीं होनी चाहिए।
9. असंगठित क्षेत्र (Unorganized Sector) के श्रमिकों के लिए ऐसे व्यापक नीतिगत ढाँचे (Policy Frame Work) की आवश्यकता आयोग ने बताई है जिसके तहत नौकरियों (Jobs) का सृजन एवं संरक्षण तथा इन तक पहुँच (Access to jobs), शोषण के विरुद्ध संरक्षण, मनचाही बर्खास्तगियों व न्यूनतम मजदूरी का भुगतान न किए जाने आदि से सुरक्षा सुनिश्चित की जाए।
10. श्रम कल्याण सम्बन्धी प्रावधानों में कार्य के दौरान दुर्घटना से लगी चोट आदि के लिए मुआवजे, प्रॉविडेंट फंड, चिकित्सकीय सुविधा, पेंशन हितलाभ, मातृत्व हितलाभ, शिशु देखभाल केन्द्र (Child Care Shelter) व वृद्धावस्था हितलाभ आदि शामिल हों।
11. श्रम सन्नियमों में परिवर्तन के साथ ही व्यापक आधार वाली सामाजिक सुरक्षा योजना विरूपित करने को आयोग ने अपनी रिपोर्ट में कहा है।

उल्लेखनीय है कि देश के सभी प्रमुख श्रम संगठनों ने श्रम आयोग की उपर्युक्त सिफारिशों की कड़ी आलोचना की है। कांग्रेस के 'इंटक' (INTUC), भाकपा के 'एटक' (AITUC) व माकपा के 'सीटू' (CITU) के साथ-साथ भाजपा के भारतीय मजदूर संघ

(BMS) ने इन सिफारिशों का विरोध किया है। श्रमिकों के विरोध को देखते हुए इन सिफारिशों पर व्यापक चर्चा कराने का सरकार का इरादा है।

भारत में असंगठित क्षेत्र

'असंगठित क्षेत्र' से तात्पर्य उन श्रमिकों से है, जो रोजगार की अस्थायी स्वरूप, अज्ञानता और निरक्षरता, छोटे तथा बिखरे प्रतिष्ठानों आदि कुछ कारणों से अपने साझा हितों के लिए स्वयं को संगठित नहीं कर पाए।

राष्ट्रीय सैम्पल सर्वे संगठन (NSSO) 2004-05 में कराए गए सर्वेक्षण के अनुसार, देश में संगठित और असंगठित, दोनों ही क्षेत्रों में श्रमिकों की कुल संख्या 45.9 करोड़ थी। इनमें से 2.6 करोड़ संगठित क्षेत्र में थे और बाकी 43.3 करोड़, यानी कुल रोजगार का 93% असंगठित क्षेत्र में थे।

असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा और कल्याण की देखरेख के लिए सरकार ने विधायी उपायों तथा कल्याण योजनाओं और कार्यक्रमों की द्विपक्षीय नीति अपनाई है। विधायी उपायों में न्यूनतम मजदूरी कानून, 1948; कर्मकार मुआवजा अधिनियम, 1923; मातृत्व अभि-लाभ अधिनियम, 1961; बंधुआ मजदूर प्रथा (उन्मूलन) अधिनियम, 1976; ठेका मजदूर (विनियमन ओर उन्मूलन) अधिनियम, 1970; अंतर्राज्यीय प्रवासी कर्मकार (रोजगार विनियमन और सेवा शर्त) अधिनियम, 1979; भवन और अन्य निर्माण श्रमिक अधिनियम, 1996 आदि शामिल हैं।

भारत सरकार ने बीड़ी श्रमिकों, कोयले को छोड़कर अन्य खानों के श्रमिकों और सिने-कर्मियों के कल्याण के लिए कल्याण कोष का गठन किया है। इन कल्याण कोषों का उपयोग श्रमिकों को उनके बच्चों की शिक्षा, मनोरंजन, सामूहिक बीमा, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं, मकानों के निर्माण आदि पर किया जाता है। कुछ राज्यों जैसे- केरल ने भी असंगठित क्षेत्र के इन श्रमिकों के लिए कल्याण कोष की स्थापना की है।

सरकार ने हाल ही में असंगठित क्षेत्रों के उद्यमों की समस्याओं के समाधान के लिए डॉ. अर्जुन सेन गुप्ता की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय आयोग की स्थापना की है। आयोग असंगठित क्षेत्रों के उद्यमों में काम करने वाले श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा प्रणाली की समीक्षा करेगा। असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के कल्याण के लिए व्यापक कानून बनाने सम्बन्धी एक प्रस्ताव सरकार के पास विचाराधीन है। प्रस्ताव के मसौदे में असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की सेवा-शर्तों, उनकी सुरक्षा, सामाजिक सुरक्षा, स्वास्थ्य तथा अन्य कल्याण सम्बन्धी मामलों पर विचार किया जाएगा। विधेयक के सभी पहलुओं पर विचार करने तथा असंगठित क्षेत्र के उद्यमों के लिए गठित राष्ट्रीय आयोग की सहमति के बाद शीघ्र ही उसे अंतिम रूप दे दिया जाएगा।

भारत के वित्त मंत्री एवं उनका कार्यकाल (सन् 1946 से 2011 तक)

क्र.सं.	वित्त मंत्री	कार्यकाल
1.	लियाकत अली खान	सन् 1946 से 1947 तक
2.	आर. के. शन्मुखम चेट्टी	सन् 1947 से 1949 तक
3.	जॉन मथाई	सन् 1949 से 1951 तक
4.	चिंतामन राव देशमुख	सन् 1951 से 1957 तक
5.	टी. टी. कृष्णमाचारी	सन् 1957 से 1958 तक
6.	जवाहर लाल नेहरू	सन् 1958 से 1959 तक
7.	मोरारजी देसाई	सन् 1959 से 1964 तक
8.	टी. टी. कृष्णमाचारी	सन् 1964 से 1965 तक
9.	सचिन्द्र चौधरी	सन् 1965 से 1967 तक
10.	मोरारजी देसाई	सन् 1967 से 1970 तक
11.	इंदिरा गांधी	सन् 1970 से 1971 तक
12.	यशवंत राव चव्हाण	सन् 1971 से 1975 तक
13.	सी. सुब्रह्मण्यम	सन् 1975 से 1977 तक
14.	एच. एम. पटेल	सन् 1977 से 1979 तक
15.	चौधरी चरण सिंह	सन् 1979 से 1980 तक
16.	रामास्वामी वेंकटरमन	सन् 1980 से 1982 तक
17.	प्रणव मुखर्जी	सन् 1982 से 1985 तक
18.	वी. पी. सिंह	सन् 1985 से 1987 तक
19.	एस. बी. चव्हाण	सन् 1987 से 1989 तक
20.	मधु दंडवते	सन् 1989 से 1990 तक
21.	यशवंत सिन्हा	सन् 1990 से 1991 तक
22.	मनमोहन सिंह	सन् 1991 से 1996 तक
23.	पी. चिदंबरम्	सन् 1996 से 1998 तक
24.	यशवंत सिन्हा	सन् 1998 से 2002 तक
25.	जसवंत सिंह	सन् 2002 से 2004 तक
26.	पी. चिदंबरम्	मई 2004 से नवम्बर 2008 तक
27.	मनमोहन सिंह	दिसंबर 2008 से जनवरी 2009 तक
28.	प्रणव मुखर्जी	फरवरी 2009 से वर्तमान तक

भारत : विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में निवेश, वृद्धि दर और प्राथमिकता के क्षेत्र					
योजना एवं योजनावधि	प्रस्तावित निवेश (क. रु.)	वास्तविक निवेश (क. रु.)	लक्षित विकास दर (% में)	प्राप्त विकास दर (% में)	प्राथमिकता के क्षेत्र
पहली योजना (1951-56)	2070	1960	2.1	3.5	कृषि, सिंचाई, विद्युत
दूसरी योजना (1956-61)	4800	4672	4.5	4.2	भारी उद्योग, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य
तीसरी योजना (1961-66)	7500	8577	5.6	2.8	खाद्यान्न, उद्योग
चौथी योजना (1969-74)	15900	15799	5.7	3.2	कृषि, सिंचाई
पाँचवीं योजना (1974-79)	37250	39426	4.4	4.7	जन स्वास्थ्य, समाज कल्याण
छठी योजना (1980-85)	95500	109292	5.2	5.5	कृषि, उद्योग, ऊर्जा
सातवीं योजना (1985-90)	180000	218730	5.0	5.6	ऊर्जा, खाद्यान्न
आठवीं योजना (1992-97)	434000	495670	5.6	6.5	मानव संसाधन, शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार विकास
नौवीं योजना (1997-02)	859200	941041	6.5	5.5	सामाजिक न्याय, ग्राम विकास, रोजगार
दसवीं योजना (2002-07)	1592300	1653065	7.9	7.7	रोजगार, ऊर्जा-सुधार तथा सामाजिक अवसंरचना का विकास
ग्यारहवीं योजना (2007-12)	3644718	N.A.	9.0	N.A.	विकास को सर्वहितकारी बनाना तथा तीव्रतर विकास के साथ अधिक संवृद्धि की दोतरफा रणनीति

स्रोत: ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-12)

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–3 (Unit–3)

आर्थिक/उत्पादन लेखांकन : भाग-1
Economic/Production Accounting : Part-1

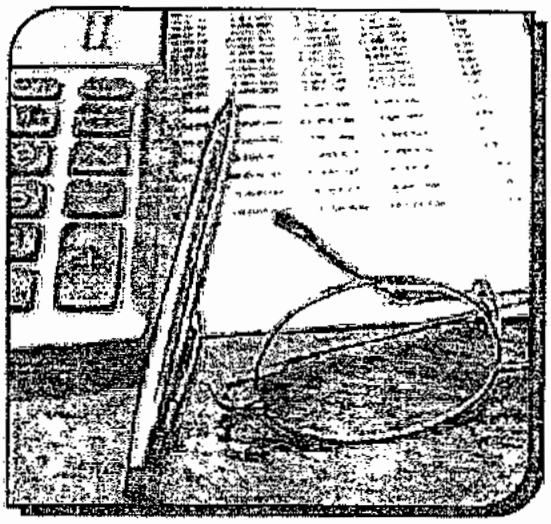

3.1 आर्थिक लेखांकन
(Economic Accounting)

3.2 व्यष्टि लेखांकन
(Micro Accounting)

3.3 कुल प्राप्ति के वितरण का विवरण
(Description of the Distribution of Total Receipt)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

3.1 आर्थिक लेखांकन *(Economic Accounting)*

किसी व्यक्ति, संस्था, उद्यम, निगम अथवा राष्ट्र के समस्त घटकों (Components) के आचरण के व्यवस्थित विवरण को लेखांकन (Accounting) के अन्तर्गत रखा जाता है। यही लेखांकन की विधि (Process of Accounting) यदि किसी व्यक्ति, संस्था, उद्यम, निगम अथवा राष्ट्र के आर्थिक मदों के आय-व्यय का किया जाये तो यह आर्थिक लेखांकन (Economic Accounting) कहलाता है, और इसी प्रकार लेखांकन में सामाजिक अवयवों/घटकों (Social Components) यथा मानव कल्याण (Human Welfare) एवं सामाजिक विकास (Social Development) की प्रगति के विवरण या लेखे-जोखे को शामिल करना सामाजिक लेखांकन (Social Accounting) कहलाता है।

लेखांकन की प्रक्रिया को कुछ अन्य क्षेत्रों के सन्दर्भ में भी इसे समझा जा सकता है। जैसे :-

1. **हरित लेखांकन या पर्यावरणीय लेखांकन (Green Accounting or Environmental Accounting)** :- राष्ट्र के आर्थिक विकास की प्रक्रिया में आर्थिक संवृद्धि (Economic Growth) को अधिकतम (Maximum) करने के चलते प्राकृतिक संसाधनों (Natural Resources) के अपक्षय (Degrade) या ह्रास के कारण जो पर्यावरणीय निम्नीकरण (Environmental Downfall) होता है, उसे राष्ट्रीय आय (National Income) के आकलन में शामिल नहीं किया जाता है। अतः राष्ट्रीय आय की गणना में पूर्ववर्ती कारकों (राष्ट्रीय आय में शामिल परम्परागत कारक) के साथ-साथ पर्यावरणीय कारकों (Environmental Factors) के ह्रास की लागत को सम्मिलित करने की संकल्पना को हरित लेखांकन (Green Accounting) कहा जाता है।

सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product) का परम्परागत माप क्योंकि उन्हीं व्यवहारों तक सीमित रहता है, जो बाजार के माध्यम से होते हैं, इसलिए यह पर्यावरण की रक्षा के लिए आंशिक चित्र ही प्रस्तुत करता है। अनेक पर्यावरणीय संपत्तियाँ विशेष रूप से वह जो प्रदूषण (Pollution) तथा अवशिष्ट (Waste) के लिए सिंक (Sinks) का काम करती हैं तथा पर्यावरण के लिए सहायक होती हैं, बाजार व्यवहार में नहीं आतीं। इसलिए GDP की गणना में भी नहीं आती। यही कारण है कि पर्यावरणीय लेखांकन या हरित लेखांकन में Sustainable GDP की बात करते हैं। विश्व बैंक (World Bank) के पर्यावरणीय पोषक विकास खण्ड ने किसी देश के संपत्ति के आकलन में एक नया सूचकांक विकसित किया है जिसे हरित सूचकांक (Green Index) कहा जाता है। इसके अंतर्गत उत्पादन (Production), प्राकृतिक संपदा (Natural Resources) तथा मानव संसाधन (Human Resources) को अलग-अलग मूल्य (Values) प्रदान किये जाते हैं और इस आधार पर प्रत्येक देश की प्रति व्यक्ति आय (Per Capita Income-PCI) ज्ञात की जाती है।

2. **सामाजिक-आर्थिक लेखांकन (Social-Economic Accounting)** :- किसी संस्था, उद्यम, निगम अथवा राष्ट्र के आर्थिक लेखांकन (Economic Accounting) में सामाजिक अवयवों/घटकों, यथा- मानव कल्याण एवं सामाजिक विकास (Social Development) की प्रगति के विवरण या लेखे-जोखे को शामिल करना, सामाजिक-आर्थिक लेखांकन (Social-Economic Accounting) की संकल्पना के अंतर्गत आता है।

3. **आर्थिक लेखांकन (Economic Accounting)** :- किसी आर्थिक कार्य या क्रियाकलाप (Economic Activity) में शामिल विभिन्न प्रक्रियाओं के व्यवस्थित मूल्यांकन (Systemtic Evaluation) को आर्थिक लेखांकन (Economic Accounting) कहते हैं, जैसे-उत्पादन कार्य, वितरण कार्य (थोक व्यापार, खुदरा व्यापार), उपभोग की क्रिया, निवेश क्रिया इत्यादि।

यूनाइटेड नेशन्स (United Nation) ने 2003 में पर्यावरणीय तथा आर्थिक लेखांकन को समन्वित करने का एक प्रारूप तैयार किया। भारत में भी इसे पूर्णविकसित करने का प्रयास किया जा रहा है। भारतीय सांख्यिकों (Statistians) का यह विश्वास है कि भारत की हरित GDP वास्तविक GDP से बहुत कम होगी क्योंकि भारत का आर्थिक विकास (Economic Development) अधिक संसाधन गहन (Resource Oriented) है। उल्लेखनीय है कि आर्थिक विकास की प्रक्रिया में संसाधनों का क्षय (Degradation of Resources) होता है और यह क्षय या दूषित होना वास्तविक GDP में अवस्फीतक (Deflator) का कार्य करेगा, जिससे हरित GDP ज्ञात की जा सके।

ग्रीन GDP = वास्तविक GDP – (संसाधनों का क्षय या प्रदूषण)

सुविधा की दृष्टि से लेखांकन की प्रक्रिया को दो सन्दर्भों में देखते हैं:-

(i) समष्टि लेखांकन (Macro Accounting)

(ii) व्यष्टि लेखांकन (Micro Accounting)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

उत्पादन लेखांकन (Production Accounting)

सूक्ष्म/इकाई/व्यष्टि लेखांकन (Micro Accounting)	समुदाय/समष्टि लेखांकन (Macro Accounting)
किसी अकेली उत्पादन इकाई या गृहस्थ के उत्पादन या उपभोग के व्यवस्थित मूल्यांकन को व्यष्टि लेखांकन (Micro Accounting) कहते हैं। जैसे- किसी एक कंपनी, एक गृहस्थ के उत्पादन या किसी परिवार के उपभोग का विवरण व्यष्टि लेखांकन (Micro Accounting) के अन्तर्गत आएगा।	किसी अंचल में निवास करने वाली सभी उत्पादन इकाइयों अथवा गृहस्थों के उत्पादन या उपभोग के व्यवस्थित मूल्यांकन को समष्टि लेखांकन (Macro Accounting) कहते हैं। जैसे- किसी देश/प्रांत/जिले की सभी उत्पादन इकाइयों के लेखे-जोखे का अध्ययन समष्टि लेखांकन (Macro Accounting) के अन्तर्गत आएगा।

जब आर्थिक समस्याओं अथवा आर्थिक मुद्दों का अध्ययन व्यक्तिगत उपभोक्ता (Individual Consumer) या व्यक्तिगत उत्पादक (Individual Producer) जैसी छोटी आर्थिक इकाइयों (Small Economic Units) को ध्यान में रखकर किया जाता है, तब हमारा अभिप्राय व्यष्टि-अर्थशास्त्र (Micro Economics) से होता है। वहीं, समष्टि-अर्थशास्त्र (Macro Economics) सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था से संबंधित आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन करता है। यह समग्र माँग (Aggregate Demand) तथा समग्र पूर्ति (Aggregate Supply) के बीच होने वाले संतुलन का अध्ययन भी करता है। साथ ही समष्टि-अर्थशास्त्र अर्थव्यवस्था में रोजगार के पूर्ण स्तर तथा पूर्ण कीमत स्तर से संबंधित मुद्दों को भी प्रस्तुत करता है। वस्तुतः समष्टि-अर्थशास्त्र का संबंध अर्थव्यवस्था में कुल उत्पादन (Total Production), कुल रोजगार (Total Employment) तथा सामान्य कीमत स्तर के निर्धारण से है।

व्यष्टि अर्थशास्त्र (Micro Economics) तथा समष्टि अर्थशास्त्र (Macro Economics) के कुछ मूलभूत अंतरों को निम्न Table के माध्यम से समझा जा सकता है:

व्यष्टि अर्थशास्त्र (Micro-Economics)	समष्टि अर्थशास्त्र (Macro-Economics)
1. व्यष्टि-अर्थशास्त्र व्यक्तिगत स्तर पर आर्थिक संबंधों अथवा आर्थिक समस्याओं का अध्ययन करता है; जैसे एक व्यक्तिगत फर्म, एक व्यक्तिगत गृहस्थ अथवा एक व्यक्तिगत उपभोक्ता।	1. समष्टि-अर्थशास्त्र संपूर्ण अर्थव्यवस्था के स्तर पर आर्थिक संबंधों अथवा आर्थिक समस्याओं का अध्ययन करता है।
2. व्यष्टि-अर्थशास्त्र मुख्यतः एक व्यक्तिगत फर्म अथवा उद्योग में उत्पादन तथा कीमत के निर्धारण से संबंधित है।	2. समष्टि-अर्थशास्त्र का संबंध मुख्यतः संपूर्ण अर्थव्यवस्था में कुल उत्पादन तथा सामान्य कीमत स्तर के निर्धारण से है।
3. व्यष्टि-अर्थशास्त्र के अध्ययन की यह मान्यता है कि समष्टि चर (Variables) स्थिर रहते हैं। उदाहरणार्थ, जब हम एक फर्म या उद्योग में उत्पादन तथा कीमत के निर्धारण का अध्ययन करते हैं तो यह मान लिया जाता है कि कुल राष्ट्रीय उत्पादन स्थिर होता है।	3. समष्टि-अर्थशास्त्र के अध्ययन की यह मान्यता है कि व्यष्टि चर (Variables) स्थिर रहते हैं। उदाहरणार्थ, जब हम कुल राष्ट्रीय उत्पादन स्तर का अध्ययन करते हैं तो यह मान लिया जाता है कि आय का वितरण स्थिर रहता है।

अब हम व्यष्टि लेखांकन (Micro Accounting) की प्रक्रिया का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

3.2 व्यष्टि लेखांकन *(Micro Accounting)*

व्यष्टि के समझने से पूर्व हमें यह जान लेना आवश्यक है कि लागत (Cost) का तात्पर्य क्या है।

लागत की अवधारणा (Concept of Cost):- वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए कोई कंपनी भिन्न-भिन्न उत्पादन के कारकों यथा- भूमि (Land), श्रम (Labour), पूँजी (Capital), उद्यम (Entrepreneurship) का प्रयोग करती है। इन्हें कारक आगत (Factor Inputs) कहते हैं और इसकी विस्तृत चर्चा पूर्व की कक्षाओं में की जा चुकी है। कंपनी कच्चे माल का भी प्रयोग करती है, इन्हें गैर कारक आगत (Non Factor Input) या माध्यमिक आगत (Intermediate Cost) भी कहते हैं। एक कंपनी द्वारा कारक तथा गैर-कारक आगतों पर किये जाने वाले खर्च को उत्पादन की लागत (Cost of Production) कहते हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

किसी संस्था, निगम, उद्यम या सरकार के व्यक्तिगत अथवा उप-इकाई के अवयवों के स्तर पर किया गया आय-व्यय का लेखा-जोखा व्यष्टि लेखांकन (Micro Accounting) कहलाता है।

कुल मूल्य-IC = सकल मूल्य
MP-NIT = FC
घरेलू मूल्य + NFIA = राष्ट्रीय मूल्य

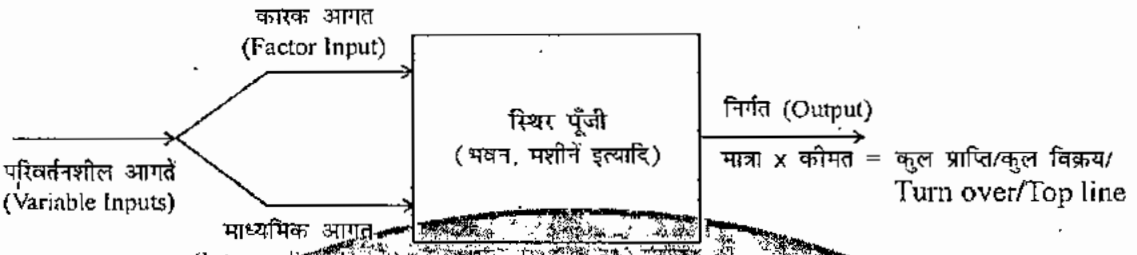

3.3 कुल प्राप्ति के वितरण का विवरण

1. TR − IC = GVA_{MP} ; $\Sigma GVA_{MP} = GDP_{MP}$
   1000 400 600
2. GVA_{MP} − NIT = GVA_{FC} ; $\Sigma GVA_{FC} = GDP_{FC}$
   600 120 480
3. GVA_{FC} − DA = NVA_{FC} ; $\Sigma NVA_{FC} = NDP_{FC}$
   480 100 380
4. NVA_{FC} − COE = GOS
   380 120 260
5. GOS − संपत्ति लागत (ब्याज, लगान, किराया) = GP
   260 100 160
6. GP − CIT = NP (Net Profit)
   160 60 100

लाभ (Profit) = TR (Total receipt) − TC (Total cost)
100 1000 900

$\frac{COE}{\text{कामगारों की संख्या}} = CTC$

TR = कुल प्राप्ति (Total Receipt)
IC = माध्यमिक लागत (Intermediate Cost)
GVA_{MP} = बाजार कीमत के आधार पर सकल मूल्य संवर्धन (Gross value addition at market price)
GDP_{MP} = बाजार कीमत के आधार पर सकल घरेलू उत्पाद (Gross domestic product at market price)
NIT = निवल अप्रत्यक्ष कर (Net Indirect Tax)
GVA_{FC} = कारक या उत्पादन लागत पर सकल मूल्य संवर्धन (Gross Value addition at factor cost)
GDP_{FC} = कारक या उत्पादन लागत पर सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product at factor cost)
DA = मूल्यह्रास भत्ता (Depreciation Allowance)
NVA_{FC} = कारक लागत के आधार पर निवल मूल्य संवर्धन (Net value addition at factor cost)
NDP_{FC} = कारक लागत के आधार पर निवल घरेलू उत्पाद (Net domestic product at factor cost)
COE = कामगारों की क्षतिपूर्ति (Compensation of Employees)
GOS = सकल परिचालन अधिशेष (Gross operating surplus)
CTC = प्रति कामगार कंपनी की लागत (Cost to company per worker)
GP = सकल लाभ (Gross Profit)
CIT = निगम आयकर (Corporate Income Tax)
NP = निवल लाभ (Net Profit)
TC = कुल लागत (Total Cost)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

अब हम पिछले पृष्ठ पर दिये गये कुल प्राप्ति के विवरण में प्रयुक्त शब्दावलियों को समझने का प्रयत्न करेंगे।

1. **परिवर्तनशील आगतें (Variable Inputs)** :- किसी उत्पादन इकाई में प्रयोज्य ऐसे संसाधन, जिनकी मात्रा एक लेखावर्ष के दौरान उत्पादन की मात्रा में परिवर्तन के अनुसार परिवर्तित होती रहती है, परिवर्तनशील आगतें (Variable Inputs) कहलाती हैं। इन्हें दो वर्गों में बाँटा जाता है:

परिवर्तनशील आगतें (Variable Inputs)

- **कारक आगतें (Factor/Primary Cost)**: कारक सेवाओं को [भूमि (Land), श्रम (Labour), पूंजी (Capital), उद्यम (Entrepreneurship)] कारक आगतें (Factor Cost) कहते हैं।
- **माध्यमिक आगतें (Intermediate/Secondary Cost)**: ऐसी वस्तुएँ (Goods) एवं सेवाएँ (Services) जिन्हें, अन्य उत्पादकों (Producers) से प्राप्त/क्रयकर किसी उत्पादन इकाई में उपयोग किया जाये तो उसे माध्यमिक आगतें (Intermediate Cost) कहते हैं। जैसे: संचार (Communication), परिवहन (Transport), पैकेजिंग (Packaging), विज्ञापन (Advertisement) इत्यादि।

परिवर्तनशील आगतों पर होने वाले व्यय को परिवर्तनशील लागत (Variable Cost) कहते हैं।

TC (Total Cost) = FC (Fixed Cost) + VC (Variable Cost)

VC (Variable Cost) = IC (Intermidiate Cost) + PC (Priniary Cost)

TC (Total Cost) = FC + IC + PC

बंधी लागतें (Fixed Costs)	परिवर्ती लागतें (Variables Costs)
1. बंधी या स्थिर लागत वह लागत है जिसमें उत्पादन की मात्रा में परिवर्तन होने के साथ परिवर्तन नहीं होता।	1. परिवर्ती लागत वह लागत है, जिसमें उत्पादन की मात्रा में परिवर्तन होने के साथ परिवर्तन होता है।
2. उत्पादन शून्य हो या अधिकतम, बंधी या स्थिर लागतें स्थिर रहती हैं। उदाहरण : (a) किराया (b) स्थायी कर्मचारियों का वेतन (c) लाइसेंस फीस (d) प्लांट एवं मशीन की लागत।	2. उत्पादन शून्य होने पर ये लागतें शून्य हो जाती हैं। उत्पादन बढ़ने पर ये लागतें बढ़ती हैं तथा कम होने पर कम होती हैं। उदाहरण : (a) कच्चे माल की लागत (b) अस्थायी कर्मचारियों का वेतन (c) बिजली का व्यय।

2. **कुल लागत (Total Cost-TC)** : यह किसी वस्तु के उत्पादन की विभिन्न लागतों का कुल जोड़ (Total Sum) है, जो उत्पादन प्रक्रिया में प्रयोग हुए स्थिर पूंजी (Fixed Cost) के साथ परिवर्तनशील इकाइयों (Variable Inputs) द्वारा उत्पादित किया जाता है।

3. **स्थिर पूंजी (Fixed Capital)** : किसी उत्पादन इकाई (Production Unit) में प्रयोज्य ऐसे संसाधन (Resource), जिनकी मात्रा एक लेखावर्ष में स्थिर रहती है, चाहे उत्पादन की मात्रा में जितना भी परिवर्तन हो, स्थिर पूंजी (Fixed Capital) कहलाती हैं। जैसे- भवन, मशीनें आदि स्थिर पूंजी पर जो व्यय होता है उसे उत्पादन इकाई का स्थिर लागत (Fixed Cost) कहते हैं।

4. **निर्गत (Output)** : सभी प्रकार की आगतों के समन्वय से जो भी वस्तु/सेवा (Goods/Services) बनकर निकलती है, उसे निर्गत (Output) कहते हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

5. कुल संप्राप्ति (Total Receipt) : किसी इकाई द्वारा अपने उत्पाद के एक निश्चित भाग को बेच कर जो धन प्राप्त होता है, उसे कुल संप्राप्ति (Total Receipt) कहा जाता है।

6. GVA_{MP} (Gross value addition at market price) [बाजार कीमत के आधार पर सकल मूल्य संवर्धन का आकलन] : किसी उत्पादन इकाई द्वारा देश या प्रांत या जिले के कुल उत्पादन में की गई वृद्धि को (Gross value addition at market price) कहते हैं, ($TR - IC = GVA_{MP}$) अर्थात् कुल संप्राप्ति से माध्यमिक आगतों (Intermediate Inputs) पर किये गये खर्च को घटाने के बाद जो राशि शेष बचती है, उसे GVA_{MP} (बाजार कीमत के आधार पर सकल मूल्य संवर्धन का आकलन) कहते हैं।

हम यह कह सकते हैं, कि चूँकि एक अर्थव्यवस्था उत्पादन इकाइयों का समूह है, इसलिए किसी अर्थव्यवस्था का मूल्यवर्धन सभी निवासी उत्पादक इकाइयों के मूल्यवर्धन का योग होगा। अतः

$$\Sigma\, GVA_{MP} = GDP_{MP}$$

7. GDP_{MP} (Gross domestic product at market price) [बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद] : किसी उत्पादन इकाई द्वारा देश या प्रांत या जिले के बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पादन को (Gross domestic product at market price) कहते हैं।

8. GVA_{FC} (Gross value addition at factor cost) [कारक या उत्पादन लागत पर सकल मूल्य संवर्धन] : किसी उत्पादन इकाई द्वारा देश, प्रांत या जिले के कारक या उत्पादन लागत पर उत्पादन में की गई वृद्धि को GVA_{FC} कहते है। इसे इस प्रकार भी समझा जा सकता है कि बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद (Gross domestic product at market price) से निवल प्रत्यक्ष कर (Net Indirect Tax-NIT) की राशि निकाल देने के बाद जो शेष बचता है, वह GDP_{FC} (कारक या उत्पादन लागत पर सकल मूल्य संवर्धन) कहलाता है। अतः

$$\Sigma\, GVA_{FC} = GDP_{FC}$$

9. GDP_{FC} (Gross domestic product at factor cost) [कारक या उत्पादन लागत पर सकल घरेलू उत्पादन] : किसी उत्पादन इकाई द्वारा देश या प्रांत या जिले के कारक या उत्पादन लागत पर सकल घरेलू उत्पादन को (Gross domestic product at factor cost) कहते हैं।

10. NIT (Net indirect tax) [निवल परोक्ष कर] : वसूले गये सकल परोक्ष कर में से उत्पादकों को दी गई राज सहायता (Subsidy) घटाने के बाद शेष राशि को निवल परोक्ष कर (Net indirect tax) कहते हैं।

कर भार की प्रकृति के आधार पर 'कर' दो प्रकार के होते हैं:

(1) प्रत्यक्ष कर (Direct Tax) : ऐसे कर जिनका आरंभिक भार तथा अंतिम भार एक ही व्यक्ति या संस्था पर पड़े अर्थात् जिसको अन्य पर टालना संभव न हो, प्रत्यक्ष कर कहलाता है। e.g., व्यक्तिगत आयकर, निगम आयकर, उपहार कर, संपदा शुल्क, Frindge Benefit आदि।

(2) परोक्ष कर (Indirect Tax): जिन करों का आरंभिक भार किसी एक व्यक्ति या संस्था पर पड़े तथा अंतिम भार दूसरे व्यक्ति या संस्था पर पड़े उन्हें परोक्ष कर (Indirect Tax) कहते हैं। इसे साधारणतः दो भागों में बाँटते हैं-

(a) राष्ट्रीय परोक्ष कर (National Indirect Tax)
(b) अन्तर्राष्ट्रीय परोक्ष कर (International Indirect Tax)

राष्ट्रीय परोक्ष कर *(National Indirect Tax)*

(i) उत्पाद शुल्क (ExciseTax) :- उत्पादित वस्तु पर आरोपित कर जिसे उत्पादक से वसूला जाये उत्पाद शुल्क (Excise Tax) कहते हैं।

(ii) परिवहन कर (Transport Tax) :- परिवहन सेवा पर आरोपित कर जिसे परिवहनकर्ता से वसूला जाये परिवहन कर कहते हैं।

(iii) चुंगी (Octroi) :- किसी प्रशासनिक सीमा क्षेत्र के प्रवेश बिन्दु पर आरोपित कर जिसे प्रवेशकर्ता से वसूला जाये चुंगी (Octroi) कहलाता है।

(iv) व्यापार कर (Trade Tax) :- वस्तुओं के थोक विनिमय पर आरोपित कर जिसे थोक व्यापारी से वसूला जाये।

(v) विक्रय कर (Sales Tax) :- वस्तुओं के खुदरा विनिमय पर आरोपित कर जिसे खुदरा विक्रेता से वसूला जाता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

अन्तर्राष्ट्रीय कर *(International Tax)*

(i) **सीमा शुल्क (Custom Duty)** :- वस्तुओं के अन्तर्राष्ट्रीय विनिमय पर आरोपित कर, जिसे विनिमय करने वाले व्यापारी से वसूला जाता है।

- **आयात शुल्क (Import Duty)**
- **निर्यात शुल्क (Export Duty)**

उपरोक्त सभी प्रकार के परोक्ष करों से वसूली गयी समस्त राशि को **सकल परोक्ष कर (GIT)** कहते हैं। सरकार इसी परोक्ष राशि का एक अंग कमजोर एवं जरूरतमंद लोगों को सहायतार्थ देती है, जिसे उत्पादक राजसहायता (Subsidy) कहते हैं। शेष राशि को **निवल परोक्ष कर (NIT)** कहते हैं।

आकलन की विधि के आधार पर कर दो प्रकार के होते हैं:-

(1) **TOT (Turn Over Tax)** : उत्पादित वस्तु के कुल मूल्य के आधार पर आकलित कर को **TOT (Turn Over Tax)** कहते हैं।

(2) **VAT (Value Added Tax)** : उत्पादित वस्तु के संवर्धित मूल्य के आधार पर आकलित कर को **VAT (Value Added Tax)** कहते हैं।

11. **DA (Depreciation Allowance) [मूल्यह्रास भत्ता]** : उत्पादन कार्य के कारण स्थिर पूंजी की क्षमता में होने वाली गिरावट या अपरदन के मरम्मत या रखरखाव के लिए आवंटित संसाधन को मूल्यह्रास भत्ता (Depreciation Allowance) कहते हैं।

जब स्थिर परिसंपत्तियों का इस्तेमाल किया जाता है तो सामान्य टूट-फूट (Normal Wear and Tear), आकस्मिक हानि (Accidental Damage) या प्रौद्योगिकी (Technology) तथा भाग में परिवर्तन के कारण अप्रचलन की स्थिति में आ जाने के कारण स्थिर परिसंपत्तियों के उपयोग से मूल्य में होने वाली हानि को मूल्यह्रास (Depreciation) कहा जाता है। मूल्यह्रास को स्थिर पूंजी का उपयोग (Consumption of Fixed Capital) भी कहा जाता है।

जिस निधि में वर्ष-दर-वर्ष मूल्य ह्रास भत्ता राशि का संचय किया जाता है, उसे मूल्यह्रास निधि (Depreciation Fund) कहते हैं।

12. **NVA_{FC} (Net Value Addition at factor cost) [कारक लागत के आधार पर निवल मूल्य संवर्धन]** : कारक लागत के आधार पर सकल मूल्य संवर्धन (Gross Value Addition at factor cost-GVA_{FC}) की राशि से मूल्यह्रास भत्ता (Depreciation Allowance) राशि निकाल देने के बाद जो शेष बचता है, वह NVA_{FC} कहलाता है।

$$\Sigma NVA_{FC} = NDP_{FC}$$

13. **GOS (Gross Operating Surplus) [सकल परिचालन अधिशेष]** : किसी संस्था के ब्याज, लगान एवं लाभ के योग को **सकल परिचालन अधिशेष (Gross Operating Surplus)** कहते हैं।

14. **CIT (Corporate Income Tax) [निगम आयकर]** : किसी कारोबारी संस्था की सकल लाभ राशि पर आरोपित कर को निगम आयकर/निगम कर कहते हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

15. **COE (Compensation of employee) [कामगारों की क्षतिपूर्ति] :** एक उत्पादक द्वारा अपने सभी कामगारों पर किये गये सभी प्रकार के व्यय के योग को कामगारों की क्षतिपूर्ति (Compensation of employee) कहते हैं।

COE के चार प्रमुख घटक होते हैं

- नगद मजदूरी या वेतन (Wages in cash)
- कामगार की सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था में नियोजक का अंशदान (Contribution of employer in social security provision for employees)
  - भविष्य निधि में नियोजक का अंशदान (Contribution of employer in provident fund)
  - पेंशन निधि में नियोजक का अंशदान (Contribution of employer in pension fund)
  - स्वास्थ्य निधि में नियोजक का अंशदान (Contribution of employer in health fund)
  - बीमा निधि में नियोजक का अंशदान (Contribution of employer in insurance fund)
  - मनोरंजन निधि में नियोजक का अंशदान (Contribution of employer in entertainment fund)
- मुफ्त वस्तु एवं सेवा के रूप में दी गई मजदूरी (Wages in kind)
- कामगार के परिजनों एवं आश्रितों के लिए मुफ्त या रियायती कीमत पर शिक्षा, स्वास्थ्य एवं मनोरंजन सेवाओं की व्यवस्था (Free/subsidised provision of health, education & recreation services for family members & dependents of employers)

16. **CTC (Cost to company per worker) [कंपनी की प्रति कामगार लागत] :** प्रति व्यक्ति COE (Compensation of Employee) को कंपनी की प्रति कामगार लागत (Cost to company per worker) कहते हैं।

CTC

- नगद (TDS) Tax Directed at source वर्तमान में 10%
- गैर नगद (FBT) Fringe Benefit Tax

पिछले 6-7 वर्षों से कंपनी एवं कामगारों में CTC (Cost to company) के नगद हिस्से को कम करने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही थी, ताकि कर के भार को कम किया जा सके। इससे सरकार की कर प्राप्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा था, अतः सरकार ने इस अनुशासनहीनता पर अंकुश लगाने के लिए 2005 में गैर नगद वेतन पर एक नया Tax लगाया जिसे अनुषंगी लाभ कर (Fringe Benefit Tax - FBT) कहते हैं।

सितम्बर 2008 में आयी वैश्विक मंदी (Global Recession) से जो वित्तीय संकट (Financial Crises) उत्पन्न हुआ, उससे भारत की आर्थिक संवृद्धि दर (Economic Growth Rate) में गिरावट आई और बेरोजगारी बढ़ी। बेरोजगारी (Unemployment) बढ़ने से देश के लोगों की क्रयशक्ति (Purchasing Power) गिरी और इस प्रकार भारतीय वस्तुओं की बिक्री पश्चिमी (Western) और यूरोपीय देशों में गिरी, जिससे भारत के निर्यात (Export) पर प्रतिकूल प्रभाव (Adverse Effect) पड़ा। अंततः, भारतीय कंपनियों की top line में गिरावट आई, परिणामस्वरूप कंपनियों को राहत देने के लिए सरकार ने 2009 में FBT (Fringe Benefit Tax) उठा लिया।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

17. **NP (Net Profit) [निवल लाभ] :** किसी कंपनी के सकल लाभ में से निगम आय कर चुकाने के बाद बच गई राशि को निवल लाभ कहते हैं। इसे PAT (Profit After Tax) भी कहा जाता है।

Profit After Tax को कंपनी का Bottom line भी कहा जाता है। हर कारोबारी संस्था का अंतिम उद्देश्य लाभ बढ़ाना होता है।

लाभ = TR – TC

लाभ बढ़ाने की रणनीतियाँ

Top line रणनीति
यदि कंपनी अपनी कुल प्राप्ति (Total Receipt) बढ़ाने पर बल देती है तो इस व्यवसायिक रणनीति को Top line रणनीति कहते हैं।

Bottom line रणनीति
यदि लाभ बढ़ाने के लिए एक कंपनी अपनी कुल लागत कम करने पर बल देती है तो इस व्यावसायिक रणनीति को Bottom line रणनीति कहते हैं।

Top line रणनीति : चूँकि, लाभ = TR↑ (Total Receipt) – TC (Total Cost)

Top line रणनीति के अनुसार TR (Total Receipt) में वृद्धि की जाती है। TR के साथ GVA_{MP}, GVA_{FC}, NVA_{FC}, GOS, GB आदि में वृद्धि Top line रणनीति के भाग हैं। TR (Total Receipt) बढ़ाने के दो उपकरण हैं, Q (Quantity) तथा मूल्य P (Price)

Q × P = Total Receipt
Quantity Price

यदि वस्तु की गुणवत्ता में बिना सुधार किये मूल्य में वृद्धि कर दी जाये तो खपत गिर जाती है, जिसे सुरक्षित दृष्टिकोण नहीं कहा जा सकता।
खपत बढ़ाने के तरीके को 2 प्रकार से समझा जा सकता है:

खपत बढ़ाने के तरीके

धारणीय तरीका (Sustainable Way)
यदि वस्तु की गुणवत्ता में सुधार के साथ उसके मूल्य में वृद्धि की जाये तो इसे धारणीय तरीका कहते हैं।

गैर धारणीय तरीका (Unsustainable Way)
यदि वस्तु की गुणवत्ता में सुधार किये बिना उसका मूल्य वृद्धि किया जाये तो इसे गैर धारणीय तरीका कहते हैं।

Bottom line Strategy : हम जानते हैं कि, लाभ = TR (Total Receipt) – TC↓ (Total Cost)

Bottom line रणनीति के अनुसार TC (Total Cost) में कमी की जाती है। TC के साथ IC, NIT, DA, COE, संपत्ति/लागत या ब्याज, CIT आदि में कमी Bottom line रणनीति के भाग हैं। TC (Total Cost) घटाने के दो उपकरण हैं, Q (Quantity) तथा P (Price)

Q × P = Total Receipt
Quantity Price

यदि वस्तु की गुणवत्ता में सुधार किये बिना मूल्य (Price) में वृद्धि कर दी जाये तो इसे Bottom Line Strategy कहते हैं।

जैसे: यदि सरकार के संदर्भ में देखा जाये तो सरकार की प्रतिगामी कर प्रणालियाँ, मजदूरों को कम मजदूरी देकर गलत तरीके से आय बढ़ाने का प्रयास करना आदि **Bottom line रणनीति** के लक्षण हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

यदि महँगाई बढ़ रही है तो नरेगा में मजदूरों की मजदूरी में भी वृद्धि होनी चाहिए। (गत् वर्ष मजदूरी को CPIAL Index से जोड़ा जाना इस दिशा में एक सकारात्मक कदम है) अतः सतत् विकास (Sustainable Development) के लिए topline रणनीति (Strategy) आवश्यक है।

देश भर में पंजीकृत कंपनियों की कुल संख्या लगभग 8 लाख है। (कंपनी अधिनियम 1956) इन सभी कंपनियों को समग्रता में India Incorporate (Inc.) कहा जाता है। चूँकि, हर कंपनी अपना धारणीय विकास सुनिश्चित करना चाहती है, ताकि विपरीत समय में भी कंपनी सुचारू रूप से चलती रहे अतः किसी भी कंपनी द्वारा–

- निवल लाभ (NP) को पूरी तरह से शेयर धारकों में नहीं बाँटा जा सकता।
- निवल लाभ (NP) का जो अंश शेयर धारकों में वितरित होता है, उसे वितरित लाभ कहते हैं। जैसे: यदि निवल लाभ 100 ₹ है तथा वितरित लाभ का मूल्य 50 ₹ है और शेयरों की संख्या 50 है तो प्रति शेयर मूल्य 1 ₹ हुए।

वितरित लाभ पर लाभांश वितरण कर (Devident Distribution Tax) लगता है। प्रति शेयर वितरित लाभ को लाभांश (Devident) कहते हैं।

(DDT) = 10% (वर्तमान मूल्य)

इस प्रकार 50 ₹ में 5 ₹ सरकार को देना होगा और बचे हुए 45 ₹ जो अब 50 शेयरों का मूल्य है, के अनुसार प्रति शेयर मूल्य 90 पैसा होगा। इस आधार पर लाभांश के दो नामकरण हैं–

कर पूर्व लाभांश (Declared Dividend)	करोपरांत लाभांश (Realised Dividend)
1 ₹	90 पैसा
कंपनियाँ आमतौर पर कर-पूर्व लाभांश (Dividend before tax) की ही घोषणा करती हैं, इसलिए इसको घोषित लाभांश (Declared Dividend) भी कहते हैं।	कंपनी के हाथ में लाभांश (Dividend) 1 ₹ होता है, लेकिन शेयर धारक को करोपरांत (After Tax) 90 पैसे मिलते हैं।

अतः बचत को प्रोत्साहित करने के लिए व्यय पर कर लगाये गये हैं। वहीं आय विषमता कम करने के लिए आय पर कर लगाए गये हैं। (अनुच्छेद–14)

50 ₹ के वितरण के पश्चात् जो राशि बच जाती है उसे अवितरित लाभ (50 ₹) कहते हैं। इसे निगम बचत/कंपनी की बचत (Corporate Saving, S_c) भी कहा जाता है। यह राशि जिस भी निधि में सचित की जावेगी, उसे आरक्षित निधि (Reserved Fund) कहते हैं।

आरक्षित निधि (Reserved Fund) का उद्देश्य : कई बार प्राकृतिक आपदा (भूकंप, बाढ़ आदि) से स्थिर पूंजी क्षतिग्रस्त होती है अतः किसी भी विपदा (Calamity) के कारण स्थिर पूंजी को जो क्षति होती है उसकी क्षतिपूर्ति के लिए आरक्षित निधि (Reserved Fund) आवश्यक है।

18. GP (Gross Profit) [सकल लाभ] : सकल परिचालन अधिशेष (Gross Operating Surplus-GOS) से संपत्ति लागत अथवा ब्याज (Interest) की राशि निकाल देने के बाद जो शेष बचता है, वह सकल लाभ (Gross Profit) कहलाता है।

◆◆◆

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–3 (Unit–3)

आर्थिक/उत्पादन लेखांकन : भाग-2
Economic/Production Accounting : Part-2

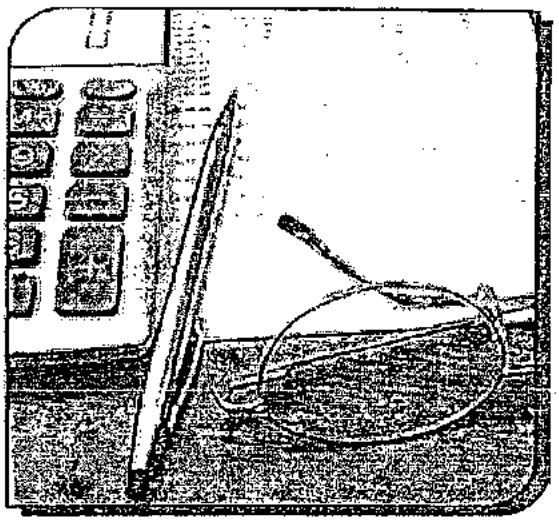

3.4 समष्टि लेखांकन
(Macro Accounting)

3.5 मौद्रिक मूल्य
(Monetary Value)

3.6 एक वर्ष की अवधि (लेखा वर्ष)
(One Accounting Year)

3.7 घरेलू सीमा क्षेत्र
(Domestic Territory Area)

3.8 निवासी
(Residents)

3.9 विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय के घटक
(Components of Net Factor Income from Abroad)

3.10 उत्प्रवास
(Emigration)

3.11 आप्रवास के फायदे
(Benefits of Immigration)

3.12 क्रय शक्ति समतुल्यता की अवधारणा
(Concept of Purchasing Power Parity)

3.13 हरित लेखांकन के संदर्भ में कुछ अन्य तथ्य
(Some Other Facts Regarding Green Accounting)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

3.4 समष्टि लेखांकन *(Macro Accounting)*

GDP_{MP} (बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पादन) - किसी देश की घरेलू सीमा में उसके सभी निवासियों द्वारा एक वर्ष की अवधि में उत्पादित समस्त अंतिम वस्तुओं एवं सेवाओं के मौद्रिक मूल्य को बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पादन GDP_{MP} कहते हैं।

GDP_{MP}
- → मौद्रिक मूल्य
- → एक वर्ष की अवधि
- → अंतिम वस्तुओं एवं सेवाओं का मूल्य
- → घरेलू सीमा क्षेत्र
- → निवासी

3.5 मौद्रिक मूल्य *(Monetary Value)*

मौद्रिक मूल्य = उत्पादित वस्तु की मात्रा (Q) ↓↑ x कीमत (P) ↓↑

GDP को प्रभावित करने वाले कारकों की प्रकृति (Causative Classification) के आधार पर GDP का परिवर्तन तीन प्रकार का होता है–

मौद्रिक मूल्य

Q↓↑ x P→	→Q x P↓↑	Q↑↓ x P↑↓
वास्तविक परिवर्तन (Real Change)	आभासी परिवर्तन (Notional Change)	नाममात्र परिवर्तन (Nominal Change)

वास्तविक परिवर्तन (Real Change) :- यदि कीमत स्थायित्व के साथ GDP में वृद्धि या गिरावट आए तो इसे वास्तविक वृद्धि (Real Growth) या वास्तविक गिरावट (Real Decline) कहते हैं।

अत: यदि उत्पादन में मात्रात्मक वृद्धि के कारण GDP में वृद्धि हो तो इसे वास्तविक वृद्धि (Real Growth) कहते हैं और गिरावट आए तो इसे वास्तविक (Real Decline) गिरावट कहते हैं।

आभासी परिवर्तन (Notional Change) :- यदि उत्पादन में ठहराव के साथ-साथ सिर्फ कीमत परिवर्तन के कारण GDP में वृद्धि या गिरावट हो तो इसे आभासी वृद्धि (Notional Growth) या आभासी गिरावट (Notional Decline) कहते हैं।

यदि उत्पादन की मात्रा में ठहराव हो लेकिन मूल्य में लगातार वृद्धि हो रही हो, तो इसे आभासी वृद्धि (Stagflation) की संज्ञा दी जाती है।

Q + P

Stag [nation In]flation = Stagflation

साधारणत: स्टैगफ्लेशन (Stagflation) ऐसी स्थिति होती है, जिसमें स्फीति (Inflation) तथा मंदी (Recession) दोनों की स्थिति साथ-साथ (Simultaneously) बनी रहती है। इस स्थिति में अर्थव्यवस्था दोनों ही उच्च स्फीति (High Inflation) तथा उच्च बेरोजगारी (High Unemployment) से ग्रस्त रहती है। स्टैगफ्लेशन को नियंत्रित करना थोड़ा चुनौतीपूर्ण होता है, क्योंकि इसमें दो परस्पर विरोधी संप्रत्ययों का मिश्रण होता है, जहाँ बेरोजगारी को दूर करने के लिए विस्तारक राजकोषीय तथा मौद्रिक नीति [ताकि अर्थव्यवस्था में माँग बढ़ाई जा सके- Fiscal Stimulation] का सहारा लेना पड़ता है, वहीं दूसरी ओर उच्च स्फीति (High Inflation) से बचाव के लिए संकोचक नीतियों का सहारा लेना पड़ता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

नाममात्र परिवर्तन (Nominal Change) :-यदि अंशतः उत्पादन (Q↓↑) की मात्रा में एवं अंशतः कीमत स्तर (P↓↑) में परिवर्तन के कारण GDP में वृद्धि या गिरावट हो तो इसे नाममात्र वृद्धि या नाममात्र गिरावट कहते हैं।

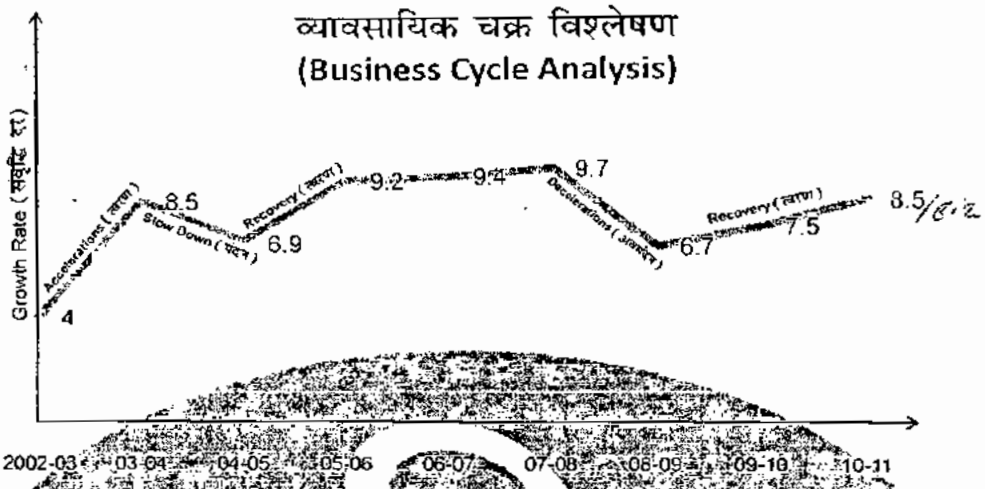

अर्थव्यवस्थाएं हमेशा चक्रीय पथ (Circular Path)/तरंग पथ (Wave Path)/उत्चावच पथ (Fluctuation Path) पर चलती हैं। इनके चाल के विश्लेषण को Business Cycle Analysis (व्यावसायिक चक्र विश्लेषण) कहते हैं।

त्वरण (Acceleration) :- विकास गति में वृद्धि की प्रक्रिया को त्वरण कहते हैं।

मंदन (Slow Down) :- संवृद्धि दर में मामूली गिरावट को मंदन कहते हैं।

त्वरण (Recovery) :- मंदन की प्रक्रिया के बाद जो त्वरण (Acceleration) होती है, उसे Recovery कहते हैं।

अवमंदन (Decelaration) :- संवृद्धि दर में तेज गिरावट को Decelaration कहते हैं।

शून्य वृद्धि (Zero Growth) :- ऐसी स्थिति जिसमें GDP में कोई परिवर्तन न हो।

ऋणात्मक वृद्धि (Negative Growth) :- यदि पिछले वर्ष के मुकाबले GDP में गिरावट आये तो उसे ऋणात्मक वृद्धि कहते हैं।

ऋणात्मक वृद्धि की प्रक्रिया यदि निरंतर दो तिमाहियों (6 Months) तक चलती रहे तो इस स्थिति को मंदी (Recession) कहते हैं और यदि मंदी की प्रक्रिया जड़ हो जाये अर्थात् त्वरण का कोई लक्षण विद्यमान न हो तो इस घटना को अवसाद (Depression) कहते हैं। पुनः, यदि आर्थिक अवसाद (Depression) लम्बे समय तक टिक जाये तो इसे महान् अवसाद (Great Depression) कहते हैं। उदाहरणस्वरूप 1929 की मंदी को महान् अवसाद कहा जाता है, जो 1933 तक बनी रही और Recovery की प्रक्रिया 1934 से शुरू हुई, और पूर्ण Recovery 1945 तक ही हो पाई।

3.6 एक वर्ष की अवधि (लेखा वर्ष) *(One Accounting Year)*

एक वर्ष की अवधि (लेखा वर्ष)

भौतिक लेखा वर्ष (Physical Accounting Year)	वित्तीय लेखा वर्ष (Financial Accounting Year)
यदि उत्पादन की भौतिक मात्रा का लेखांकन किया जाये तो उसे भौतिक लेखा वर्ष कहते हैं।	यदि उत्पादन की वित्तीय मात्रा का लेखांकन किया जाये तो उसे वित्तीय लेखा वर्ष कहते हैं।

आधुनिक लेखांकन वित्तीय लेखांकन ही है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

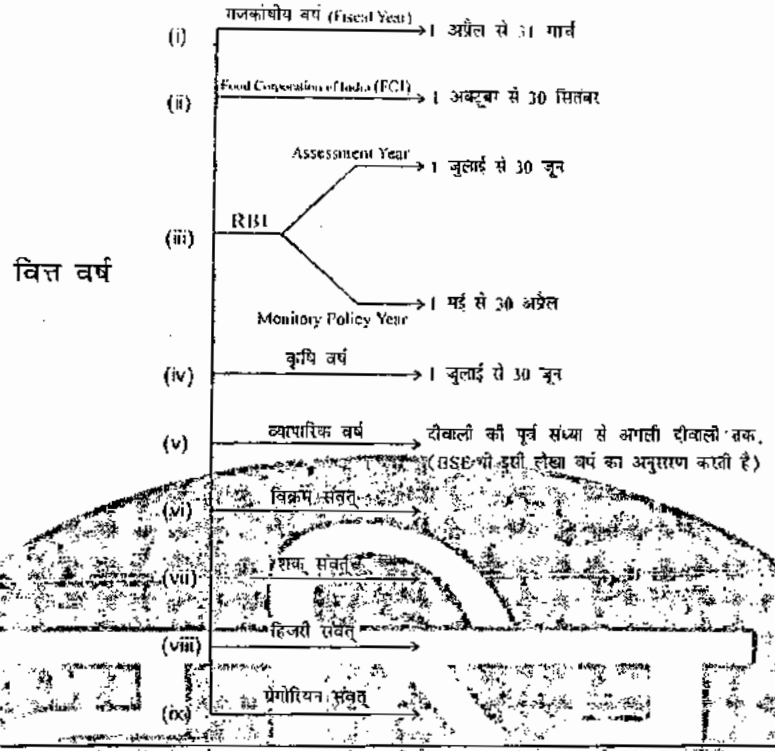

3.7 घरेलू सीमा क्षेत्र *(Domestic Territory Area)*

घरेलू सीमा वैसे देश की भौगोलिक सीमा से संबंधित होती है तथा घरेलू सीमा में भौगोलिक सीमा को सम्मिलित किया जाता है, पर घरेलू तथा भौगोलिक सीमा बिल्कुल एक नहीं होते। घरेलू सीमा के अन्तर्गत निम्नलिखित को सम्मिलित किया जाता है, जो भौगोलिक सीमा में आवश्यक रूप से सम्मिलित नहीं होंगे।

घरेलू सीमा क्षेत्र

- राजनीतिक सीमा क्षेत्र (आंतरिक समुद्री क्षेत्र सहित)
  - 12 मील का Nautical क्षेत्र
  - = आंतरिक समुद्र
  - शेष समुद्र = उच्च समुद्र
- निवल दूतावास, कन्सूलेट एवं सैन्य प्रतिष्ठान क्षेत्र
- जलपोत एवं वायुपोत
- छोटी नौकाएँ एवं तेल रिग

घरेलू सीमा क्षेत्र को इन माध्यमों से बढ़ा सकते हैं, साथ ही आधिकारिक देशों से आर्थिक, राजनीतिक और कूटनीतिक संबंध स्थापित कर सकते हैं।

1. **राजनीतिक सीमा क्षेत्र :-** राजनीतिक सीमाओं का भू-भाग, जिसमें देश की सामुद्रिक सीमा (Territorial Waters) भी सम्मिलित होती है।

2. **निवल दूतावास, कन्सूलेट एवं सैन्य प्रतिष्ठान क्षेत्र :-** इसे इस उदाहरण से समझा जा सकता है कि भारत के लिए अमेरिका में भारतीय दूतावास, भारत की घरेलू सीमा का अंग है तथा भारत में अमेरिका का दूतावास अमेरिका की घरेलू सीमा का अंग है।

3. **जलपोत एवं वायुपोत :-** देश के निवासियों द्वारा विश्व के विभिन्न भागों में चलाये जाने वाले वायुयान (Aircrafts) तथा जलयान (Ships)। उदाहरण के लिए, जापान तथा कोरिया के बीच नियमित रूप से चलने वाले भारतीय जलयान अथवा इंग्लैंड और पेरिस के बीच एयर इंडिया द्वारा चलाये जाने वाले यात्री हवाई जहाज भी भारत की घरेलू सीमा के ही अंग हैं।

4. **छोटी नौकाएँ एवं तेल रिग :-** मछली पकड़ने की नौकाएँ, तेल व प्राकृतिक गैसयान (Natural Gas Rigs) तथा तैरते हुए प्लेटफॉर्म (Floating Platforms) जो अंतर्राष्ट्रीय जल सीमा में या उस सीमा में देश के निवासियों द्वारा चलाये जाते हैं, जिनमें देश को तेल खोजने का एकमात्र (Exclusive) अधिकार है। उदाहरण के लिए, भारतीय मछुआरों द्वारा मछली पकड़ने की नौकाओं को बंगाल की खाड़ी (Bay of Bengal) के अंतर्राष्ट्रीय जलमार्ग में चलाना, भारत की घरेलू सीमा का अंग है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

घरेलू सीमा में देश की भौगोलिक सीमा का वह भाग सम्मिलित नहीं होगा जो दूसरे देशों को विदेशी आंतरिक क्षेत्र के रूप में जैसे :- दूतावास (Embassy), कन्सूलेट, सैन्य प्रतिष्ठान आदि कार्यालयों (Offices) या अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों (International Organizations) को दिए गए हैं। उदाहरणस्वरूप संयुक्त राष्ट्र के कार्यालय, अन्य देशों के दूतावास (Embassy) तथा कन्सूलेट आदि की गणना भारत के घरेलू सीमा में नहीं की जाएगी। पुनः अफगानिस्तान में भारत के कन्सूलेट्स तथा दूतावासों (Embassies) की गणना अफगानिस्तान के घरेलू सीमा में नहीं की जाएगी।

अनन्य आर्थिक क्षेत्र EEZ (Exclusive Economic Zone) :- समुद्र के जिस क्षेत्र के आर्थिक दोहन का अनन्य या अकेला अधिकार एक देश को प्राप्त हो, उस क्षेत्र को उस देश का EEZ कहते हैं। यह UN से प्राप्त होता है।

भारत का - EEZ-200 नॉटिकल मील

यह घरेलू सीमा क्षेत्र का अंग नहीं होता है, लेकिन जो छोटी-छोटी उत्पादन इकाइयाँ (Small Production Units) यहाँ स्थापित की जाती है, वह घरेलू सीमा क्षेत्र में आती है।

राजनीतिक सीमा क्षेत्र को फैलाना अब संभव नहीं है, इसलिए अधिक से अधिक देशों के साथ कूटनीतिक, आर्थिक तथा सैन्य सम्बन्धों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए, इससे घरेलू सीमा क्षेत्र का विस्तार होगा।

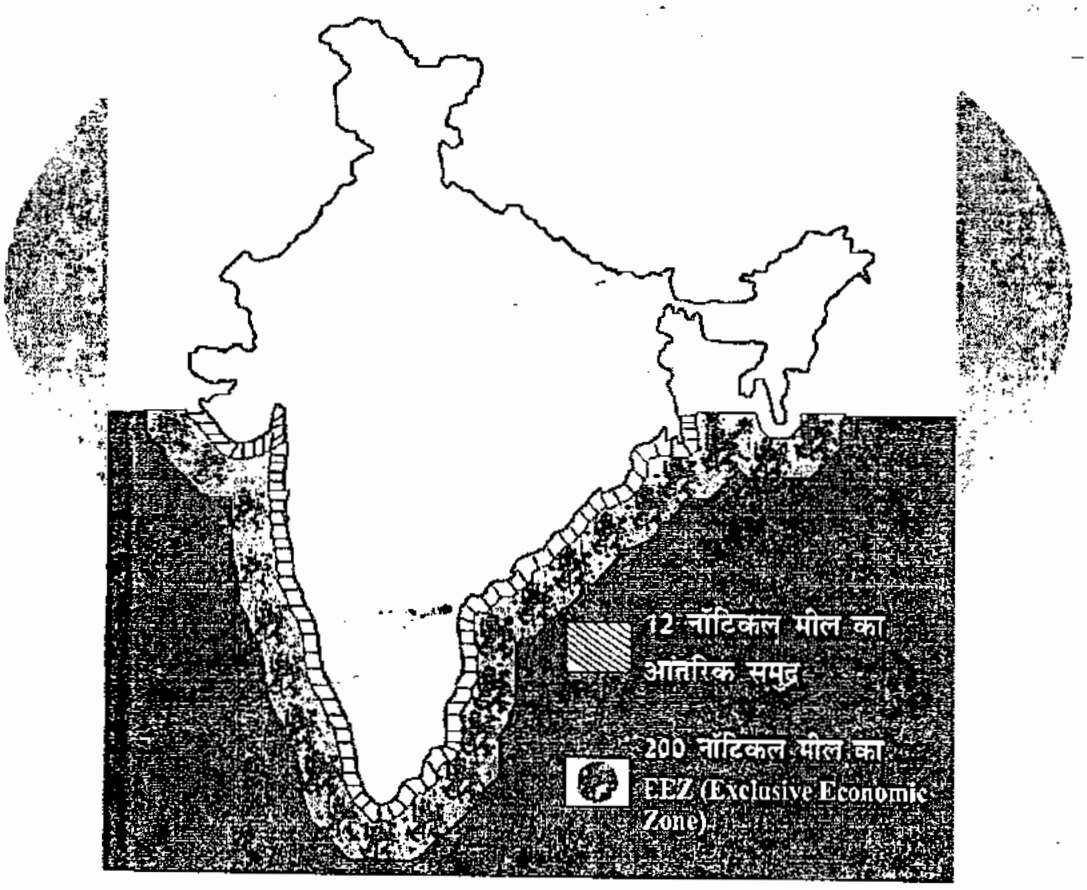

कन्सूलेट :- किसी दूतावास के अन्दर के आर्थिक विभाग को कन्सूलेट कहा जाता है।

कन्सूल :- कन्सूल एक राजनयिक पद है और जिस राजनयिक पदाधिकारी को आर्थिक संबंधों की निगरानी का कार्य दिया जाता है, उस पदाधिकारी को कन्सूल कहते हैं और कन्सूल कार्यालय (Office) को कन्सूलेट कहा जाता है।

दूतावास किसी मेजबान देश की राजधानी में ही हो सकता है, लेकिन, कन्सूलेट मेजबान देश के आर्थिक मंडियों में स्थित होते हैं। जैसे :- भारत के सन्दर्भ में मुम्बई, बैंगलोर, कलकत्ता इत्यादि।

सैन्य प्रतिष्ठान :- किसी अन्य देश में स्थित सैन्य प्रतिष्ठान की गिनती उस देश के घरेलू सीमा क्षेत्र में ही होती है। जैसे :- यदि भारत की शांति वाहिनी सेना (Peace keeping force) श्रीलंका में कार्यरत हो तो इन्हें आवंटित क्षेत्र भारत की घरेलू सीमा क्षेत्र का अंग माना जाएगा।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

3.8 निवासी *(Residents)*

निवासी के अन्तर्गत देश के भीतर रहने वाले राष्ट्रीय (Nationals) या गैर-राष्ट्रीय (Non-Nationals) सम्मिलित होते हैं, इस प्रकार निवासी होने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह राष्ट्रीय (National) या 'नागरिक' (Citizen) भी हो। अमेरिका में रहने वाले अनेक भारतीय जो अब भी भारतीय नागरिक हैं भारत के निवासी नहीं होंगे क्योंकि वे अमेरिका में रह रहे हैं तथा व्यापार कर रहे हैं, वे अमेरिका के निवासी हैं, यद्यपि वे भारतीय नागरिक हैं।

अतः किसी देश की घरेलू सीमा में रहने वाले किसी परिवार (Family), गृहस्थ (House hold) के सभी सदस्य जो देश के घरेलू सीमा में रह रहे हैं, उस देश के निवासी हैं। निवासी के अन्तर्गत निम्न को सम्मिलित करते हैं:-

(i) ऐसे श्रमिक तथा कामगार जो वर्ष के कुछ समय के लिए अन्य देशों में कार्य करते है तथा बाद में अपने देश को वापस लौट आते हैं।

(ii) जहाजों, जलपोतों के कामगार, वायुयान, तेलरिग या अन्य गतिमान (Moving) संयंत्रों को चलाने वाले लोग, जो अंशतः या पूर्णतः घरेलू सीमा से बाहर हों।

(iii) अंतर्राष्ट्रीय संगठनों (International Organisations) के कर्मचारी (Worker) जो इन संगठनों के विदेशी आंतरिक क्षेत्र में कार्य करते हैं।

(iv) स्थानीय लोगों में से नियुक्त विदेशी दूतावासों या सैन्य अड्डों में काम करने वाले लोग, जो उस देश के निवासी हैं।

(v) ऐसे लोग जो पर्यटक के रूप में मनोरंजन (Entertainment), शिक्षा (Education), स्वास्थ्य-लाभ (Health Benefits) आदि के सिलसिले में अल्पावधि (एक वर्ष से कम) के लिए आर्थिक सीमा से बाहर अन्य देश में जाते हैं, उन्हें निवासी के अन्तर्गत सम्मिलित करते हैं, लेकिन यदि वे एक वर्ष से अधिक अवधि के लिए आर्थिक सीमा से बाहर रहते हैं तो उन्हें निवासी में सम्मिलित नहीं किया जाता।

(vi) सीमावर्ती भाग में रहने वाले श्रमिक या लोग जो नियमित रूप से सीमा पार करके अपने कार्य हेतु आवागमन करते हैं।

संक्षेप में हमारे देश के सामान्य निवासियों में इन्हें सम्मिलित किया जाता है:-

(i) अपने देश के नागरिक तथा संस्थाएँ जो साधारणतः देश में निवास करते हैं और जिनकी आर्थिक रुचि का केन्द्र भी वही देश है।

(ii) अन्य राष्ट्रों के नागरिक जो एक वर्ष से अधिक की अवधि से हमारे देश में रह रहे हैं और जिनकी आर्थिक रुचि का केन्द्र हमारा देश है।

(iii) हमारे देश के नागरिक जो इस देश में स्थित अंतर्राष्ट्रीय संगठनों, जैसे:- विश्व बैंक (World Bank) तथा अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) अथवा विदेशी दूतावासों या कन्सूलेटों में काम करते हैं।

वहीं

(i) उन विदेशियों को हमारे देश का सामान्य निवासी नहीं माना जाएगा, जो मनोरंजन, चिकित्सा, अध्ययन, खेल-कूद आदि के लिए यहाँ आते हैं।

(ii) विदेशी पदाधिकारी, कूटनीतिज्ञ तथा उस देश में स्थित समस्त सेना के सदस्यों एवं अंतर्राष्ट्रीय संगठनों को इस देश का सामान्य निवासी नहीं माना जाएगा।

सामान्य निवासियों तथा गैर-निवासियों के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं:-

भारत के सामान्य निवासी	भारत के गैर-निवासी
1. भारत में स्थित विदेशी दूतावासों में काम करने वाले भारतीय।	1. कनाडा और जापान में स्थित भारतीय दूतावासों में काम करने वाले विदेशी।
2. भारत में स्थित विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) में काम करने वाले भारतीय।	2. भारत में स्थित विश्व स्वास्थ्य संगठन में काम करने वाले विदेशी।
3. भारत में स्थित अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) के कार्यालय में काम करने वाले स्थानीय लोग।	3. भारत में स्थित अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के कार्यालय के निदेशक (Director)।
4. अमेरिका में भारत के राजदूत।	4. भारत में अमेरिका के राजदूत।
5. भारत में एक वर्ष से अधिक की अवधि के लिए रह रहे विदेशी नागरिक (अध्ययन तथा चिकित्सा के लिए आए व्यक्तियों के अतिरिक्त)।	5. एक वर्ष से कम की अवधि के लिए भारत में काम कर रहे विदेशी तकनीकी विशेषज्ञ।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

घरेलू मूल्य + NFIA = राष्ट्रीय मूल्य

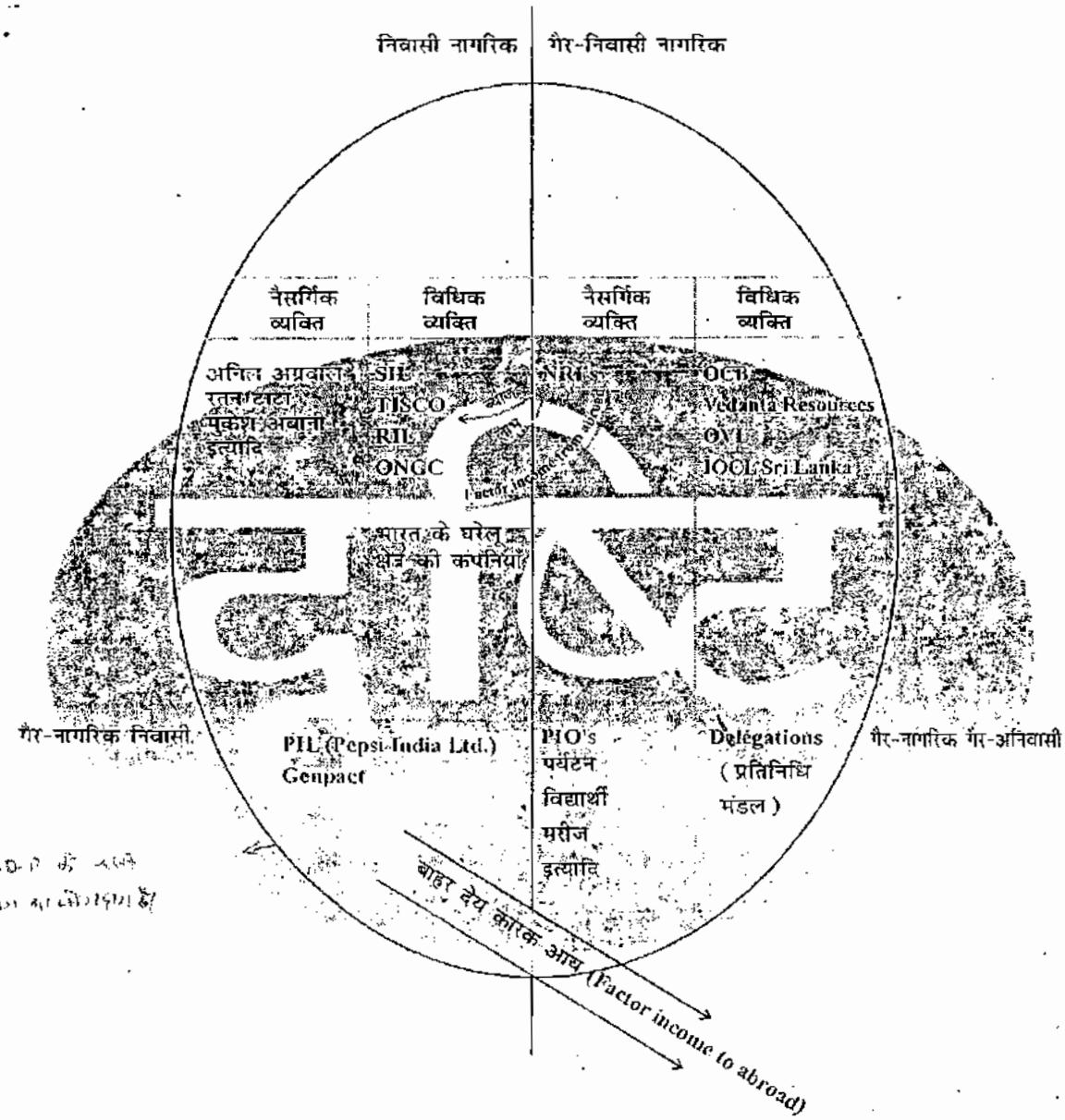

व्यक्ति के वैधानिक हैसियत के आधार पर व्यक्ति को दो भागों में बाँटते हैं–

(i) **विधिक व्यक्ति** :- कानून द्वारा मान्यता प्राप्त संस्थाओं को विधिक व्यक्ति कहते हैं। जैसे:- NGO इत्यादि

(ii) **नैसर्गिक व्यक्ति** :- मानव को नैसर्गिक व्यक्ति कहते हैं।

निवासी :- एक ऐसा व्यक्ति जो किसी देश के उत्पादन में अंशदान कर आय का मुख्य हिस्सा अर्जित करें और इस प्रक्रिया में सामान्यत: वह उस देश में रहे तो वहाँ का **निवासी** कहलाता है।

अनिवासी :- नागरिक समाज का वह हिस्सा जो दूसरे देश में निवास कर वहाँ उत्पादन का अंशदान करे तथा वहाँ निवास करे तो उसे **अनिवासी** कहते हैं।

अगर कोई नागरिक 182 दिन बाहर रहता है तो वह अनिवासी नागरिक की हैसियत के लिए आवेदन करने का पात्र हो जाता है। यह हैसियत मूलत: विदेश मंत्रालय देता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

प्रतिनिधिमंडल (Deligation) :- किसी अन्य देश से आये राजनीतिज्ञ अथवा आर्थिक, मीडिया, सामाजिक (NGO's), सांस्कृतिक (Cultural) या खेलकूद के क्षेत्र से संबंधित व्यक्तियों के समूह को प्रतिनिधिमंडल (Deligation) में शामिल करते है।

OCB (Overseas Corporate Body) समुद्रपारीय निगम निकाय :- भारतीय नागरिकों द्वारा स्थापित ऐसा उत्पादन संस्था जो विदेशों में निवास करे तथा व्यवसाय करे समुद्रपारीय निगम निकाय (Overseas Corporate Body) कहलाती है। IOCL श्रीलंका, OVL (ONGC Videsh Ltd.) आदि समुद्रपारीय निगम निकाय (Overseas Corporate Body) है।

NRI (Non Resident Indian) अनिवासी भारतीय नागरिक :- यदि कोई भारतीय नागरिक विदेश में जाकर बसे तथा वहाँ के उत्पादन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है तो उसे अनिवासी भारतीय (Non Resident Indian) कहते हैं। ये भारत में निवास चाहे न करे, लेकिन इनकी भारतीय नागरिकता बनी रहती है।

PIO (Person of Indian Origin) भारतीय मूल का व्यक्ति :- एक ऐसा व्यक्ति जो या तो स्वयं भारत का नागरिक था अथवा जिसके माता-पिता, दादा-दादी या नाना-नानी में से कोई एक भारत का नागरिक था अथवा जो किसी भारतीय नागरिक का जीवन-साथी (Spouse) है, PIO का दर्जा पाने के लिए आवेदन करने का पात्र हो जाता है।

NRI - भारत के नागरिक PIO - भारत के नागरिक नहीं	दोनों भारत के निवासी नहीं है।

Indian Diaspora = PIO + OCB + NRIs

भारत के GDP में केवल निवासियों की भूमिका होती है। जाहिर-सा प्रश्न है कि तब OCB (Overseas Corporate Body), NRI (Non Resident Indian) की भूमिका भारत में क्या है? इसका उत्तर NFIA (Net Factor Income From Abroad) के विश्लेषण से समझा जा सकता है।

$$GDP_{MP} + FI_{From\ A} - FI_{to\ A} = GNP_{MP}$$

$$100 + 11 - 1.6 = 99.4$$

उपर्युक्त सूत्र (Formule) से स्पष्ट है कि NRI's, OCB's की भूमिका GNP_{MP} में होती है, GDP में नहीं।

$$FI_{From\ A} - FI_{to\ A} = NFIA \text{ (Net Factor Income from Abroad)}$$

$$GNP_{MP} = GDP_{MP} + NFIA \text{ (Net Factor Income from Abroad)}$$

इस सूत्र को निम्न विश्लेषण से समझा जा सकता है।

GDP_{MP} बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic product at market price) :- किसी देश की घरेलू सीमा (Domestic Territory) में एक लेखा वर्ष (One Accounting Year) में सभी निवासियों (Residents) द्वारा जितनी भी अंतिम वस्तुओं (Goods) और सेवाओं (Services) का उत्पादन किया जाता है, जिसमें मूल्यह्रास (Depreciation) भी शामिल होता है, उनकी बाजार कीमत (Market Price) के जोड़ को बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद (GDP_{MP}- Gross Domestic Product at market price) कहा जाता है। एक देश की घरेलू सीमा में नागरिक (Citizen) तथा विदेशी (Foreigners) दोनों प्रकार के उत्पादक (Producers) पाए जाते हैं। ऐसे सभी उत्पादकों द्वारा उत्पादित अंतिम वस्तुओं (Goods) तथा सेवाओं (Services) के बाजार मूल्य को सकल घरेलू उत्पाद में शामिल किया जाता है।

GNP_{MP} बाजार कीमत पर सकल राष्ट्रीय उत्पाद (Gross National product at market price) :- किसी देश की घरेलू सीमा (Domestic Territory) में और बाहर एक लेखा वर्ष (One Accounting Year) में सभी नागरिकों (Citizens) द्वारा जितनी भी अंतिम वस्तुओं (Goods) और सेवाओं (Services) का उत्पादन किया जाता है, जिसमें मूल्यह्रास (Depreciation) भी शामिल होता है, उनकी बाजार कीमत (Market Price) के जोड़ को बाजार कीमत पर सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP_{MP}- Gross National Product at market price) कहा जाता है।

NFIA विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय (Net Factor Income from Abroad) :- हमारे निवासियों द्वारा शेष विश्व (Rest of the World) से प्राप्त कारक आय (लगान, ब्याज, लाभ तथा मजदूरी) तथा हमारे देश में प्राप्त गैर-नागरिकों (Non-citizens) द्वारा प्राप्त कारक आय का अंतर है। यदि विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय धनात्मक (Positive) है तो सकल राष्ट्रीय उत्पाद (Gross National Product), सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product) से अधिक होगा। इसके विपरीत, यदि विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक आय ऋणात्मक (Negative) है तो सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP), सकल घरेलू उत्पाद (GDP) से कम होगा।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

वैसे नैसर्गिक व्यक्ति (Natural Individual) जो भारत के नागरिक तो हैं, लेकिन निवासी नहीं हैं NRI (Non Resident Indian) कहलाते हैं तथा अन्य देशों में स्थापित संस्थानों के संदर्भ में इन्हें विधिक व्यक्ति (Judicial Individual) या OCB (Overseas Corporate Body) कहा जाता है। जैसे:- लंदन में स्थित वेदांता रिसोर्सेस (Vedanta Resources), श्रीलंका में स्थित I.O.C.L (Indian Oil Corporation Ltd.) आदि OCB (Overseas Corporate Body) हैं, ये नैसर्गिक तथा विधिक व्यक्ति जो भारत के निवासी नहीं है, अपनी आय से अर्जित ब्याज (Earned Interest) तथा लाभ के रूप में अपने देश की ओर मुद्रा का हस्तानांतरण करते हैं, जिन्हें Factor Income from abroad ($FI_{from A}$) कहते हैं।

इसी प्रकार वैसे नैसर्गिक व्यक्ति (Natural Individual) या विधिक संस्थान (Judicial Institution) जो भारत के निवासी तो हैं, लेकिन नागरिक (Citizen) नहीं हैं, भारत के GDP में योगदान तो करते हैं, लेकिन इनका GNP में इनके योगदान की अलग प्रकार से गणना होती है। ये संस्थाएँ (PIL, Genpact आदि) अपने आय का स्थानांतरण हालाँकि अन्य देशों में करती हैं, लेकिन इससे भारत के नागरिकों को उन संस्थानों में रोजगार मिलता है, तथा उनके अर्जित आय को भारत के GDP में जोड़ा जाता है। संस्थानों के कमाए गए लाभ को Factor income to abroad ($FI_{to A}$) कहा जाता है।

3.9 विदेशों से प्राप्त शुद्ध कारक-आय के घटक (*Components of Net Factor Income from Abroad*)

(i) **कर्मचारियों की शुद्ध पारिश्रमिक (Net Compensation of Employees):** भारतीय नागरिकों द्वारा विदेशों से अर्जित पारिश्रमिक आय तथा विदेशी नागरिकों द्वारा भारत से अर्जित पारिश्रमिक आय के अंतर को कर्मचारियों का शुद्ध पारिश्रमिक (Net Compensation of Employees) कहते हैं।

(ii) **सम्पत्ति तथा उद्यमशीलता से प्राप्त शुद्ध आय (Net Income from Property and Entrepreneurship):** यह एक देश के निवासियों द्वारा लगान, ब्याज तथा लाभ के रूप में प्राप्त आय तथा शेष विश्व को किए गए ऐसे ही भुगतानों का अंतर है।

(iii) **विदेशों में निवासी कंपनियों की शुद्ध प्रतिधारित आय (Net Retained Earnings of Resident Companies Abroad):** यह विदेशों में स्थित निवासी कंपनियों की प्रतिधारित आय (Retained Earnings) तथा देश की घरेलू सीमा में स्थित विदेशी कंपनियों की प्रतिधारित आय का अंतर है।

विश्व बैंक (World Bank) GNP_{MP} को GNI_{MP} (Gross National Income at market price) तथा GDP_{MP} को GDI (Gross Domestic Income at market price) से संबोधित करता है। चूँकि हम जानते हैं कि

$$GNI_{MP} = GDI_{MP} + NFIA \text{ (Net Factor Income from Abroad)}$$

इसलिए सकल राष्ट्रीय आय (GNI_{MP}) बढ़ाने की दो वैकल्पिक नीतियाँ हो सकती हैं–

(a) **बन्द आर्थिक नीति (Close Economic Policy) :-** यदि केवल घरेलू उत्पादन को बढ़ावा देकर सकल राष्ट्रीय आय बढ़ाने की कोशिश की जाये तो इस रणनीति को बन्द आर्थिक रणनीति (Closed Economic Policy) कहते हैं। भारत में 1991 तक यही रणनीति थी। यही कारण था कि अर्थव्यवस्था की विकास की गति भी धीमी थी।

(b) **खुली आर्थिक नीति (Open Economic Policy) :-** यदि घरेलू उत्पादन के साथ-साथ NFIA (Net Factor Income from Abroad) को बढ़ाने की कोशिश की जाये तो इसे खुली आर्थिक रणनीति (Open Economic Policy) कहते हैं। 1991 से यही आर्थिक रणनीति अपनायी जा रही है और भारतीय अर्थव्यवस्था धीरे-धीरे वैश्विक मंच पर अपनी जगह बनाने में सफल हो रही है।

NFIA को बढ़ावा देने के दो संभावित तरीके हैं:

NFIA को बढ़ाने के दो तरीके
- **FI to Abroad को घटाना (Negative Approach)** (अन्य देशों को गये निवल कारक आय)
- **FI from Abroad को बढ़ाना (Positive Approach)** (विदेशों से आये निवल कारक आय)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

3.10 उत्प्रवास *(Emigration)*

NFIA को बढ़ाने (Increase) के लिए उत्प्रवास को प्रोत्साहित (Incourage) करना आवश्यक होगा। उत्प्रवास (Emigration) को दो तरीके से बढ़ावा दिया जा सकता है:-

(a) NRI का उत्प्रवास (Emigration)

(b) OCB का उत्प्रवास (Emigration)

उत्प्रवास के फायदे *(Benefits of Emigration)*

(i) उत्प्रवास से विदेशी मुद्रा (Foreign Currency) की आय बढ़ेगी।

↓

(ii) विदेशी मुद्रा से वर्तमान विदेशी ऋण का भुगतान कर सकेंगे।

↓

(iii) अधिशेष पैसे (Surplus Money) का उपयोग कर OCB की संख्या बढ़ा सकेंगे।

↓

(iv) जिससे पुन: आय बढ़ेगी और आय का सुचक्र (Spiral up pressure) बनेगा।

↓

(v) पैसे का उपयोग कर बाह्य सहायता दे पायेंगे और इस प्रकार बाह्य संप्रभुता बढ़ाकर कूटनीतिक लाभ ले सकेंगे।

(vi) विदेशी मुद्रा से अर्द्धनिर्मित और कच्चे माल (Raw Material) का आयात (Import) कर सकेंगे, जिससे उत्पादन (Production) में वृद्धि होगी, साथ ही रोजगार (Employment) में वृद्धि होगी।

(vii) NRI's विदेशों में जाकर भारतीय संस्कृति (Indian Culture) का प्रचार-प्रसार (Spread) करते हैं और इस प्रकार विदेशों में देशी वस्तुओं की खपत बढ़ती है और हमारे निर्यात (Export) को बढ़ावा मिलता है।

(viii) NRI's एक राजनीतिक दबाव समूह (Political Pressure Group) भी तैयार करते हैं (Indian Diaspora) और इस प्रकार विदेश नीति (Foreign Policy) और सक्षम (Capable) होती है।

(ix) भारत में काम करने वाले कामगारों की सौदेबाजी क्षमता (Bargaining Power) भी बढ़ती है।

उत्प्रवास से हानि *(Losses of Emigration)*

(i) मजदूरी लागत बढ़ने से कंपनियों को ज्यादा पैसा खर्च करना पड़ता है।

↓

(ii) और इस प्रकार लागत बढ़ने से देश के उत्पादन में कमी आती है।

(iii) जिस देश में NRI's जाते हैं, वहाँ के स्थानीय कामगारों (Local Employers) को नुकसान हो सकता है और मजदूर वर्ग में इस प्रक्रिया को लेकर असंतोष बढ़ सकता है।

(iv) उत्प्रवासी भारतीय मजदूर वर्ग का एक हिस्सा विदेशी संस्कृति से अनुकूलित हो सकता है और इस प्रकार पश्चिमीकरण का खतरा बढ़ सकता है।

साधारणत: उत्प्रवास (Emigration) से फायदा उन देशों को होता है जहाँ की जनसंख्या अधिक (High Population) होती है। जैसे:- भारत और चीन के लिए उत्प्रवास अच्छा है क्योंकि इससे बेरोजगारी कम होगी और देश का विकास होगा वहीं जहाँ कई यूरोपीय देशों में जनसंख्या पहले से ही बहुत कम है, वहाँ के लिए उत्प्रवास नुकसानदायक (Harmful) हो सकता है। इसी संदर्भ में स्वीडन के गुन्नर मार्डेल (Gunnar Myrdal) ने उत्प्रवास को नुकसानदायक बताया है, क्योंकि स्वीडन की जनसंख्या पहले से ही कम है।

3.11 आप्रवास के फायदे *(Benefits of Immigration)*

(i) आप्रवास से सस्ते कुशल श्रम की उपलब्धता बढ़ेगी।

↓

(ii) सस्ते कुशल श्रम से उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि होगी, जिससे निर्यात क्षमता में वृद्धि होगी।

(iii) बौद्धिक लोगों का आगमन होगा और इस प्रकार बौद्धिकता (Intellect) को बल मिलेगा।

↓

Copyright – Drishti The Vision Foundation

(iv) वैज्ञानिकों (Scientists) आदि के आगमन के साथ अनुसंधान एवं विकास (Research and Development) को बढ़ावा मिलेगा और साथ ही स्वास्थ्य सेवा (Health Services), प्रबंधन सेवा (Management Services) आदि में भी सुधार होगा।

(v) किसी देश के आप्रवासियों (Immigrants) (जैसे :- चीन, अमेरिका आदि) से यदि आशंका है तो सत्ता संतुलन (Balance of Power) होगा।

आप्रवास के नुकसान *(Losses of Immigration)*

(i) आप्रवास (Immigration) से NFIA (Net Flow of Income from Abroad) कम होने लगता है।

(ii) आप्रवास (Immigration) के कारण बाहर के मजदूर कम पैसे में ही काम करने के लिए तैयार हो जाते हैं और इस प्रकार मजदूरी का स्तर गिरता है।

↓

(iii) मजदूरी का स्तर गिरने से बेरोजगारी बढ़ती है और आय का कुचक्र (Spiral down pressure) बनता है।

(iv) आप्रवास (Immigration) से आर्थिक उपनिवेशवाद (Economic Colonialism) का भी भय बना रहता है।

(v) आप्रवासी मजदूर देश के अन्दर अराजकता को बढ़ावा दे सकते हैं, जनसंख्या में वृद्धि होती है और माँग का दबाव बढ़ने से खाद्य स्तर में गिरावट आती है।

(vi) बौद्धिक संसाधनों (Intelectual Resources) की तस्करी (Smuggling) भी बढ़ सकती है।

(vii) विदेशी मजदूरों को बुलाने से अर्थव्यवस्था ज्यादा से ज्यादा मजदूरों पर निर्भर हो जाती है।

(viii) विदेशी मजदूरों और स्थानीय मजदूरों में कटुता भी बढ़ती है।

3.12 क्रय शक्ति समतुल्यता की अवधारणा *(Concept of Purchasing Power Parity)*

हर देश की मुद्रा अलग-अलग होती है। जैसे:- भारत के लिए रूपया (₹), चीन के लिए युआन (¥), जापान के लिए येन, ब्रिटेन के लिए पाउण्ड तो अमेरिका के लिए डॉलर ($)। हर देश अपने GDP की गणना के लिए अपनी ही मुद्राओं (Currencies) का प्रयोग करता है। पारंपरिक रूप (Traditional Way) से आर्थिक विकास की अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर तुलनात्मक (Comparative) स्थिति ज्ञात करने के लिए विश्व बैंक (World Bank) जो प्रतिव्यक्ति आय (Per Capita Income) का अनुमान प्रस्तुत करता है, वह एक ऑफिशियल (Official) विदेशी विनिमय दर (Foreign Exchange Rate) पर करता है, जिसकी गणना के लिए वह तीन वर्षों के विनिमय दर के औसत को लेता है, जिससे इसमें होने वाले आकस्मिक (Sudden) तथा अभासी परिवर्तनों (Nominal Changes) के प्रभाव को निरस्त (Nullify) किया जा सके।

किसी भी देश के विनिमय दर पर GDP की गणना के तीन निर्धारक कारक होते हैं।

(i) देश में उत्पादन की मात्रा

(ii) देश में प्रचलित कीमत स्तर

(iii) अन्य देश की मुद्रा [साधारणत: डॉलर ($)] के सापेक्ष देशी मुद्रा का विनिमय दर (देशी मुद्रा के सापेक्ष डॉलर ($) का विनिमय दर)।

उपरोक्त तीनों कारकों में केवल उत्पादन की मात्रा को ही वास्तविक निर्धारक कारक (Deciding Factors) कहा जा सकता है। क्योंकि देश में प्रचलित कीमत स्तर तथा अन्य देश के सापेक्ष [साधारणत: डॉलर ($)] देशी मुद्रा के विनिमय दर में परिवर्तन अर्थव्यवस्था के उतार-चढ़ाव के साथ होता रहता है, अत: इन्हें आभासी कारक ही कहा जा सकता है।

अत: GDP की गणना के लिए परंपरागत लेखांकन विधि के स्थान पर विश्व बैंक ने एक नई लेखांकन विधि का प्रयोग करना प्रारंभ किया जो अधिक यथार्थपरक है। इसी नई विधि को क्रय शक्ति समतुल्यता (Purchasing Power Parity) के नाम से जानते हैं।

इसे इस प्रकार समझने का प्रयास किया जा सकता है। जैसे:- एक डॉलर ($)= 51 ₹। इस आधार पर व्यक्त प्रति व्यक्ति आय (Per Capita Income) की सही तुलनात्मक स्थिति प्रस्तुत नहीं की जा सकती। क्योंकि भारत में 51 ₹ में जितना सामान तथा सेवा कोई क्रय कर सकता है, 1 डॉलर ($) से अमेरिका में उतना नहीं क्रय कर सकते। इसका मतलब यह है कि ऑफिशियल विदेशी विनिमय दर (परंपरागत विदेशी विनिमय दर) वास्तविक क्रय शक्ति की क्षमता को व्यक्त नहीं करता।

डॉलर ($) का विनिमय दर जहाँ 51 ₹ है,

वहीं ₹ का विनिमय दर $\frac{1}{51}$ डॉलर ($) है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

हम जानते हैं कि GDP की गणना के लिए Q (Quantity) × P (Price) की गणना होती है, अतः डॉलर ($) GDP का सीधा संबंध मात्रा और कीमत के साथ होगा।

$$GDP = Q \times P$$

$$(\$)\ GDP = \frac{Q \times P}{(\$)\ \text{का विनिमय दर}}$$

जाहिर है कि ($) का विनिमय दर यदि घटेगा तो ($) GDP बढ़ेगा। अर्थात् यदि ($) कमजोर होगा ($ का विनिमय दर कमजोर होगा) तो भारत का ($) GDP बढ़ेगा। इस प्रकार देशी मुद्रा के साथ ($) GDP का सीधा संबंध है, लेकिन ($) मुद्रा के साथ ($) GDP का उल्टा संबंध है।

PPP में इसी समस्या के समाधान का प्रयत्न किया गया है। भारत तथा अमेरिका दोनों देशों की मुद्रा की क्रयशक्ति की समता जैसे- 20 ₹ भारत में जितनी वस्तु एवं सेवा क्रय करेगा, 1 $ अमेरिका में उतना ही क्रय करे तो 20 ₹ = 1 $ इस आधार पर प्रति व्यक्ति आय क्रयशक्ति समता समायोजित प्रति व्यक्ति आय होगी। इसके अन्तर्गत किसी देश का सकल राष्ट्रीय आय को किसी पूर्व निश्चित अन्तर्राष्ट्रीय विदेशी विनिमय दर पर व्यक्त न करके, उसे उस देश के भीतर मुद्रा की क्रय शक्ति के आधार पर व्यक्त किया जाता है। World Development Report 2010 के अनुसार परंपरागत विधि से भारत की 2008 में सकल प्रति व्यक्ति आय 1070 $ थी, वहीं क्रय शक्ति समता के आधार पर 3374 $ रही।

क्रय शक्ति समतुल्यता (Purchasing Power Parity) – एक समान वैश्विक कीमत के आधार पर विभिन्न देशों के उत्पादन लेखांकन की विधि को क्रय शक्ति समतुल्यता विधि कहते हैं।

इस विधि का सबसे पहले प्रयोग 1993 में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) ने किया और आजकल विश्व बैंक इसी विधि का प्रयोग विभिन्न देशों के रहन-सहन के स्तर की तुलना के लिए कर रहा है।

PPP की नई विधि से यदि कीमत (P) में वृद्धि के कारण किसी देश का GDP घटता या बढ़ता है तो अन्य देशों के साथ उसके तुलनात्मक अध्ययन में उसके सोपान क्रम पर कोई असर नहीं होता। सोपान क्रम में परिवर्तन तभी होगा, जब मात्रा (Q) में परिवर्तन होगा। अतः यदि ₹ की कीमत यूआन, येन, पाउण्ड या डालर ($) के हिसाब से बदल भी रही, तो GDP पर कोई परिवर्तन नहीं होगा, जब तक कि उत्पादन की मात्रा में कोई परिवर्तन न हो।

चूंकि पिछले 15-20 साल से ही World Bank ने इस विधि को अपनाया है, अतः अभी PPP और परंपरागत (Official) दोनों का प्रयोग हो रहा है। पारंपरिक लेखांकन की तुलना में PPP लेखांकन से GDP की गणना में 5 गुनी तक वृद्धि हो जाती है।

3.13 हरित लेखांकन के संदर्भ में कुछ अन्य तथ्य
(Some Other Facts Regarding Green Accounting)

राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण (National Green Tribunal) :- प्राकृतिक पर्यावरण के संरक्षण हेतु आवश्यक कानूनों एवं पर्यावरणीय अधिकारों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए, राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण (National Green Tribural) का गठन सरकार द्वारा अक्टूबर 2010 में कर लिया गया तथा इसके आशय की अधिसूचना 18 अक्टूबर 2010 को जारी की गई।

इकोमार्क (Ecomark) :- पर्यावरण संरक्षण को प्रोत्साहित एवं सुनिश्चित करने के उद्देश्य से पर्यावरण मित्र तकनीक से उत्पादित उत्पादों (जिनसे पर्यावरण को हानि नहीं पहुँचती) पर पर्यावरण एवं वन मंत्रालय का इकोमार्क चिह्न लगाया जाता है (मिट्टी के मटके के रूप में इकोमार्क का प्रतीक चिह्न)। इकोमार्क योजना का शुभारम्भ भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा जनवरी 1992 से प्रारंभ की गई।

कृषि जीन बैंक :- कृषि पदार्थों की जीन स्तर पर ही प्रामाणिक पहचान को सुनिश्चित करने के लिए विकसित। इससे जहाँ एक तरफ श्रेष्ठतम कृषि पदार्थों की जीन संरचना का रिकॉर्ड संरक्षित किया जा सकता है, वहीं दूसरी तरफ शोध के उपरांत विकसित किए गए नवीन कृषि पदार्थों को पेटेंट भी कराया जा सकता है। भारत में ऐसे कृषि जीन बैंक की स्थापना 1988 में की गई।

◆◆◆

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–4 *(Unit–4)*

सामाजिक-आर्थिक लेखांकन : भाग-1
Social-Economic Accounting : Part-1

4.1 सामाजिक-आर्थिक लेखांकन *(Social-Economic Accounting)*

4.2 लॉरेन्ज वक्र *(Lorenz Curve)*

4.3 गिनी गुणांक *(Gini Coefficient)*

4.4 मानव विकास सूचकांक
(Human Development Index – HDI)

4.5 HDI के मूल्य बढ़ाने के उपाय
(Measures to Increase HDI Values)

4.6 असमानता-समायोजित मानव विकास सूचकांक
(Inequality Adjusted Human Development Index – IHDI)

4.7 लिंग संबंधी विकास सूचकांक
(Gender Related Development Index – GDI)

4.8 लिंग सशक्तिकरण उपाय
(Gender Empowerment Measures – GEMs)

4.9 लिंग असमानता सूचकांक
(Gender Inequality Index – GII)

4.10 महिला सशक्तिकरण तथा लिंग असमानता दूर करने के उपाय
(Women Empowerment and Measures to Remove Gender Inequality)

4.11 बहुआयामी निर्धनता सूचकांक
(Multidimensional Poverty Index - MPI)

4.12 मानव निर्धनता सूचकांक
(Human Poverty Index - I – HPI - I)

4.13 मानव निर्धनता सूचकांक
(Human Poverty Index - II – HPI - II)

4.1 सामाजिक-आर्थिक लेखांकन *(Social-Economic Accounting)*

हाल के वर्षों में अर्थशास्त्रियों (Economist) का ध्यान आर्थिक संवृद्धि (Economic Growth) से हटकर मानव विकास (Human Development) पर केंद्रित हुआ है। लंबे समय तक अर्थशास्त्रियों के समक्ष यह प्रश्न हुआ करता था कि कोई राष्ट्र कितना उत्पादन (Production) कर रहा है? उसकी GDP क्या है? वगैरह-वगैरह। लेकिन अब यह प्रश्न प्रमुख हो गया है कि लोगों का रहन-सहन (Way of Living) कैसा है? अब अर्थशास्त्री (Economist) मानने लगे हैं कि विकास (Development) का वास्तविक उद्देश्य (Actual Motive) जनता के विकल्पों का विस्तार (Expansion of Options) कर उनके जीवन-स्तर में सुधार करना है। 'आय' मानव जीवन (Human Life) का कुल सार नहीं है। शिक्षा (Education) एवं साक्षरता (Literacy), स्वास्थ्य (Health), भौतिक पर्यावरण (Physical Environment), सभी पुरुषों एवं स्त्रियों के लिए समान अवसर (Equal Opportunity), राजनैतिक स्वतंत्रता (Political Freedom) आदि अब उतने ही महत्वपूर्ण (Important) हैं जितनी कि आय।

अब यह तय है कि 'मानव विकास' (Human Development) ही सभी आर्थिक गतिविधियों (Economic Activities) का अंतिम लक्ष्य है, लेकिन इसको मापना (Measurement) उतना आसान नहीं है। जहाँ आर्थिक संवृद्धि (Economic Growth) को सामान्यतया सकल राष्ट्रीय उत्पाद (Gross National Product) या प्रति व्यक्ति सकल राष्ट्रीय उत्पाद (Per Capita Gross National Product) के रूप में मापा जाता है, वहाँ मानव विकास (Human Development) को मापना अत्यंत मुश्किल (Very Difficult) है क्योंकि मानव विकास के कई आयाम (Many Dimensions of Human Development) हैं। अतः मानव विकास के लेखांकन (Accounting of Human Development) की प्रक्रिया के कई घटक (Components) हैं। जैसे- HDI, GDI, PQLI आदि, और इन मानकों (Standards) की सहायता से सामाजिक आर्थिक प्रभावों (Social-Economic Effects) का आकलन 'मानव विकास' पर किया जाता है। अतः हम कह सकते हैं कि उत्पादन क्षेत्र (Production Area) की सक्रियता में सामाजिक संतुष्टि (Social Satisfaction) पर पड़ने वाले प्रभाव के व्यक्तिगत लेखांकन (Individual Accounting) को सामाजिक-आर्थिक लेखांकन (Social-Economic Accounting) कहते हैं।

जिन मानकों की सहायता से इन प्रभावों का आकलन किया जाता है, उसे सामाजिक आर्थिक सूचक (Social-Economic Indicators) कहते हैं।

विश्व बैंक (World Bank) के दो सूचक हैं:

(i) लॉरेंज वक्र (Lorenz Curve).
(ii) गिनी गुणांक (Gini Coefficient)

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (United Nations Development Programme-UNDP) के निम्न सूचक हैं:

(i) मानव विकास सूचकांक (Human Development Index – HDI)
(ii) असमानता-समायोजित मानव विकास सूचकांक (Inequality Adjusted Human Development Index – IHDI)
(iii) लिंग संबंधी विकास सूचकांक (Gender Development Index – GDI)
(iv) लिंग सशक्तिकरण उपाय (Gender Equality Measures – GEMS)
(v) लिंग असमानता सूचकांक (Gender Inequality Index – GII)
(vi) बहुआयामी निर्धनता सूचकांक (Multidimensional Poverty Index – MPI)
(vii) मानव निर्धनता सूचकांक-I (Human Poverty Index-I – HPI-I)
(viii) मानव निर्धनता सूचकांक-II (Human Poverty Index-II – HPI-II)

कुछ अन्य सूचक:

(i) जीवन का दैहिक गुणवत्ता सूचकांक (Physical Quality of Life Index – PQLI)
(ii) जीवन का गुणवत्ता सूचकांक (Quality of Life Index – QLI)
(iii) फिलिप्स वक्र (Philips Curve)
(iv) त्याग अनुपात (Sacrifice Ratio)
(v) दयनीयता/विपन्नता सूचकांक (Miserable Index)
(vi) एंजिल वक्र (Engel's Curve)
(vii) कुजनेत्स वक्र (Kuznets Curve)

अब हम विस्तार से विभिन्न आर्थिक सामाजिक सूचकों का अध्ययन करेंगे:

Copyright – Drishti The Vision Foundation

4.2 लॉरेन्ज वक्र *(Lorenz Curve)*

किसी अर्थव्यवस्था में आय के वास्तविक वितरण को दर्शाने के लिए जिस वक्र का प्रयोग किया जाता है, उसे लॉरेंज वक्र कहते हैं। यह समाज में आय के आर्थिक वितरण (Economic Distribution) व आर्थिक विषमता (Economic Inequality) की माप हेतु एक ज्यामितीय विधि (Geometrical method) है, जिसमें परिवारों की संख्या के संचयी प्रतिशत (Cumulative Percentage) और परिवार के पास उपलब्ध संसाधनों (Available Resources) के संचयी प्रतिशत (राष्ट्रीय आय में अंश-संचयी धारिता) के मध्य एक ग्राफ खींचा जाता है। इसे 1905 में Max O Lorenz ने विकसित किया। इस वक्र (Curve) का प्रत्येक बिन्दु उन परिस्थितियों (Situations) या व्यक्तियों (Peoples) को प्रदर्शित करता है, जो एक निश्चित आय के प्रतिशत के नीचे हैं। यह वक्र निरपेक्ष रेखा से आय के वास्तविक वितरण के विचलन (Deviation) को दर्शाती है।

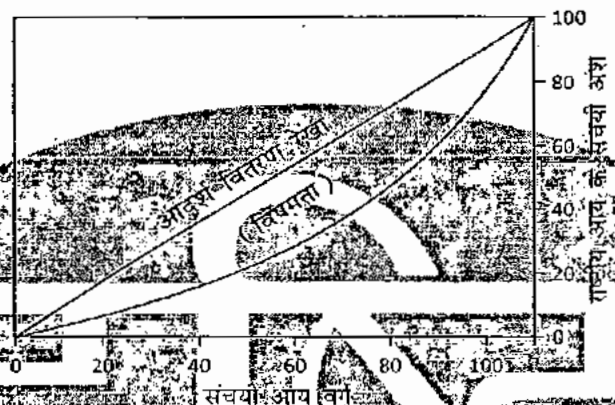

आय-वर्ग	राष्ट्रीय आय का अंश	
	निरपेक्ष (%)	संचयी (%)
सम्पन्नतम 20%	46.1	100
ऊपरी 20%	19.2	53.9
ऊपरी 20%	15.0	34.7
ऊपरी 20%	11.6	19.7
निर्धनतम 20%	8.1	8.1
	100	

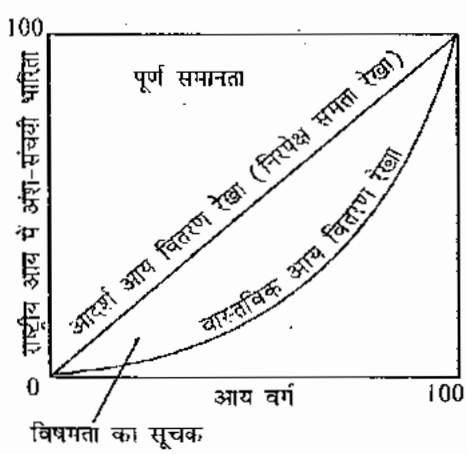

इस विधि का प्रयोग विश्व के देशों की प्रति व्यक्ति आय (Per Capita Income) को तुलनात्मक दृष्टि (Relative

Copyright – Drishti The Vision Foundation

Perspective) से मापने (Measure) के लिए किया जाता है। यदि सभी आय प्राप्त करने वालों की आय में हिस्सा बराबर रहे अर्थात् 50 प्रतिशत लोगों के पास 50 प्रतिशत हिस्सा हो तो हमें एक विशेष प्रकार का लॉरेंज वक्र प्राप्त होगा, उसे 'निरपेक्ष समता रेखा' (Line of perfect equality) कहा जाता है। वास्तविक आँकड़ों पर आधारित लॉरेंज वक्र इस निरपेक्ष समता रेखा से जितनी दूर होगी, लोगों के बीच असमानता उतनी ही अधिक होगी। जबकि लॉरेंज वक्र जितनी अधिक निरपेक्ष समता रेखा के पास होगी, आय की असमानता उतनी ही कम होगी।

4.3 गिनी गुणांक *(Gini Coefficient)*

लॉरेन्ज वक्र द्वारा अभिव्यक्त (Express) गणितीय मान (Mathematical Value) को गिनी गुणांक (Gini Coefficient) कहा जाता है। यह सापेक्ष गरीबी (Relative Poverty) मापने की विधि है। इसे वर्ष 1912 में इटैलियन सांख्यिकीविद् **कोरेडो गिनी** ने विकसित किया। लॉरेन्ज वक्र विधि की सबसे बड़ी कमी (Biggest Lacuna) यह है कि यह वक्र (Curve) केवल यह बताता है कि असमानता बढ़ रही है या घट रही है परन्तु यह वक्र यह नहीं बता पाता है कि कितनी असमानता बढ़ रही है या घट रही है। लॉरेन्ज वक्र की इसी कमी को गिनी गुणांक (Gini Coefficient) दूर करता है। अतः लॉरेन्ज वक्र द्वारा अभिव्यक्त गणितीय मान (Mathematical Value) को गिनी गुणांक कहते हैं। इसका अधिकतम मूल्य (Max. Value = 1) व न्यूनतम मूल्य (Min. Value = 0) होता है। शून्य समानता (Equality) को दर्शाता है व 1 अधिकतम असमानता (Maximum Inequality) को।

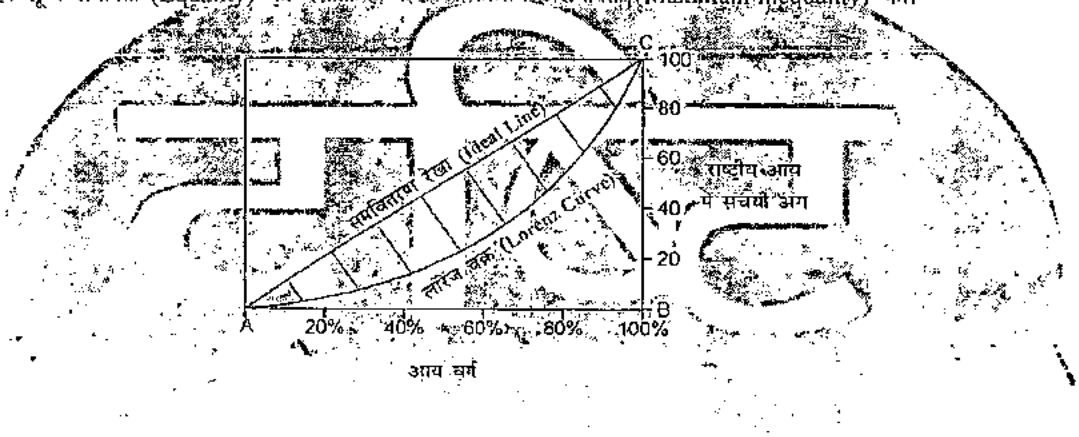

$$\text{गिनी गुणांक} = \frac{\text{ACA के बीच का क्षेत्रफल}}{\text{ACB के अधीन कुल क्षेत्रफल}}$$

गुणांक का मूल्य 0 से 1 के बीच होता है।

गिनी गुणांक का मान = 0 – पूर्ण समानता

गिनी गुणांक का मान = 1 – पूर्ण विषमता

Lorenze Curve एवं गिनी गुणांक का प्रयोग World Bank करता है। वह अपने सदस्य देश के दोनों आकड़े प्रतिवर्ष (World Development Report) प्रकाशित करता है।

Russia	– 48
चीन	– 41
अमेरिका	– 41
भारत	– 37
EU के सदस्य देश	– 25-33
UK	– 37
Japan	– 21

यदि GDP में वृद्धि के साथ-साथ गिनी गुणांक (Gini Coefficient) का मूल्य कम होता जा रहा हो, तो इस प्रक्रिया को समावेशी संवृद्धि (Inclusive Growth) कहते हैं, वहीं यदि GDP में वृद्धि के साथ गिनी गुणांक स्थिर रहे या बढ़ता रहे तो यह गैर-समावेशी विकास (Non-Inclusive Growth) कहलाता है।

गिनी गुणांक के मूल्य में वृद्धि सामाजिक वंचना का सूचक होता है। विश्व बैंक (World Bank) गिनी गुणांक (Gini

Copyright – Drishti The Vision Foundation

Coefficient) का मूल्य सभी देशों के लिए मापता है।

कुछ ऐसे ही मापों (Measures) की तलाश के प्रयासस्वरूप जिसमें शिक्षा (Education), साक्षरता (Literacy), स्वास्थ्य (Health) आदि आयामों (Dimensions) को शामिल किया जा सके, संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (United Nations Development Programme) ने 1990 में प्रकाशित अपनी पहली (Human Development Report) में मानव विकास सूचकांक (Human Development Index) की संकल्पना प्रस्तुत की। यह सच है कि मानव विकास की संकल्पना इतनी व्यापक है कि उसे किसी एक सूचकांक (One Index) में पूरी तरह व्यक्त (Express) कर पाना संभव नहीं है। परंतु, इस प्रकार के सूचकांक से मानव विकास की महत्ता (Significance of Human Development) को स्पष्ट करना तथा विकास का एक व्यापक दृष्टिकोण (Wider Perspective) प्राप्त करना संभव हो पाता है।

4.4 मानव विकास सूचकांक *(Human Development Index – HDI)*

मानव विकास सूचकांक (Human Development Index-HDI) : (Purchasing Power Parity – PPP) के आधार पर प्रति व्यक्ति GDP, जन्म के समय जीवन प्रत्याशा (Life Expectancy at Birth) एवं शिक्षा गुणांकों (Education Coefficient) से मिलकर बना एक सामाजिक आकलन (Social Evaluation) है, जिससे मानव जीवन की गुणवत्ता आँकी जाती है।

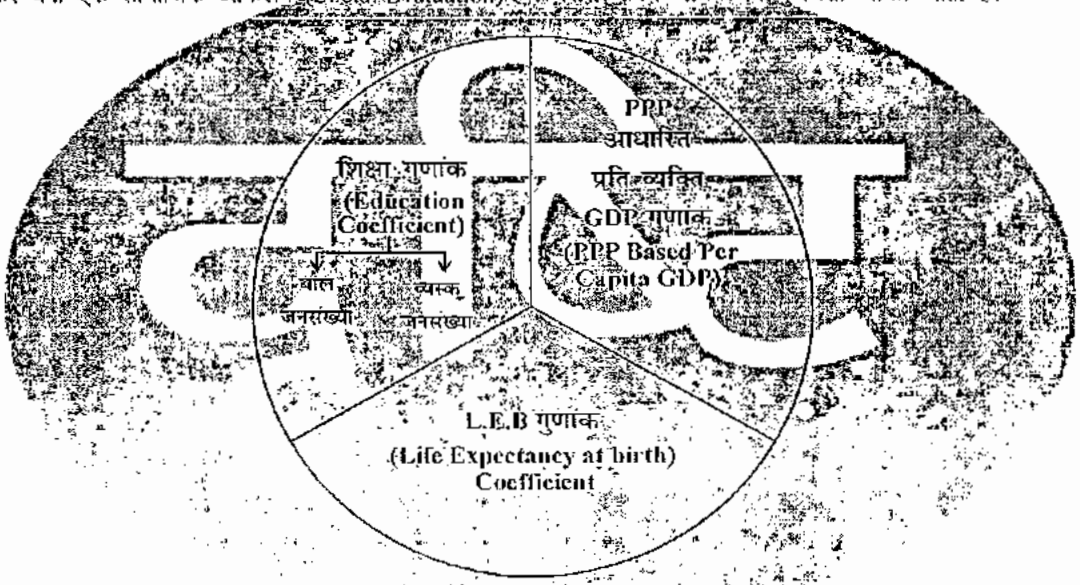

महबूब उल हक ने HDI का विकास किया।

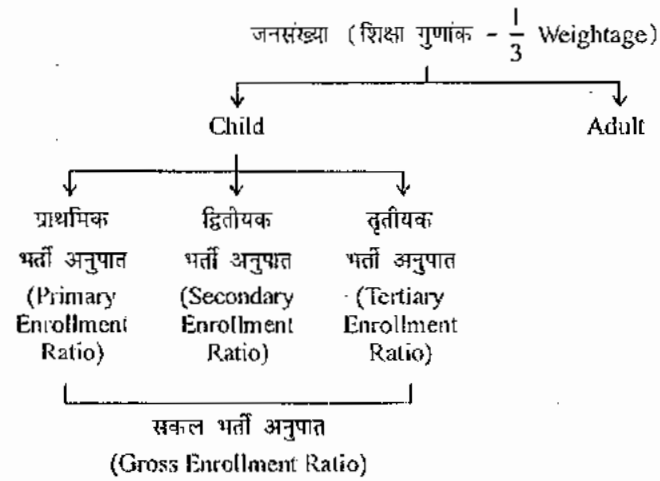

Copyright – Drishti The Vision Foundation

HDI की तलाश करते समय निम्न सिद्धांतों को ध्यान में रखा गया:

1. HDI की संकल्पना के पीछे मूल विचार यह था कि आय के साथ-साथ कुछ और विकल्पों (Options) को भी शामिल किया जाये तथा उन्हें एक सही व संयुक्त सूचकांक में रखा जाए। ये विकल्प हैं- अच्छा रोजगार उपलब्ध (Providing Good Employment) होना, स्वच्छ जल व वायु की उपलब्धता (Availability of Fresh Water and Air), लंबी आयु पाने की इच्छा (Desire of Long Life), आरामदायक जीवन पाने की लालसा आदि।

2. लेकिन, गणना की सरलता के लिए तथा सूचकांक (Index) को आसान बनाने के लिए कुछ ही चरों (Variables) को शामिल करने का निर्णय लिया गया। उदाहरणस्वरूप HDR (Human Development Report) में सूचकांक के लिए जीवन संभावना (Life Expectancy) को शिक्षा गुणांक (Education Index) के लिए व्यस्क साक्षरता (Adult Literacy) (2/3 भाग) तथा प्राथमिक (Primary), द्वितीयक (Secondary) एवं तृतीयक (Tertiary) सकल नामांकन (1/3 भाग) को लिया गया। साथ ही, विभिन्न आर्थिक सुविधाओं की उपलब्धि को शामिल करने के लिए क्रय-शक्ति समतुल्यता (Purchasing Power Parity) द्वारा समायोजित प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद (GDP from capita adjusted for purchasing power parity) को स्वीकार किया गया।

3. अब प्रश्न यह था कि इन विभिन्न सूचकों को एक ही माप में कैसे परिणत किया जाये? इस प्रश्न के समाधान के लिए यह रास्ता चुना गया कि प्रत्येक सूचक में हुई वास्तविक प्रगति (Actual Development) को एक वांछित लक्ष्य (Desired Aim) से सापेक्षिक दूरी (Relative Distance) के रूप में मापा जाए। प्रत्येक घटक (Every Element) के लिए न्यूनतम मान (Minimum Value) शून्य से एक तक के पैमाने पर किसी एक बिंदु पर होगा। तीनों घटकों को समान भार (Same Weightage) दिया गया। क्योंकि तीनों विकल्प एक समान महत्वपूर्ण (Equally Important) माने गए।

4. पहले के प्रयासों में त्रुटि यह थी कि आर्थिक प्रगति (Economic Development) के लिए सकल राष्ट्रीय उत्पाद (Gross National Product-GNP) का सूचक लिया जाता था तथा सामाजिक प्रगति (Social Development) के लिए जीवन के भौतिक गुणों (Physical Attributes) के सूचकांक PQLI (Physical Quality of Life Index) जैसे किसी सूचक को। इस तरह के प्रयासों में इस बात को अनदेखा (Ignore) किया जाता था कि आर्थिक व सामाजिक प्रगति (Economic and Social Development) एक दूसरे से अलग नहीं अपितु जुड़े हुए हैं। वास्तविकता यह है कि आर्थिक प्रगति (Economic Development), सामाजिक प्रगति (Social Development) के लिए संसाधन (Resource) व विकल्प (Options) प्रस्तुत करती है और सामाजिक प्रगति, आर्थिक प्रगति के लिए एक सहायक वातावरण (Helping Environment) तैयार करती है। इस प्रकार, दोनों साथ-साथ (Symultanously) चलते हैं। HDI में प्रति व्यक्ति वास्तविक घरेलू उत्पाद (Purchasing Power Parity -PPP के आधार पर प्रति व्यक्ति GDP गुणांक) आर्थिक सूचक (Economic Index) है, जबकि जीवन संभावना (Life Expectancy) एवं शिक्षा की उपलब्धि (Availability of Education) सामाजिक सूचक (Social Index) है।

HDI से संबंधित कुछ आँकड़े

उच्च HDI के देश	-	0.800 - 1.000
मध्यम HDI के देश	-	0.500 - 0.799
निम्न HDI के देश	-	0.200 - 0.499

किसी भी देश का HDI मूल्य 0.200 से कम नहीं है।

भारत मध्यम वर्ग में है। राष्ट्रों की सूची में यह 127वें पायदान पर है।

2001	-	115वाँ स्थान
2002	-	124वाँ स्थान
2003	-	127वाँ स्थान
2004	-	127वाँ स्थान
2005	-	127वाँ स्थान

मौद्रिक आय (Monetary Income) के उपयोग को लेकर समस्याएँ हैं। UNDP के अनुसार उत्पादन में वृद्धि करना उतनी बड़ी बात नहीं बल्कि मौद्रिक आय का सही उपयोग करना सीखना होगा।

- SAARC में 6 देश मध्यम वर्ग में तथा 2 देश (पाकिस्तान एवं अफगानिस्तान) निम्न वर्ग में हैं।

अतः HDI की गणना से स्पष्ट है कि केवल आय में वृद्धि होने से ही मानव जीवन की गुणवत्ता (Quality of Human Life) में सुधार होना पक्का नहीं होता है। प्रश्न है कि HDI का मूल्य बढ़ाने के लिए कौन से कदम उठाने होंगे? सरकार समय-समय पर अपनी नीतियों और योजनाओं के माध्यम से HDI में सुधार के लिए प्रयास करती रहती है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

4.5 HDI के मूल्य बढ़ाने के उपाय *(Measures to Increase HDI Value)*

HDI का मूल्य बढ़ाने हेतु सरकार निवासियों की शिक्षा, आय तथा जीवन प्रत्याशा बढ़ाने का प्रयत्न अपनी नीतियों तथा योजनाओं के माध्यम से करती है। GDP का मूल्य तभी बढ़ेगा जब अधिकतम लोगों को रोजगार प्राप्त होगा। रोजगार सृजन के लिए अधिक से अधिक उद्योगों की स्थापना करनी होगी, अर्थात् SEZ (Special Economic Zone) तथा AEZ (Agricultural Economic Zone) की स्थापना करनी होगी। इसके साथ ही देश की अवसंरचना (Infrastructure) में भी सुधार करना होगा, जिसके लिए भारत निर्माण योजना, मनरेगा, प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना, स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना, लघु एवं मध्यम कस्बों के समन्वित विकास कार्यक्रम (Scheme for Integrated Development of Small and Medium Town – IDSMT), बड़े शहरों पर आधारित विकास का कार्यक्रम (Scheme of Infrastructural Development in Mega Cities), प्रधानमंत्री की रोजगार योजना (Prime Minsters, Rozgar Yojna – PMRY), प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम (Prime Ministers, Employment Generation Programme – PMEGP) तथा सांसद स्थानीय क्षेत्र विकास योजना (Members of Parliament Local Area Development Scheme – MPLADS) आदि योजनाएँ चल रही हैं।

जीवन प्रत्याशा को बढ़ावा देने के लिए खाद्य सुरक्षा को लक्ष्य निर्धारित करना होगा और जिसके लिए खाद्य सुरक्षा बिल संसद में प्रस्तावित भी है। खाद्यान्नों में तकनीकी सुधार द्वारा गुणात्मक सुधार भी करना होगा, जिसके लिए सरकार नायो-फसलों को बढ़ावा दे रही है। स्वास्थ्य सेवाओं की आपूर्ति विशेषतः पोलियो, AIDS आदि रोगों के पूर्ण शमन के लिए सरकार प्रतिबद्ध है।

पुनः शिक्षा को सार्वजनिक सुलभ बनाने के लिए सरकार द्वारा अनुच्छेद-21 (क) में शिक्षा को संवैधानिक मूल अधिकार घोषित किया गया है। साथ ही सर्वशिक्षा अभियान, विद्यालयों में मध्याह्न भोजन का राष्ट्रीय कार्यक्रम (Mid-Day Meal National Scheme for Schools), कस्तूरबा गाँधी शिक्षा योजना तथा कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय योजना (DGBVY) आदि का कार्यान्वयन चल रहा है।

(उपरोक्त सभी योजनाओं की चर्चा आगे की कक्षाओं में विस्तार से की जाएगी)

4.6 असमानता-समायोजित मानव विकास सूचकांक *(Inequality Adjusted Human Development Index – IHDI)*

HDR 2010 में तीन नए माप प्रस्तुत किए गए हैं– असमानता-समायोजित मानव विकास सूचकांक (Inequality-adjusted Human Development Index), बहुआयामी निर्धनता सूचकांक (Multi Dimentional Poverty Index) तथा लिंग असमानता सूचकांक (General Inequality Index)। असमानता समायोजित मानव विकास सूचकांक (Inequality-adjusted Human Development Index-IHDI) का संबंध न केवल स्वास्थ्य (Health), शिक्षा (Education) तथा आय (Income) के आधार पर देश के औसत मानव विकास की जानकारी प्राप्त होती है। वरन इसके विवरण के बारे में भी पता चलता है। HDI तथा IHDI के बीच अंतर करते हुए कहा गया है "किसी भी समाज में यह माना जा सकता है कि प्रत्येक व्यक्ति का एक वैयक्तिक HDI है। यदि सभी की जीवन संभावना, स्कूलों में व्यतीत समय तथा आय समान हो तो यह माना जा सकता है कि समाज का HDI प्रत्येक वैयक्तिक HDI के बराबर है (अर्थात् औसत व्यक्ति का HDI है)। परन्तु वास्तविक जगत में विभिन्न लोगों के बीच अन्तर होते हैं तथा औसत HDI वैयक्तिक HDI स्तरों से अलग होता है। IHDI में प्रत्येक आयाम के औसत मूल्य में असमानता अनुसार कटौती की जाती है। इस प्रकार IHDI की गणना में आयु संभावना, स्कूलों में व्यतीत वर्षों तथा आय में असमानताओं को शामिल किया जाता है। यदि लोगों के बीच कोई असमानता न हो तो IHDI, HDI के बराबर होगा। परन्तु जैसे-जैसे असमानता में वृद्धि होगी; IHDI, HDI से और नीचे चला जाएगा। इस प्रकार हम HDI को एक 'संभाव्य' मानव विकास (Potential Human Development) का स्तर मान सकते हैं- अर्थात IHDI का वह अधिकतम स्तर जो असमानता न होने की स्थिति में प्राप्त होगा। इसके विपरीत, IHDI वास्तविक मानव विकास स्तर का द्योतक है (जिसमें असमानताओं को स्वीकार किया गया है)। दूसरे शब्दों में, HDI तथा IHDI में अन्तर, असमानता के कारण संभाव्य मानव विकास में होने वाली 'हानि' (या 'गिरावट') का द्योतक है।"

4.7 लिंग संबंधी विकास सूचकांक *(Gender Related Development Index – GDI)*

लिंग संबंधी विकास सूचकांक (Gender Related Development Index – GDI): (Purchasing Power Parity – PPP) के आधार पर प्रति व्यक्ति GDP, (PPP Based Per Capita GDP) जन्म के समय जीवन प्रत्याशा (Life Expectancy at Birth) एवं शिक्षा गुणांकों (Education Coefficient) के मानकों पर महिला जनसंख्या की सापेक्षिक उपलब्धियों (Relative Achievement of Women Population) के सामाजिक आकलन (Social Calculation) को लिंग संबंधी विकास सूचकांक (Gender Related Development Index – GDI) कहते हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

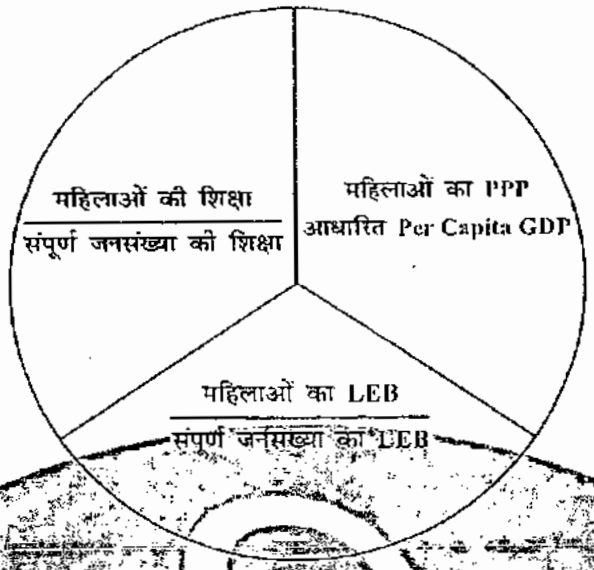

वास्तविक आय, जन्म के समय जीवन प्रत्याशा एवं शिक्षा के मामले में महिला जनसंख्या की सापेक्षिक उपलब्धि का मापन करने वाला भारित औसत GDI कहलाता है। अथवा, महिला जनसंख्या विशिष्ट HDI को GDI कहते हैं।

PC GCI = 1 लिंग विषमता नहीं है।

PC GGI < 1 प्रतिकूल विषमता है।

और इसके तीन घटक हैं:

1. $\frac{\text{महिलाओं का GDP}}{\text{आम जनसंख्या का GDP}}$
2. $\frac{\text{महिलाओं की जीवन प्रत्याशा}}{\text{आम जनसंख्या का जीवन प्रत्याशा}}$
3. $\frac{\text{महिलाओं की शिक्षा}}{\text{आम जनसंख्या की शिक्षा}}$

UNDP (United Nations Development Programme) सभी सदस्य देशों का GDI प्रकाशित करता है।

4.8 लिंग सशक्तिकरण उपाय *(Gender Empowerment Measures – GEMs)*

लिंग सशक्तिकरण उपाय (Gender Empowerment Measures-GEMs): निर्णयन (Decision Making) के तीनों स्तरों राजनीति, सामाजिक एवं आर्थिक पर महिलाओं की सापेक्षिक भागीदारी के एक साथ माप को लिंग सशक्तिकरण उपाय **(Gender Empowerment Measures – GEMs)** कहते हैं।

लिंग सशक्तिकरण माप (GEM) की सहायता से यह जानने का प्रयास किया जाता है कि महिलाओं की आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक जीवन (Economic, Social and Political Life) में कितनी हिस्सेदारी (Participation) है? अर्थात् राजनीतिक हिस्सेदारी (संसद में महिलाओं के प्रतिनिधित्व द्वारा), आर्थिक हिस्सेदारी (उच्च व व्यावसायिक पदों पर महिलाओं के कब्जे द्वारा) तथा आर्थिक संसाधनों पर स्वामित्व (जिसे आय अंतरों में मापा जाता है) को लिंग सशक्तिकरण उपाये (General Empowerment Measurment – GEMs) शामिल (Include) किया गया है।

GDI तथा GEM की आलोचना निम्न आधारों पर की जाती है-

(i) इनके आकलन में अनुमानों पर अत्यधिक निर्भरता होती है, ऐसा माना जाता है कि दोनों सूचकांकों में अबतक सापेक्षिक आयों के लिए तीन-चौथाई से अधिक आँकड़े अनुमानित आँकड़े थे।

(ii) GEM में शामिल सभी सूचकों में नगरों (Cities) में रहने वाले उच्च वर्गों के लिए स्पष्ट झुकाव (Clear Inclination) होता है और कुछ सूचक (Some Indicators) तो केवल विकसित देशों के संदर्भ में ही उपयोगी माने जा सकते हैं (Useful only for Developed Countries), विकासशील देशों के संदर्भ में नहीं (Not for Developing Countries)।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

(iii) ये सूचकांक निरपेक्ष तथा सापेक्ष उपलब्धियों में अंतर नहीं कर पाते हैं। किसी देश की निरपेक्ष आय कम होने पर भी उस देश का निष्पादन खराब (Poor Performance) माना जाता है, जबकि उसमें पूर्ण लिंग समानता (Complete General Equality) मौजूद होती है। GDI में लिंग असमानताओं के अनुसार HDI का समायोजन (Inclusion) किया जाता है। जिससे कुल उपलब्धियों तथा असमानताओं दोनों का मापन करना संभव तो हो पाता है परंतु उसे अक्सर असमानताओं को व्यक्त करने वाला ही माना जाता है।

4.9 लिंग असमानता सूचकांक *(Gender Inequality Index – GII)*

इन कमियों को दूर करने के लिए **HDR-2010** में एक नए माप लिंग असमानता सूचकांक **(Gender Inequality Index-GII)** अपनाया गया है। **GII** में अनुमानों का सहारा नहीं लिया जाता है और इसमें महिलाओं के दृष्टिकोण से तीन महत्वपूर्ण आयामों को शामिल किया जाता है:

(i) सशक्तिकरण (Empowerment)

(ii) प्रजनक स्वास्थ्य (Reproductive Health)

(iii) श्रम बाजार में हिस्सेदारी (Labour Market Participation)

इस सूचकांक से स्त्रियों तथा पुरुषों की उपलब्धियों में असमानताओं के कारण मानव विकास में होने वाले नुकसान का पता चलता है। इस सूचकांक की मान 0 से 1 के बीच में होता है।

(i) GII के 0 होने का अर्थ है महिलाओं और पुरुषों की स्थिति समान है।

(ii) GII के 1 होने का अर्थ है, महिलाओं की स्थिति, पुरुषों की अपेक्षा अत्यधिक खराब है।

भारत के लिए औसत GII 0.748 है और उसका स्थान विश्व में 122वें है। इससे स्पष्ट है कि भारत में अत्यधिक लिंग असमानता (High Gender Inequality) है।

4.10 महिला सशक्तिकरण तथा लिंग असमानता दूर करने के उपाय *(Women Empowerment and Measures to Remove Gender Inequality)*

- राजनीतिक स्तर (Political Level) पर भागीदारी मापन (Measuring Participation) के लिए राष्ट्रीय विधायिका में महिलाओं की प्रतिशत भागीदारी (Percentage Participation of Women) को लिया जाता है।
- आर्थिक निर्णयन में भागीदारी (Participation in Economic Decisions) के मापन के लिए निम्नलिखित दो उपस्तरों (Sub Levels) पर भागीदारी का आकलन किया जाता है।

(क) विधानमण्डल, स्थानीय निकाय एवं कार्यकारी (Executive) पदों पर महिलाओं की सापेक्षिक भागीदारी (Relative Participation) बढ़ानी होगी। हालांकि 72वें तथा 73वें संशोधन के बाद स्थानीय स्तर पर ग्राम पंचायतों में महिलाओं की 33% भागीदारी सुनिश्चित कर दी गई है और तो और अब 10 से कुछ अधिक राज्यों में स्थानीय शासन के स्तर पर महिलाएँ अपनी 50% से कुछ अधिक भागीदारी सुनिश्चित कर पा रही हैं, लेकिन फिर भी ऐसे पदों (जैसे- संसद, विधानमंडल, न्यायपालिका आदि) पर महिलाओं की भागीदारी बढ़नी चाहिए, जहाँ बड़े निर्णय लिए जाते हैं।

(ख) पेशेवर स्तर पर भी महिलाओं की भागीदारी बढ़ानी होगी। इंजीनियरिंग, डॉक्टर, शिक्षक आदि पेशों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने की आवश्यकता है।

(ग) सामाजिक निर्णय में महिलाओं की भागीदारी के लिए पारिवारिक व्यय (Family Expenditure) पर उनके नियंत्रण का लेखा-जोखा (Accounting) लिया जाता है। यह 1970 के दशक में शुरू हुआ।

(घ) सरकारी नीतियों तथा योजनाओं (Government Policies & Planning) के द्वारा भी महिलाओं के लिए ऐसे कार्यक्रम तथा योजनाएँ कार्यान्वित की जानी चाहिए, जो उनके सशक्तिकरण में तीव्रता ला सकें। कुछ महत्वपूर्ण योजनाएँ जैसे- राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (National Rural Health Mission-NRHM), जननी सुरक्षा योजना (जो 1997 में राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना के नाम से शुरू हुई), शहरी स्वरोजगार कार्यक्रम (Urban Self Employment Programme – USCP), शहरी क्षेत्रों में महिलाओं और बच्चों का विकास (Development of Women & Children in Urban Areas – DWCUA), उज्ज्वला योजना, किशोरी शक्ति योजना, राजीव गाँधी किशोरी अधिकारिता योजना (सबला), महिला स्वयंसिद्ध योजना, इन्दिरा गाँधी मातृत्व सहयोग योजना, स्वयं सहायता समूह (Self Help Group – SHG) बैंक लिंकेज कार्यक्रम तथा मनरेगा (33% आरक्षण महिलाओं के लिए) आदि हैं। पारिवारिक या घरेलू हिंसा के लिए (Domestic Voilence Prevention Act) लाया गया है।

(उपरोक्त सभी योजनाओं की चर्चा आगे की कक्षाओं में विस्तार से की जाएगी)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

4.11 बहुआयामी निर्धनता सूचकांक *(Multidimensional Poverty Index – MPI)*

HDI में पहली बार 1997 में मानव निर्धनता सूचकांक (Human Poverty Index) को शामिल किया गया है। इस सूचकांक में यह प्रयास किया गया है कि व्याप्त गरीबी के बारे में संपूर्ण जानकारी प्राप्त करने के लिए जीवन में समानता न प्राप्त होने संबंधी विभिन्न आयामों को संयुक्त सूचकांक में प्रस्तुत किया जा सके।

HDR (Human Development Report) - 2009 में HPI के आकलन के लिए निम्नलिखित माप लिए गए:

(i) 40 वर्ष की आयु तक जीवित न रहने की संभाव्यता।

(ii) वयस्क निरक्षरता दर।

(iii) शुद्ध जल न प्रयोग करने वाली जनसंख्या एवं आयु के अनुसार कम भार (Under Weight) वाले बच्चों का अभारित औसत (Unweighted Average)।

Human Poverty Index में शिक्षा, स्वास्थ्य तथा जीवन स्तर में समग्र स्तर पर कमियों (Deprivations) को व्यक्त करने के लिए पूरे देश के औसत का प्रयोग किया जाता है, हालांकि इसमें विशिष्ट व्यक्तियों या परिवारों के संयुक्त वंचन को व्यक्त करने की क्षमता नहीं है। इसी समस्या के निदान के लिए Human Development Report-2010 में Human Poverty Index (HPI) के स्थान पर एक नया मापक बहुआयामी निर्धनता सूचकांक (Multidimensional Poverty Index) अपनाया गया है। MPI की गणना के लिए बहुआयामी निर्धनता (Multidimensional Poverty) से ग्रस्त लोगों की संख्या को हर एक बहुआयामी आधार पर गरीब या निर्धन परिवार की औसत कमियों के साथ गुणा किया जाता है। MPI में HDI को प्रतिबंधित करने वाले तीन घटक लिये गये हैं:

(i) स्वास्थ्य (Health)

(ii) शिक्षा (Education)

(iii) जीवन स्तर (Livelyhood Level)

इन्हें 10 सूचकों में विभाजित किया गया है और प्रत्येक सूचक का उसके आयाम में समान भार लिया गया है। यदि कोई भी परिवार कम से कम 2 से 6 सूचकों के आधार पर वंचित है, तो उसे बहुआयामी निर्धन माना गया है। इसमें परिवारों के लिए आँकड़ों के समग्रता द्वारा गरीबी या निर्धनता के राष्ट्रीय माप को प्राप्त किया गया है।

Human Development Report-2010 में विश्व बैंक (World Bank) ने अनुमान लगाया है कि 104 देशों की लगभग 1/3 जनता यानि कि 175 करोड़ के आसपास लोग बहुआयामी निर्धनता से ग्रस्त हैं और इनमें आधे से अधिक लोग दक्षिण एशिया (South Asia) के निवासी हैं। जहाँ तक भारत का संबंध है, अलग-अलग राज्यों में MPI में काफी अंतर देखा गया है। दिल्ली में जहाँ MPI 14% है, वहीं बिहार में MPI की दर 81% है। चिन्ता का विषय यह है कि भारत के 8 राज्यों में निर्धनता का स्तर, 26 निर्धनतम अफ्रीकी देशों के बराबर है। इनमें 42 करोड़ बहुआयामी आधार पर वर्गीकृत निर्धन निवास करते हैं, जबकि 26 निर्धनतम अफ्रीकी देशों में 41 करोड़ बहुआयामी आधार पर वर्गीकृत निर्धन रहते हैं।

4.12 मानव निर्धनता सूचकांक *(Human Poverty Index - I – HPI - I)*

मानव निर्धनता सूचकांक (Human Poverty Index - I – HPI - I): मानव जीवन में तीन प्रकार के अभावों (Deprivation) या वंचनाओं का सामासिक आकलन है, जो वास्तविक आय (Real Income), स्वास्थ्य (Health) एवं जागरूकता (Awareness) संबंधी वंचनाओं से मिलकर बना है। इसका उपयोग United Nation Development Programme – UNDP तीसरी एवं चौथी दुनिया के देशों में (Less Developed Countries and Least Developed Countries), अर्थात् गैर (Organisation for Economic Co-operation and Development – OECD) देशों में निर्धनता के आकलन के लिए होता है। विकासशील या अविकसित या अल्पविकसित देशों में उपयोग होता है।

यह सामासिक सूचक तीन घटकों पर आधारित है:

वास्तविक आय वंचना (Real Income Deprivation)

स्वास्थ्य वंचना (Health Deprivation)

जागरूकता वंचना (Awareness Deprivation)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

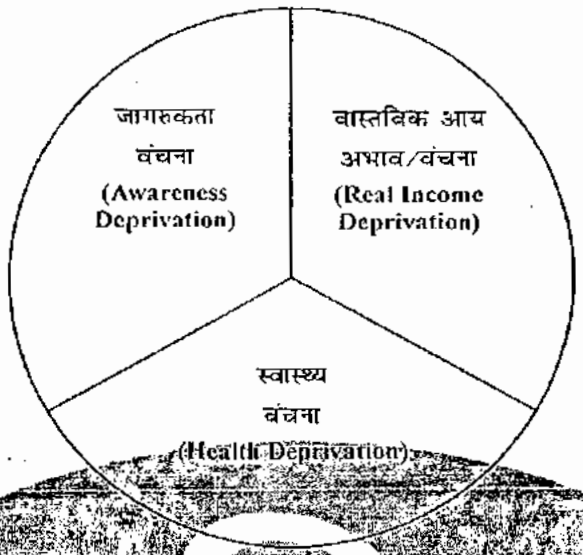

के सापेक्ष मानवीय अभाव का आकलन करता है। यह HDI का उल्टा है। अतः इसका श्रेय महबूब-उल-हक को ही जाता है। United Nation Development Programme –UNDP, HDI की उपलब्धि के साथ ही इसका आकलन करता है।

1. वास्तविक आय वंचना के आकलन (Calculation) के लिए सफेद पेयजल रहित (Without Pure Drinking Water) जनसंख्या का आनुपातिक मूल्य (Proportional Ratio of Population) एवं 5 वर्ष तक के कुपोषित बच्चों का आनुपातिक मूल्य लिया जाता है।
2. जागरूकता वंचना के आकलन के लिए व्यस्क निरक्षरता (15 साल से ऊपर को निरक्षर जनसंख्या) का प्रतिशत मूल्य (Percentage Value of Adult Illiterate) लिया जाता है।
3. स्वास्थ्य वंचना के आकलन (Calculation) के लिए 40 वर्ष या कम आयु प्रत्याशा वाले व्यक्तियों की जनसंख्या का आनुपातिक मूल्य लिया जाता है।

4.13 मानव निर्धनता सूचकांक *(Human Poverty Index - II – HPI - II)*

मानव जीवन में चार प्रकार के अभावों (Deprivation) या वंचनाओं का सामासिक आकलन है, जो वास्तविक आय (Real Income), स्वास्थ्य (Health) एवं जागरूकता (Awareness) तथा सामाजिक (Social) वंचनाओं संबंधी वंचनाओं से मिलकर बना है। इसका उपयोग United Nation Development Programme – UNDP साधारणतः विकसित देशों अर्थात् पहली एवं दूसरी दुनिया के देशों में (First World Countries and Second World Countries), अर्थात् (Organisation for Economic Co-operation and Development – OECD) देशों में निर्धनता के आकलन के लिए होता है।

यह सामासिक सूचक चार घटकों पर आधारित है:

वास्तविक आय वंचना (Real Income Deprivation)

स्वास्थ्य वंचना (Health Deprivation)

जागरूकता वंचना (Awareness Deprivation)

सामाजिक वंचना (Social Deprivation)

यह HDI का उल्टा है। अतः इसका श्रेय भी महबूब-उल-हक को ही जाता है। United Nation Development Programme –UNDP, HDI की उपलब्धि के साथ ही इसका आकलन करता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

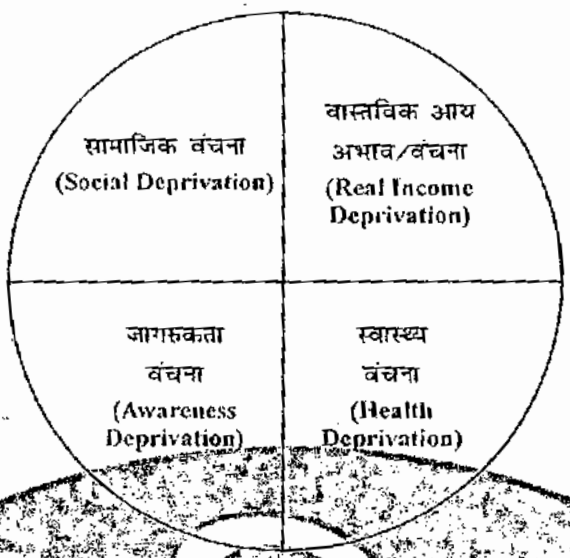

1. वास्तविक आय वंचना के आकलन (Calculation) के लिए साफ पेयजल रहित (Without Pure Drinking Water) जनसंख्या का आनुपातिक मूल्य (Proportional Ratio of Population) एवं 5 वर्ष तक के कुपोषित बच्चों का आनुपातिक मूल्य लिया जाता है।
2. जागरूकता वंचना के आकलन के लिए व्यस्क निरक्षरता (15 साल से ऊपर की निरक्षर जनसंख्या) का प्रतिशत मूल्य (Percentage Value of Adult Illiterate) लिया जाता है।
3. स्वास्थ्य वंचना के आकलन (Calculation) के लिए 60 वर्ष या कम आयु प्रत्याशा वाले व्यक्तियों की जनसंख्या का आनुपातिक मूल्य लिया जाता है।
4. सामाजिक वंचना के आकलन के लिए श्रम शक्ति (Working Force) का वह प्रतिशत अंश लिया जाता है, जो स्थायी बेरोजगारी (12 महीने से अधिक बेरोजगारी से ग्रस्त) का शिकार (Victim of Permanent Unemployment) है।

श्रम शक्ति : कार्यशील आयु (15-59 वर्ष) वर्ग के ऐसे व्यक्ति जो एक निश्चित कीमत या मजदूरी (Certain Wages) के लिए अपना श्रम बेचने के लिए तत्पर हों अर्थात् आपूर्ति कर रहे हों श्रम शक्ति कहलाते हैं। इस Labour Force में कई लोग रोजगार पा जाते हैं- जिन्हें कार्य शक्ति (Work Force) कहा जाता है- तथा जो कार्य से वंचित रह जाते हैं, उन्हें बेरोजगार शक्ति जो बेरोजगार है। जो बरोजगार हैं उनकी बेरोजगारी इस प्रकार समझी जा सकती है:

स्थायी बेरोजगारी (Permanent Unemployment)	अस्थायी बेरोजगारी (Casual Unemployment)
यदि बेरोजगारी की अवधि 12 महीने से अधिक हो जाये तो उसे स्थायी बेरोजगारी (Permanent Unemployment) कहते है।	एक लेखा वर्ष अर्थात् एक वर्ष से कम अवधि वाली को अस्थायी बेरोजगारी (Casual Unemployment) कहते है।

◆◆◆

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–4 *(Unit–4)*

सामाजिक-आर्थिक लेखांकन : भाग-2
Social-Economic Accounting : Part-2

4.14 जीवन का दैहिक गुणवत्ता सूचकांक
(Physical Quality of Life Index – PQLI)

4.15 जीवन गुणवत्ता सूचकांक
(Quality of Life Index – QLI)

4.16 फिलिप्स वक्र
(Philips Curve)

4.17 त्याग अनुपात
(Sacrifice Ratio)

4.18 दयनीयता/विपन्नता सूचकांक
(Measurable Index)

4.19 एंजिल वक्र
(Engel's Curve)

4.20 कुजनेत्स वक्र
(Kuznets Curve)

4.14 जीवन का दैहिक गुणवत्ता सूचकांक *(Physical Quality of Life Index – PQLI)*

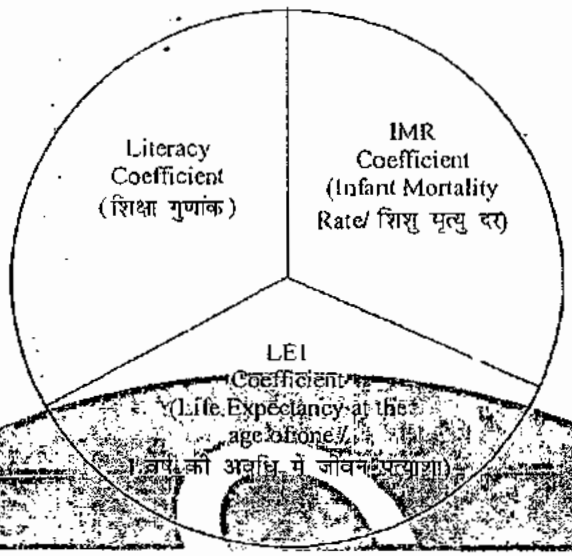

जीवन का दैहिक गुणवत्ता सूचकांक (Physical Quality of Life Index – PQLI): शिशु मृत्यु दर (Infant Mortality Ratio), एक वर्ष की आयु में जीवन प्रत्याशा (Life Expectancy at the age of one) एवं शिक्षा गुणांक (Education Coefficient) से मिलकर बना एक सामाजिक सूचक है, जिसमें मानव जीवन की शारीरिक या दैहिक गुणवत्ता का आकलन किया जाता है।

इस विधि को मौलिक रूप से सोचने का श्रेय 1976 ई० में जॉन टिनबर्जन को जाता है, लेकिन माना जाता है कि मॉरिस डेविस नामक विद्वान ने इस अवधारणा का विस्तृत विवेचन किया। इन्होंने 23 विकसित तथा विकासशील देशों के संबंध में अध्ययन किया तथा जीवन प्रत्याशा, शिशु मृत्यु दर तथा साक्षरता तीनों को मिलाकर PQLI का निर्माण किया और इस अध्ययन से इस निष्कर्ष पर आये कि किसी देश की प्रतिव्यक्ति ऊँची GNP इस बात का आश्वासन नहीं देती कि उस देश में मानव कल्याण का स्तर भी ऊँचा है:

PQLI का अधिकतम मूल्य 100 तथा न्यूनतम मूल्य 1 होगा। PQLI का 100 की ओर बढ़ना अच्छी स्थिति का द्योतक है। जबकि एक की ओर जाना खराब स्थिति का परिचायक होगा:

इसके विभिन्न घटकों (Different Components) को इस प्रकार समझा जा सकता है।

शिशु मृत्यु दर (IMR Coefficient): प्रति हजार जीवित जन्मे बच्चों में से एक वर्ष की आयु पूरी करने से पहले मरने वाले बच्चों का अनुपात शिशु मृत्यु दर या IMR (Infant Mortality Rate) के रूप में मापते हैं।

अखिल भारतीय स्तर पर (Infant Mortality Ratio – IMR) की कुछ गणनाएँ:

2009 – 50

2008 – 53

2003 – 58

1 वर्ष की अवधि में जीवन प्रत्याशा (Life Expectancy at the age of 1 – LE1 Coefficient): एक वर्ष की आयु पूरे करने वाले बच्चों की प्रत्याशित आयु, कि भविष्य में और कितने वर्ष जीवित रहेंगे, 1 वर्ष की अवधि में जीवन प्रत्याशा कहलाती है। यदि बच्चों में बीमारी तथा कुपोषण अधिक होगा तो औसत LE1 Coefficient अधिक होगा।

मातृत्व मृत्यु दर (Maternal Mortality Rate – MMR): प्रति लाख जन्म देने वाली माताओं में से मरने वाली माताओं का अनुपातिक मूल्य, मातृत्व मृत्यु दर (Maternal Mortality Rate – MMR) कहलाता है।

पोषण का अभाव तथा स्वास्थ्य सेवाओं के अभाव के कारण ही माताओं की अत्यधिक मृत्यु होती है। अतः जिस प्रांत में MMR अधिक होगा, उस प्रांत के लिए IMR का अधिक होना भी स्वभाविक है।

0-5 वर्ष की आयु वर्ग में कुपोषण ज्यादा है। इसके लिए उत्पादन बढ़ाना ही निवारण नहीं है, संवेदना को बढ़ाना भी जरूरी है तथा संवेदना को बढ़ाने के लिए शिक्षा का अपना महत्त्व है।

सर्वशिक्षा अभियान का दूरगामी लक्ष्य बच्चे एवं गर्भवती महिलाओं के प्रति संवेदनशीलता बढ़ाना है। यह सूचकांक भौतिक गुणवत्ता का सुधारपरक सूचक है।

4.15 जीवन गुणवत्ता सूचकांक *(Quality of Life Index – QLI)*

जीवन गुणवत्ता सूचकांक में भौतिक एवं अभौतिक गुणवत्ता को शामिल किया जाता है। यह समासीकृत सूचक है, जिसके छः घटक हैं-

(i) वास्तविक प्रति व्यक्ति आय (Real Per Capita Income)

(ii) शिशु मृत्यु दर (Infant Mortality Ratio – IMR)

(iii) जन्म के समय जीवन प्रत्याशा (Life Expectancy at Birth – LEB)

(iv) शिक्षा गुणांक (Education Coefficient)

(v) नागरिक अधिकार गुणांक (Civil Rights Coefficient)

(vi) राजनीतिक अधिकार गुणांक (Political Rights Coefficient)

यह PQLI से असंशोधित, व्यापक एवं सुधारपरक सूचक है। अमर्त्य सेन के शिष्य दासगुप्ता एवं बील महोदय ने इसे विकसित किया।

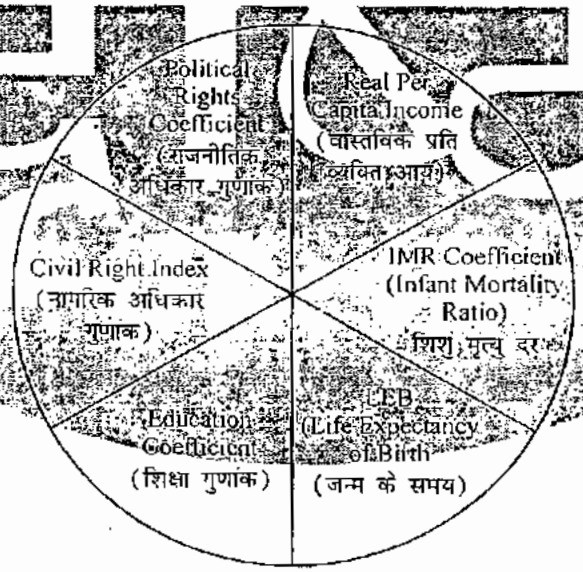

राजनीतिक अधिकार गुणांक (Political Rights Index)

विधायिका द्वारा आपूरित सेवाओं के उपभोग के अधिकार को राजनीतिक अधिकार गुणांक (Civil Rights Index) कहते हैं। हमारे देश में संसाधन आवंटन और संसाधनों की वास्तविक पहुँच में काफी अंतराल है। कहने के लिए भारत में मताधिकार सभी व्यस्क नागरिकों को प्राप्त है, लेकिन वास्तविकता में इसे नाममात्र का मताधिकार ही कहा जा सकता है। इसी प्रकार देश की आर्थिक समृद्धि का कोई महत्व नहीं है, यदि वह समावेशी प्रकार की न हो।

राजनीतिक अधिकार गुणांक से तात्पर्य उन अधिकारों से है, जो नागरिकों को सुलभता से उपलब्ध होने चाहिए। यह स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि क्या हमारे देश के सभी नागरिकों को राजनीतिक संगठन बनाने का अधिकार है? क्या राजनीति, जाति, धर्म आदि संकीर्ण दुर्भावनाओं से अप्रभावित है? ये सभी प्रश्न हमें यह सोचने को मजबूर करते हैं कि केवल सैद्धांतिक घोषणाएँ ही पर्याप्त नहीं हैं बल्कि नागरिकों तक उनकी वास्तविक पहुँच भी होनी चाहिए।

नागरिक अधिकार गुणांक (Civil Rights Index)

कार्यपालिका एवं न्यायपालिका द्वारा आपूरित सेवाओं के उपभोग के अधिकार को नागरिक अधिकार गुणांक (Civil Rights Index) कहते हैं।

कार्यपालिका की सेवाओं में राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, जिलाधिकारी से लेकर बी.डी.ओ., एस.एच.ओ. जैसी सभी संस्थाओं की सेवाएँ यदि आम नागरिकों की पहुँच में होती है, तो नागरिक अधिकार गुणांक का मान अधिक कहा जायेगा, जो कि अच्छी स्थिति होगी। इसी प्रकार न्यायपालिका के संदर्भ में प्रश्न उठता है कि क्या देश के 121 करोड़ जनसंख्या को न्यायालयों की सुविधाएँ प्राप्त हो रही हैं या इसमें सुधार की आवश्यकता है। (ध्यातव्य है कि भारत के न्यायालयों में 3.2 करोड़ मामले अभी लंबित चल रहे हैं, अर्थात् वाद-प्रतिवाद मिलाकर मामलों की संख्या 6.4 करोड़ है, जो कि अतिशयोक्तिपूर्ण कही जा सकती है)

यह भी ध्यान देने योग्य तथ्य है कि क्या न्यायाधीश अपने निर्णय, संविधान और कानून के अनुसार करते हैं और उन्हें राजनीतिक रूप से लोकप्रिय व्यक्तियों तथा शक्तिशाली समूहों के विरोध की चिन्ता नहीं होती? क्या Judicial Standards and Accountability Bill की आवश्यकता अनिवार्य रूप से बनी हुई है तथा न्यायाधीशों के गैर-न्यायिक गतिविधियों पर अंकुश लगना चाहिए?

4.16 फिलिप्स वक्र *(Philips Curve)*

बेरोजगारी दर एवं मुद्रा स्फीति दर का नकारात्मक संबंध को व्यक्त करने वाले बिन्दुओं के पथ को फिलिप्स वक्र कहते हैं। फिलिप्स वक्र अंग्रेज विद्वान ने बताया था। उन्होंने दिखाया कि मुद्रास्फीति की दर एवं बेरोजगारी की दर में उल्टा संबंध होता है।

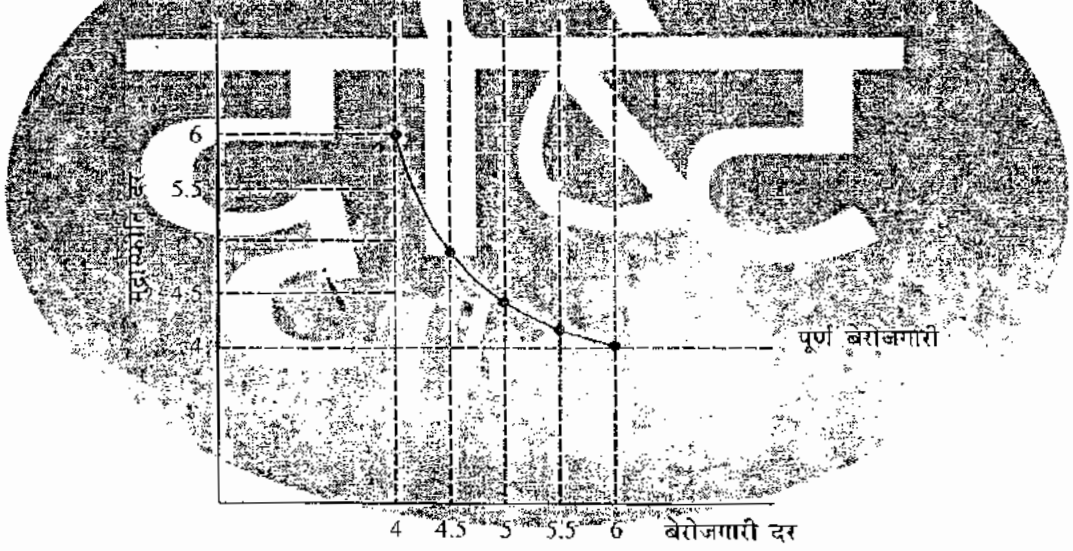

फिलिप्स वक्र (Philips Curve): बेरोजगारी दर (Unemployment Rate) एवं महँगाई (Inflation) के प्रतिलोभ संबंधों (Reverse Relation) को व्यक्त (Express) करने वाले वक्र को फिलिप्स वक्र (Philips Curve) कहते हैं।

महँगाई की दर (Rate of Inflation) बढ़ने से उत्पादकों की आय (Income of Producers) में वृद्धि होती है, जिससे उनका मनोबल (Confidence) बढ़ता है। उत्साहित होकर वो क्षमता का बेहतर दोहन (Optimum Utilization of Capacity) करते हैं और इस प्रक्रिया में अतिरिक्त रोजगार पैदा (Producing Extra Employment) होता है, जिससे बेरोजगारी की दर गिर जाती है।

एक हद से ज्यादा महँगाई बढ़ने पर न तो उत्पादन में वृद्धि होती है, न ही रोजगार में वृद्धि होती है, और न ही बेरोजगारी में कमी आती है। अतः प्रतिकूल संबंध (Reverse Relation) टूट जाता है। जब तक उत्पादन क्षमता का एक निश्चित अंश (Certain Part of Productive Capacity) बचा हुआ है, तब तक महँगाई बढ़ने से उत्पादन (Increase in Production with Inflation) बढ़ता है और बेरोजगारी कम होती है।

जिस महँगाई से उत्पादन (Production) एवं रोजगार (Employment) में वृद्धि हो उसे सामाजिक रूप से वांछित महँगाई (Desirable Inflation) कहते हैं और जिस महँगाई से उत्पादन एवं रोजगार में वृद्धि न हो केवल उत्पादकों की आय बढ़े और उपभोक्ताओं पर महँगाई का भार बढ़े, उसे सामाजिक रूप से अवांछित महँगाई (Undesirable Inflation) कहते हैं।

RBI 4%-5.5% की महँगाई को वांछित (Desirable) मानता है। अतः नीतिगत प्रयास होने चाहिए कि महँगाई वांछित दरों से ऊपर न जाए। महँगाई को वांछित/ईष्ट सीमाओं (Desired Limitation) में बनाए रखने के लिए किये जाने वाले नीतिगत प्रयास को महँगाई लक्ष्यीकरण नीति (Inflation Targetting Policy) कहते हैं।

ऐसा देखा गया है कि अल्पविकसित देशों (Less Developed Countries) में वांछित महँगाई (Desirable Inflation) की दर ऊँची (High Rates) होती है तथा विकसित देशों (Developed Countries) में वांछित महँगाई की दर अपेक्षाकृत कम (Relatively Less) होती है। विकसित देशों में इसे न्यूनतम (Minimum) कहा जा सकता है। जिस देश में कार्य-आराम अनुपात (Work Labour Ratio) ऊँचा होता है, वहाँ वांछित महँगाई (Desirable Inflation) की दर भी कम (Less) होती है। स्वभाविक है कि जागरूकता (Awareness) कम होने पर कार्य-आराम अनुपात (Work Labour Ratio) कम होगा और वांछित महँगाई ऊँची (High Desirable Inflation) होगी।

कीमत के बढ़ने या घटने के साथ बाजार की जड़ता भी टूटती है। सरकार फसलों की वांछित महँगाई को बनाये रखने के लिए 36 किस्म के फसलों का न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) घोषित करती है। इसका प्रमुख उद्देश्य अतिउत्पादन (Over Production) की स्थिति में उपजे के मूल्य को गिरने से रोकना तथा इस प्रकार किसानों के हितों का संरक्षण करना है। खाद्यान्नों का व्यापार पूर्णतः स्वतंत्र होता है तथा किसान अपने खाद्यान्नों को निजी व्यापारियों को ऊँचे कीमत पर बेच सकते हैं। इस पूरी प्रक्रिया को कुछ इस प्रकार से समझा जा सकता है:

किसान → छोटे व्यापारी → Block Town के व्यापारी → बड़े आढ़त के व्यापारी
Farm Gate Price (₹500/क्विंटल) (₹600/क्विंटल) (₹650/क्विंटल)

↓

अंतिम उपभोक्ता ← और बड़े आढ़त के व्यापारी
(₹800/क्विंटल) (₹700/क्विंटल)
Max. Retail Price
(MRP.)

Farm Gate Price: किसान जिस कीमत पर अपनी वस्तुएं बेचते हैं, उसे Farm Gate Price कहते हैं।

Maximum Retail Price: जिस कीमत पर उपभोक्ता किसी सामान की खरीद करते हैं, उसे Maximum Retail Price कहते हैं।

इन दोनों में मूल्य का काफी अंतर होने के कारण व्यापारियों की लंबी श्रृंखला होती है। न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) बढ़ने से अधिकतम खुदरा मूल्य (Maximum Retail Price) भी बढ़ जाता है। विगत कुछ वर्षों में सरकार ने MSP की मात्रा में अत्यधिक वृद्धि की है, जिसके कारण खाद्यान्नों के मूल्य में भारी वृद्धि हुई है। पिछले गत कुछ वर्षों में गेहूँ के MSP मूल्य से इसे समझा जा सकता है–

MSP 2011	–	₹ 1265/क्विंटल
MSP 2010	–	₹ 1140 /क्विंटल
MSP 2009	–	₹ 1100/क्विंटल
MSP 2008	–	₹ 1000/क्विंटल
MSP 2007	–	₹ 750/क्विंटल
MSP 2006	–	₹ 600/क्विंटल
MSP 2005	–	₹ 570/क्विंटल

जाहिर है कि यदि सरकार किसानों का प्रति क्विंटल गेहूँ ₹1265 में खरीद लेती है, तो निजी व्यापारी किसानों को इससे ऊँची कीमत देने के लिए बाध्य होंगे और इस प्रकार, निजी व्यापारी भी कीमत बढ़ाने के लिए बाध्य हो जाते हैं। अतः खाद्यान्न महँगाई स्वयंभू नहीं बल्कि महँगाई लक्ष्यीकरण (Inflation Targetting Policy) का नतीजा होती है।

MSP बढ़ने से कृषकों की आय में वृद्धि हुई है और उनका उपभोग बढ़ा है। उनके उपभोग में अब औद्योगिक वस्तुएँ एवं सेवाओं में खासा वृद्धि हुई है। पिछले 5 वर्षों में ग्रामीण अंचल में खुदरा व्यापार की संस्थाएँ तेजी से बढ़ी हैं और वहाँ रोजगार का सृजन हो रहा है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि भारतीय अर्थव्यवस्था "Commercial Revolution" के रास्ते पर आ चुकी है।

एक तरफ किसानों का MSP बढ़ाने से खाद्यान्नों का मूल्य बढ़ा और अंततः रोजगार सृजन में बढ़ोतरी हुई, तो दूसरी ओर मनरेगा के माध्यम से निजी रोजगार दाता के ऊपर सरकारी रोजगार दाता की प्रतिस्पर्धा खड़ी की गई। श्रम का न्यूनतम मूल्य बढ़ाया गया और इसे (Consumer Price Index for Agricultural Labour – CPIAL) से जोड़ दिया गया।

कृषि श्रमिकों के लिए उपभोक्ता मूल्य सूचकांक – CPIAL उन वस्तुओं का औसत मूल्य है, जिनका कृषि श्रमिक सामान्यतः उपभोग करते हैं। यदि इस सूचकांक में 5% की वृद्धि होती है, तो श्रमिकों की मजदूरी में भी 5% की वृद्धि की जाती है और इस प्रकार महँगाई का असर उदासीन हो जाता है। अतः CPIAL में जितनी वृद्धि होगी मनरेगा में श्रम मजदूरी में भी उतनी ही वृद्धि होगी ताकि मजदूरी का वास्तविक क्रय शक्ति पुराने ₹100 के बराबर बनी रहे। चूँकि CPIAL का मूल्य भी अलग-अलग प्रांतों के लिए अलग-अलग होता है, और इस प्रकार महँगाई की दर भी अलग-अलग प्रांतों के लिए अलग-अलग होगी। अतः मजदूरी भी अलग-अलग प्रांतों में उसी अनुसार होगी। जैसे- अंडमान निकोबार में महँगाई की दर अधिक है, तो वहाँ मनरेगा में मजदूरी की दर ₹ 181 है। वहीं मेघालय में यदि महँगाई की दर न्यूनतम है, तो वहाँ की मजदूरी दर- 118 भी न्यूनतम है।

इस पूरे अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि महँगाई का बढ़ना हर स्थिति में खराब नहीं होता।

4.17. त्याग अनुपात *(Sacrifice Ratio)*

महँगाई बढ़ना अपने आप में एक विवादास्पद विषय रहा है। उत्पादकों के नजरिए से यदि महँगाई बढ़ती है, तो वह उनके लिए फायदेमंद है। वहीं, परंपरागत सिद्धांत के अनुसार यदि महँगाई बढ़ती है, तो उपभोक्ता खरीददारी कम करते हैं और इस प्रकार परंपरागत सिद्धांत के अनुसार महँगाई बढ़ना अच्छा नहीं माना जाता।

महँगाई दर में 1% कटौती के कारण उत्पादन संवृद्धि दर में होने वाले गिरावट के आनुपातिक मूल्य को त्याग अनुपात कहते हैं।

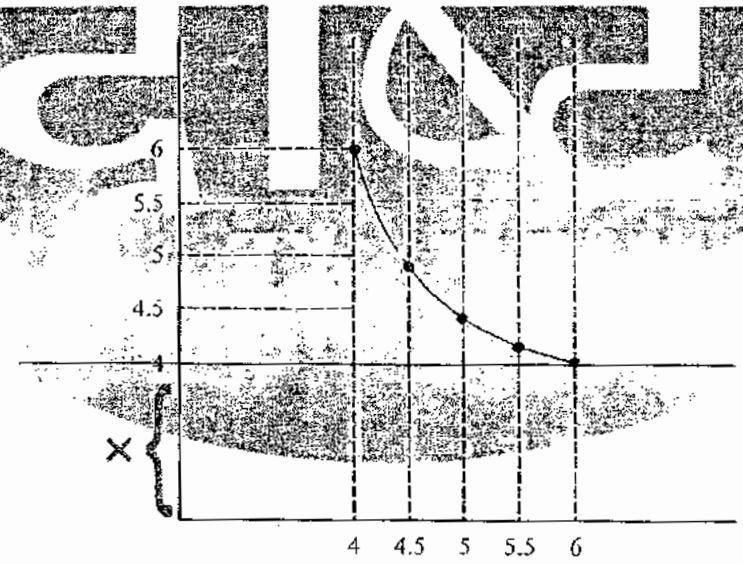

$$\text{त्याग अनुपात (Sacrifice Ratio)} = \frac{-\text{ संवृद्धि दर (Growth Rate)}}{-\text{ महँगाई दर (Inflation Rate)}}$$

त्याग अनुपात इस बात का सूचक है कि यदि महँगाई गिरेगी तो संवृद्धि दर भी गिरेगी। अतः एक हद तक महँगाई का बने रहना देश की संवृद्धि के लिए आवश्यक है। 2003-2004 में संवृद्धि दर (Growth rate) में वृद्धि हुई एवं महँगाई दर (Inflation Rate) भी बढ़ा, अतः इसे सकारात्मक त्याग दर कहेंगे।

यह अल्पकालिक महत्व का सूचक है।

4.18 दयनीयता/विपन्नता सूचकांक *(Miserable Index)*

इसका प्रतिपादन 1977 में आर्थर ओकुन ने किया। यह एक सामासिक सूचकांक है, जो मुद्रास्फीति की दर तथा बेरोजगारी के दर से मिलकर बना है तथा जो मुद्रास्फीति का बेरोजगार जनसंख्या पर पड़ने वाले प्रभाव का आकलन करता है।

दयनीयता/विपन्नता सूचकांक (Miserable Index): महँगाई दर में इकाई (1%) वृद्धि के कारण मुख्यत: बेरोजगार जनसंख्या के उपभोग स्तर या जीवन स्तर में होने वाले गिरावट के आनुपातिक मूल्य को दयनीयता सूचकांक या विपन्नता सूचकांक (Miserable Index) कहते हैं।

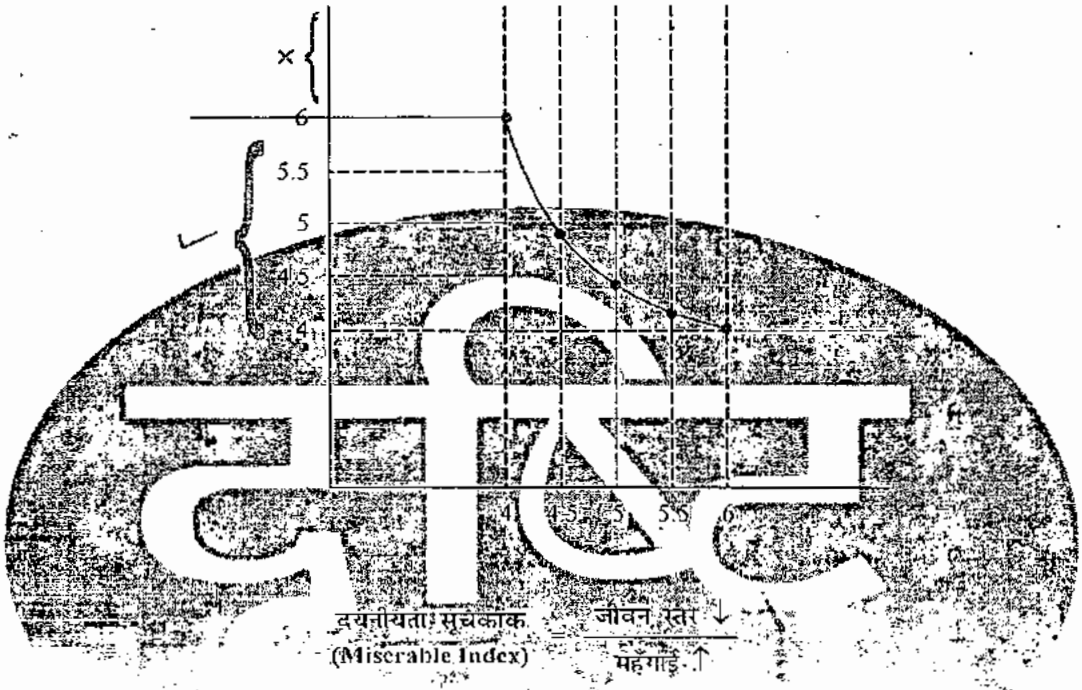

अत: दयनीयता सूचकांक के अध्ययन से पता चलता है कि महँगाई (Inflation) हर स्थिति में अच्छी नहीं कही जा सकती। क्योंकि एक स्तर से महँगाई अधिक होने पर लोगों के जीवन स्तर में गिरावट आने लगती है। अत: ऐसी महँगाई (Inflation) ही वांछनीय है, जो त्याग अनुपात (Sacrifice Ratio) एवं दयनीयता सूचकांक (Miserable Index) के मूल्यों (Values of Miserable Index) का न्यूनीकरण (Minimization) करे।

दयनीयता सूचकांक के लिए मूल्य को कम करने के लिए सरकार कुछ लक्षित कार्यक्रम बनाती है और उन्हें महँगाई लक्ष्यीकरण नीति के साथ-साथ लागू करती है। पिछले कुछ वर्षों में न्यूनतम समर्थन मूल्य (Minimum Support Price - MSP) का सरकार द्वारा बढ़ाया जाना दयनीयता सूचकांक (Miserable Index) को कम करने के ही उपाय हैं, तो मनरेगा की मजदूरी मूल्य को CPIAL index से जोड़ देना भी दयनीयता सूचकांक (Miserable Index) के मूल्य को कम करने की प्रक्रिया का अंग है।

4.19 एंजिल वक्र *(Engel's Curve)*

एंजिल के नियम– एंजिल एक जर्मन सांख्यिकीविद् (Statician) थे, जिन्होंने परिवार की आय तथा उपभोग पर होने वाले व्यय के बीच के संबंध को एक नियम द्वारा प्रतिपादित किया। इसे ही एंजिल का उपभोग नियम कहते हैं। एंजिल के अनुसार :

- आय में वृद्धि के साथ भोजन पर होने वाले व्यय के अनुपात में कमी होगी।
- मकान और कपड़े पर होने वाले व्यय का अनुपात स्थिर रहेगा।
- शिक्षा, स्वास्थ्य और मनोरंजन पर होने वाले व्यय के अनुपात में वृद्धि होगी।

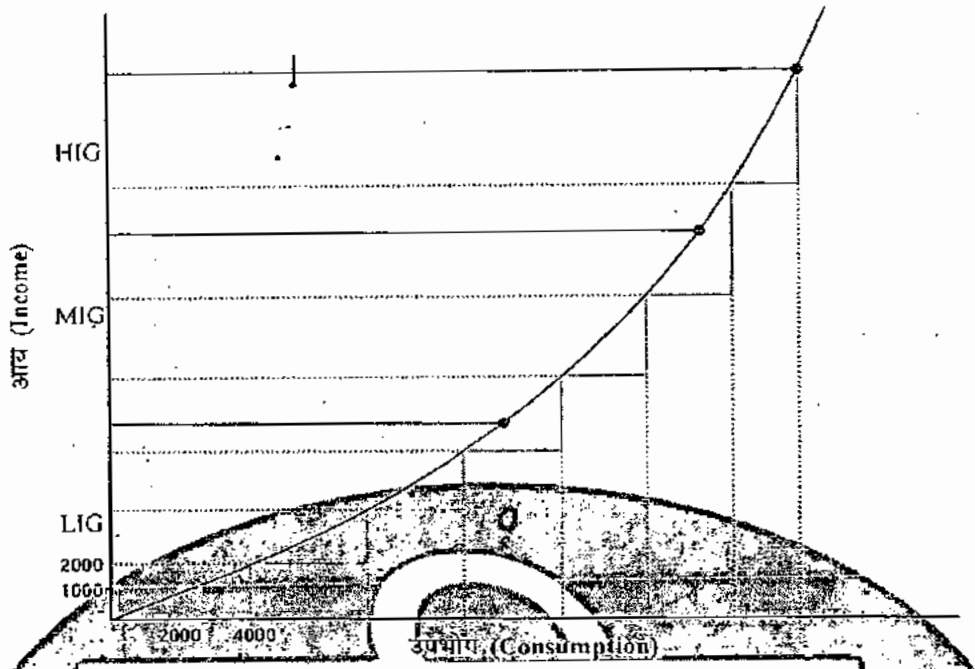

आय बढ़ने के साथ उपभोग में किस अनुपात में वृद्धि होती है? इसकी माप एंजिल वक्र (Engle's Curve) द्वारा की जाती है। उपरोक्त ग्राफ से ऐसा देखा जा सकता है कि आय बढ़ने के साथ उपभोग का अनुपात उत्तरोत्तर गिरता जाता है। शुरुआती चरण (First Phase – LIG) में उपभोग तेजी से बढ़ता है, लेकिन दूसरे चरण (Second Phase – MIG) में ही देखा जा सकता है कि आय के सापेक्ष उपभोग वृद्धि की दर गिरती जा रही है। तीसरे चरण (Third Phase – HIG) में उपभोग वृद्धि की दर न्यूनतम (Minimum) हो गई है।

जैसे-जैसे लोगों की आय बढ़ती है, उनका उपभोग आवश्यक वस्तुओं के बाद आरामदायक वस्तुओं की ओर बढ़ने लगता है और साधारणतः ऐसा देखा जाता है कि एक प्रगतिशील अर्थव्यवस्था में आरामदायक वस्तुओं को प्रोत्साहित करने के बाद विलासितापूर्ण वस्तुओं को प्रोत्साहित किया जाता है।

अगर लोगों के उपभोग व्यय में आनुपातिक रूप से गिरावट आएगी तो उनके बचत में वृद्धि होगी। यही कारण है कि बचत : आय का अनुपात

HIG	:	अधिकतम (Maximum) होता है।
MIG	:	मध्यम (Moderate) होता है।
LIG	:	न्यूनतम (Minimum) होता है।

यदि आय का निश्चित अंश बचाया जा रहा है, तो जाहिर है कि उसका निवेश (Investment) किया जाएगा और इस प्रकार बचत (Saving) बढ़ने के साथ बचत कर्ता की आय (Income) में वृद्धि होगी। आय बढ़ने के साथ लोग ब्याज (Interest) से पुनः धन कमायेंगे और इस प्रकार आय का सुचक्र निर्मित होगा। आय बढ़ने के साथ बचत अनुपात बढ़ता जाता है और निवेश अवसरों की सामाजिक माँग भी बढ़ती जाती है।

4.20 कुजनेत्स वक्र *(Kuznets Curve)*

कुजनेत्स वक्र (Kuznets Curve) यह प्रदर्शित करता है कि प्रति व्यक्ति आय (Per Capita Income) की वृद्धि के साथ जब तक प्रति व्यक्ति आय P_0 नहीं हो जाती। आय वितरण (Income Distribution) की विषमता बढ़ती रहेगी। लेकिन एक स्थिति के बाद प्रति व्यक्ति आय की वृद्धि के साथ इसमें कमी आयेगी।

कुजनेत्स वक्र केवल यह प्रदर्शित करता है कि विकास के साथ विषमता घट रही है या बढ़ रही है, यह विषमता की डिग्री नहीं मापता। अतः यह विषमता के माप की गुणात्मक विधि (Qualitative Method) है न कि मात्रात्मक (Not Quantitative)।

इसे अगले पृष्ठ पर ग्राफ के माध्यम से दिखाया गया है-

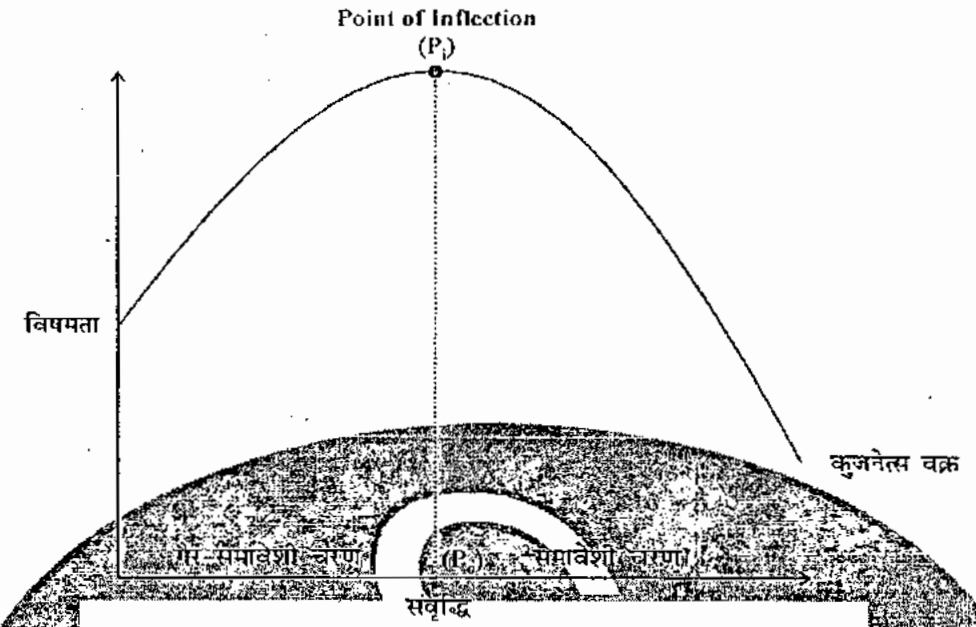

लेकिन Michael P Todaro ने उपरोक्त व्याख्या का प्रयास किया और कहा कि शुरूआत के चरण में संवृद्धि बढ़ने से विषमता का बढ़ना आवश्यक नहीं है। Todaro का यह कथन सिंगापुर, स्विट्जरलैंड, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड आदि जैसी विरल जनसंख्या वाले देश में सही है क्योंकि वहाँ संवृद्धि के आरंभिक चरण में अधिकांश जनसंख्या (50% से अधिक लोगों) को भागीदार बनाया जा सकता है। इसलिए विषमता शुरू से ही कम होती है, लेकिन चीन, अमेरिका, भारत, पाकिस्तान आदि जैसे विशाल एवं सघन जनसंख्या वाले देशों (Countries of Large and Densed Population) में संवृद्धि के शुरूआती समय में 50% से अधिक जनसंख्या को शामिल कर पाना व्यवहार संगत नहीं (Impratcial) होता है। शुरू में सामाजिक आधार छोटा होता है, अतः विषमता बढ़ती है लेकिन धीरे-धीरे विषमता बढ़ने की दर घटती जाती है।

हालाँकि यह वक्र आधार रेखा (X Axis) को कभी नहीं छू पायेगी क्योंकि विषमता व्यवहार में कभी शून्य नहीं हो सकती।

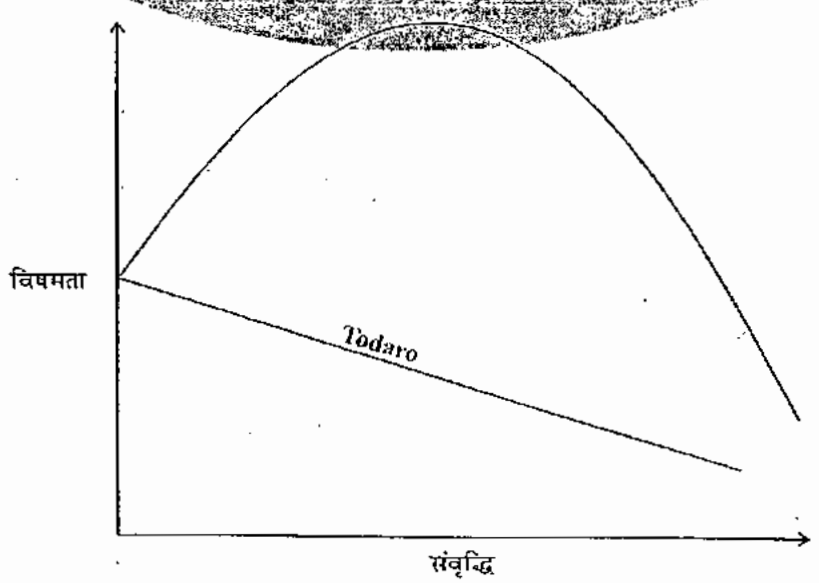

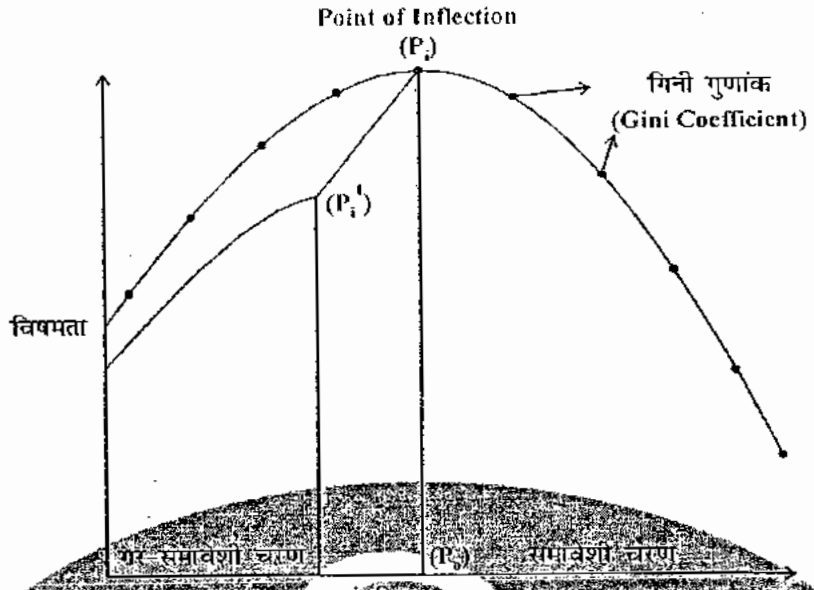

उपरोक्त ग्राफ से स्पष्ट है कि P_0 के पहले तक का चरण गैर-समावेशी चरण है और P_0 के बाद ही समावेशी चरण की शुरूआत हो रही है। समावेशी चरण की शुरूआत जल्दी हो जाए, इसके लिए Point of Inflection को P_i से P_i' लाना होगा। अतः सरकार को कुछ ऐसे कार्यक्रमों तथा नीतियों का निर्माण करना होगा जिससे Point of Inflection जल्दी आ जाए, समावेशी चरण की शुरूआत जल्दी हो और सामाजिक आधार व्यापक (Broader Social Base) हो।

गिनी गुणांक (Gini Coefficient) के संदर्भ में इसे इस प्रकार समझा जा सकता है कि अलग-अलग वर्षों के लिए गिनी गुणांक के मूल्यों से बने वक्र को कुजनेत्स वक्र (Kuznets Curve) कहते हैं। मनरेगा आदि कार्यक्रमों के द्वारा गिनी गुणांक में उत्तरोत्तर कमी आयेगी और विषमता कम होगी।

उपरोक्त सभी 17 मानकों की चर्चाओं में जिन घटकों (Components) की चर्चा की गई है, जैसे- शिक्षा, प्रति व्यक्ति GDP, जीवन प्रत्याशा, लिंग सशक्तीकरण आदि के विस्तार के लिए सरकार विभिन्न योजनाएं चला रही है, जिनका विवरण आगे दिया गया है।

पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र (Environmental Kuznets Curve)

आर्थिक संवृद्धि की दर तथा प्रदूषण के सघनीकरण (Concentration of Population) के बीच पाये जाने वाले संबंध को प्रदर्शित करने वाला वक्र कुजनेट्स पर्यावरणीय वक्र कहलाता है।

आर्थिक विकास (Economic Growth) के साथ औद्योगिकरण (Industrialization) के कारण उत्पन्न उत्पादन संरचना प्रभाव (Output Composition Effect) के कारण प्रदूषण में लगातार वृद्धि (Constant Increase in Population) होती है, लेकिन प्रति व्यक्ति आय (Per Capita Income) एक निश्चित स्तर या विकास के निश्चित स्तर के बाद पर्यावरणीय वस्तुओं एवं सेवाओं (Environmental Goods and Services) के संबंध में आय की वृद्धि के साथ ही ऐसी वस्तुओं तथा सेवाओं की माँग में वृद्धि के कारण पर्यावरणीय केन्द्रीयकरण कम होता जाता है। इसलिए इसे देखा जाता है कि जैसे-जैसे प्रति व्यक्ति आय बढ़ती है प्रदूषण केन्द्रीकरण शुरू में बढ़ता है, लेकिन एक निश्चित स्तर के बाद उसमें गिरावट आती है। इसी संबंध को दिखाने का कार्य कुजनेट्स पर्यावरणीय वक्र (Environmental Kuznets Curve) करता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–4 *(Unit–4)*

सामाजिक-आर्थिक लेखांकन : भाग-3
Social-Economic Accounting : Part-3

4.21 सार्वजनिक वितरण प्रणाली तथा खाद्य सुरक्षा
(Public Distribution System and Food Security)

4.22 राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा विधेयक *(National Food Security Bill)*

4.23 विद्यालयों में मध्याह्न भोजन का राष्ट्रीय कार्यक्रम
(Mid-Day Meal National Scheme for Schools)

4.24 राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन
(National Rural Health Mission – NRHM)

4.25 जननी सुरक्षा योजना (JSY)
(1997 से राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना के नाम से संचालित)

4.26 राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना
(National Health Insurance Scheme – NHIS)

4.27 राजीव गाँधी शिल्पी स्वास्थ्य बीमा योजना

4.28 किशोरी शक्ति योजना *(KSY)*

4.29 राजीव गाँधी किशोरी अधिकारिता योजना (सबला)

4.30 राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम
(National Social Assistance Programme – NSAP)

4.31 सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना *(SGRY)*

4.32 शहरी बेरोजगारी एवं गरीबी निवारण कार्यक्रम

4.33 स्वर्ण जयन्ती शहरी रोजगार योजना
(Swaran Jayanti Shahari Rozgar Yojana – SJSRY)

4.34 शहरी मजदूर रोजगार कार्यक्रम
(Urban Wage Employment Programme – UWEP)

4.35 प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम
(Prime Minister Employment Generation Programme-PMEGP)

4.36 सांसद स्थानीय क्षेत्र विकास योजना
(Members of Parliament Local Area Development Scheme-MPLADS)

4.37 जनश्री बीमा योजना

4.38 सर्वशिक्षा अभियान *(SSA)*

4.39 कस्तूरबा गाँधी शिक्षा योजना
4.40 कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय योजना *(KGBVY)*
4.41 उज्ज्वला योजना
4.42 राष्ट्रीय बालश्रम उन्मूलन परियोजना
4.43 महिला स्वयं सिद्ध योजना
4.44 ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुविधाओं के प्रावधान की योजना
(Providing Urban Facilities in Rural Areas - PURA)
4.45 कृषि मजदूर सामाजिक सुरक्षा योजना
4.46 राजीव गाँधी श्रमिक कल्याण योजना
4.47 भारत निर्माण योजना
4.48 राजीव गाँधी एल.पी.जी. योजना
4.49 इन्दिरा गाँधी मातृत्व सहयोग योजना
4.50 स्वयं सहायता समूह
(Self Help Group Bank Linkage Programme)
4.51 जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन
4.52 प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना *(PMGY)*
4.53 स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना *(SGSY)*
राष्ट्रीय ग्रामीण जीविका मिशन *(NRLM)*
4.54 जवाहर ग्राम समृद्धि योजना
4.55 अंत्योदय अन्न योजना
4.56 रोजगार आश्वासन कार्यक्रम *(EAS)*
4.57 अन्नपूर्णा योजना
4.58 प्रधानमंत्री रोजगार योजना
(Prime Ministers Rojgar Yojana – PMRY)
4.59 आम्बेडकर वाल्मिकी मलिन बस्ती योजना
4.60 निर्मल भारत अभियान योजना
4.61 हरियाली परियोजना
4.62 पॉपुलेशन फर्स्ट योजना
4.63 स्वजलाधारा कार्यक्रम
4.64 सूखा आशंकित क्षेत्र कार्यक्रम
(Drought-Prone Area Programme – DPAP)
4.65 मरूभूमि विकास कार्यक्रम
(Desert Development Programme – DDP)
4.66 एकीकृत बंजर भूमि विकास कार्यक्रम
(Integrated Wastelands Development Programme – IWDP)

4.21 सार्वजनिक वितरण प्रणाली तथा खाद्य सुरक्षा
(Public Distribution System and Food Security)

1. भारत में खाद्य सुरक्षा की समस्या

खाद्य सुरक्षा का अर्थ होता है, देश के सभी लोगों को हर समय पर्याप्त मात्रा में खाद्यान्न उपलब्ध कराना ताकि वे स्वास्थ और सक्रिय जीवन जी सके। जहाँ तक पर्याप्त मात्रा में भोजन की उपलब्धता का संबंध है, इसे दो संदर्भों में समझा जा सकता है:

(i) खाद्यान्नों की मात्रात्मक उपलब्धि- खाद्य उपलब्धि इतनी हो कि सभी लोगों की भोजन आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके।

(ii) खाद्यान्नों की गुणात्मक उपलब्धि- खाद्य उपलब्धि ऐसी हो कि जनसंख्या की पोषण आवश्यकताएँ (Nutritional Requirement) पूरी की जा सके।

खाद्य सुरक्षा के मात्रात्मक तथा गुणात्मक पहलुओं के समाधान के लिए भारत सरकार द्वारा तीन खाद्य आधारित सुरक्षा जाल (Food Based Safety Nets) अपनाये गये हैं:

सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System) | समेकित बाल विकास सेवाएं (Integrated Child Development Services) | दोपहर भोजन कार्यक्रम (Mid-Day Meal Programme)

1. सार्वजनिक वितरण प्रणाली के उद्देश्य एवं प्रसार (Motive and Expansion of Public Distribution System): भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली का उद्देश्य उपभोक्ताओं (Consumers) को सस्ती कीमतों (Low Price) पर आवश्यकता में आने वाली उपभोग की वस्तुएं उपलब्ध (Availability of Consumer Goods) कराना है ताकि उन्हें उपभोग की वस्तुओं की बढ़ती कीमतों के प्रभाव से बचाया जाए तथा लोगों को न्यूनतम आवश्यक उपभोग स्तर प्राप्त करने में सहायता प्रदान की जाए। इस हेतु सरकार व्यापारियों तथा उत्पादकों से वस्तुएं खरीदता है और उसका वितरण उचित दर की दुकानों तथा राशन की दुकानों के माध्यम से किया जाता है। खाद्यान्नों के अलावा सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System) का प्रयोग खाद्य तेलों (Edible Oils), चीनी (Sugar), कोयला (Coal), मिट्टी का तेल (Kerosine Oil) तथा कपड़े के वितरण के लिए भी किया जाता है। महत्वपूर्ण बात यह है कि भारत की सार्वजनिक वितरण प्रणाली में संपूर्ण जनसंख्या को शामिल किया गया है, मतलब यह है कि इसे किसी वर्ग विशेष तक सीमित नहीं रखा गया है। भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से लगभग 16 करोड़ परिवारों को हर साल 30 हजार करोड़ के मूल्य की वस्तुओं का वितरण (Distribution of Goods) किया जाता है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि विश्व में यह अपने तरह की सबसे बड़ी वितरण प्रणाली (Largest Distribution System in the world) है।

जून 1997 से सरकार ने लक्षित सार्वजनिक वितरण योजना (Targeted Public Distribution System) लागू की, जिसके तहत दोहरी कीमत संरचना लागू की गई। इस प्रणाली के अधीन गरीबी रेखा से नीचे (Below Poverty Line) रहने वाले लोगों के लिए निर्धारित कीमत (Issue Price) को वास्तविक लागत (Economic Price) का 50 प्रतिशत रखा गया। जबकि गरीबी रेखा से ऊपर (Above Poverty Line) रहने वाले लोगों हेतु इसे वास्तविक लागत (Economic Price) के बराबर रखा गया। पिछले दस वर्षों में चूँकि सरकार के पास खाद्यान्न भण्डार बहुत बढ़ गया है अतः इस समस्या के निदान के लिए जुलाई 2001 में गरीबी रेखा से ऊपर रहने वाले लोगों के लिए निर्धारित कीमतों को 30 प्रतिशत कम कर दिया गया, अर्थात् इन लोगों के लिए निर्धारित कीमत (Issue Price) को वास्तविक कीमत (Economic Price) का 70 प्रतिशत रखा गया।

2. भारतीय खाद्य निगम की भूमिका (Role of Food Corporation of India): भारतीय खाद्य निगम (Food Corporation of India – FCI) का मुख्य कार्य सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System – PDS) को खाद्यान्न उपलब्ध कराना है। इसकी स्थापना 1965 में हुई, जो खाद्यान्नों एवं अन्य सामग्रियों की खरीददारी (Purchase), भण्डारण (Storage) एवं संग्रहण (Accumulation), स्थानांतरण (Transfer), वितरण (Distribution) तथा विक्रय (Sell) का काम करता है। भारतीय खाद्य निगम यह सुनिश्चित करता है कि किसानों को उनके उत्पादन की उचित कीमत मिले [जो सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम समर्थन मूल्य (Minimum Support Price) से कम न हो] तथा दूसरी ओर भारतीय खाद्य निगम यह भी निश्चित करता है कि उपभोक्ताओं को भण्डार से एक समान कीमत पर खाद्यान्न उपलब्ध हो (Availability of Food Grains on Equal Price)। निगम को यह जिम्मेदारी भी सौंपी गई है कि वह सरकार की ओर से खाद्यान्नों का बफर स्टॉक (Buffer Stock) बनाकर रखे। चूँकि इन दिनों गेहूँ (Wheat) और चावल (Rice) के उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि हुई है अतः भारतीय खाद्य निगम (Food Corporation of India – FCI) की भूमिका भी बढ़ गई है।

Food Corporation of India – FCI के कुछ महत्वपूर्ण कार्य:

(i) (Food Corporation of India – FCI) ने देश के अंदर वैज्ञानिक भंडारण (Scientific Storage) व्यवस्था के निर्माण में सहायता की है।

(ii) उचित मूल्यों पर खाद्यान्न उपलब्ध कराकर Food Corporation of India – FCI ने गरीब वर्गों की खाद्यान्न आवश्यकताओं को पूरा करने में योगदान दिया है।

(iii) Food Corporation of India – FCI द्वारा देश के किसानों से आवश्यक अनाज वसूली कर लेने के कारण अन्य देशों से खाद्यान्नों के आयात में कमी आई है और इस प्रकार विदेशी मुद्रा (Foreign Currency) की बचत हो सकी है।

(iv) खाद्यान्न वसूली के स्तर में काफी वृद्धि हुई है जिससे सरकार को उचित मात्रा में बफर स्टॉक (Buffer Stock) बनाने तथा सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System – PDS) की माँग को पूरा करने हेतु उचित मात्रा में खाद्यान्न उपलब्ध कराने में आसानी हुई है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के दोष:

(i) सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System – PDS) मुख्यतः गेहूँ (Wheat) और चावल (Rice) तक ही सीमित रही है और मोटे अनाजों जैसे- ज्वार, बाजरा के वितरण पर बहुत कम ध्यान दिया गया है, जबकि देखा यह गया है कि गरीब जनता ज्यादातर मोटे अनाजों का ही उपयोग करती है। विचारणीय तथ्य यह भी है कि राशन कार्ड केवल उन्हीं परिवारों को दिया जाता है जिनके पास उचित पता (Adequate Address) हो और उन लोगों को राशन कार्ड नहीं मिल पाता जिनके पास घर नहीं है।

(ii) सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System – PDS) देश के कुछ ही राज्यों में केन्द्रित रह गई है। दक्षिणी राज्यों, जैसे- आंध्र प्रदेश, केरल, कर्नाटक, तमिलनाडु को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से वितरित खाद्यान्नों का लगभग आधा हिस्सा प्राप्त होता है। प्रदेश की गरीबी रेखा से नीचे (Below Poverty Line – BPL) रहने वाली जनसंख्या को कुल वितरित अनाज (Distributed Grains) का केवल 20% प्राप्त होता है। इसे इन आँकड़ों से समझा जा सकता है कि 1995 में प्रतिव्यक्ति वितरण (Per Capita Distribution) जहाँ मध्य प्रदेश में मात्र 4.6 कि.ग्रा., उत्तर प्रदेश में 2.9 कि.ग्रा. तथा बिहार में 2.3 कि.ग्रा. था, वहीं केरल में 53.3 कि.ग्रा. तथा तमिलनाडु में 29.5 कि.ग्रा. थी।

(iii) विभिन्न राज्यों में गरीबों की सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System – PDS) पर निर्भरता में काफी अंतर है। उदाहरणस्वरूप चावल के लिए गरीबों की सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System – PDS) पर निर्भरता केरल जैसे राज्यों में जहाँ 60% है वहीं बिहार में 1% से भी कम। बिहार, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में निर्धन वर्गों को 90% से अधिक खरीददारी खुले बाजार (Open Market Purchasing) से करनी पड़ती है।

(iv) सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System – PDS) पूर्व में अधिकतर शहरी क्षेत्रों तक ही सीमित रही (Limited to Cities) और ग्रामीण क्षेत्रों (Rural Areas) में इसका प्रसार कम हुआ। भारत सरकार की एक रिपोर्ट के अनुसार हालाँकि 75% से अधिक उचित दर की दुकानें ग्रामीण क्षेत्रों में हैं, लेकिन फिर भी जहाँ तक ग्रामीण, पिछड़े तथा दूरदराज के क्षेत्रों में आवश्यक वस्तुएँ पहुँचाने का प्रश्न है, Public Distribution System – PDS ने कोई विशेष भूमिका नहीं निभाई है।

(v) एक अन्य दोष यह भी है कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System – PDS) के कारण कीमतों में वृद्धि हुई है, क्योंकि सरकार द्वारा बढ़ते हुए पैमाने पर प्रत्येक वर्ष खाद्यान्नों की वसूली कर लेने से खुले बाजार में खाद्यान्नों की पूर्ति कम हो जाती है और इस स्थिति का लाभ उठाकर व्यापारी खाद्यान्नों की कीमतें बढ़ाने में सफल हो जाते हैं।

(vi) सबसे महत्वपूर्ण दोष यह है कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System – PDS) को बनाए रखने के लिए सरकार को भारी मात्रा में सहायिकी (Subsidy) देनी पड़ रही है। जो सहायिकी 1980-81 में 662 करोड़ थी वह 2010-11 में बढ़कर 60,600 करोड़ पहुँच गई। सब्सिडी की आवश्यकता इसलिए पड़ती है क्योंकि Food Corporation of India – FCI की वास्तविक लागतें (वसूली, भण्डारण तथा वितरण आदि की लागतें) खाद्यान्नों की निर्धारित कीमतों (Issue Price) की तुलना में बहुत अधिक हैं। सरकार ने 1997 में लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System – PDS) अपनाई, जिसके अंतर्गत निर्धारित कीमतों (Issue Price) को गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों के लिए भारतीय खाद्य निगम (Food Corporation of India – FCI) की वास्तविक लागत (Economic Price) का 50% रखा गया। जबकि गरीबी रेखा से ऊपर (Above Poverty Line) रहने वाले परिवारों के लिए निर्धारित कीमत (Issue Price) को वास्तविक कीमत (Economic Price) के बराबर रखा गया। गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों के लिए निर्धारित कीमत (Issue Price) में इस अत्यधिक गिरावट के कारण आर्थिक सहायता (Economic Help) के भार में तेज गति से वृद्धि हुई तो दूसरी

ओर गरीबी रेखा से ऊपर (Above Poverty Line) रहने वाले परिवारों के लिए निर्धारित कीमतों (Issue Price) को वास्तविक कीमतों (Economic Price) में बराबर रखने का परिणाम इस रूप में आया कि इन परिवारों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली से खाद्यान्न खरीदने कम कर दिये। परिणामस्वरूप Food Corporation of India – FCI के पास खाद्यान्नों का भण्डार बहुत अधिक बढ़ गया।

लक्षित सार्वजनिक वितरण योजना (Targetted Public Distribution Scheme): खाद्य सहायता (Food Subsidy) के बढ़ते भार को कम करने के उद्देश्य से तथा लक्षित वर्ग (Targetted Group) तक खाद्यान्नों को बेहतर तरीके से पहुँचाने के लिए सरकार ने 1 जून 1997 से लक्षित सार्वजनिक वितरण योजना (Targetted Public Distribution Scheme) की शुरूआत की। इस योजना के अंतर्गत राज्य सरकारों (State Governments) को गरीबी रेखा से नीचे (Below Poverty Line – BPL) जीवनयापन करने वाले लोगों का पता लगाने के लिए कहा गया। इसमें गरीबी रेखा से नीचे (Below Poverty Line – BPL) इन परिवारों को रखा गया, जिनकी वार्षिक आय 15,000 से कम थी। शुरूआत में प्रत्येक परिवार को 10 कि.ग्रा. खाद्यान्न प्रतिमास देने की व्यवस्था की गई, जिसे बाद में बढ़ाकर 25 कि.ग्रा. प्रतिमाह कर दिया गया। 1 अप्रैल 2002 को राशन की मात्रा कुछ और बढ़ाकर 35 कि.ग्रा. प्रतिमास प्रति परिवार कर दी गई।

गरीबी रेखा से नीचे (Below Poverty Line – BPL) रहने वाले परिवारों तथा अंत्योदय अन्न योजना के अंतर्गत शामिल कुल परिवारों की संख्या 6.52 करोड़ है। इन परिवारों को 35 कि.ग्रा. प्रतिमास के हिसाब से खाद्यान्न दिए जाते हैं। गरीबी रेखा से ऊपर रहने वाले परिवारों को 10 कि.ग्रा. प्रतिमाह (Above Poverty Line) के हिसाब से खाद्यान्न दिए जाते हैं। वर्ष 2010-11 में अंत्योदय अन्न योजना के अधीन गरीबी रेखा के नीचे तथा ऊपर के परिवारों के लिए कुल 420.8 लाख टन खाद्यान्न जारी किए गए। इसके अतिरिक्त 5.9 लाख टन खाद्यान्न राज्यों को आपदा सहायता के रूप में दिए गए।

लक्षित सार्वजनिक वितरण योजना का मूल्यांकन:

(i) लक्षित सार्वजनिक वितरण योजना का मुख्य उद्देश्य खाद्य सहायता (Food Subsidy) के भार को कम करना था, लेकिन इसका वास्तविक परिणाम ठीक इसके विपरीत हुआ और खाद्य सहायता का भार बढ़ गया। जिसके प्रमुख कारण थे-

- गरीबी रेखा से ऊपर रहने वाले परिवारों द्वारा लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली से खरीददारी कम करने से एफ.सी.आई के पास खाद्यान्न भण्डारों में वृद्धि हुई है तथा एफ.सी.आई को इन खाद्यान्नों के भण्डारण तथा रख-रखाव पर काफी खर्च करना पड़ रहा है।
- गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों को खाद्यान्न वास्तविक कीमत से आधी कीमत पर उपलब्ध कराया जा रहा है।
- अंत्योदय अन्न योजना के अधीन 2.5 करोड़ सबसे गरीब परिवारों को चावल मात्र 3 प्रति कि.ग्रा. तथा गेहूँ मात्र 2 प्रति कि.ग्रा. की दर से उपलब्ध कराया जा रहा है। 2007-08 में जो खाद्य सहायता 31,500 करोड़ थी, वह 2010-11 में बढ़कर 60,600 करोड़ हो गई।

(ii) इसकी दूसरी महत्वपूर्ण आलोचना इस बात को लेकर की जाती है कि "गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों का पता कैसे लगाया जाय।" गरीबों को लक्षित करने के उद्देश्य से सरकार द्वारा परिभाषित आय- गरीबी रेखा (Income – Poverty Line) का उपयोग करने में कई कठिनाइयाँ हैं। पहला मुद्दा यह है कि देश की जनसंख्या का बहुत बड़ा हिस्सा अनियमित व अनियंत्रित क्षेत्र में कार्य करता है तथा उसे अनियमित मजदूरी प्राप्त होती है और इस प्रकार आय का वास्तविक अनुमान लगा पाना संभव नहीं है।

(iii) एक मुद्दा यह भी है कि चूँकि भारत में गरीबी की रेखा का स्तर बहुत नीचे रखा गया है इसलिए उस स्तर से जो लोग 50 भी अधिक कमा लेते हैं, उनकी स्थिति भी गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों से कम बुरी नहीं होती। लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली में गरीब परिवारों को परिभाषित करने की वास्तविक प्रक्रिया अलग-अलग राज्यों में मनमाने ढंग से की गई। कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन (Programme Evaluation Organisation) द्वारा 2005 में किए गए सर्वेक्षण के आँकड़ों के अनुसार बड़े पैमाने पर वास्तविक गरीबों को छोड़ा गया और गैर-गरीबों को शामिल किये जाने संबंधी त्रुटियाँ बताई गईं। (National Council of Applied Economic Research – NCAER) द्वारा हाल ही में किए गए एक सर्वेक्षण से पता लगा है कि जाली राशन कार्डों की संख्या 2.3 करोड़ तक है। इससे भी ज्यादा चिंता का विषय यह है कि 1.21 करोड़ वास्तविक रूप से गरीब परिवारों को योजना में शामिल नहीं किया गया है।

(iv) यहाँ केवल जाली राशन कार्ड ही समस्या नहीं है, बल्कि इस प्रणाली से अनाज चोरी होना तथा भ्रष्टाचार के कारण अनाज बड़े पैमाने पर उचित दर दुकानों से हटाकर खुले बाजार में ज्यादा कीमतों पर बेचना है। कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन द्वारा बताया गया है कि बिहार और पंजाब में यह चोरी 75% से अधिक है। जबकि हरियाणा तथा उत्तर प्रदेश में यह चोरी 50-75 प्रतिशत तक है। अनाज की चोरी के कारण आपूर्ति की लागत (Cost of Delivery) में वृद्धि हो जाती है।

लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली कई आधारों पर असफल सिद्ध हुई क्योंकि यह वास्तविक गरीबों तक पहुँचने में असफल रही। यह खाद्य सहायता का भार भी कम नहीं कर पाई। विभिन्न राज्यों के बीच खाद्यान्न आवंटन में अत्यधिक समानता है जिससे अधिकपूर्ति वाले राज्यों से कमपूर्ति वाले राज्यों की ओर खाद्यान्न हस्तांतरण व्यवस्था कमजोर हुई है, साथ ही लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के कारण भ्रष्टाचार आदि जैसी गड़बड़ियों में भी वृद्धि हुई है।

यही कारण है कि अर्थशास्त्रियों ने इस पूरी प्रक्रिया को समाप्त करने का सुझाव दिया है और कहा है कि इसके स्थान पर गरीबों को नकदी हस्तांतरण के माध्यम से सहायता उपलब्ध कराई जाय। योजना आयोग के उपाध्यक्ष मोंटेक सिंह आहलूवालिया की अध्यक्षता में गठित समिति ने मार्च 2011 में सुझाव दिया है कि खाद्यान्नों के स्थान पर गरीबों के इलैक्ट्रॉनिक खाते में प्रतिमाह एक निर्धारित मुद्रा राशि का अंतरण किया जाय तथा उन्हें इस बात के लिए स्वतंत्रता होना चाहिए कि वे इस मुद्रा राशि से उचित मूल्य के दुकानों से आवश्यकतानुसार खाद्य सामग्री खरीद सकें। समिति ने यह सुझाव दिया है कि सरकार आर्थिक सहायता राशि (Subsidy) को सीधे UID नंबर (Unique Identification Number) या आधार नंबर से जुड़े स्मार्ट-कार्ड में हस्तांतरित करे और यह स्मार्ट कार्ड परिवार के 18 वर्ष से अधिक आयु की किसी महिला सदस्य के नाम हो। आर्थिक सहायता की मात्रा खाद्यान्न के न्यूनतम समर्थन कीमत (MSP) तथा उचित दर मूल्य की दुकान पर उस खाद्यान्न की कीमत की बीच के अंतर के बराबर हो। उसका मतलब यह होगा कि गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों को खाद्यान्न उपलब्धि की वर्तमान प्रक्रिया के अधीन (जिसमें प्रति परिवार 35 कि.ग्रा. खाद्यान्न उपलब्ध करने की व्यवस्था है) प्रतिमाह 280 से 300 के आर्थिक सहायता देनी होगी। यदि राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् द्वारा प्रस्तावित कीमतें ली जाएं (मोटे अनाज के लिए 1/कि.ग्रा., गेहूँ के लिए 2/कि.ग्रा. तथा चावल के लिए 3/कि.ग्रा.) तो आर्थिक सहायता की राशि 300 से 350 प्रतिमास के बीच बैठती है। इस पूरी व्यवस्था में बी.पी.एल कार्डधारक को यह अधिकार होगा कि वह सहायता के अधीन प्रदान किए जाने वाले खाद्यान्न का अपना कोटा खरीदे या अपनी पसंद की कोई और खाद्य सामग्री। यह कार्ड केवल उचित दर दुकानों पर ही प्रयोग किया जा सकेगा ताकि इसमें निहित सहायता को धन में परिवर्तित न किया जा सके।

समेकित बाल विकास योजना (Integrated Child Development Scheme – ICDS)

1975 से भारत के मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा चलाए जा रहे इस कार्यक्रम के आयोजन तथा परिचालन लागतों का खर्च केन्द्र सरकार वहन करती है, जबकि इस योजना के कार्यान्वयन का कार्य राज्य सरकार का है। आई.सी.डी.एस. बच्चों को पूरक पोषण (Supplementry Nutrition) सुविधाओं के साथ प्राथमिक चिकित्सा सुविधाएँ (Primary Health Facilities) तथा अनौपचारिक शिक्षा सुविधाएँ (Informal Education Facilities) भी प्रदान करता है।

यह विश्व में बच्चों के लिए सबसे बड़े सेवा कार्यक्रमों में से एक है। जिसमें 6 साल से कम आयु वाले बच्चों के लिए तथा गर्भवती माताओं (Nursing Mothers) के लिए निम्नलिखित 6 सेवाएँ प्रदान करने की व्यवस्था है-

1. 3 से 6 वर्ष के बच्चों को अनौपचारिक स्कूल पूर्व शिक्षा (Non-formal Pre School)।
2. पूरक खाना (Supplementry Feeding) जिसके अंतर्गत प्रत्येक बच्चे को साल में 300 दिन, 500 कैलोरी प्रतिदिन तथा 12-15 ग्राम प्रोटीन प्रतिदिन तथा गर्भवती महिलाओं को 600 कैलोरी प्रतिदिन एवं 18-20 ग्राम प्रोटीन प्रतिदिन उपलब्ध कराने की व्यवस्था है।
3. बीमारियों के प्रति प्रतिरक्षा (Immunisation)।
4. स्वास्थ्य परीक्षण (Health Observation)।
5. विशेषज्ञों से परामर्श की सुविधा (Refernal Services)।
6. व्यस्क स्त्रियों को स्वास्थ्य एवं पोषण के बारे में शिक्षा।

यह कार्यक्रम सरकार की अनेक परियोजनाओं के माध्यम से लागू किया जा रहा है, जिसमें प्रत्येक परियोजना सामुदायिक खण्ड (Community Block) में स्थित है। आई.सी.डी.एस का कार्यान्वयन आँगनवाड़ी केंद्र के माध्यम से किया जा रहा है।

आई.सी.डी.एस के लिए वर्ष 2010-11 में वार्षिक योजना परिव्यय 8700 करोड़ था। कुल 7073 परियोजनाओं में 2010 के अंत तक 6719 परियोजनाएँ प्रचलन में थीं। कुल 13.67 लाख स्वीकृत आँगनवाड़ी केंद्रों में से 2010 के अंत तक 12.42 लाख आँगनवाड़ी केंद्र प्रचलन में थे। भारत सरकार ने 7076 परियोजनाओं तथा 14 लाख आँगनवाड़ी केंद्रों को स्वीकृति दी है। आई.सी.डी.एस को देशभर में लागू करने के अतिरिक्त 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों के संपूर्ण विकास एवं गर्भवती माताओं के उचित पोषण और स्वास्थ्य शिक्षा हेतु सरकार ने और भी कदम उठाए हैं। जैसे- अनुपूरक पोषण कार्यक्रम (Supplementry Nutrition Programme – SNP) व अन्य कार्यक्रमों के वित्तीय मानदंडों (Financial Norms) में परिष्करण कर विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के नए विकास मानदंडों को लागू करना।

आई.सी.डी.एस का आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Appraisal of ICDS)

आई.सी.डी.एस के असंतोषजनक निष्पादन के कई कारण हैं, जिनमें कुछ मुख्य इस प्रकार हैं-

(i) आई.सी.डी.एस के लिए संसाधनों की उपयुक्त मात्रा उपलब्ध नहीं है और कुपोषण दूर करने में आई.सी.डी.एस की भूमिका बहुत सीमित है।

(ii) इस कार्यक्रम का क्रियान्वयन प्रतिगामी (Regressive) है क्योंकि बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश आदि राज्यों में कुपोषित बच्चों का प्रतिशत संख्या अधिक है, लेकिन इन्हीं में इनका प्रसार सीमित है।

(iii) जैसा कि आई.सी.डी.एस के नाम से स्पष्ट है कि इसकी संकल्पना 'एकीकृत' सेवाएँ प्रदान करने के उद्देश्य से की गई थी, लेकिन इसका पूरा ध्यान पूरक पोषण कार्यक्रम (Supplimentry Nutrition Programme – SNP) पर रहा है। इस कार्यक्रम में 3-6 वर्ष की आयु के बच्चों पर अधिक ध्यान दिया गया जबकि 0-3 वर्ष की आयु के बच्चों की अनदेखी की गई। परन्तु, माना जाता है कि 0-3 वर्ष की आयु के बच्चों में कई क्षमताओं का विकास होता है, जैसे-90% बुद्धि का विकास इसी आयु में होता है।

(iv) तारा गोपाल दास के अनुसार, "छिपी भूख और खुली भूख में अंतर है। खुली भूख का मतलब है कुछ घंटों बाद पेट भरने की जरूरत, जबकि छिपी भूख का अर्थ सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी जैसे-आयोडीन, कैल्शियम, आयरन, विटामिन-ए इत्यादि। आई.सी.डी.एस के अंतर्गत छिपी भूख की अनदेखी की गई, क्योंकि बच्चों या उनके निरक्षर माता-पिता को इसकी जानकारी नहीं होती है।"

(v) "आई.सी.डी.एस की असफलता का एक प्रमुख कारण बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार का फैलाव है। दिसंबर 2006 को जारी फोकस (Focus "Focus on Children Under Six) रिपोर्ट में कहा गया है कि व्यापक पैमाने पर भ्रष्टाचार और झूठे रिकॉर्ड आई.सी.डी.एस की वास्तविकता है।"

(vi) आई.सी.डी.एस में क्रियान्वयन की समस्या भी गंभीर बनी हुई है। बिहार एवं झारखंड में आई.सी.डी.एस. के क्रियान्वयन की समीक्षा करते हुए कहा गया है कि बिहार में सुपरवाइजरों के 85% पदों रिक्त हैं और 18% आई.सी.डी.एस परियोजनाओं में एक भी सुपरवाइजर नहीं है। इसके अतिरिक्त बिहार व झारखंड दोनों में ही आई.सी.डी.एस के समस्त कर्मचारियों को वर्ष में केवल दो बार ही वेतन मिलता है।

4.22 राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा विधेयक (*National Food Security Bill*)

राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् (National Advisory Council – NAC) ने जनवरी 2011 में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा विधेयक पर अंतिम सुझाव प्रस्तुत किया। प्रस्तावित राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम (National Food Security Act) का उद्देश्य नागरिकों को हर स्थिति में पर्याप्त भोजन उपलब्ध कराने हेतु खाद्यान्नों के सार्वजनिक वितरण के माध्यम से उपयुक्त व्यवस्था करना है। राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् (National Advisory Council – NAC) ने सिफारिश की है कि परिवार अनुसार खाद्यान्नों का हक (Household Food Entitlement) निर्धारित करने के स्थान पर व्यक्ति अनुसार खाद्यान्नों का हक (Indivisual Food Entitlement) निर्धारित किया जाना चाहिए।

राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् (National Advisory Council – NAC) ने इसके पक्ष में दो तर्क दिए हैं–

1. प्रति व्यक्ति खाद्यान्न हक अधिक उचित है, क्योंकि जिन परिवारों में व्यक्तियों की संख्या अधिक होगी, उनके खाद्यान्न संबंधी हक भी ज्यादा होंगे। जैसे-केरल में एक परिवार में 3-4 सदस्य होते हैं, यदि 7 कि.ग्रा. प्रतिव्यक्ति अनाज का वितरण किया जाय तो उन्हें 21-28 कि.ग्रा. अनाज मिलेगा, वहीं क्योंकि बिहार में प्रति परिवार 6-7 सदस्य होते हैं, तो 7 कि.ग्रा. प्रति सदस्य के हिसाब से एक परिवार को 42-50 कि.ग्रा. अनाज की प्राप्ति होगी।

खाद्य सुरक्षा को एक कानूनी अधिकार बनाने की योजना है, जिसमें एक प्राथमिक समूह (Priority Group) का निर्धारण किया जाएगा। जिसे बहुत सस्ते दर पर खाद्यान्न उपलब्ध कराया जाएगा।

- मोटे अनाज (ज्वार, बाजरा इत्यादि) – 1/कि.ग्रा.
- गेहूँ – 2/कि.ग्रा.
- चावल – 3/कि.ग्रा.

इसमें योजना आयोग की भूमिका रहेगी जो हर राज्य के लिए लाभान्वितों की अधिकतम संख्या निर्धारित करेंगे। इसमें प्राथमिक समूह (Priority Group) का मानदंड राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित होगा और राज्यों को परिवर्तन का कोई अधिकार नहीं होगा। खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम के अंतर्गत ही आई.सी.डी.एस तथा मध्याह्न भोजन कार्यक्रम (Mid-Day Meal) को इसी विधेयक के अंतर्गत लाया

जाएगा। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा विधेयक में देश की कुल जनसंख्या के 75% लोगों को खाद्यान्न उपलब्ध कराने की व्यवस्था है (जिसमें ग्रामीण जनसंख्या का 90% व शहरी जनसंख्या का 50% शामिल होगा)। इन्हें दो वर्गों में विभाजित किया गया–

- प्राथमिकता वर्ग
  - शहरी जनसंख्या (28%)
  - ग्रामीण जनसंख्या (46%)
- सामान्य वर्ग
  - शहरी जनसंख्या (22%)
  - ग्रामीण जनसंख्या (44%)

प्राथमिकता वर्ग – 1/कि.ग्रा. की दर से मोटे अनाज

– 2/कि.ग्रा. की दर से गेहूँ

– 3/कि.ग्रा. की दर से चावल

तथा कुल 35 कि.ग्रा. खाद्यान्न दिया जाएगा।

सामान्य वर्ग – कुल 20 कि.ग्रा. खाद्यान्न दिया जाएगा। जिसकी लागत न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) से आधी रखी जाएगी।

राष्ट्रीय सलाहकार परिषद ने विधेयक में मासिक आपूर्ति (Differential Monthly Supply) का सुझाव दिया–

- प्राथमिक वर्ग में प्रतिव्यक्ति प्रतिमाह 7 कि.ग्रा.
- सामान्य वर्ग में प्रतिव्यक्ति प्रतिमाह 4 कि.ग्रा.

'प्राथमिकता वर्ग', 'सामान्य वर्ग' तथा 'न शामिल होने वाले वर्ग' के रूप में जनसंख्या को शामिल तो कर दिया गया है, लेकिन वास्तविकता में लोगों को इन वर्गों में बाँटने का काम प्रशासनिक रूप से बहुत मुश्किल है। ये कसौटियाँ निर्धारित करना मुश्किल है कि शहरी जनसंख्या के आधे हिस्से को नई योजना में से अलग रखा जाएगा और इन कसौटियों के आधार पर ग्रामीण जनसंख्या को दो भिन्न ऐसे भागों में बाँटा जाएगा, जिनकी खाद्यान्न आपूर्ति बिल्कुल भिन्न होगी। जाहिर है यह जानना असंभव सी बात है इसलिए अभिजीत सेन तथा हिमांशु जैसे अर्थशास्त्रियों का मानना है कि राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा विधेयक में समस्त जनसंख्या को शामिल करना अधिक तर्कसंगत व आसान है।

4.23 विद्यालयों में मध्याह्न भोजन का राष्ट्रीय कार्यक्रम *(Mid-Day Meal National Scheme for Schools)*

(i) विद्यालयों में मध्याह्न भोजन का राष्ट्रीय कार्यक्रम (Mid-Day Meal National Scheme for Schools) लगभग 12 करोड़ ऐसे वंचित वर्गों को समायोजित करता है, जो सरकारी या सरकारी सहायता प्राप्त विद्यालयों एवं वैकल्पिक तथा नई शिक्षा स्कीमों (AIE) के अंतर्गत चलाये जा रहे केन्द्रों में प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

(ii) यह कार्यक्रम मूलरूप से 15 अगस्त 1995 को शुरू किया गया था और दो सालों के अन्दर ही इसे देश के समस्त प्रखण्डों में लागू कर दिया गया।

(iii) इस कार्यक्रम का विस्तार अक्टूबर 2007 से उच्च प्राथमिक स्तर के बच्चों (कक्षा 6 से 8) के लिए शैक्षणिक रूप से पिछड़े प्रखण्डों में किया गया।

(iv) कार्यक्रम में प्राथमिक स्तर (Primary Level) के बच्चों को 450 कैलोरी और 12 ग्राम प्रोटीन का मध्याह्न भोजन (Mid-Day Meal) उपलब्ध कराया जाता है तथा प्राथमिक स्तर से ऊपर के बच्चों को 700 कैलोरी और 20 ग्राम प्रोटीन का मध्याह्न भोजन सुनिश्चित किया गया है।

(v) यह प्राथमिक और प्राथमिक स्तर से ऊपर के लिए 2008-09 से लागू किया गया तथा इस कार्यक्रम में विद्यालयों की भागीदारी बढ़ाने तथा बच्चों को कक्षा में भूखे रहने से बचाने के लिए, साथ ही शैक्षणिक मूल्य का महत्व समझाने आदि में सहायक है।

4.24 राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन *(National Rural Health Mission – NRHM)*

(i) इस कार्यक्रम की शुरूआत 12 अप्रैल, 2005 को ग्रामीण क्षेत्रों (Rural Areas) में निर्धनतम परिवारों (Poorest Families) को विश्वसनीय तथा गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवाएँ (Quality Health Services) उपलब्ध कराने हेतु की गई थी।

(ii) 2010-2011 के केन्द्रीय बजट (Union Budget) में, 15440 करोड़ की राशि इस योजना के लिए आवंटित की गई है। इस कार्यक्रम को पूरे देश में कार्यान्वित किया जा रहा है, जिसमें 18 राज्यों पर विशेष ध्यान दिया गया है। इस मिशन का उद्देश्य राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000 (National Population Policy – 2000) और राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति (National Health Policy) दोनों के लक्ष्यों को भी प्राप्त करना है।

(iii) मिशन के सम्भावित निष्कर्षों में शिशु मृत्यु दर (Infant Mortality Ratio – IMR) में 30 प्रति 1000 जीवित जन्म से नीचे तक कटौती, माता मृत्यु दर (Maternal Mortality Ratio – MMR) के 100 प्रति 1,00,000 जीवित जन्म से नीचे आने तथा कुल प्रजनन दर (Total Fertality Ratio – TFR) के 2012 तक 2 प्रति महिला पर लाना सम्मिलित है।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य अभियान की क्रियाविधि (Process to Conduct National Rural Health Mission)

हर गाँव में कुछ महिलाओं को स्वास्थ्य परिचारिका का प्रशिक्षण (Training) दिया जाता है और फिर इन परिचारिकाओं को सरकारी स्वास्थ्य केन्द्र (Government Health Centre) द्वारा औपचारिक (Formal) मान्यता प्रदान की जाती है, जिसके बाद उन्हें सरकार से प्रतिमाह भत्ता मिलने लगता है, ताकि वह स्वास्थ्य सेवाओं के मामले में (Consultancy) दे सकें।

इन स्वास्थ्य परिचारिकाओं को (Accredited Social Health Activist – ASHA) के नाम से जानते हैं। इन्हें एक Professional नाम भी दिया गया है- 'सखी' या 'स्वास्थ्य सखी'। लगभग प्रति 1000 ग्रामीण जनसंख्या पर एक आशा कार्य करती है।

2009-10 केन्द्रीय बजट में NRHM के संबंध में 12,127 करोड़ आवंटित किया गया है। NRHM के अंतर्गत स्वास्थ्य सेवाओं का पुनरुत्थान किया गया है जो त्रिस्तरीय होती है :-

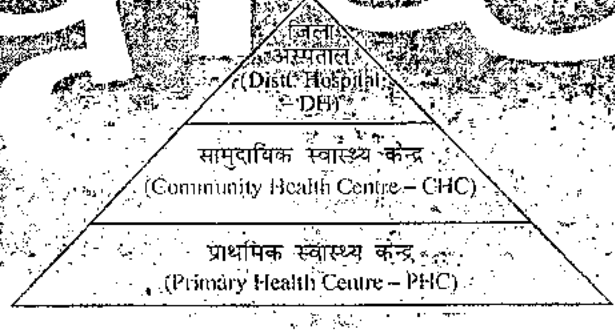

NRHM के तहत स्वास्थ्य कर्मियों की भर्ती की प्रक्रिया में इन दिनों काफी तेजी आई है तथा निजी स्वास्थ्य कर्मियों के ऊपर सरकारी स्वास्थ्य संस्थाओं की प्रतिस्पर्द्धा पैदा की गई है।

↓

निजी स्वास्थ्य कर्मियों के ऊपर सरकारी स्वास्थ्य कर्मियों की प्रतिस्पर्द्धा पैदा की गई है।

↓

स्वास्थ्य अधिकारिता में सुधार।

↓

स्वास्थ्य अधिकारिता में सुधार से (Maternal Mortality Ratio – MMR) में कमी।

↓

(Maternal Mortality Ratio – MMR) में कमी से (Infant Mortality Ratio – IMR) में कमी।

4.25 जननी सुरक्षा योजना (JSY)
(1997 से राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना के नाम से संचालित)

(i) 1 अप्रैल, 2005 से निर्धनता रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों की महिलाओं के लिए एक नई जननी सुरक्षा योजना प्रारम्भ की गई है।

(ii) 100% केन्द्र प्रायोजित (Sponsored) इस योजना ने पूर्व में संचालित राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना (National Maternity Benefit Scheme) जो कि 1997 से कार्यान्वित थी, का 2005 में पुनर्गठन कर नया नाम 'जननी सुरक्षा योजना' दिया गया, का स्थान लिया है तथा 2005-06 के बजट में प्रस्तावित राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (National Rural Health Mission) का घटक है।

(iii) माता मृत्यु दर (Maternal Mortality Rate – MMR) व शिशु मृत्यु दर (Infant Mortality Rate – IMR) पर अंकुश लगाकर गर्भवती महिलाओं के हितार्थ लागू की गई इस योजना का लाभ 19 वर्ष से अधिक उम्र की महिलाओं को पहले दो जीवित प्रसवों के समय प्राप्त होता है।

(iv) मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 (Maternity Benefit Act, 1961) के दायरे में आने वाली कार्यशील महिला कर्मियों (Working Ladies) को मिलने वाली मातृत्व बोनस राशि में वृद्धि की गई है। इसके लिए मातृत्व लाभ (संशोधन) विधेयक मार्च 2008 में संसद में पारित किया गया था, लक्षित महिलाओं (Targeted Women) को देय मातृत्व बोनस की राशि 250 से बढ़ाकर 1000 करने का प्रावधान इस विधेयक में किया गया है।

(v) ज्ञातव्य है कि मातृत्व लाभ अधिनियम 1961 के दायरे में 10 से अधिक महिलाओं को रोजगार प्रदान करने वाले ऐसे कारखाने, दुकान, बागान व संस्थान आते हैं, जो कर्मचारी बीमा अधिनियम (ESI Act) के अधीन नहीं हैं।

4.26 राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना *(National Health Insurance Scheme – NHIS)*

(i) इस योजना की शुरूआत अक्टूबर 2007 में औपचारिक रूप से की गई, जिसका उद्देश्य असंगठित क्षेत्र के गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले सभी कामगारों और उनके परिवारों को शामिल करना है।

(ii) इस योजना के लाभार्थियों को स्मार्ट कार्ड जारी करने का प्रावधान है, जिससे उपचार अथवा जाँच आदि के लिए नकदी रहित लेन-देन किया जा सके। इससे प्रति परिवार कुल बीमित राशि 30,000 प्रति वर्ष है, जिसमें 750 की अनुमानित वार्षिक प्रीमियम राशि में 75% केन्द्र सरकार का अंशदान इस शर्त पर है कि यह राशि प्रति परिवार 565 प्रति वर्ष से अधिक न हो।

(iii) स्मार्ट कार्ड की लागत भी केन्द्र सरकार द्वारा वहन की जाती है। अब तक गरीबी रेखा के नीचे के 50 लाख परिवारों को Biometric स्मार्ट कार्ड जारी किया जा चुका है और सरकार इस योजना के तहत सभी BPL परिवारों को लाना चाहती है।

(iv) 2011-12 के बजट में इस योजना के लिए 275 करोड़ का प्रावधान किया गया है।

4.27 राजीव गांधी शिल्पी स्वास्थ्य बीमा योजना

(i) 31 मार्च 2007 से प्रारम्भ की गई इस योजना का उद्देश्य हस्तशिल्प के क्षेत्र में कारीगरों को सामाजिक सुरक्षा उपलब्ध कराने की है।

(ii) इस योजना के अंतर्गत शिल्पकारों व उनके अधिकतम तीन आश्रितों को आवश्यकतानुसार देशभर के 3500 अस्पतालों में नकद राशि रहित चिकित्सा सुविधा (Cashless Medical Facility) उपलब्ध कराई जायेगी। इस हेतु स्वास्थ्य कार्ड उपलब्ध कराये जायेंगे और दुर्भाग्य से दुर्घटना में मृत्यु या विकलांग होने की स्थिति में शिल्पियों के आश्रितों को 1,00,000 की राशि प्रदान की जायेगी।

(iii) निजी क्षेत्र की बीमा कंपनी 'ICICI लोम्बॉर्ड' के सहयोग से शुरू की गई इस योजना के तहत 80 वर्ष तक की आयु के पुरुष व महिला शिल्पकार लाभान्वित हो सकते हैं।

4.28 किशोरी शक्ति योजना *(KSY)*

(i) 2006-07 में समन्वित बाल विकास योजना (Integrated Child Development Scheme – ICDS) का विस्तार करते हुए

इसके अंतर्गत किशोरी बालिकाओं को विशेषत: स्वास्थ्य (Health), पोषण (Nutrition), शिक्षा (Education) की व्यवस्था से निश्चित करने हेतु किशोरी शक्ति योजना को संचालित किया जा रहा है।

(ii) इस योजना का प्रावधान ऐसे परिवार की बालिकाओं के लिए है जिनकी 1 वर्ष में आमदनी 6,400 से कम है तथा इस योजना के अंतर्गत लाभान्वित बालिकाओं (Beneficiary Girls) के स्वास्थ्य (Health) और शिक्षित होने की उच्च संभावनाएँ (High Possibility) तथा लड़के और लड़कियों में बढ़ते जाने वाले भेदभाव (Partiality) में कमी लाने के लिए उचित प्रबंध किया गया है। इस योजना को दो भागों में बाँटकर चलाया जा रहा है।

Girl to Girl Approach	बालिका मंडल योजना
यह योजना 11 से 15 आयु वर्ग की किशोरियों के लिए है।	(i) यह योजना 15 से 18 आयु वर्ग की किशोरियों के लिए है। (ii) इसमें किशोरियों को व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने की व्यवस्था की गई है।

4.29 राजीव गाँधी किशोरी अधिकारिता योजना (सबला)

(i) सबला का शुभारम्भ 19 नवम्बर 2010 से किया गया है। इस योजना से 11 से 18 वर्ष की आयु वर्ग की किशोरियों के सही मानसिक तथा शारीरिक विकास (Mental & Physical Development) में मदद मिलने की संभावना है।

(ii) (Integrated Child Development Scheme – ICDS) के अंतर्गत इस योजना को पायलट आधार पर 200 चुने हुए जिलों (200 Selected Districts) में शुरू किया गया है तथा इस योजना के तहत लक्ष्य की गई किशोरियों को जो सेवाएँ उपलब्ध कराई जायेंगी उनमें रियायती दरों पर पौष्टिक भोजन (Nutritious Food) शामिल है। 2011-12 के बजट में इस योजना हेतु 750 करोड़ की राशि की व्यवस्था (Arrangement) की गई है।

4.30 राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम *(National Social Assistance Programme – NSAP)*

यह कार्यक्रम 15 अगस्त, 1995 से लागू किया गया। इसे कार्यक्रम के निम्नलिखित तीन महत्वपूर्ण घटक हैं:

राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना (National Old Age Pension Scheme – NOAPS)	राष्ट्रीय परिवार लाभ योजना (National Family Benefit Scheme-NFBS)	राष्ट्रीय प्रसव लाभ योजना (National Maternity Benefit Scheme-NMBS)
(वर्तमान में इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना) इस योजना में अन्नपूर्णा योजना का भी विलय कर दिया गया है।		

उपर्युक्त सभी योजनाएँ वृद्धावस्था, परिवार के कमाऊ सदस्य (Earning Member of Family) की मृत्यु (Death) तथा मातृत्व के दौरान सामाजिक सुरक्षा (Social Security During Maternity) प्रदान करती है। इन योजनाओं से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण बिन्दु निम्नलिखित हैं:

1. राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना (इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था योजना): निर्धनता रेखा से नीचे (Below Poverty Line) जीवनयापन करने वाले सभी 65 वर्ष या इससे अधिक आयु वाले वृद्ध 19 नवम्बर, 2007 से वृद्धावस्था पेंशन के

हकदार होंगे। अभी तक निर्धन परिवारों के बेसहारा (Destitute) वृद्धजन ही इस योजना के तहत मासिक पेंशन (Monthly Pension) के पात्र थे। योजना के लक्षितों (Targetted) में 'बेसहारा' (Destitute) शब्द हटाने का फैसला केन्द्रीय मंत्रिमण्डल ने सितम्बर 2007 में एक बैठक में किया था। इस फैसले को 19 नवम्बर, 2007 से प्रभावी करने की घोषणा तत्कालीन वित्त मंत्री पी. चिदम्बरम् ने 1 अक्टूबर, 2007 को अन्तर्राष्ट्रीय वृद्धजन दिवस के अवसर पर नई दिल्ली में एक कार्यक्रम में की। 19 नवम्बर, 2007 को इस योजना का नाम बदलकर इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना कर दिया गया। इस योजना के तहत दी जाने वाली राशि को बढ़ाकर 400 प्रति माह पहले ही किया जा चुका है। इसमें 200 प्रति माह का योगदान केन्द्र सरकार (Central Government) का व शेष राज्य सरकार (State Government) का होता है।

2. **राष्ट्रीय परिवार लाभ योजना:** इस योजना के तहत परिवार के मुख्य आय अर्जक (पुरुष अथवा महिला) की मृत्यु होने पर (जबकि वह 18 वर्ष से अधिक तथा 65 वर्ष से कम आयु का है) निर्धन परिवार को 10,000 की एकमुश्त राशि (One Time Money) उत्तरजीवी लाभ (Survivor Benefit) के रूप में दी जाती है।

3. **राष्ट्रीय प्रसव लाभ योजना:** इसके अन्तर्गत निर्धन परिवारों की 19 वर्ष तथा उससे अधिक आयु की महिलाओं के लिए पहले दो बच्चों (First Two Childs) के जन्म पर प्रसव पूर्व (Before Delivery) और प्रसवोत्तर मातृत्व (After Delivery) देखभाल हेतु 500 की वित्तीय सहायता (Financial Help) दी जाती है।

4.31 सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (SGRY)

(i) इस योजना का शुभारम्भ प्रधानमंत्री द्वारा 25 सितम्बर, 2001 को किया गया। जिसके लिए रोजगार आश्वासन योजना (EAS) और जवाहर ग्राम समृद्धि योजना (JGSY) को एक में मिला दिया गया था।

(ii) रोजगार आश्वासन योजना के तहत जनवरी 2001 में प्रारम्भ किये गये काम के बदले अनाज कार्यक्रम को भी इस योजना में मिला दिया गया था। इस योजना को दिहाड़ी रोजगार (Employment on Daily Basis) प्रदान करने वाली योजना भी कहा जाता था। ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा संचालित की जाने वाली 10,000 करोड़ वार्षिक की केन्द्र द्वारा प्रायोजित इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अतिरिक्त एवं सुनिश्चित अवसर उपलब्ध कराने के साथ-साथ खाद्यान्न उपलब्ध कराना भी था।

(iii) योजना के संचालन में सालाना 7,500 करोड़ केन्द्र सरकार द्वारा खर्च करने तथा 2,500 करोड़ राज्य सरकारों द्वारा व्यय करने का प्रावधान था। योजना के अन्तर्गत टिकाऊ ग्रामीण परिसम्पत्तियों के निर्माण से सम्बन्धित परियोजनाओं के लिए त्रिस्तरीय पंचायतों के माध्यम से रोजगार के अवसर सृजित किए जाते हैं।

(iv) इस योजना के अन्तर्गत प्रतिवर्ष 10,000 करोड़ में से 5,000 करोड़ मूल्य का 50 लाख टन अनाज केन्द्र सरकार द्वारा राज्यों को उपलब्ध कराया जाता है। जिसकी कीमत का भुगतान आर्थिक लागत के आधार पर ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा किया जाता है। योजना में 100 करोड़ मानव दिवस रोजगार के सृजन का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

(v) इस योजना के अन्तर्गत लाभार्थियों (Beneficiaries) को न्यूनतम 5 किलो अनाज (Minimum 5 k.g. Grain) और कम-से-कम 25% मजदूरी नकद (Wages in Cash) दी जाती है। इस कार्यक्रम का खर्च (नकद भाग) केन्द्र तथा राज्यों में 75:25 अनुपात के आधार पर बाँटा (Divided) जाता है, जबकि खाद्यान्न घटक (Food Component) की सम्पूर्ण लागत केन्द्र सरकार वहन करती है।

(vi) यह कार्यक्रम जिला, प्रखण्ड एवं ग्राम पंचायत के माध्यम से कार्यान्वित (Execute) किया जाता है। जिला परिषद् और पंचायत समिति के संसाधनों के हिस्से का 22.5% अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजातियों के लिए लागू निजी लाभार्थी योजना पर खर्च किया जाना आवश्यक है।

(vii) इस योजना में कोई भी काम ठेकेदारों (Contractors) से कराने की अनुमति नहीं है। वर्ष 2004-05 से इस कार्यक्रम को एक समेकित योजना (Integrated Programme) के रूप में लागू किया जा रहा है। कार्यक्रम के लिए संसाधनों का आवंटन (Issue of Resources) पंचायती राज के तीनों स्तरों यानी जिला पंचायत, पंचायत समिति तथा ग्राम पंचायत द्वारा 20 : 30 : 50 के अनुपात (Ratio) में किया जाता है।

(viii) यद्यपि इस योजना के तहत रोजगार देने में गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन कर रहे परिवारों को वरीयता (Preference to Below Poverty Line) दी जाती है, लेकिन गरीबी रेखा से ऊपर के लोगों को भी रोजगार मुहैया कराया जा सकता है। वर्ष 2007-08 में 31 दिसम्बर, 2007 तक SGRY के तहत सृजित रोजगार (Generating Employment) के मानव दिवस की संख्या 11.60 करोड़ थी, जबकि 31 दिसम्बर 2007 तक नकदी और खाद्यान्न घटक (Cash and Food Component) के रूप में केन्द्र का अंशदान क्रमशः 1142.27 करोड़ और 9.55 लाख टन था।

(ix) वर्ष 2007-08 के बजट में इसके तहत 2800 करोड़ का प्रावधान किया गया था। 1 अप्रैल, 2008 से SGRY योजना को राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना (NREGA) में समन्वित कर दिया गया है।

4.32 शहरी बेरोजगारी एवं गरीबी निवारण कार्यक्रम

शहरी क्षेत्रों में विद्यमान बेरोजगारी को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है:

औद्योगिक श्रमिकों में बेरोजगारी (Unemployment in Industrial Workers)

शहरीकरण के विस्तार के साथ ग्रामीण क्षेत्रों के लोग शहरी क्षेत्रों में आते जा रहे हैं। जिस समय गाँवों में कृषि कार्य नहीं होता उस समय भारी संख्या में कृषि श्रमिक काम की तलाश में शहरों में आ जाते हैं। मुख्य बात यह है कि जिस दर से औद्योगिक श्रमिकों की संख्या में वृद्धि हुई है उस अनुपात में औद्योगिक इकाइयों की संख्या में वृद्धि नहीं हुई है।

शिक्षित वर्ग में बेरोजगारी (Unemployment in Literate workers)

शहरी बेरोजगारी का दूसरा रूप शिक्षित वर्ग में देखने को मिलता है। शिक्षा के प्रसार के साथ ही शिक्षित बेरोजगारी की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है।

कुछ महत्वपूर्ण शहरी रोजगार एवं विकास कार्यक्रमों का वर्णन निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है:

1. **लघु एवं मध्यम कस्बों के समन्वित विकास का कार्यक्रम (Scheme for Integrated Development of Small and Medium Towns-IDSMT):**

(i) ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों की ओर जनसंख्या का पलायन (Migration) रोकने, लघु एवं मध्यम कस्बों में रोजगार सुविधाओं का सृजन करने तथा इन कस्बों में अवस्थापना सम्बन्धी पर्याप्त सुविधाएँ उपलब्ध कराने के दृष्टिकोण से छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान केन्द्र प्रयोजित कार्यक्रम के रूप में यह कार्यक्रम (IDSMT) वर्ष 1979-80 में देश के समस्त राज्यों में प्रारम्भ किया गया। इस कार्यक्रम को आगामी पंचवर्षीय योजनाओं में भी जारी रखा गया।

(ii) वित्तीय वर्ष 2000-2001 के दौरान इस कार्यक्रम पर 60 करोड़ व्यय किए जाने थे। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत यातायात एवं परिवहन, बाजार एवं मण्डियों के विकास, पर्यटन सुविधाओं, पार्क तथा खेल के मैदान, बूचड़खानों (Slaughter Houses) का निर्माण, मार्गों में प्रकाश, पानी की निकासी हेतु नालियों का निर्माण आदि से सम्बन्धित कार्यों के लिए आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई जाती है। इसमें महिला लाभार्थियों की संख्या 30% तथा विकलांगों की संख्या 3% से कम नहीं होनी चाहिए।

(iii) यद्यपि, लाभार्थियों की कोई न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता नहीं होनी चाहिए। किन्तु स्वरोजगार घटक (USEP Component) के लिए यह योजना 9वीं कक्षा से अधिक शिक्षित लाभार्थियों पर लागू नहीं की जा सकती है। USEP योजना में 50,000 तक की योजना हेतु सहायता देने का प्रावधान है, जिसमें सरकार योजना लागत में 15% के बराबर Subsidy देती है, हालाँकि राजसहायता (Subsidy) की अधिकृत सीमा 7500 रखी गई है।

(iv) 2008-09 के दौरान शहरी स्वरोजगार कार्यक्रम के अंतर्गत लघु उद्यम लगाने वाले सहायता प्राप्तकों की संख्या 9.47 लाख थी, साथ ही 14.84 लाख शहरी निर्धनों को कौशल के विकास का प्रशिक्षण भी दिया गया।

(v) इस योजना के अन्तर्गत सम्मिलित किए जाने के लिए कस्बे की जनसंख्या की अधिकतम सीमा को 1991 की जनगणना के आधार पर 3 लाख से बढ़ाकर 5 लाख कर दिया गया है।

(vi) यह कार्यक्रम उन कस्बों में लागू नहीं किया गया है जो प्रधानमंत्री की समन्वित शहरी निर्धनता निवारण कार्यक्रम के अन्तर्गत आते हैं। अर्थात् वे कस्बे जिनकी जनसंख्या 50 हजार से 1 लाख के मध्य है तथा इस कार्यक्रम के लिए केन्द्रीय सहायता राशि की सीमा को 60% कर दिया गया है।

(vii) नौवीं योजना (1997-2002) के दौरान इस कार्यक्रम के तहत, 300 करोड़ व्यय करने का प्रावधान तथा 400 कस्बों को सम्मिलित करने का लक्ष्य था। वर्ष 2005-06 के लिए, 100 करोड़ व्यय करने का लक्ष्य रखा गया था। इसे बाद में संशोधित करके, 115 करोड़ कर दिया गया था। 31 दिसम्बर, 2005 तक 182 चालू परियोजनाओं वाले कस्बों को, 66.98 करोड़ की केन्द्रीय सहायता जारी की गई थी। IDSMT योजना को 3 दिसम्बर, 2005 को प्रारम्भ की गई जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय शहरीकरण मिशन (JNNURM) नामक योजना में समन्वित कर दिया गया है।

2. मेगा शहरों में आधारिक विकास का कार्यक्रम (Scheme of Infrastructural Development in Mega Cities):

(i) मेगा शहरों में आधारिक विकास का केन्द्र द्वारा प्रायोजित एक नया कार्यक्रम 1993-94 से प्रारम्भ किया गया है। इस कार्यक्रम को राज्य सरकारों की इस माँग के आधार पर प्रारम्भ किया गया है कि बड़े शहरों की समस्या अन्य स्थानों से व्यक्तियों के प्रवास के फलस्वरूप उत्पन्न हुई है।

(ii) शहरी विकास मंत्रालय द्वारा प्रशासित यह कार्यक्रम मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई, बंगलौर तथा हैदराबाद में लागू किया गया है।

(iii) इस कार्यक्रम पर 25% व्यय केन्द्र सरकार द्वारा, 25% सम्बन्धित राज्य सरकार द्वारा तथा शेष 50% संस्थागत वित्त अथवा पूँजी बाजार द्वारा पूरा किया जाता है।

(iv) वित्तीय संस्थाओं द्वारा जल आपूर्ति, सीवरेज, नालियाँ, शहरी यातायात, भूमि विकास, मलिन बस्तियों के सुधार आदि के लिए परियोजनाबद्ध वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई जाती है, किन्तु स्वास्थ्य, शिक्षा तथा विद्युत जैसे क्षेत्रों को वित्तीय सहायता उपलब्ध नहीं कराई जाती। 9वीं योजना के दौरान इस कार्यक्रम के तहत 1500 करोड़ आवंटित किए गए थे। इनमें से 424.50 करोड़ का वास्तविक आवंटन किया गया। 10वीं योजना के दौरान इस स्कीम के लिए 1050 करोड़ स्वीकृत किए गए थे।

यह योजना सरकार द्वारा 3 दिसम्बर, 2005 को घोषित जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरीकरण मिशन (JNNURM) में मिला दी गई है।

4.33 स्वर्ण जयन्ती शहरी रोजगार योजना
(Swaran Jayanti Shahari Rozgar Yojana – SJSRY)

(i) केन्द्र सरकार ने स्वतंत्रता के स्वर्ण जयन्ती वर्ष में शहरी क्षेत्रों में निर्धनता निवारण की एक नई योजना प्रारम्भ की है। स्वर्ण जयन्ती शहरी रोजगार योजना (SJSRY) नाम से प्रारम्भ की गई यह योजना 1 दिसम्बर, 1997 से लागू की गई है।

(ii) इसके साथ ही शहरी क्षेत्रों में पहले से कार्यान्वित की जा रही तीन योजनाओं-नेहरू रोजगार योजना (NRY), निर्धनों के लिए शहरी बुनियादी सेवाएँ (Urban Basic Services for the Poor – UBSP) तथा प्रधानमंत्री की समन्वित शहरी गरीबी उन्मूलन योजना (Prime Minister's Integrated Urban Poverty Eradication Programme – PMIUPEP) को इसी नई योजना में शामिल कर दिया गया है। इन योजनाओं के तहत चल रहे कार्यों को 30 नवम्बर, 1997 तक पूरा कर लेने का निर्देश सभी राज्यों को दे दिया गया था।

(iii) नई प्रारम्भ की गई स्वर्ण जयन्ती शहरी रोजगार योजना का उद्देश्य शहरी निर्धनों को स्वरोजगार उपक्रम स्थापित करने हेतु वित्तीय सहायता प्रदान करना तथा सवेतन रोजगार (Wage Employment) सृजन हेतु उत्पादक परिसम्पत्तियों का निर्माण करना है।

(iv) इस योजना के लिए धन की व्यवस्था केन्द्र और राज्यों के मध्य 75:25 के अनुपात में की गई है। इस योजना के लिए 2008-09 के दौरान, 515 करोड़ आवंटित थे और 31 मार्च 2009 तक लगभग, 540 करोड़ जारी किए जा चुके थे। इस योजना के अन्तर्गत दो प्रमुख कार्यक्रम हैं:

शहरी स्वरोजगार कार्यक्रम
(Urban Self Employment Programme – USEP)

शहरी मजदूरी रोजगार कार्यक्रम
(Urban Wage Employment Programme-UWEP)

शहरी गरीब लाभार्थियों को स्वरोजगार उद्यम लगाने के लिए सहायता देना

लाभार्थियों तथा शहरी रोजगार कार्यक्रम से संबंधित अन्य व्यक्तियों को व्यावसायिक (Vocational) और उद्यम मूलक कौशल (Entrepreneurial Skill) के उन्नयन के लिए प्रशिक्षण देना।

शहरी गरीब महिलाओं के समूह के लिए स्वरोजगार उद्यम लगाने के लिए सहायता प्रदान करना। इसे उपयोजना को शहरी क्षेत्रों में महिलाओं और बच्चों के विकास योजना (The scheme for development of women and children in urban areas-DWCUA) कहा जाता है।

शहरी स्वरोजगार कार्यक्रम का लक्षित वर्ग

इस कार्यक्रम में लक्षित वर्ग की परिभाषा समय-समय पर बदली गई है, क्योंकि यह कार्यक्रम शहरी गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले शहरी गरीबों पर केन्द्रित है। इस कार्यक्रम के तहत सरकार द्वारा समय-समय पर महिलाओं (Ladies), अनुसूचित जाति (Schedule Caste) एवं अनुसूचित जनजाति (Schedule Tribe) के व्यक्तियों, अपंग व्यक्तियों (Physically Handicapped People) पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

शहरी क्षेत्रों में महिलाओं और बच्चों का विकास (Development of Women & Children in Urban Areas-DWCUA)

(i) इस योजना में शहरी गरीब महिलाओं को विशेष सहायता प्रदान की जा रही है, जो व्यक्तिगत प्रयास की बजाय स्वरोजगार उद्यम लगाने का निर्णय लेती है।

(ii) समूह में कम-से-कम दस शहरी गरीब महिलाओं का होना आवश्यक है।

(iii) DWCUA Society, 1,25,000 अथवा परियोजना लागत का 50% इनमें से जो भी कम हो Subsidy प्राप्त करने की हकदार होती हैं।

(iv) आँकड़ों के अनुसार 5 जून, 2008 तक 70,584 समूह बन चुके थे और 2,70,352 महिलाओं को लाभ पहुँच चुका है।

4.34 शहरी मजदूर रोजगार कार्यक्रम *(Urban Wage Employment Programme – UWEP)*

(i) यह कार्यक्रम 1991 की जनगणना के अनुसार 5 लाख से कम आबादी वाले शहरी स्थानीय निकायों पर लागू किया गया है।

(ii) इस कार्यक्रम का सर्वेक्षण सामुदायिक विकास समितियाँ (Community Development Societies – CDS) करती हैं। यह समितियाँ अपने क्षेत्र में उपलब्ध बुनियादी न्यूनतम सुविधाओं की सूची तैयार करती है।

(iii) इस कार्यक्रम का उद्देश्य शहरी स्थानीय निकायों के अधिकार क्षेत्र में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लाभार्थियों को उनके श्रम हेतु आर्थिक रूप से उपयोग में आने वाले सार्वजनिक संपत्ति के निर्माण में मजदूरी रोजगार उपलब्ध कराना है।

4.35 प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम
(Prime Minister Employment Generation Programme-PMEGP)

(i) इस कार्यक्रम का सृजन केन्द्र सरकार ने 15 अगस्त 2008 को किया।

(ii) पूर्व में संचालित हो रहे दो रोजगार कार्यक्रमों- प्रधानमंत्री की रोजगार योजना (Prime Ministers Rojgar Yojna-PMRY) व ग्रामीण रोजगार सृजन कार्यक्रम (Rural Employment Generation Programme-REGP) का विलय इस कार्यक्रम में कर दिया गया है।

(iii) Subsidy युक्त क्रेडिट वाले इस कार्यक्रम के अंतर्गत ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में Micro Enterprises की स्थापना करके रोजगार के नये अवसर सृजित किये जायेंगे।

(iv) 2008-09 से 2011-12 के दौरान रोजगार के 37 लाख अतिरिक्त अवसर सृजित होने की संभावना इस कार्यक्रम के अंतर्गत व्यक्त की गई है।

(v) इसके अंतर्गत लघु उद्यम (Micro Enterprise) स्थापित करने के लिए लाभार्थियों को ऋण उपलब्ध कराया जायेगा। जिसका कुछ अंश राज सहायता (Subsidy) का होगा।

(vi) इसके लिए आयु सीमा का कोई बंधन नहीं है, किन्तु विनिर्माण क्षेत्र (Manufacturing Sector) में 10 लाख तक व सेवा/व्यापार के क्षेत्र में 5 लाख से अधिक की परियोजनाएं 8वीं कक्षा उत्तीर्ण लाभार्थी ही चला पायेंगे। सामान्य श्रेणी के लाभार्थियों को योजना लागत का 10% स्वयं वहन करना पड़ेगा जबकि विशेष वर्ग (SC, ST, अन्य पिछड़े वर्ग, अल्प संख्यक, महिलाएं, पूर्वोत्तर एवं सीमावर्ती क्षेत्र के कामगार), को 5% स्वयं वहन करना पड़ेगा।

(vii) इस योजना का कार्यान्वयन ग्रामीण क्षेत्रों में खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग (Khadi & Village Industries Commision-KVIC) द्वारा एवं शहरी क्षेत्रों में (District Industries Centre-DIC) द्वारा किया जायेगा। राष्ट्रीय स्तर पर योजना के कार्यान्वयन के लिए सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मन्त्रालय के अधीन वैधानिक निकाय 'खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग' एकमात्र नोडल एजेंसी निर्धारित की गई है।

4.36 सांसद स्थानीय क्षेत्र विकास योजना
(Members of Parliament Local Area Development Scheme-MPLADS)

23 दिसम्बर, 1993 को संसद में, संसद सदस्यों के चुनाव क्षेत्र की जनता के विकास के लिए स्थानीय क्षेत्र विकास योजना (Local Area Development Programme) घोषित की गई। विकास कार्यों को संचालित करने के लिए लागत नियम, कार्यों की प्राथमिकता तय करना और संसाधन आवंटन के बारे में कुछ प्रशासनिक दिशा निर्देश होते हैं। शुरूआत में इस योजना का संचालन ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा होता था। बाद में अक्टूबर 1994 से इसे कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय को सौंप दिया गया, जिसे अब सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय के नाम से जाना जाता है। इस योजना के अंतर्गत प्रत्येक संसद सदस्य अपने चुनाव क्षेत्र में प्रतिवर्ष 5 करोड़ की लागत तक के कार्य करवाने हेतु जिलाधीश (District Megistrate) को सुझाव दे सकता है।

योजना के अंतर्गत आने वाली कुछ प्रमुख बातें निम्नलिखित हैं:

(i) योजना का स्वरूप विकासोन्मुख होना चाहिए। जो स्थानीय जरूरतों पर आधारित हो और जिससे स्थायी परिसम्पत्ति बनाई जा सके।

(ii) योजना के दिशा-निर्देशों में दिए गए प्रावधानों के अनुरूप संसद सदस्य असाधारण प्राकृतिक आपदा की स्थिति में अपने चुनाव क्षेत्र राज्यों के बाहर के क्षेत्रों में भी 10 लाख तक का अनुदान योजना निधि में दे सकते हैं।

(iii) इस योजना के तहत आवंटित पूंजी का प्रयोग कार्यालय भवनों का निर्माण, किसी प्रकार की वस्तु खरीद, मरम्मत और रखरखाव तथा व्यक्तिगत परिसंपत्तियाँ आदि कार्यों के लिए इस निधि का प्रयोग नहीं किया जा सकता।

लोगों की विकास आवश्यकताओं को पूरा करने की दिशा में इस योजना का प्रभाव अच्छा रहा है। हालाँकि कुछ भ्रष्टाचार की शिकायतें भी आई हैं, लेकिन आम जनता के लाभ के लिए अनेक कार्य इस योजना के तहत कराये गये हैं, इनमें स्कूल, भवनों को निर्माण, पीने के पानी की व्यवस्था, पुलों, सड़कों, खेल स्टेडियम और बिजली की व्यवस्था से संबंधित कार्य शामिल हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि इस योजना के तहत जारी राशि रद्द नहीं होती।

4.37 जनश्री बीमा योजना

(i) इस योजना की शुरूआत अगस्त 2000 में हुई और इसमें 'सामाजिक सुरक्षा सामूहिक योजना' और 'ग्रामीण सामूहिक जीवन बीमा योजना' को समायोजित किया गया।

(ii) इस योजना के तहत प्रावधान है कि यदि बीमाधारी (जनश्री बीमा योजना) व्यक्ति की स्वभाविक मृत्यु हो जाए। तो उसके परिजनों को, 20,000 दुर्घटना के कारण मृत्यु हो जाए या स्थायी विकलांगता की स्थिति आ जाए तो, 50,000 तथा आर्थिक विकलांगता की स्थिति में, 25,000 देने का प्रावधान है।

(iii) योजना के अंतर्गत प्रति व्यक्ति प्रीमियम, 200 निर्धारित किया गया है, जिसका 50% भाग सामाजिक सुरक्षा कोष (Social Security Fund) से दिया जायेगा। शेष राशि को बीमाधारी या तो स्वयं देगा या नोडल एजेंसी देगी।

(iv) मार्च 2005 तक इस योजना के अंतर्गत लगभग 50 लाख लोगों का बीमा किया जा चुका है।

4.38 सर्वशिक्षा अभियान *(SSA)*

(i) देश के सभी 6 से 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों को 2010 तक 8वीं कक्षा तक ही संतोषजनक (Satisfactory) तथा निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध (Availability of Free of Cost Primary Education) कराने के लिए वर्ष 2000-01 में सर्वशिक्षा अभियान की घोषणा की गई थी।

(ii) योजना के अंतर्गत 6 से 11 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को 2007 तक 5वीं कक्षा तक की तथा 11 से 14 वर्ष तक के बच्चों को 8वीं कक्षा तक की उच्च प्राथमिक शिक्षा (Higher Primary Education) प्रदान करने हेतु केन्द्र सरकार द्वारा राज्य सरकारों के सहयोग से पूरा प्रयास किया जा रहा है।

(iii) इस अभियान (Project) पर किये गये व्यय को केन्द्र व राज्य सरकारों ने 85:15 के अनुपात में दसवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002) के दौरान वहन किया था, दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-07) में यह अनुपात 75:25 तथा ग्यारहवीं योजना (2007-12) तक यह 50:50 किया गया है।

(iv) सर्वशिक्षा अभियान को सुचारू रूप से चलाने के लिए प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में एक 'राष्ट्रीय सर्वशिक्षा अभियान मिशन' स्थापित किया गया है।

(v) वर्ष 2011-12 के बजट में सर्वशिक्षा अभियान के लिए 21,000 करोड़ प्रस्तावित किए गये हैं। शिक्षा गारंटी योजना (Education Guarantee Scheme) तथा वैकल्पिक एवं अनूठी शिक्षा (AIE) ऐसे बच्चों के लिए जो स्कूल नहीं जा रहे है; को बुनियादी शिक्षा कार्यक्रम (Fundamental Education Programme) के तहत लाने का सर्वशिक्षा अभियान का एक महत्वपूर्ण घटक (Important Component) है। इस योजना में स्कूली शिक्षा से अभी तक छूट गये प्रत्येक बच्चे (Drop-Out Children) के लिए अलग से योजना बनाने का प्रावधान भी है।

4.39 कस्तूरबा गाँधी शिक्षा योजना

जिन जिलों में विशेष रूप से महिला साक्षरता दर बहुत कम है, उन क्षेत्रों में बालिकाओं के लिए विशेष विद्यालयों की स्थापना हेतु प्रधानमंत्री द्वारा 15 अगस्त, 1997 को कस्तूरबा गाँधी शिक्षा योजना नामक एक कार्यक्रम प्रारम्भ करने हेतु 1997-98 के बजट में, 250 करोड़ का प्रावधान किया गया था। यह योजना स्वाधीनता की 50वीं वर्षगाँठ के अवसर पर प्रारम्भ की गई थी।

4.40 कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय योजना *(KGBVY)*

कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय स्कीम को जुलाई, 2004 में प्रमुखतः अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़े वर्गों और अल्पसंख्यक समुदायों से सम्बन्धित बालिकाओं के लिए उच्च प्राथमिक स्तर के आवासीय विद्यालयों की स्थापना करने हेतु आरम्भ किया गयाथा। कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय स्कीम दो वर्ष तक एक अलग स्कीम के रूप में चली, लेकिन इसे 1 अप्रैल, 2007 से सर्वशिक्षा अभियान के साथ मिला दिया गया। लगभग 2,180 KGBVY को भारत सरकार द्वारा मार्च 2007 तक स्वीकृति दी गई। इनमें से 270 कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय मुस्लिम बहुल ब्लाकों में, 583 अनुसूचित जनजाति वाले ब्लाकों में, 622 अनुसूचित जाति वाले ब्लाकों में स्वीकृत किए गए हैं। 31 अक्टूबर, 2007 की स्थिति के अनुसार, 1564 के.जी.बी.वी संचालित हैं (71-74 प्रतिशत) और 1,09,786 बालिकाएँ (26 प्रतिशत अनुसूचित जाति की बालिकाएँ, 33 प्रतिशत अनुसूचित की जनजाति बालिकाएँ, 26 प्रतिशत अ.पि.व. की बालिकाएँ, 11 प्रतिशत बीपीएल बालिकाएँ और 5 प्रतिशत अल्पसंख्यक बालिकाएँ) इनमें पंजीकृत की गई हैं।

4.41 उज्ज्वला योजना

महिलाओं की खरीद-फरोख्त की रोकथाम तथा व्यावसायिक यौन शोषण की शिकार महिलाओं के उद्धार, पुनर्वास तथा उन्हें फिर से समाज की मुख्यधारा में शामिल करने के लिए केन्द्र प्रयोजित व्यापक स्कीम उज्ज्वला का शुभारम्भ 4 दिसम्बर, 2007 को किया गया है। इस योजना में निम्नलिखित पाँच बातें शामिल हैं–

रोकथाम : इसके तहत सामुदायिक निगरानी समूहों/किशोर समूहों के गठन, जानकारी प्रदान करने, आई. ई. सी. सामग्री तैयार करने तथा कार्यशालाओं आदि के आयोजन का काम शामिल है।

बचाव : इसमें पीड़ित को शोषण स्थल से सुरक्षित रूप से मुक्त कराने का कार्य शामिल है।

पुनर्वास : इसमें पीड़ितों के लिए बुनियादी सुविधाओं सहित सुरक्षित आवास, चिकित्सा देखभाल, कानूनी सहायता एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने के साथ-साथ उनके लिए आय सृजन गतिविधियों का संचालन शामिल है।

समाज की मुख्यधारा में लाना : इसके तहत पीड़ित महिलाओं को उनके परिवार/समाज में मान-मर्यादा के साथ उचित स्थान दिलाने का कार्य शामिल किया गया है।

स्वदेश भेजना : इसके अंतर्गत सीमा-पार की पीड़ित महिलाओं को उनके अपने देश में सुरक्षित वापस भेजने में सहायता करना शामिल है।

इस योजना को कार्यान्वित करने वाले अभिकरणों में राज्य सरकारों के समाज कल्याण/महिला एवं बाल विकास विभाग, महिला विकास निगम तथा केन्द्र, ख्याति प्राप्त ट्रस्ट अथवा स्वैच्छिक संगठन को कार्यान्वित करने वाले अभिकरण शामिल हैं।

4.42 राष्ट्रीय बालश्रम उन्मूलन परियोजना

(i) बालश्रम उन्मूलन पर राष्ट्रीय प्राधिकरण (National Authority on Elimination of Child Labour - NAECL) ने फरवरी 2004 को नई दिल्ली में राष्ट्रीय बालश्रम उन्मूलन परियोजना का शुभारम्भ (Inauguration) किया।

(ii) इस कार्यक्रम के माध्यम से बालश्रमिकों को उनके अवांछित कार्य (Undesirable Work) से हटाकर स्कूलों की ओर उन्मुक्त (Free) किया जा सकने का उद्देश्य (Aim) रखा गया है। इसके लिए लगभग 10,000 विद्यालयों की स्थापना देश भर में राष्ट्रीय बालश्रम परियोजना (National Child Labour Programme) के तहत की जायेगी। जिसमें 5 से 14 आयु वर्ग के 6 लाख बच्चों को प्रतिवर्ष शिक्षा दी जायेगी।

(iii) वर्तमान में 250 जिलों में 5,000 विशेष ब्रिज स्कूल (Special Bridge School) कार्यरत हैं। 9 से 14 आयु वर्ग के बालश्रमिकों को ही इन ब्रिज स्कूलों में पंजीकृत किया जायेगा। जबकि 5 से 9 वर्ष आयु वर्ग के बालश्रमिक (Child Labour) को सर्वशिक्षा अभियान के विद्यालयों के माध्यम से औपचारिक शिक्षा प्रदान की जायेगी।

(iv) इन विद्यालयों के संचालन कार्य में गैर-सरकारी संगठनों (Non-governmental Organizations – NGO's) को भी शामिल किया जायेगा। जिन्हें श्रम मंत्रालय से अनुदान भी प्रदान किया जायेगा।

4.43 महिला स्वयंसिद्ध योजना

(i) 2001 में जिसे महिला सशक्तीकरण वर्ष के रूप में मनाया गया, में इस योजना की घोषणा केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री द्वारा केन्द्रीय परामर्श समिति की बैठक में की गई।

(ii) महिला स्वयंसिद्ध योजना को पूर्व से संचालित 'इन्दिरा महिला योजना' और 'महिला संवृद्धि योजना' के स्थान पर संचालित किये जाने का निर्णय लिया गया है।

(iii) इस नई योजना को महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों (Self Help Groups) के गठन के माध्यम से संचालित किया जाना है। जिसका प्रमुख उद्देश्य महिलाओं का सामाजिक-आर्थिक सशक्तीकरण (Socio-economic Empowerment) करना है।

(iv) प्रथम चरण में देश के 650 विकास खण्डों में इसे 116 करोड़ व्यय करते हुए संचालित करने का निर्णय लिया गया है। जिसके अंतर्गत लगभग 9.50 लाख महिलाओं को लाभांवित करने की योजना है।

4.44 ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुविधाओं के प्रावधान की योजना *(Providing Urban Facilities in Rural Areas - PURA)*

(i) तत्कालीन राष्ट्रपति ए.पी.जे अब्दुल कलाम की ग्रामीण शहरी अंतर को दूर करने, एक संतुलित सामाजिक-आर्थिक विकास प्राप्त करने संबंधी संकल्पना हेतु प्रधानमंत्री ने 15 अगस्त, 2003 को ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुविधाओं के प्रावधान संबंधी योजना की घोषणा की थी।

(ii) इस योजना के अंतर्गत उन ग्रामीण इलाकों को लक्षित किया गया है, जो शहरों के इर्द-गिर्द 1 लाख या कम आबादी वाले ग्रामीण इलाके हैं।

(iii) इससे उन इलाकों को शहरों से जोड़कर उनकी विकास क्षमता (Connectivity) बढ़ाई जा सकेगी।

(iv) इस कार्यकलाप और सहायता संबंधी निम्न चार सम्पर्क क्षेत्रों का चयन किया गया है–

- सड़क परिवहन, और विद्युत सम्पर्कता (Transport & Electric Connectivity)
- विश्वसनीय दूरसंचार, इंटरनेट तथा सूचना प्रौद्योगिकी सेवाओं के रूप में इलेक्ट्रोनिक सम्पर्कता (Electronic Connectivity)
- बेहतर शैक्षणिक तथा प्रशिक्षण संस्थाओं के माध्यम से ज्ञान उपलब्ध कराना (Knowledge Connectivity)
- बाजार सम्पर्कता (Market Connectivity) जिससे किसान अपने उत्पादों के लिए अधिकतम मूल्य प्राप्त कर सकेंगे

उपरोक्त सुविधाओं के कार्यान्वयन हेतु एजेंसियों द्वारा केन्द्र तथा राज्य सरकारों के संसाधनों का पूर्ण उपयोग किये जाने की आशा है।

(v) यदि किसी योजना के अंतर्गत वित्त पोषण नहीं किया जा सकता हो अथवा वर्तमान योजनाओं के अंतर्गत उपलब्ध निधियां उक्त प्रयोजन के लिए अपर्याप्त हो तो ऐसे अंतरों का ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुविधाओं के प्रावधान (PURA) के माध्यम से वित्त की उपलब्धि की जायेगी।

(vi) ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार इस योजना के लिए नोडल एजेंसी है क्योंकि इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में सुविधाएँ प्रदान करना है।

4.45 कृषि मजदूर सामाजिक सुरक्षा योजना

(i) 2001 से शुरू हुई इस योजना में जीवन बीमा सुरक्षा, सावधिक एक मुश्त जीवन लाभ तथा कृषि मजदूरों को पेंशन का लाभ दिया जाता है।

(ii) इस योजना में 18 से 50 वर्ष तक के लोग शामिल हो सकते हैं, लेकिन शुरूआत के समय समूह की न्यूनतम सदस्य संख्या 20 होनी चाहिए।

(iii) इस योजना के तहत 60 वर्ष से पहले मृत्यु (स्वभाविक) होने पर, 20 हजार दिये जाते हैं, दुर्घटना के कारण मृत्यु होने पर या स्थायी विकलांगता होने पर, 50 हजार तथा आंशिक विकलांगता की स्थिति में, 25 हजार देने का प्रावधान है। इसके अतिरिक्त योजना में शामिल होने के प्रत्येक दस वर्ष पूरे होने पर सदस्य को एकमुश्त उत्तर जीविका लाभ का भुगतान किया जाता है तथा 60 साल की उम्र के बाद सदस्यों को पेंशन देने का भी प्रावधान है।

(iv) इसके सदस्यों को प्रति वर्ष, 365 प्रीमियम का भुगतान करना होता है और सरकार इससे दोगुनी राशि का भुगतान करती है।

(v) पहले चरण में यह योजना देश भर में चुने हुए 50 जिलों में चलायी जा रही है और 2005 तक इसमें 36,810 कृषि मजदूर शामिल हो चुके हैं।

4.46 राजीव गाँधी श्रमिक कल्याण योजना

(i) कर्मचारी राज्य बीमा योजना (Employees State Insurance Scheme – ESIS) के अंतर्गत बीमित 80 लाख कर्मचारियों व उनके परिवारों की सामाजिक सुरक्षा के लिए इस योजना की शुरूआत 2005 में की गई।

(ii) राजीव गाँधी श्रमिक कल्याण योजना के दायरे में आने वाले कर्मचारियों को नौकरी चले जाने, फैक्ट्री बन्द होने या स्थायी विकलांगता की स्थिति के कारण बेरोजगार होने की स्थिति में 6 महीने तक का बेरोजगारी भत्ता प्राप्त हो सकेगा, जो उनके

वेतन का 50% होगा।

(iii) इस योजना का लाभ कर्मचारी राज्य बीमा योजना के तहत बीमित ऐसे कर्मचारियों को मिल सकेगा, जो इस योजना के अंतर्गत कम से कम पाँच वर्षों तक अंशदान करते रहे हों।

(iv) कर्मचारी राज्य बीमा योजना के तहत कर्मचारी राज्य बीमा डिस्पेंसरी व अस्पतालों से प्राप्त होने वाली चिकित्सा सुविधाओं का दायरा बढ़ाकर इसमें बीमित व्यक्तियों के तीन करोड़ परिजनों को शामिल करने की भी योजना है।

4.47 भारत निर्माण योजना

(i) केन्द्र सरकार ने 16 दिसम्बर 2005 को गाँव में आधारभूत सुविधाओं के विकास के लिए इस कार्यक्रम की शुरूआत नई दिल्ली में की।

(ii) 1,74,000 करोड़ की महत्वाकांक्षी परियोजना के अंतर्गत देश के ग्रामीण अवसंरचना के निर्धारित 6 प्रमुख क्षेत्रों में तय किये गये लक्ष्यों को चार वर्षों में प्राप्त करने का लक्ष्य रखा गया। छः प्रमुख क्षेत्र निम्नलिखित हैं:

- सिंचाई (Irrigation): 2009 तक 10 करोड़ हेक्टेयर अतिरिक्त जमीन की सिंचाई की व्यवस्था करना।
- आवास (Shelter): 60 लाख अतिरिक्त आवासों का निर्माण करना।
- सड़क (Roads): 500 की आबादी वाले सभी जनजातियों और पहाड़ी गाँवों तथा 1000 तक की आबादी वाले सभी गाँवों को प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना- PMGSY के अंतर्गत जोड़ना।
- जलापूर्ति (Water Supply): सभी 74,000 बचे हुए गाँवों को पीने का पानी उपलब्ध कराना।
- दूरसंचार (Tele Communication): बचे हुए लगभग 67,000 गाँवों में टेलीफोन सुविधाएं उपलब्ध कराना।
- विद्युतीकरण (Electrification): बचे हुए सभी 1,25,000 गाँवों में बिजली पहुंचाना तथा 2.3 करोड़ घरों को बिजली कनेक्शन की सुविधा राजीव गाँधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना (RGGVY) के तहत प्रदान करना।

ऐसा माना जाता है कि यू.पी.ए. सरकार की यह महत्वाकांक्षी परियोजना है इसलिए इस कार्यक्रम के लिए विशाल बजटीय राशि देने का निर्णय लिया गया है। विश्व बैंक ने भी भारत के ग्रामीण अवसंरचना के विकास के लिए तीन वर्षों में एक-एक अरब डॉलर प्रति वर्ष के हिसाब से 3 अरब डॉलर की सहायता की पेशकश की है। यह सहायता भारत के लिए अगले तीन वर्ष में प्रस्तावित कुल 9 अरब डॉलर के ऋण का हिस्सा होगी।

4.48 राजीव गाँधी एल.पी.जी योजना

(i) ग्रामवासियों को रसोई गैस उपलब्ध कराने के लिए राजीव गाँधी एल.पी.जी योजना का शुभारम्भ 14 मार्च, 2010 को किया गया है। इसके अंतर्गत देश के 8 राज्यों में एक हजार से अधिक गाँव में गैस एजेन्सियाँ स्थापित की जाएँगी।

(ii) इस योजना के अंतर्गत प्रावधान यह है कि गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों को कम कीमत पर रसोई गैस का कनैक्शन दिया जाये। जिसका खर्च पैट्रोलियम कंपनियाँ कॉरपोरेट सामाजिक दायित्व योजना के तहत उठायेंगी।

4.49 इन्दिरा गाँधी मातृत्व सहयोग योजना

(i) अक्टूबर 2010 को केन्द्रीय मंत्रिमण्डल द्वारा शुरू की गई इस योजना का लक्ष्य देश के पिछड़े इलाकों में जच्चा-बच्चा की सही देखभाल के लिए 1,000 करोड़ की स्वीकृति प्रदान की गई।

(ii) पहले चरण में इस योजना हेतु 52 जिलों का चयन किया गया, जिनमें लगभग 14 लाख गर्भवती और छोटे बच्चों वाली माताओं को योजना का लाभ देने का लक्ष्य रखा गया।

4.50 स्वयं सहायता समूह *(Self Help Group Bank Linkage Programme)*

(i) 1993 में प्रारम्भ की गई यह योजना देश में सूक्ष्म वित्तीय कार्यक्रमों (Micro Finance Programme) में एक वृहद कार्यक्रम के रूप में उभरता जा रहा है। इसके जरिये औपचारिक बैंकिंग प्रणाली छोटे उद्यमियों जिनमें किसान भी शामिल हैं, तक पहुँचती है।

(ii) इस कार्यक्रम का लक्ष्य ऐसे ग्रामीण गरीबों को लक्षित करना है, जिनकी औपचारिक बैंकिंग प्रणाली तक कोई स्थायी पहुँच नहीं होती है।

(iii) कार्यक्रम के लक्षित समूहों, लघु व सीमांत किसान, कृषि एवं गैर-कृषि श्रमिक, छोटे-छोटे व्यवसायों (ठेले वाले, रिक्शा चालक आदि) से जुड़े ग्रामीण गरीबों को शामिल किया जाता है।

(iv) अभी तक लगभग 500 बैंक इस कार्यक्रम में सक्रिय रूप से भाग ले रहे है। 2008-09 के दौरान 6.43 लाख (Self Help Group – SHG) को ₹ 6,472 करोड़ के बैंक ऋण दिए गए।

- बैंकों को समय पर ऋणों की अदायगी
- गरीबों और बैंकों दोनों की लेनदेन लागतों में कमी
- गरीबों को उनकी दहलीज पर बचत और ऋण की सुविधा देना
- ग्रामीण क्षेत्रों की अब तक अछूती रही व्यवसाय क्षमता का दोहन करना

4.51 जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन

(i) इस योजना के लिए 7 वर्षों (2005-06 से 2011-12) का उद्देश्य रखा गया है, जिसके दो प्रमुख घटक है:

- शहरी निर्धनों को बुनियादी सेवाएँ कार्यक्रम (Basic Services for Urban Poor – BSUP) देश के चुनिंदा 63 शहरों में शहरी निर्धनों के लिए आवास और आधारभूत ढाँचे की सुविधाएँ शुरू करने में सहायता प्रदान करने के लिए इस योजना को शुरू किया गया।
- समेकित आवास एवं गंदी बस्ती कार्यक्रम (Integrated Housing and Slum Development Programme – IHSDP) IHSDP जो BSUP के साथ-साथ ही शुरू किया गया था, पर BSUP शहरों में गंदी बस्ती उन्मूलन कार्यक्रम का आयोजन करता है।

4.52 प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना *(PMGY)*

आर्थिक सुधारों का लाभ समाज के हर तबके तक पहुँचे, इसे सुनिश्चित करने के लिए सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक तथा आर्थिक आधारभूत ढाँचे के पाँच घटकों की पहचान की है:

- स्वास्थ्य (Health)
- शिक्षा (Education)
- पेयजल (Drinking Water)
- आवास (Shelter)
- सड़कें (Roads)
- विद्युत (Electricity)

उपरोक्त क्षेत्रों में किये जा रहे प्रयासों में गंभीरता लाने के लिए प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना की शुरूआत 2000-01 के दौरान सभी राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों में की गई। 2002-03 से योजना आयोग (Planning Commission) इस कार्यक्रम का सीधे प्रबंधन कर रहा है। इस योजना के अंतर्गत निम्नलिखित कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये हैं–

(i) प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (PMGSY)

योजना का प्रारम्भ 25 दिसम्बर 2000 से किया गया, जिसके कुछ प्रमुख लक्ष्य निम्न हैं:

- योजना पर ₹ 60,000 करोड़ खर्च होने का अनुमान।

- योजना के पहले चरण में 1,000 से अधिक आबादी वाले गाँव को अच्छी बारहमासी सड़कों (Good All Weather Roads) से जोड़ने की योजना।
- दूसरे चरण में 500 से अधिक आबादी वाले गाँव को अच्छी बारहमासी सड़कों से जोड़ने की योजना।
- पहाड़ी राज्य तथा रेगिस्तानी एवं जनजातीय क्षेत्रों में 250 या इससे अधिक आबादी वाले गाँव को सड़कों से जोड़ना।

(ii) ग्रामीण आवास

2009-10 के बजट में वाणिज्यिक बैंकों द्वारा प्राथमिकता क्षेत्र को अधिक ऋण उपलब्ध कराने के लिए राष्ट्रीय आवास बैंक (National Housing Bank) को 2,000 करोड़ की राशि आवंटित की गई है। इस कार्य योजना के प्रमुख कार्यक्रम निम्नलिखित हैं–

- समग्र आवास योजना
- प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना अर्थात् ग्रामीण आवास कार्यक्रम
- ग्रामीण आवास के लिए Credit-Cum-Subsidy योजना
- इन्दिरा आवास योजना के अन्तर्गत नए आवास निर्माणों के साथ-साथ कच्चे मकानों का उन्नयन

(iii) इन्दिरा आवास योजना (IAY)

- कुल निर्मित मकानों का 3% भाग ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले गरीबी की रेखा के नीचे के अपंग एवं मानसिक रूप से पीड़ित व्यक्तियों के लिए आरक्षित किया गया है। इस योजना की कम से कम 60% धनराशि का उपयोग अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के लोगों के लिए करना होता है।
- इस योजना के अंतर्गत मकान का आवंटन लाभार्थी परिवार की महिला सदस्य के नाम अथवा पति-पत्नी के संयुक्त नाम पर किया जाता है।
- ग्राम सभा को इस योजना के अन्तर्गत लाभार्थियों का चयन करने का अधिकार प्राप्त है।
- स्वच्छ शौचालय और धुआँरहित चूल्हा इस योजना का अभिन्न अंग है।
- यह योजना केन्द्र और राज्यों के बीच 75:25 के लागत बँटवारे के आधार पर वित्त पोषित की जा रही है।
- वर्ष 2011-12 के बजट में इन्दिरा आवास योजना के लिए 10,000 करोड़ रुपए आवंटित किए गए हैं।

(iv) प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना तथा ग्रामीण आवास कार्यक्रम

- इस योजना का मुख्य उद्देश्य राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों को अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता आवंटित करना है। ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण आवास की मौलिक आवश्यक सेवा में सुधार किया जा सके।
- इस योजना को इन्दिरा आवास योजना के तर्ज पर ही कार्यान्वित किया जा रहा है।

(v) समग्र आवास योजना

आवास स्वच्छता एवं जलापूर्ति के लिए इस योजना का कार्यान्वयन 1999-2000 में 24 राज्यों के 25 जिलों में एक-एक विकास खण्ड में एवं एक केन्द्रशासित प्रदेश के एक विकास खण्ड में लागू किया गया है।

(vi) प्रधानमंत्री आदर्श ग्राम योजना (PMAGY)

इस योजना की घोषणा 2009-10 के वित्त वर्ष में की गई। इसमें देश के ऐसे 44 हजार गाँव, जहाँ की 50% जनसंख्या अनुसूचित जनजाति की है, को एकीकृत विकास के लिए प्रायोगिक आधार पर 2009-10 के दौरान 100 करोड़ के आवंटन से 1,000 गाँव में प्रारम्भ की जानी है।

4.53 स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना *(SGSY)*/ राष्ट्रीय ग्रामीण जीविका मिशन *(NRLM)*

(i) स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना जिसे अब एक व्यापक कार्यक्रम के रूप में राष्ट्रीय ग्रामीण जीविका मिशन के नाम से पुनर्गठित किया जा रहा है, ग्रामीण गरीबों के लिए स्वरोजगार की एक अकेली योजना है, जिसे 1 अप्रैल 1999 को प्रारंभ किया गया।

(ii) इस योजना में पूर्व से चल रही 6 योजनाओं को समाहित कर लिया गया है, जो निम्न हैं:

समन्वित ग्राम विकास कार्यक्रम (IRDP)	स्वरोजगार के लिए ग्रामीण युवाओं का प्रशिक्षण कार्यक्रम (TRYSEM)	ग्रामीण क्षेत्र में महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम (DWCRA)	ग्रामीण दस्तकारों को उन्नत औजारों की किट की आपूर्ति का कार्यक्रम (SITRA)	गंगा कल्याण योजना (GKY)	दस लाख कुआँ योजना (MWS)

ऊपर लिखे गये कार्यक्रम अब अलग से नहीं चलाये जा रहे। इस योजना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में काफी मात्रा में सूक्ष्म उद्योगों की स्थापना करना है। इस योजना में सहायता प्राप्त व्यक्ति को **'स्वरोजगारी'** कहा जाता है, लाभार्थी नहीं।

- योजना का उद्देश्य सहायता प्राप्त कर रहे प्रत्येक परिवार को एक निश्चित समयावधि (तीन वर्ष) में गरीबी रेखा से ऊपर उठाना है। कम-से-कम 50% अनुसूचित जाति/जनजाति, 40% महिलाओं तथा 3% विकलांगों को योजना का लक्ष्य बनाया गया है।
- योजना में दी जाने वाली धनराशि केन्द्र और राज्य सरकारों में 75:25 के अनुपात में विभाजित होगी।
- इस योजना के दो प्रमुख घटक हैं :

Activity Clusters

प्रत्येक विकास खण्ड पर चार या पाँच मुख्य ऐसी गतिविधियों का चयन पंचायत समितियों द्वारा करने का प्रावधान है जो स्थानीय संसाधनों, शिल्प और विपणन उपलब्धता के अनुरूप हों, ताकि स्वरोजगारी अपने विनियोग से लाभकारी आय प्राप्त कर सकें। ऐसी मुख्य गतिविधियाँ एक 'Cluster' रूप में समन्वित की जाएँगी, ताकि पूर्वगामी एवं अग्रिम क्रियाओं के बीच एक उचित समन्वय किया जा सके।

Group Approach

'Group Approach' का संबंध गरीबों को संगठित करके स्वयं सहायता समूह (Self-help Group) का निर्माण करना है। एक स्व-सहायता समूह में गरीबी की रेखा से नीचे के परिवारों से संबंधित 10-20 व्यक्ति हो सकते हैं तथा एक व्यक्ति एक से अधिक समूह का सदस्य नहीं होना चाहिए। लघु सिंचाई योजनाओं, दुर्गम क्षेत्रों (पहाड़ी इलाकों तथा रेगिस्तानी क्षेत्रों) में तथा विकलांग व्यक्तियों के मामले में यह संख्या 5 से 20 तक हो सकती है। इस स्वयं सहायता समूह में महिलाओं को वरीयता प्रदान की गई है।

- यह योजना एक ऋण या Subsidy योजना है। Subsidy योजना लागत के 30% के दर पर होगी। किंतु इसकी अधिकतम सीमा ₹ 7500 तय है। अनुसूचित जाति या जनजाति के लिए यह सीमा 50% या ₹ 10,000 होगी।
- स्वयं सहायता समूहों (Self Help Group) के लिए यह सीमा परियोजना लागत के 50% है, लेकिन इसकी अधिकतम सीमा ₹ 1.5 लाख निश्चित की गई है।
- सिंचाई परियोजनाओं के लिए Subsidy की कोई सीमा नहीं रखी गई है।
- इस योजना के अंतर्गत दी गई सहायता से कम-से-कम तीसरे वर्ष में स्वरोजगारी को ₹ 2,000 प्रति माह से कम की आमदनी नहीं होनी चाहिए।
- राष्ट्रीय ग्रामीण जीविका मिशन के नाम से पुनर्गठित इस योजना का उद्देश्य समयबद्ध वर्ष 2014-15 तक निर्धनता का निवारण

करना है, जिसके तहत महिला स्वयं सहायता समूह के निर्माण पर बल दिया जायेगा। इसमें पर्याप्त पूंजी सहायता (Capital Subsidy) के साथ-साथ बैंक से 1 लाखतक ऋण लेने वाले परिवारों को ब्याज Subsidy भी उपलब्ध करवाई जायेगी।

- महिला स्वयं सहायता समूहों ने ग्रामीण क्षेत्रों में काफी अच्छा काम किया है। अभी तक 22 लाख समूहों का लिंक बैंकों से हो सका है। सरकार की मंशा है कि आने वाले 5 वर्षों के दौरान ग्रामीण क्षेत्र की 50% महिलाओं को इन स्वयं सहायता समूहों के अंतर्गत लाया जाये तथा इन्हें बैंकों से जोड़ा जाए।
- गरीब महिलाओं को सूक्ष्मवित्त (Micro Finance) की सुविधा उपलब्ध कराने के लिए राष्ट्रीय महिला कोष प्रभावशाली ढंग से कार्य कर रहा है।
- मार्च 2010 तक इस योजना के तहत लगभग 37 लाख स्वरोजगार समूह (SHG) गठित किए जा चुके हैं तथा वर्ष 2011-12 के बजट में इस योजना के तहत 2914 करोड़ का प्रावधान किया गया है।

4.54 जवाहर ग्राम समृद्धि योजना

(i) 1 अप्रैल 1999 से पूर्व में चल रही जवाहर रोजगार योजना को पुनर्गठित कर एक नई योजना जवाहर ग्राम समृद्धि योजना शुरू की गई। सितम्बर 2001 में जवाहर ग्राम समृद्धि योजना को संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना में मिला दिया गया है।

(ii) जवाहर ग्राम समृद्धि योजना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार व्यक्तियों के लिए लाभकारी रोजगार अवसरों का सृजन करना है तथा इसका गौण उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार गरीबों को मजदूरी आधारित रोजगार अवसर उपलब्ध कराना है।

(iii) सामान्यतः यह योजना ग्राम पंचायतों द्वारा लागू की गई है तथा इस योजना में खर्च की जाने वाली राशि 75:25 के अनुपात में केन्द्र एवं राज्य सरकार वहन करती है। इस योजना के अंतर्गत मजदूरी राज्य सरकार निर्धारित करती है तथा ग्राम पंचायतों की जनसंख्या के आधार पर धनराशि का आवंटन बिना की सीमा के तय किया जाता है।

(iv) इस योजना की 22.5% धनराशि अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति की अलग लाभार्थी योजनाओं के लिए निर्धारित की गई है तथा वार्षिक आवंटन का 3% शारीरिक रूप से विकलांग लोगों के लिए अवसंरचनात्मक विकास पर खर्च करने का प्रावधान भी किया गया है।

(v) ग्राम पंचायतों को ग्राम सभा की मंजूरी के बाद 50,000 तक के योजनाओं को कार्यान्वित करने का अधिकार है।

4.55 अंत्योदय अन्न योजना

(i) 25 दिसंबर 2002 को शुरू की गई इस योजना से देश के 1 करोड़ सबसे गरीब परिवारों को प्रतिमाह 35 किलोग्राम अनाज विशेष रियायती मूल्य पर उपलब्ध कराया जाता है। इस योजना के तहत जारी किये जाने वाले गेहूँ व चावल का केन्द्रीय निर्गम मूल्य क्रमशः 2/कि०ग्रा० तथा 3/कि०ग्रा० है।

(ii) यह योजना केन्द्रीय उपभोक्ता मामले, खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण मंत्रालय के तहत प्रारंभ की गई है, जिसके अंतर्गत लगभग 5 करोड़ लोग (1 करोड़ परिवार) लाभान्वित होते हैं।

(iii) गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले 50 लाख अतिरिक्त परिवारों को इस योजना में शामिल करने के लिए सरकार ने अंत्योदय अन्न योजना का विस्तार किया है। जिसमें निम्नलिखित प्राथमिकता समूहों से परिवारों को शामिल किया गया है -

- ऐसे परिवार जिनका प्रमुख विधवा या मरणासन्न बीमार व्यक्ति या विकलांग व्यक्ति या 60 वर्ष या उससे अधिक आयु का ऐसा व्यक्ति हो, जिसके पास आजीविका का सुनिश्चित साधन अथवा सामाजिक सहारा न हो।
- विधवाएँ या मरणासन्न व्यक्ति या विकलांग व्यक्ति या 60 वर्ष या अधिक आयु का व्यक्ति अथवा ऐसी अकेली महिला या अकेला पुरुष, जिसका कोई पारिवारिक या सामाजिक सहारा न हो।
- सभी मूल जनजातीय परिवार (विस्तारित अंत्योदय अन्न योजना के अन्तर्गत जनजातीय लाभार्थियों को राज्य/केन्द्रशासित प्रदेश में जनजातीय आबादी के अनुपात में होना चाहिए)

4.56 रोजगार आश्वासन कार्यक्रम *(EAS)*

(i) 2 अक्टूबर, 1993 से शुरू की गई रोजगार आश्वासन योजना ग्रामीण क्षेत्रों के 257 जिलों के 1778 विकास प्रखण्डों में प्रारम्भ की गई है तथा बाद में इस योजना को देश के बाकी पंचायत समितियों में भी लागू किया गया और अंततः 1997-98 में इसे सार्वभौमिक कर देश की सभी 5448 ग्रामीण पंचायत समितियों को इसमें शामिल किया गया।

(ii) अब यह योजना विकास प्रखण्ड स्तर पर चलाये जाने वाले पर मजदूरी रोजगार कार्यक्रम जिसमें मजदूरों की पलायन से ग्रस्त इलाकों पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

(iii) योजना के अंतर्गत महत्वपूर्ण बिन्दु:

- इस योजना का मुख्य उद्देश्य गरीबी रेखा से नीचे (Below Poverty Line) रह रहे जरूरतमन्द प्रत्येक परिवार से अधिकतम दो युवाओं को 100 दिन तक का लाभप्रद रोजगार उपलब्ध कराना है। योजना का दूसरा गौण लक्ष्य पर्याप्त रोजगार तथा विकास के लिए आर्थिक आधार संरचना तथा सामुदायिक परिसम्पत्तियों का सृजन करना है।
- इस योजना का व्यय 75:25 के अनुपात में केन्द्र तथा राज्य सरकारों द्वारा वहन किया जाता है।
- योजना में मजदूरी-सामग्री के 60:40 अनुपात को बनाए रखना है।
- चूँकि EAS एक माँग चालित कार्यक्रम (Demand Driven Programme) है, अतः इसके अन्तर्गत भौतिक लक्ष्य (Physical Aim) निर्धारित नहीं किए गए हैं। केन्द्र सरकार द्वारा वर्ष 2000-01 में इस योजना के तहत 1300 करोड़ के व्यय को आवंटित किया गया। वर्ष 2001-02 के बजट में इसके लिए 1600 करोड़ का प्रावधान किया गया है।

4.57 अन्नपूर्णा योजना

(i) 2000 में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले वृद्ध जनों की सहायता के लिए शुरू की गई अन्नपूर्णा योजना का विलय नई संशोधित राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना में करने का सरकार की योजना है।

(ii) 15 अगस्त 1995 से शुरू की गयी राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम (National Social Assistance Programme – NSAP) के एक घटक (Component) के रूप में कार्यान्वित राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना के तहत गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन कर जी रहे 65 वर्ग से अधिक उम्र के वृद्ध बेसहारा लोगों को पेंशन (मासिक) उपलब्ध कराया जाता है।

(iii) सितम्बर 2007 से सरकार ने इस योजना का विस्तार कर 65 वर्ष से अधिक उम्र के सभी वृद्धजनों को इसमें समाहित किया है और दी जाने वाली पेंशन राशि में भी वृद्धि की है। इसी कारण अन्नपूर्णा योजना को अब समाप्त करने की योजना है तथा इसके अंतर्गत गरीबी रेखा के नीचे के परिवारों के 65 वर्ष से अधिक उम्र के बेसहारा लोगों को प्रत्येक माह 10 कि०ग्रा० अनाज उपलब्ध कराया जाता है।

ध्यातव्य है कि ऐसी किसी योजना को बंद करने के लिए सरकार को सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) की अनुमति (Permission) लेनी होगी क्योंकि इसे बन्द करने से पूर्व सर्वोच्च न्यायालय को सूचित करना होता है।

4.58 प्रधानमंत्री रोजगार योजना *(Prime Ministers' Rojgar Yojana – PMRY)*

(i) 2 अक्टूबर 1993 से प्रारम्भ की गई प्रधानमंत्री की रोजगार योजना शिक्षित बेरोजगारों को केन्द्र में रखकर शुरू की गई तथा 8वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान उद्योग सेवा आदि में 7 लाख छोटी इकाइयाँ स्थापित करके लगभग 10 लाख लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया था।

(ii) 9वीं पंचवर्षीय योजना में कुछ संशोधनों के साथ इस योजना को जारी रखा गया तथा इसके लिए चुने हुए 8वीं कक्षा उत्तीर्ण शिक्षित बेरोजगारों को जिनकी आयु 18 से 35 वर्ष के बीच है (उत्तर-पूर्वी राज्यों के लिए यह सीमा 18 से 40 वर्ष रखी गई है, जबकि SC/ST/PH के लिए 10 वर्ष से अधिक की आयु सीमा निर्धारित की गई है।)

(iii) जिनकी पारिवारिक आय, 40,000 वार्षिक से कम है तथा जो उस क्षेत्र में पिछले तीन साल से रह रहे हों, को व्यापारिक कारोबार के लिए, एक लाख तक तथा अन्य गतिविधियों के लिए, दो लाख तक की तथा दो या दो से अधिक लोगों की परियोजनाओं के लिए, दस लाख तक का ऋण दिया जाता है।

(iv) ऋण लेने वाले व्यक्ति को परियोजना लागत का 5% से 16.25% तक मार्जन मनी (Margen Money) की व्यवस्था करनी होती है। एक लाख तक की परियोजना के लिए किसी जमानत गारण्टी (Collateral Money) की आवश्यकता नहीं होगी। लघु इकाइयों के उद्यमियों को प्रशिक्षण दिया जाता है तथा आवश्यकता पड़ने पर कच्चा माल एवं विपणन सहायता भी दी जाती है।

(v) 1 अप्रैल 1994 से इसे शहरी तथा ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में लागू कर दिया गया है। इसके पूर्व यह योजना केवल शहरी क्षेत्रों में लागू थी। 1 अप्रैल 1994 से शिक्षित बेरोजगार युवकों के लिए स्वरोजगार की योजना को भी इस योजना में ही समाहित कर लिया गया है।

(vi) इस योजना के अंतर्गत अब तक 20 लाख इकाइयाँ स्थापित हो चुकी हैं, जिसमें 30.4 लाख अतिरिक्त रोजगार के अवसर सृजित किए जा चुके हैं।

15 अगस्त 2008 से प्रारम्भ की गई प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम में इस कार्यक्रम को समन्वित कर दिया गया है।

4.59 अम्बेडकर वाल्मिकी मलिन बस्ती योजना

(i) 2 दिसंबर 2001 को औपचारिक रूप से इस योजना का प्रारम्भ किया गया था जिसका उद्देश्य शहरी क्षेत्र की मलिन बस्तियों में रहने वाले गरीब व निर्धन वर्ग के लोगों के लिए आवासीय इकाइयों की व्यवस्था करना है।

(ii) इस योजना के अंतर्गत इन क्षेत्रों में रहने वाले गरीब अनुसूचित जाति (Schedule Caste), अनुसूचित जनजाति (Schedule Tribe) पिछड़े वर्गों तथा अन्य कमजोर वर्ग के परिवारों को उचित मूल्य पर आवासीय सुविधायें उपलब्ध करती है।

(iii) इस योजना को ग्रामीण क्षेत्रों में संचालित इन्दिरा आवास योजना के प्रारूप पर ही शहरी क्षेत्रों के गरीबों के लिए प्रारम्भ किया गया है तथा इसका कार्यान्वयन हडको (Hudco) द्वारा किया जा रहा है।

(iv) इस योजना के घटक भारत निर्माण अभियान के अंतर्गत सामुदायिक शौचालयों के माध्यम से एक शहरी पर्यावरण को स्वस्थ एवं बेहतर बनाना है। इस योजना में केन्द्र सरकार 50% सब्सिडी (Subsidy) प्रदान करती है तथा शेष 50% का अवस्था राज्य सरकारों द्वारा की जाती है।

(v) मार्च 2008 तक इस योजना के अंतर्गत 4.6 लाख आवासीय इकाइयों तथा 65,555 शौचालयों के निर्माण के लिए भारत सरकार ने (Subsidy) के तौर पर 938 करोड़ की कुल राशि जारी की थी।

4.60 निर्मल भारत अभियान योजना

(i) 15 अगस्त 2002 को प्रधानमंत्री ने इस योजना की घोषणा की। जिसका उद्देश्य गंदी बस्तियों में सामुदायिक शौचालयों की सुविधा को विस्तारित करना है। इस योजना को आरंभ करने के पीछे नगरीय गंदी बस्तियों के लोगों को आवासीय सुविधा प्रदान करने हेतु वर्ष 2001 में लागू की गई वाल्मिकी अम्बेडकर योजना की सफलता से प्रेरित होना था और इस सफलता को ध्यान में रखते हुए इस योजना के शुरू होने से एक वर्ष पहले ही एक लाख से अधिक आवासों के निर्माण का लक्ष्य निर्धारित किया गया था।

4.61 हरियाली परियोजना

(i) 2003 में प्रधानमंत्री ने 2,000 करोड़ की लागत वाली जलसंग्रहण (Water-accumulation) से संबंधित विकास योजनाओं की बहुआयामी हरियाली परियोजना का शुभारम्भ किया।

(ii) ग्रामीण विकास मंत्रालय के अधीन इस परियोजना को देश की पंचायतों के जरिए चलाये जाने का उद्देश्य रखा गया है।

(iii) परियोजना के तहत ग्रामीण लोगों को वृक्षारोपण के लिए प्रोत्साहित किया जायेगा तथा 100 वृक्ष लगाने वाले व्यक्ति को वनरक्षक के रूप में नियुक्त कर पंचायत के माध्यम से 100 प्रतिमाह का पुरस्कार प्रदान किया जायेगा।

(iv) वृक्षारोपण के लिए जो भूमि वनरक्षक को उपलब्ध कराई जायेगी, उन पर घास लगाने की अनुमति वनरक्षक की होगी। जिसकी बिक्री से अतिरिक्त आय वनरक्षक को उपलब्ध हो सकेगी। साथ ही वृक्षों को सिंचने के लिए कुएँ व तालाब खुदवाने की भी उसे अनुमति होगी। जिसकी लागत संबंधित ग्राम पंचायत वहन करेगी और इस तालाब में मछली पालन की अनुमति भी वनरक्षक को होगी।

'हरियाली' परियोजना के उद्देश्य:

- जल संग्रहण योजनाओं का क्रियान्वयन
- वर्षा जल का संचयन
- पेयजल समस्या का निवारण
- सिंचाई हेतु जल की व्यवस्था
- वृक्षारोपण तथा मत्स्यपालन को प्रोत्साहन

'हरियाली' परियोजना के लाभ:

(i) ग्रामवासियों को गाँव में ही रोजगार मिल पायेगा।

(ii) गाँव अब अधिक आत्मनिर्भर हो पायेंगे।

(iii) गाँव का आर्थिक विकास होगा।

4.62 पॉपुलेशन फर्स्ट योजना

(i) वर्ष 2002 में निजी क्षेत्र के प्रमुख उद्यमियों द्वारा पॉपुलेशन फर्स्ट योजना की घोषणा की गई। इस योजना को मुख्यत: टाटा एवं महिन्द्रा समूह द्वारा प्रायोजित (Sponsered) किया गया।

(ii) इस योजना का प्रमुख उद्देश्य सरकार द्वारा घोषित 2060 तक जनसंख्या रोकने का लक्ष्य प्राप्त करने में सहयोग प्रदान करना है।

(iii) योजना के अंतर्गत स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण के मुद्दों पर ध्यान दिया जायेगा तथा देश के सबसे निचले स्तर पर इस कार्यक्रम के संबंध में विभिन्न जानकारियों को पहुँचाने में भी कार्यक्रम संचालित किये जायेंगे। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य जनसंख्या नियंत्रण में मदद करना है।

4.63 स्वजलधारा कार्यक्रम

(i) दिसंबर 2002 में ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल की समस्या के निदान के लिए एक स्वजलधारा कार्यक्रम की शुरूआत केन्द्र सरकार ने की।

(ii) प्रारंभ में 8 राज्यों, आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, हरियाणा व उत्तर प्रदेश में कुल मिलाकर 882 परियोजनाएँ इस कार्यक्रम के अंतर्गत स्वीकार की गई हैं, जिन पर 87 करोड़ खर्च सरकार द्वारा किया जायेगा।

(iii) ग्राम पंचायतों के माध्यम से लागू की जाने वाली इस योजना के तहत ग्रामवासियों को बावड़ी बनाने, कुएँ खुदवाने व हैंड पम्प लगवाने की सुविधा प्रदान की गई है। मुख्य बात यह है कि योजना लागत का केवल 10% भाग ही ग्रामवासियों को वहन करना होगा तथा शेष 90% राशि की पूर्ति केन्द्र सरकार करेगी। इस कार्यक्रम का संचालन ग्रामीण विकास मंत्रालय के तत्वावधानों के अंतर्गत किया जा रहा है।

4.64 सूखा आशंकित क्षेत्र कार्यक्रम *(Drought-Prone Area Programme – DPAP)*

(i) इस राष्ट्रीय कार्यक्रम की शुरूआत सूखे की संभावना (Drought-Prone) वाले चुने हुए क्षेत्रों में 1973 में किया गया।

(ii) 1995 से यह कार्यक्रम जलसंभर विकास के लिए तय किए गए साझा दिशा-निर्देशों के तहत क्रियान्वित किया जा रहा है तथा वित्त की व्यवस्था केन्द्र तथा संबंधित राज्यों के मध्य 75:25 के अनुपात में की जाती है।

(iii) 1995-96 से 2007-08 तक इस योजना के अधीन स्वीकार किए गए 27439 परियोजनाओं के अंतर्गत 137 लाख हेक्टेयर क्षेत्र सम्मिलित किया जा चुका है और केन्द्र सरकार द्वारा जारी किए गए, 2837 करोड़ की राशि इस्तेमाल की जा चुकी है।

(iv) यह कार्यक्रम ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा चलाया जा रहा है तथा योजना आयोग के सदस्य डॉ० जयन्त पाटिल की अध्यक्षता में सूखा क्षेत्रों के लिए 25 वर्षीय योजना तैयार करने के लिए एक उच्च शक्ति समिति का गठन किया गया है।

4.65 मरूभूमि विकास कार्यक्रम *(Desert Development Programme – DDP)*

(i) मरूभूमि को सूखे के प्रभाव से बचाने, मरूभूमियों को बढ़ने से रोकने तथा सूखा प्रभावित क्षेत्रों में पारिस्थितिकीय (Ecological) क्षेत्रों में संतुलन बहाल करने तथा इन क्षेत्रों में जल संसाधनों को बढ़ाने के उद्देश्य से यह कार्यक्रम 1978 से प्रारंभ किया गया था, जो 100% केन्द्रीय सहायता आधारित कार्यक्रम है।

(ii) 1 अप्रैल 1995 से यह कार्यक्रम जलसंभर विकास के लिए तय किये गए साँझा दिशा निर्देशों के तहत क्रियान्वित किया जा रहा है। यह कार्यक्रम अब देश के 7 मरूभूमि प्रभावित राज्यों के 4.58 लाख वर्ग मीटर क्षेत्रफल वाले 40 जिलों के 235 प्रखण्डों में चलाया जा रहा है।

(iii) कार्यक्रम के तहत प्रखण्डों की पहचान हनुमंत राव समिति द्वारा वर्ष 1994-95 में की गई सिफारिशों के आधार पर की गई है तथा यह कार्यक्रम ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा चलाया जा रहा है।

4.66 एकीकृत बंजर भूमि विकास कार्यक्रम *(Integrated Wastelands Development Programme – IWDP)*

(i) 1989-90 से कार्यान्वित यह कार्यक्रम सामान्यतः उन क्षेत्रों में स्वीकृत की गई है, जो मरूभूमि विकास कार्यक्रम (Desert Development Programme – DDP) या सूखा प्रभावित क्षेत्र कार्यक्रम (Drought-prone Area Programme – DPAP) के अंतर्गत नहीं आते।

(ii) 1 अप्रैल, 1995 से यह कार्यक्रम भी DDP तथा DPAP के साथ-साथ जलसंभर विकास के लिए निर्धारित किए गए साँझा दिशा निर्देशों के तहत कार्यान्वित किया जा रहा है।

(iii) पिछले 15 वर्षों में इस कार्यक्रम के अधीन स्वीकृत 1877 परियोजनाओं के अंतर्गत 107 लाख हेक्टेयर क्षेत्र सम्मिलित किया जा चुका है और केन्द्र सरकार द्वारा 3797.09 करोड़ की राशि जारी की जा चुकी है।

(iv) एकीकृत बंजर भूमि विकास कार्यक्रम (IWDP) के अंतर्गत केन्द्र और राज्यों के बीच लागत का बँटवारा 1:1 के अनुपात में होता है। वर्ष 2011-12 के बजट में इसके तहत 2549 करोड़ की राशि आवंटित की गई है।

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (National Knowledge Commission)

वर्ष 2005 के प्रारम्भ में सरकार ने राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का गठन किया। इस आयोग के गठन का प्रमुख उद्देश्य भारत को न केवल ज्ञान का निर्माण करने वाला समाज बनाना है, बल्कि ज्ञान को बाँटने वाला एवं ज्ञान का प्रयोग करने वाला समाज बनाना भी है। आयोग के सामने पाँच सूत्र रखे गए हैं:

(i) सार्वजनिक लाभ के लिए ज्ञान तक सबकी पहुँच।

(ii) उच्च शिक्षा की अवधारणाओं को विकसित करना।

(iii) विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संस्थानों को स्फूर्ति प्रदान करना।

(iv) उद्योगों द्वारा उपलब्ध ज्ञान को व्यावहारिक रूप देना, जिससे कि उद्योगों की प्रतिस्पर्द्धात्मक क्षमता में सुधार हो सके।

(v) ज्ञान-आधृत सेवाओं का सरकार द्वारा गहन प्रयोग जिससे कि नागरिकों का सशक्तीकरण हो सके।

विश्वव्यापीकरण से सभी देशों के सामने नए अवसरों का निर्माण हो रहा है। इन अवसरों का लाभ उठाकर सामान्य जीवन स्तर में सुधार लाए जा सकते हैं, इसके लिए आवश्यक होगा कि उपयुक्त नीतियों का निर्माण एवं पालन किया जाए।

□□□

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–5 (Unit–5)

पूंजी निर्माण
Capital Formation

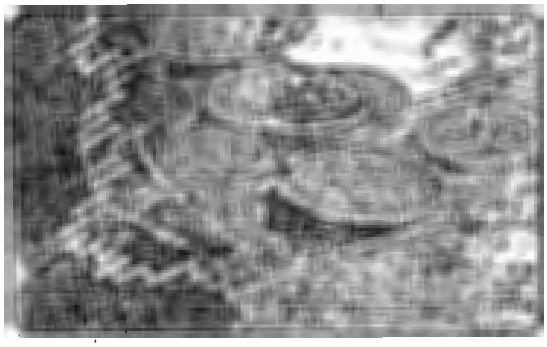

5.1 पूंजी निर्माण *(Capital Formation)*

5.2 संवृद्धि की वांछित दर *(Desirable Rate of Growth)*

5.3 पूंजी उत्पाद अनुपात *(Capital Output Ratio)*

5.4 घरेलू बचत *(Domestic Saving)*

5.5 विभिन्न योजनाओं के दौरान घरेलू बचत
(Domestic Savings While Different Planning Periods)

5.6 वित्त क्षेत्र के नजरिये से बचत के प्रकार
(Type of Savings According to Financial Field)

5.7 असंतोषजनक बचत दर होने के कारण
(Causes of Unsatisfactory Rate Saving)

5.8 हाल के वर्षों में बचत दर में वृद्धि के कारण
(Increasing Saving Rates in Recent Years)

5.9 बचत की मात्रा में वृद्धि के लिए सुझाव
(Suggestions to Increase Amount of Savings)

5.10 वर्द्धमान पूंजी उत्पाद अनुपात
(Incremental Capital Output Ratio – ICOR)

5.11 ICOR तथा COR में संबंध
(Relation between ICOR and COR)

5.12 भारत में उच्च बचत के बाद भी निम्न निवेश के कारण
(Despite of High Savings, Unsatisfactory Level of Investment in India)

5.13 बचत सृजन, बचत उगाहन तथा बचत का निवेश
(Generating Savings, Accumulating Savings and Investment of Savings)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

5.1 पूंजी निर्माण *(Capital Formation)*

पूंजी निर्माण (Capital Formation) :- बचत सृजन (Generating Savings), बचत उगाहन (Mobilisation of Saving) तथा उत्पादन क्षेत्र में बचत के निवेश (Investment of Saving) की समग्र प्रक्रिया (Whole Process of Investment) को पूंजी निर्माण (Capital Formation) कहते हैं। आर्थिक विकास (Economic Development) को निर्धारित करने वाले कारकों में पूंजी निर्माण (Capital Formation) की दर सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। जब आय का बड़ा अंश (Large Part of Income) बचाकर फिर से निवेश किया जाता है तो उत्पादन (Production) की मात्रा अधिक हो जाती है और आर्थिक विकास (Economic Development) की गति भी तेज रहती है। पूंजी निर्माण (Capital Formation) की प्रक्रिया तीन भागों में पूरी होती है:

पूंजी निर्माण (Capital Formation)

- बचत सृजन (Generating Savings)
- बचत उगाहन (Mobilisation of Saving)
- बचत के निवेश (Investment of Saving)

पूंजी निर्माण (Capital Formation) के लिए सबसे पहले बचत का सृजन होना आवश्यक है। बचत से उत्पादक साधन उपलब्ध होते हैं। परन्तु अक्सर जो लोग बचत करते हैं वे स्वयं निवेश नहीं करते, इसलिए बचतों को एकत्रित करना और फिर उन्हें वहाँ पहुँचना जहाँ उनका निवेश किया जाएगा, काफी महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है। अंत में, उत्पादन क्षमता में वृद्धि के लिए निवेश का होना आवश्यक है।

[बचत सृजन, बचत उगाहन तथा बचत के निवेश पर विस्तृत चर्चा कक्षा में आगे की जायेगी]

किसी भी देश की पूंजी संबंधी आवश्यकताओं के महत्त्वपूर्ण कारक हैं-

- संवृद्धि की वांछित दर (Desirable Rate of Growth)
- पूंजी उत्पाद अनुपात (Capital Output Ratio)

5.2 संवृद्धि की वांछित दर *(Desirable Rate of Growth)*

भारत की आर्थिक संवृद्धि हेतु आवश्यक पूंजी के निर्धारण के लिए सबसे पहले संवृद्धि की वांछित दर को समझना आवश्यक है।

संवृद्धि की वांछित दर (Desirable Rate of Growth) : किसी देश के लिए उसकी संवृद्धि की वांछित दर (Desirable Rate of Growth) की उच्चतम सीमा को निश्चित करना कठिन है, फिर भी उस देश विशेष के आर्थिक (Economic), प्राकृतिक (Natural) तथा मानवीय साधनों (Human Resources) को ध्यान में रखते हुए आर्थिक संवृद्धि के लिए कुछ गणनाएँ (Sum Calculation for Economic Growth) की जा सकती है। वास्तव में हर देश की यह कोशिश होती है कि वह संवृद्धि की प्रक्रिया को अधिक से अधिक तीव्र कर सके।

भारत के संदर्भ में यह माना जा सकता है कि प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद (Per Capita Gross Domestic Product) कम से कम 6 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि की दर से हो। संवृद्धि की दर यदि इससे अधिक हो तो वह और भी अच्छा है, जैसा कि पिछले कुछ वर्षों में देखा गया है, लेकिन यदि संवृद्धि की दर इससे धीमी रहती है तो अल्प विकसित देश (Less Developed Countries) तथा भारत जैसे विकासशील देश के लिए गरीबी से मुक्ति पाना असंभव हो जाएगा। भारत में 1990 के दशक से जनसंख्या की वार्षिक वृद्धि दर 1.9 प्रतिशत है अतः सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product – GDP) में कम से कम 8 प्रतिशत की वृद्धि आवश्यक है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

5.3 पूंजी उत्पाद अनुपात *(Capital Output Ratio)*

भारत को आर्थिक संवृद्धि के लिए कितनी पूंजी की आवश्यकता है, इसे जानने के लिए दूसरा महत्त्वपूर्ण कारक है पूंजी उत्पाद अनुपात। एक निश्चित उत्पादन के लिए वांछित कुल पूंजी के आनुपातिक मूल्य को पूंजी उत्पाद अनुपाद (Capital Output Ratio) कहते हैं।

$$COR = \frac{C}{O}$$

पहली पंचवर्षीय योजना में पूंजी उत्पाद अनुपात (Capital Output Ratio – COR) मात्र 2.95 था। लेकिन दूसरी योजना में पूंजीगत वस्तुओं (Capital Goods) और भारी मशीनरी (Heavy Machinary) पर आधारित औद्योगिकरण की युक्ति (Tools of Industrialisation) के परिणामस्वरूप, इसमें वृद्धि हुई। दूसरी योजना में यह 3.40 हो गया और, जैसा कि सारणी से स्पष्ट है, इसमें, बाद में काफी वृद्धि हुई। दसवीं पंचवर्षीय योजना में पूंजी की आवश्यकताओं का अनुमान लगाने के लिए योजना आयोग ने पूंजी-उत्पाद (Capital Output Ratio – COR) अनुपात 3.58 लिया था परन्तु वास्तव में यह अनुपात 4.3 बना रहा। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में पूंजी की आवश्यकताओं का अनुमान लगाने के लिए योजना आयोग ने पूंजी उत्पाद (COR) अनुपात 4.1 लिया है। क्योंकि इस योजना में संवृद्धि दर (Growth Rate) का लक्ष्य 9.0 प्रतिशत प्रति वर्ष रखा गया है इसलिए पूंजी निर्माण की दर को सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product – GDP) के लगभग 37.0 प्रतिशत तक बढ़ाना होगा।

भारतीय अर्थव्यवस्था में पूंजी उत्पाद अनुपात

समयावधि	पूंजी-उत्पाद अनुपात (COR)
1951-52 से 1955-56 तक	2.95
1956-57 से 1960-61 तक	3.40
1961-62 से 1965-66 तक	5.44
1966-67 से 1970-71 तक	3.43
1971-72 से 1975-76 तक	5.80
1976-77 से 1980-81 तक	6.63
1981-82 से 1985-86 तक	4.15
1985-86 से 1989-90 तक	3.91
1985-86 से 1991-92 तक	4.36
1991-92 से 1992-97 तक	3.70
1997-98 से 2002 तक	4.53
2002 से 2007 तक	4.30
2007 से 2012 तक	4.10

स्रोत: भारत सरकार, योजना आयोग

5.4 घरेलू बचत *(Domestic Saving)*

समस्त योजना अवधि (Planning Period) हेतु बचत के अनुमान केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन (Central Statistical Organisation – CSO) द्वारा तैयार किए गए हैं। नेशनल काउंसिल ऑफ एपलाइड इकनॉमिक रिसर्च (NCAER) तथा योजना आयोग (Planning Commission) के अलावा भारतीय रिजर्व बैंक (RBI) के भी कुछ अनुमान प्रस्तुत किए गए हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

5.5 विभिन्न योजनाओं के दौरान घरेलू बचत
(Domestic Savings While Different Planning Periods)

पिछली योजना अवधियों में घरेलू बचत (Domestic Saving) की दरों में काफी वृद्धि हुई है। (Central Statistical Organisation – CSO) के अनुमान के अनुसार सकल घरेलू बचत दर 1950-51 में 8.6 प्रतिशत रही है। बचत की इस निम्न दर पर राष्ट्रीय आय (National Income) में लगभग 5 प्रतिशत वृद्धि प्राप्त करना एक असंभव (Impossible) सी बात थी। केवल पूंजी उत्पाद अनुपात (Capital Output Ratio – COR) के बहुत कम होने पर इस लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता था, परंतु, क्योंकि भारत उस समय कृषि तथा उद्योगों (Agriculture and Industries) पर अपना ध्यान केन्द्रित कर रहा था, जिसका (Incremental Capital Output Ratio – ICOR) मूल्य बहुत अधिक होता है, अतः 1.6 प्रतिशत बचत दर पर 5 प्रतिशत की वृद्धि प्राप्त नहीं की जा सकती थी। लेकिन, देखा गया कि दूसरी योजना (Second Planning Period) में बचत दर में थोड़ी वृद्धि हुई, जो 1960-61 में 11.2 प्रतिशत हो गई। लेकिन, क्योंकि दूसरी योजना औद्योगीकरण की एक व्यापक योजना थी, इसलिए घरेलू बचत दर (Domestic Saving Rates) में यह मामूली वृद्धि बहुत सहायक नहीं थी (Not Very Helpful) और यही कारण था कि योजना की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बड़े पैमाने पर विदेशी सहायता (Foreign Help) लेनी पड़ी।

इसके बाद तीसरी योजना (Third Planning Period) में बचत दर लगभग 13 प्रतिशत थी और इस प्रकार हम दूसरी योजना (Second Planning Period) से बेहतर स्थिति में थे, लेकिन बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण (Industrialisation) की योजनाओं हेतु पूंजी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए दूसरे देशों से पूंजी लाने की आवश्यकता बनी रही। इन तीन योजनाओं के बाद तीन वर्षों तक पंचवर्षीय योजनाओं को स्थगित कर वार्षिक योजनाएँ (Annual Planning) बनाई गई। जिसमें पहले वर्ष (1966-67) में बचत की दर 13.6 प्रतिशत रही, लेकिन अगले ही वर्ष यह गिरकर 11.6 प्रतिशत हो गई। 1969-70 में चौथी पंचवर्षीय योजना की शुरूआत हुई, जिसमें बचत दर 14% थी और योजना के अंतिम वर्ष में 16.4% तक पहुँच गई। परंतु यह भी लक्ष्य से बहुत दूर था और विदेशी सहायता (Foreign Help) की आवश्यकता बनी रही। हालांकि प्रतिकूल राजनीतिक स्थितियों (Adverse Political Situations) खासकर पश्चिमी देशों की विदेश नीति के कारण विदेशों से उपयुक्त मात्रा में सहायता नहीं मिल पाई, जो निश्चित रूप से अच्छा अनुभव नहीं था। इसलिए बाद की योजनाओं में सरकार ने आत्मनिर्भरता पर जोर दिया। पाँचवीं योजना में घरेलू साधनों (Domestic Resources) से ही अतिरिक्त बचत (Extra Savings) प्राप्त करने की कोशिश की गई। जिससे कुछ आशाजनक लाभ हुए और बचत दर 1974-75 में 15.7% से बढ़कर 1978-79 में 21% तक पहुँच गई। इसे ठीक-ठाक स्थिति कहा जा सकता है और इस कारण पाँचवीं योजना में विदेशी सहायता की आवश्यकता काफी कम हो गई।

1979-80 में भारतीय कृषि की स्थिति घोर निराशाजनक थी। इस वर्ष प्रति व्यक्ति आय (Per Capita Income) में 8.3% की गिरावट दर्ज की गई। यही कारण रहा कि बचत दर भी गिर गया। लेकिन आश्चर्यजनक रूप से 1980-81 में भी बचत दर 18.5% बनी रही। रिजर्व बैंक का कहना था कि कीमतों में लगातार वृद्धि होने के कारण उपभोग व्यय बढ़ता गया और इस प्रकार बचत करने की क्षमता पर प्रतिकूल असर पड़ा, इसके बाद 5 वर्षों तक लगातार बचत दर 19% या इससे कम बनी रही। सातवीं योजना के अंत तक बचत दर 20.5% के ऊपर नहीं जा सकी और इसी प्रकार 1982-83 से 1988-89 तक सात वर्षों में वास्तविक बचत दर वांछित बचत दर से नीची बनी रही जिसका कारण शहरों में बढ़ता हुआ उपभोक्तावाद (Consumerism) बताया जाता है।

1990-91 में गृह क्षेत्र में बचत का स्तर ऊँचा उठने से पूरी अर्थव्यवस्था की बचत दर बढ़कर 22.8% हो गई, लेकिन 1992-93 और 1993-94 के दो वर्षों में बचत दर फिर से नीचे आ गई। कहा जाता है कि ये अत्यधिक महँगाई (High Inflation) के वर्ष थे और इस मुद्रास्फीति (Inflation) में गृहक्षेत्र के बचतों को थोड़ा हतोत्साहित (Discourage) किया गया। इसके अतिरिक्त इन दो वर्षों में सार्वजनिक क्षेत्र की बचतों (Savings from Public Sector) में भी थोड़ी गिरावट आई थी। इन दो वर्षों में सार्वजनिक क्षेत्र की बचतें भी थोड़ी कम हो गई जिसके कारण सकल घरेलू बचत (Gross Domestic Saving) दर में गिरावट आई। 1994-95 में स्थिति ठीक हुई और बचत की दर 24.4% पहुँच गई। 1995-96 में यह बचत दर बनी रही। लेकिन उसके बाद तीन वर्षों तक बचत दर में गिरावट आई, लेकिन 1999-2000 में बचत दर सँभलकर पुनः 24.8% हो गई, फिर बाद के दो वर्षों में बचत दर गिरी लेकिन 2002-03 से, जब 10वीं पंचवर्षीय योजना आरंभ हुई, इसमें सतत वृद्धि दिखाई देने लगी।

इस प्रकार जो सकल घरेलू बचत दर (Gross Domestic Saving Rates) 8वीं पंचवर्षीय योजना में 23.1% प्रतिवर्ष थी, 9वीं में 23.6% प्रति वर्ष थी। वह 10वीं योजना में बढ़कर औसतन 31.9% प्रतिवर्ष के स्तर पर पहुँच गई। सी.एस.ओ द्वारा 2004-05 को आधार वर्ष मानकर जो श्रृंखला (Series) जारी की गई, उसके अनुसार 2004-05 में बचत की दर सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product – GDP) का 32.4% थी, जो 2007-08 में बढ़कर 36.9% हो गई। 2008-09 में इसमें गिरावट आई और यह सकल घरेलू उत्पाद का 32.2% हो गई, इसका मुख्य कारण सार्वजनिक क्षेत्र में बचत दर में आई तेज गिरावट थी, जो 2007-08 में सकल घरेलू उत्पाद का 5% थी, हालाँकि वैश्विक मंदी (Recession) के कारण 2008-09 में यह केवल 5% थी, 2009-10 में बचत दर में पर्याप्त सुधार हुआ और यह सकल घरेलू उत्पाद का 33.7% हो गई। इस वर्ष सार्वजनिक क्षेत्र में बचत सकल घरेलू उत्पाद (Gross

Copyright – Drishti The Vision Foundation

Domestic Product – GDP) का 2.9% थी।

ध्यातव्य है कि जहाँ पश्चिमी तथा यूरोपीय देशों में बचत दर उनके Gross Domestic Product – GDP का 3-4% है, वहीं चीन जैसे देशों पर 40% के आस-पास तथा 2007-08 में मंदी शुरू होने से पहले भारत की बचत दर 38% थी। अतः कहा जा सकता है कि चीन और भारत सकल घरेलू बचत (Gross Domestic Saving) के मामले में विश्व के अन्य देशों से काफी अच्छी स्थिति में है। 1951 में जहाँ भारतीयों की बचत दर 9% के आस-पास थी वह अब 35% को पार कर चुकी है। अतः भारत की बचत प्रवृत्ति अब काफी बेहतर स्थिति में है और लोगों की भोगवादी मानसिकता में कमी आई है।

कुल घरेलू बचत

वर्ष	गृह क्षेत्र (2)	निजी निगम क्षेत्र (3)	सार्वजनिक क्षेत्र (4)	कुल (2+3+4)
2004-05	23.6	6.6	2.3	32.4
2005-06	23.5	7.5	2.4	33.5
2006-07	23.2	7.9	3.6	34.6
2007-08	22.5	9.4	5.0	36.9
2008-09	22.8	7.9	0.5	32.2
2009-10	23.5	8.1	2	33.7

स्रोत: आर्थिक समीक्षा भारत सरकार, आधार वर्ष 2004-05

5.6 वित्त क्षेत्र के नजरिये से बचत के प्रकार

वित्त क्षेत्र के नजरिये से बचत के प्रकार

- घरेलू बचत (Household Saving-S_h): देश के गृह क्षेत्र द्वारा की गई कुल बचत को घरेलू बचत कहते हैं।
- सरकारी बचत (Saving of Government - S_g): देश की सरकार द्वारा की गई कुल बचत को सरकारी बचत कहते हैं।
- निगम बचत (Corporate Saving - S_c): देश के संपूर्ण निगम क्षेत्र (India Incorporate) द्वारा की गई कुल बचत को निगम बचत कहते हैं।
  - सार्वजनिक निगम बचत (Public sector savings)
  - निजी निगम बचत (Private sector savings)

$$S_h > S_c > S_g$$

देश में घरेलू बचत (Household Saving) का मान सर्वाधिक है। उसके बाद क्रमशः निगम बचत (Corporate Saving) और सरकारी बचत (Government Saving) आते हैं। साधारणतः सरकारी बचत (S_g) का मान ऋणात्मक (Negative) होता है और इस ऋणात्मक राशि (Negative Value) को राजकोषीय घाटा (Fiscal Deficit) कहते हैं।

क्योंकि, पैसे को उदासीन (Nutral) रखने का कोई लाभ नहीं है, अतः इसका उत्पादन कार्य में निवेश किया जाना चाहिए, जिसे सकल घरेलू निवेश (Gross Domestic Investment) कहते हैं।

$$\text{Gross Domestic Savings (GDS)} = S_h + S_c + S_g$$

गृह क्षेत्र में व्यक्ति, एकल स्वामित्व (Sole Proprietorship) में स्थापित फर्में, साझेदारियाँ (Partnerships) और लाभ के लिए काम न करने वाले संगठन जैसे शिक्षा ट्रस्ट आदि प्रमुख हैं। निजी निगम क्षेत्र में गैर-सरकारी वित्तीय (Non-Governmental Financial) और गैर-वित्तीय कम्पनियाँ (Non-Governmental Companies) और सहकारी संस्थाएँ (Corporate Institution) आती हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

सार्वजनिक क्षेत्र में बचत (Savings in Public Sector) का तात्पर्य है सरकारी क्षेत्र द्वारा की जाने वाली बचत। भारत में गृह क्षेत्र कुल बचत का सबसे महत्त्वपूर्ण स्रोत है। उदाहरण के लिए 1950-51 में कुल घरेलू बचत में गृह क्षेत्र का हिस्सा 66.4 प्रतिशत, 1980-81 में 69.9 प्रतिशत तथा 2003-04 में 80.9 प्रतिशत था (आधार वर्ष 1999-2000)। नई शृंखला के अनुसार (आधार वर्ष 2004-05), 2009-10 में कुल घरेलू बचत (Domestic Saving) में गृह क्षेत्र का हिस्सा 69.6 प्रतिशत था। परन्तु यहाँ इस बात पर ध्यान देना जरूरी है कि कुल घरेलू बचत में गृह क्षेत्र का हिस्सा स्थिर नहीं रहा है और उसमें योजना-अवधि में व्यापक उतार-चढ़ाव होते रहे हैं।

एक अन्य महत्त्वपूर्ण बात यह है कि सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product – GDP) के अनुपात के रूप में गृह क्षेत्र द्वारा की गई बचत पिछले साढ़े पाँच दशकों में काफी अधिक बढ़ी है। 1970-71 में गृह क्षेत्र में बचत (Savings in Domestic Fields), सकल घरेलू उत्पाद की 9.5 प्रतिशत थी। तब से लेकर अब तक तीन-वर्षीय औसत लेने पर, इसमें लगातार वृद्धि दिखाई देती है। 2009-10 में गृह क्षेत्र में बचत, सकल घरेलू उत्पाद की 23.5 प्रतिशत थी। परन्तु इन आँकड़ों का प्रयोग करते समय अत्यन्त सावधानी रखनी आवश्यक है क्योंकि इनकी विश्वसनीयता संदिग्ध है। इसका कारण यह है कि भौतिक परिसंपत्तियों (Physical Assets) के रूप में गृह क्षेत्र द्वारा की गई बचत, के मूल्यांकन की रीति पूरी तरह से विश्वसनीय नहीं है (हालाँकि वित्तीय परिसंपत्तियों के रूप में की गई बचत के आँकड़े अपेक्षाकृत सही है।) निजी निगम क्षेत्र (Private Corporate Field) ने काफी समय तक बचतों में खास योगदान नहीं किया। उदाहरण के लिए, आयोजन के पाँच दशक बाद भी 2001-02 में (जो नौवीं योजना का अन्तिम वर्ष था), निजी निगम क्षेत्र की बचत सकल घरेलू उत्पाद का मात्र 3.4 प्रतिशत और कुल घरेलू बचत का केवल 14.4 प्रतिशत थी। परन्तु हाल की अवधि में निजी निगम क्षेत्र की बचत में वृद्धि हुई है। उदाहरण के लिए 2009-10 में निजी निगम क्षेत्र स्थिर बचत दर प्राप्त करने में असफल (Unsuccessful) रहा है। 1998-99 से 2002-03 तक पाँच वर्षों में इस क्षेत्र में बचत ऋणात्मक (Negative Savings) रही। परन्तु उसके बाद के वर्षों में सार्वजनिक क्षेत्र (Public Sector) की बचत धनात्मक (Positive Savings) थी। 2009-10 में सार्वजनिक क्षेत्र की बचत सकल घरेलू उत्पाद का 2.1 प्रतिशत थी। इस वर्ष कुल घरेलू बचत में सार्वजनिक क्षेत्र (Public Sector) का हिस्सा 6.3 प्रतिशत था।

पिछले 30 वर्षों में गृह क्षेत्र में बचत ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में बढ़ी है परन्तु वृद्धि की दर दोनों क्षेत्रों में एक सी नहीं है। इन वर्षों में शहरी क्षेत्रों में धन और आय का संकेन्द्रण (Concentration) बढ़ा है जिससे इन क्षेत्रों में बचत का प्रोत्साहन (Encouragment Savings) मिला है। परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में आय असमानताओं (Income Disparity in Rural Areas) के बढ़ने के बावजूद बचतों में बहुत कम वृद्धि हो पाई है। सम्भवतः धनी किसानों (Well-off Farmers) के अनावश्यक उपभोग वस्तुओं पर बढ़ते हुए व्यय (Increasing Expenditure) तथा वित्तीय संस्थाओं (Financial Institution) के उचित प्रसार का अभाव इसके कारण हैं।

5.7 असंतोषजनक बचत दर होने के कारण *(Causes of Unsatisfactory Rate Saving)*

यद्यपि आयोजन के दौरान आय वृद्धि के परिणामस्वरूप बचत दर में वृद्धि हुई है तथापि यह काफी समय तक वांछित दर (Warranted Rate) से कम रही है। उदाहरण के लिए 2001-02 में बचत दर 23.5 प्रतिशत थी। यह दर कुछ पूर्वी एशियाई देशों (East Asian Countries) तथा चीन में 1971 के बाद से लगभग तीन दशक तक प्राप्त होने वाली 30 प्रतिशत प्रति वर्ष की बचत दर से कम थी।

भारत में असंतोषजनक बचत दर के कुछ कारणों को गिनाया जा सकता है:

1. **प्रति व्यक्ति आय का नीचा स्तर (Low Level of Per Capita Income):** भारत में प्रति व्यक्ति आय (Per Capita Income) कम है। आय के नीचे स्तर पर लोगों में बचत कर सकने का सामर्थ्य कम होता है और वे अधिक बचत नहीं कर पाते। पश्चिमी देशों के अर्थशास्त्री प्रायः अल्पविकसित देशों (Less Developed Countries) में बचत के नीचे स्तर का यही कारण बताते हैं। उनके इस कथन में थोड़ी सत्यता है, लेकिन सच बात यह है कि किसी भी देश में अधिकांश बचत उस देश के अपेक्षाकृत सम्पन्न वर्ग (Comparetively Well off Group) द्वारा की जाती है। भारत में यही स्थिति है। इस वर्ग की बचत कर सकने की सामर्थ्य इतनी कम नहीं है जितनी कि प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय (Per Capita National Income) के आधार पर लगती है। इसलिए प्रति व्यक्ति आय का नीचा स्तर (Low Level of Per Capita Income) अल्प बचत का कारण तो है लेकिन वह उतना महत्त्वपूर्ण कारण नहीं है जितना कुछ लोग समझते हैं।
2. **कृषि आय पर कराधान न होना (No Taxation on Agricultural Income):** भारत में कृषि आय पर कराधान नहीं है। यह सत्य है कि सीमांत तथा लघु किसानों पर कर का आरोपण नहीं होना चाहिए। आर्थिक आयोजन काल (Economical Planning Period) में गांवों में बड़े किसानों के वर्ग की सम्पन्नता में वृद्धि हुई है। लेकिन इस वर्ग की आय पर कर नहीं लगाया गया है। इसका फल यह हुआ है कि गांवों में जो बचत हो सकती थी, वह नहीं होती। इन अमीर किसानों में कुछ पुराने जमींदार हैं। लेकिन जो पहले जमींदार नहीं भी थे, उन्होंने भी जमींदारों के रहने का ढंग अपना लिया है। जमींदार विलासी जीवन बिताते थे। जो बड़े किसान शहरों के सम्पर्क में हैं, वे शहरी लोगों की तरह पश्चिमी देशों के उपभोक्तावाद (Consumerism) के शिकार हैं और व्यर्थ की चीजों पर भारी व्यय करते हैं अतः ग्रामीण क्षेत्र में बचतें कम हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

3. **भारतीय शहरों में प्रदर्शन प्रभाव (Showing off Effect in Indian Cities):** अपनी की तुलना में अधिक सम्पन्न लोगों को श्रेष्ठ मानकर उनकी उपभोग संबंधी आचरण को अपना लेना उपभोग क्षेत्र में प्रदर्शन प्रभाव कहलाता है। भारत के लोगों का पश्चिमी देशों के साथ पिछले कुछ दशकों में काफी संबंध बढ़ा है, उन्हें अपने से श्रेष्ठ मानने वाले बहुत सारे भारतीय उपभोग के क्षेत्र में उनकी नकल करते हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि भारत के नगरों में मोटर कार, एयर कंडीशनर, टेलीविजन, रेफ्रिजरेटर्स, बढ़िया फर्नीचर, कपड़े धोने की मशीन, कैमरा, और ब्रांडेड कपड़ों की माँग बढ़ी है। संसार के पिछड़े देशों में इन वस्तुओं की माँग के दो ही कारण हैं– प्रथम, आर्थिक असमानता, और द्वितीय, प्रदर्शन प्रभाव। यदि कोई देश यह नहीं नहीं चाहता कि उसके लोग फिजूलखर्ची करें तो बहुत आवश्यक है कि प्रदर्शन प्रभाव को रोका जाए। लेकिन भारत में बड़े पैमाने पर विज्ञापनों (Advertisement on Large Scale) द्वारा उपभोग प्रवृत्ति को बढ़ाया जा रहा है।

4. **निजी निगम क्षेत्र का असंतोषजनक योगदान (Unsatisfactory Contribution of Private Sector Field):** विकसित देशों में निजी निगम क्षेत्र (Private Sector Field) निवेश के लिए बड़ी मात्रा में बचत कर साधनों की व्यवस्था करता है। देश की कुल बचतों (Total Savings of Country) में उसका हिस्सा सबसे ज्यादा और प्रायः कुल बचतों का आधे से अधिक (More than a Half) होता है। तेजी से विकास कर रहे एशियाई देशों में भी व्यवसायों की बचत काफी अधिक है। इसके विपरीत, भारत में निगम क्षेत्र की बचत काफी समय तक बहुत कम रही है। उदाहरण के लिए जहाँ 1970 के दशक तथा 1980 के दशक के आरंभ में निजी निगम क्षेत्र की बचत दक्षिण कोरिया, मलेशिया तथा थाईलैंड में सकल राष्ट्रीय उत्पाद (National Domestic Product) के 9 प्रतिशत तक तथा चीन में 14 प्रतिशत तक पहुँच चुकी थी, वहाँ भारत में 1990 के दशक के अंत तक भी यह सकल घरेलू उत्पाद का मात्र 3.5 था। जहाँ तक सकल घरेलू बचत (Gross Domestic Product) में हिस्से का प्रश्न है 1991-92 तथा 2001-02 में भी निजी निगम क्षेत्र (Private Sector Field) का हिस्सा मात्र 4.4 प्रतिशत था। एक लम्बे अर्से तक निजी निगम क्षेत्र का कुल बचत में बहुत कम योगदान होने का कारण भारतीय कम्पनियों की कार्यकुशलता के नीचे स्तर के फलस्वरूप इनकी लाभप्रदता का नीचा होना था। कम्पनियों के संचालकों तथा अन्य प्रबंधक अपने नियंत्रण की कम्पनियों के साधनों का बहुत दुरुपयोग करते हैं। इसके अलावा लाभांश (Dividends) के वितरण में भी प्रायः संयम से काम नहीं लिया जाता जिसकी वजह से कम्पनियों की अपनी बचत कम हो जाती है। सार्वजनिक क्षेत्र की असन्तोषजनक निष्पत्ति: सार्वजनिक क्षेत्र की असन्तोषजनक निष्पत्ति (Poor Performance) की वजह से इसका देश की बचतों में ज्यादा योगदान कभी भी नहीं रहा है। 1998-99 से लेकर 2002-03 तक (अर्थात लगातार पाँच वर्ष तक) इस क्षेत्र की बचत ऋणात्मक रही है। सार्वजनिक क्षेत्र की इस सम्बन्ध में असफलता के मुख्य रूप से दो कारण हैं– सरकार के बढ़ते हुए अनुत्पादक व्यय तथा सार्वजनिक उद्यमों की नीची लाभप्रदता दर।

5.8 हाल के वर्षों में बचत दर में वृद्धि के कारण (*Increasing Saving Rates in Recent Years*)

केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन (Central Statistical Organisation – CSO) के अनुमानों के अनुसार 2002-03 तथा उसके बाद से बचत दर में नाटकीय रूप से वृद्धि (Dramatic Growth in Saving Rate) हुई है, जिससे देश में समष्टि आर्थिक परिदृश्य (Macro Economic Scenario) में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो गया है। कम और अचल बचत स्तर के स्थान पर अब समष्टि आर्थिक परिदृश्य में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो गया है। कम और अचल बचत स्तर के स्थान पर अब समष्टि आर्थिक परिदृश्य उच्च व वर्द्धमान बचत दर (High and Incremental Saving Rate) वाला हो गया है। इन अनुमानों के अनुसार जहाँ सात वर्षों की अवधि 1994-95 से 2001-02 के बीच घरेलू बचत दर 24-25 प्रतिशत के आस-पास रही थी वहाँ वह 2001-02 में 23.5 प्रतिशत से बढ़कर 2002-03 में 26.4 प्रतिशत, 2003-04 में 29.8 प्रतिशत 2007-08 में 36.9 प्रतिशत तथा 2009-10 में 32.5 प्रतिशत हो गई। यद्यपि 32.5 प्रतिशत की बचत दर, चीन और पूर्वी व दक्षिण-पूर्वी एशिया में प्राप्त बचत दर से कम है (जो 38 से 40 प्रतिशत के बीच है) फिर भी इससे अर्थव्यवस्था की विकास संभावना का पूरा दृश्य बदल जाता है।

हाल के वर्षों में (खासतौर पर दसवीं योजना की अवधि में) निजी निगम क्षेत्र (Private Corporate Field) की बचतों में तेज वृद्धि (High Growth) हुई है। दसवीं योजना के प्रथम वर्ष में निजी निगम क्षेत्र में बचत सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product – GDP) 4.0 प्रतिशत थी जो 2007-08 में बढ़कर सकल घरेलू उत्पाद का 7.9 प्रतिशत तथा 2009-10 में 8.1 प्रतिशत हो गई। वस्तुतः इस अवधि में कुल बचत दर के तेजी से बढ़ने का मुख्य कारण निजी निगम क्षेत्र की बढ़ती हुई बचतें हैं। परन्तु जैसा कि आर. नागराज ने तर्क दिया है, निजी निगम क्षेत्र (Private Corporate Field) में बचत ज्ञात करने की विधि दोषपूर्ण है और इस क्षेत्र की वास्तविक बचत दर, सरकार द्वारा अनुमानित दर से संभवतः काफी कम है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

5.9 बचत की मात्रा में वृद्धि के लिए सुझाव
(Suggestions to Increase Amount of Savings)

भारत में वर्तमान ढाँचे को बनाए रख कर भी बचत को बढ़ा सकना सम्भव है। इसके लिए विभिन्न क्षेत्रों में भारी प्रयास करने होंगे। हम संक्षेप में कुछ महत्त्वपूर्ण उपायों पर विचार करेंगे:

गृह क्षेत्र (Household Sector)

(i) सरकार और रिज़र्व बैंक के ब्याज की दर को नियमित रूप से गिराने की नीति के प्रति सजग रहना चाहिए। नीची ब्याज की दर होने पर गृह क्षेत्र में बचत करने की प्रेरणा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

(ii) सरकार को मुद्रास्फीतिकारी प्रवृत्तियों को नियंत्रण में रखना चाहिए क्योंकि इनका बचत सामर्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

(iii) सरकार को उपभोग की टिकाऊ वस्तुओं के उत्पादन को या तो नियंत्रित करना चाहिए अथवा उस पर भारी उत्पादन शुल्क लगाया जाना चाहिए, इससे वस्तुओं पर व्यय कम होगा।

(iv) सरकार द्वारा बचत पर आय कर से छूट की सीमा बढ़ाई जानी चाहिए। उसका लाभ यह होगा कि अनेक लोग आय कर से कानूनी तौर पर बचने के लिए बचत करेंगे।

(v) ग्रामीण क्षेत्र में अब भी बैंकिंग आदत विकसित नहीं हुई है। इसलिए बहुत सारे लोग सामर्थ्य होते हुए भी बचत नहीं करते। गांव वालों में बैंकिंग आदत पैदा करने की दृष्टि से गांवों से अल्प बचतें एकत्रित कर पाना सम्भव होगा।

सार्वजनिक क्षेत्र (Public Sector)

(i) क्योंकि भारत में व्यापक स्तर पर करों की चोरी होती है अतः सरकार को इसके बचाव के लिए कर प्रशासन में सुधार के साथ प्रगतिशील कर व्यवस्था को अनुपालन करना चाहिए।

(ii) कृषि आय पर उसी तरह आयकर लगाया जाना चाहिए, जिस प्रकार व्यवसाय, उद्योग अथवा नौकरी से प्राप्त आय पर लगाये जाते हैं। क्योंकि कई बड़े किसान अपने अत्यधिक आय के बदले कर चुकाने से बच जाते हैं।

(iii) विलासितापूर्ण वस्तुओं पर सरकार को भारी कर लगाना चाहिए। अधिक सम्पन्न लोग इन वस्तुओं को हर स्थिति में खरीदना चाहते हैं, इसलिए कर की दर ऊँची होने पर भी सरकार की आय और अंततः बचत में वृद्धि होती है।

(iv) हालांकि सरकार अपने कर के दायरे में वस्तुओं और सेवाओं का विस्तार कर रही है, लेकिन सरकार ने बहुत सारी वस्तुओं और सेवाओं पर आर्थिक सहायता दे रखी है, जो ठीक नहीं है। भविष्य में धीरे-धीरे इन्हें समाप्त किया जाना चाहिए।

(v) सार्वजनिक क्षेत्र में स्थापित औद्योगिक इकाइयों की कार्यकुशलता के स्तर में सुधार करना चाहिए। इससे इनके लाभ में वृद्धि होगी।

(vi) सार्वजनिक क्षेत्र में स्थापित औद्योगिक इकाइयों की उत्पादन क्षमता का पूरा इस्तेमाल होना चाहिए। कच्चे माल के अभाव या अपर्याप्त माँग के कारण उत्पादन बन्द हो जाने से हानि होती है, इससे बचने के लिए सभी कोशिशें की जानी चाहिए।

निजी निगम क्षेत्र (Private Corporate Sector)

(i) कम्पनियों के संचालकों और दूसरे उच्च प्रबन्धकों के खर्चों पर प्रतिबन्ध लगाए जाने चाहिए। कम्पनियों के उच्च प्रबन्धक और संचालक बहुत सारे निजी खर्चे कम्पनी के खातों में डालते रहते हैं। इस अनुचित कार्यवाही पर रोक लगाई जानी चाहिए।

(ii) कम्पनियों द्वारा नियुक्त किए जाने वाले उच्च अधिकारियों के वेतन और उन्हें दी जाने वाली सुविधाओं पर प्रतिबन्ध लगाकर निजी निगम क्षेत्र में बचत की मात्रा में वृद्धि की जा सकती है।

(iii) कम्पनी द्वारा लाभांश की घोषणा और उसके वितरण पर भी प्रतिबन्ध लगाया जाना चाहिए।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

उत्पादन की संवृद्धि दर (Growth Rate) बढ़ाने के लिए निवेश की मात्रा अर्थात (Growth Domestic Investment – GDI) बढ़ाने की आवश्यकता है, लेकिन निवेश की मात्रा के साथ निवेश की गुणवत्ता/उत्पादकता बढ़ाना भी आवश्यक है। निवेश की गुणवत्ता को हम वर्द्धमान पूंजी उत्पाद अनुपात (Incremental Capital Output Ratio – ICOR) के संदर्भ में समझते हैं।

5.10 वर्द्धमान पूंजी उत्पाद अनुपात *(Incremental Capital Output Ratio – ICOR)*

(Incremental Capital Output Ratio – ICOR): उत्पादन में इकाई वृद्धि के लिए पूंजी में वांछित वृद्धि के आनुपातिक मूल्य को ICOR कहते हैं।

$$ICOR = \frac{\Delta C}{\Delta O}$$

[ΔC = पूंजी में परिवर्तन (Change in Capital)]
[ΔO = उत्पाद में अन्तर (Change in Output)]

इसे इस उदाहरण से समझा जा सकता है कि यदि किसी उद्योग में 4 करोड़ (ΔC_1) की पूंजी लगाकर व्यवसाय में 1 करोड़ (ΔO_1) की वृद्धि की जाती है और उसी उद्योग में केवल 3 करोड़ (ΔC_2) की पूंजी लगाकर व्यवसाय में 1 करोड़ (ΔO_2) की वृद्धि की जाती है तो स्पष्टतः पहला निवेश जिसका ICOR कम है वह अधिक फायदेमंद है, क्योंकि यहाँ निवेश की गुणवत्ता/उत्पादकता अधिक है, अर्थात् कम पूंजी लगाकर अधिक लाभ कमाया जा रहा है।

इसी प्रकार यदि एक विद्यार्थी 14 घंटे लगाकर 15 पृष्ठ पढ़ता है, वहीं दूसरा विद्यार्थी 13 घंटे लगाकर 15 पृष्ठ पढ़ता है, यहाँ दूसरे विद्यार्थी की क्षमताएं पहले विद्यार्थी से अधिक है, अर्थात् उसका ICOR कम है।

अतः स्पष्ट है कि केवल निवेश बढ़ाना ही पर्याप्त नहीं है, ICOR कम करना भी आवश्यक है।

5.11 ICOR तथा COR में संबंध *(Relation between ICOR and COR)*

पूंजी-उत्पाद अनुपात (Capital Output Ratio – COR): एक निश्चित उत्पादन के लिए वांछित कुल पूंजी के आनुपातिक मूल्य को पूंजी-उत्पाद अनुपात (Capital Output Ratio – COR) कहते हैं।

$$COR = \frac{C}{O}$$

यदि किसी उद्योग ने अपने आरंभ से अभी तक 25,000 करोड़ की पूंजी लगाई (निवेश) है और 5,000 करोड़ का उत्पादन (Output) किया है, तो उद्योग के COR का मान 5 होगा।

ICOR – एक समय अवधि के लिए आकलन होता है तो वहीं,

COR – किसी समय बिंदु पर आकलन होता है।

यदि ICOR का मूल्य COR (आरंभिक) से कम होता है तो उत्तरवर्ती COR का मूल्य आरंभिक COR से कम हो जाता है। जैसे-जैसे ICOR का मूल्य कम होता जाता है, वैसे-वैसे COR का मूल्य भी कम होता जायेगा।

अतः इतने विश्लेषण से स्पष्ट है कि किसी संस्था के ICOR का मान जितना कम होगा, उसकी साख (Credit) उतनी ऊँची होगी। यह भी स्पष्ट है कि ICOR का मूल्य कभी भी शून्य (Zero) नहीं हो सकता है।

ICOR को प्रभावित करने वाले 2 कारक

- **बहिर्जात (Exogenous)** – जो कारक निवेशक के काबू में न हो, उन्हें बहिर्जात कारक कहते हैं।
  - शासन की व्यापकता एवं गुणवत्ता
  - बुनियादी ढाँचे की व्यापकता एवं गुणवत्ता
- **अन्तर्जात (Endogenous)** – जो कारक निवेशक के काबू में हों, उसे अन्तर्जात कहते हैं।
  - श्रम (प्रयास) की उत्पादकता
  - पूंजी की उत्पादकता/गुणवत्ता
  - श्रम-पूंजी संगठन की उत्पादकता

Copyright – Drishti The Vision Foundation

5.12 भारत में उच्च बचत के बाद भी निम्न निवेश के कारण
(Despite of High Savings, Unsatisfactory Level of Investment in India)

पिछले कुछ वर्षों में निवेश की दर में पर्याप्त सुधार हुआ है, लेकिन फिर भी निवेश का जो स्तर रहा है, उच्च संतोषजनक नहीं कहा जा सकता।

पहली पंचवर्षीय योजना को छोड़कर अब तक की सभी पंचवर्षीय योजनाओं में राष्ट्रीय आय में वार्षिक वृद्धि की दर का लक्ष्य 5% से अधिक रहा है और वर्तमान वर्षों में सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि का लक्ष्य भी 8-9% प्रतिवर्ष रखा गया है। पूंजी उत्पाद अनुपात (Capital Output Ratio) को 4.4 लेने पर इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए निवेश की दर कम से कम 34% होनी चाहिए। लेकिन 2005-06 से 2008-09 की समय अवधि को छोड़कर निवेश दर इस स्तर के ऊपर नहीं पहुँच सकी थी।

पुन: ऐसी आशा व्यक्त की गई थी कि 1967-68 पर निवेश की दर को निवल घरेलू उत्पाद (Net Domestic Product) का 20% कर लिया जायेगा। लेकिन 1960-61 में ही यह ज्ञात हो गया कि आय के वर्तमान स्तर पर इस लक्ष्य को 1967-68 तक प्राप्त नहीं किया जा सकेगा और इस कारण तीसरी योजना में निवेश के स्तर की प्राप्ति के लिए समयावधि बढ़ा दी गई। हालाँकि 1978-79 में निवल निवेश की दर 19.1% पहुँच गई परन्तु इस लक्ष्य की पूरी प्राप्ति नहीं कहा जा सकता।

अन्य देशों से अधिक बचत के बाद भी निवेश की दर न केवल विकसित देशों की तुलना में कम है, बल्कि अल्पविकसित देशों की तुलना में भी कम है। देखा गया है कि अधिक बचत करने वाले देशों, जैसे चीन, दक्षिण कोरिया, सिंगापुर ने निवेश की दर को भी 20% या उससे ऊपर पहुँचाने में सफलता प्राप्त की है। परन्तु भारत इस दर के आस-पास पिछले कुछ वर्षों में ही पहुँच सका है।

सार्वजनिक क्षेत्रों में भी स्थिति बहुत अच्छी नहीं कही जा सकती। क्योंकि सरकारी क्षेत्र में सार्वजनिक धन का अत्यधिक अपव्यय होता है। सरकारी क्षेत्र में सार्वजनिक उद्यमों में भारी पूंजी का निवेश होता है लेकिन उनमें वांछित उत्पादन नहीं हो पाता, क्योंकि सार्वजनिक उद्यमों को पूरा करने में अनावश्यक समय लगता है और उनकी कार्यक्षमता का स्तर भी नीचा होता है। अनेक सार्वजनिक उद्यम अपनी पूरी क्षमता का इस्तेमाल नहीं करते और उत्पादों के संबंध में उनकी नीतियाँ भी गलत होती हैं। हालांकि हाल के वर्षों में सार्वजनिक क्षेत्र को विभिन्न इकाइयों से लाभ प्राप्त होने लगा है, लेकिन फिर भी 2009-10 में सकल घरेलू बचत में सार्वजनिक क्षेत्र का भाग केवल 6.3% था जबकि कुल निवेश में इनका हिस्सा 25% था। भारत की आर्थिक आयोजन के संबंध में भी व्यवहार में कई दोष देखे गये हैं। जैसे कुछ क्षेत्रों का अत्यधिक विकास हुआ है तो कुछ क्षेत्र अल्पविकसित रह गये हैं।

भारत में काफी लंबे समय से सकल बचत का 80% प्रतिशत से अधिक गृह क्षेत्र (House Hold Sector) द्वारा किया गया है। इस क्षेत्र के बचत को निवेश में परिणत करने के लिए यह आवश्यक है कि इनके बचत को उन लोगों तक पहुँचाया गया, जो निवेश करते हैं। परंतु भारत में वित्तीय साधन का एकत्रण पर्याप्त नहीं है। देखा गया है कि भारत में योजना की संपूर्ण अवधि का एक तिहाई निवेश सार्वजनिक क्षेत्र में हुआ है। कि अभी तक देश में बैंकिंग आदत का पर्याप्त विकास न होने के कारण अनेक लोगों की बचतें उत्पादक कार्यों के लिए नहीं हो पाती। इसके अलावा कृषि आय पर कर देने की व्यवस्था भी नहीं है। जिससे गांव के बड़े किसान अच्छी आय पर भी कर से बच जाते हैं और इस प्रकार बचत का दुरुपयोग होता है।

निवेश बढ़ाने के लिए बचत बढ़ाना जरूरी है:

बचत सृजन → बचत उगाहन → बचत निवेश

बचत सृजन : जैसा कि हम एंजल वक्र (Engle's Curve) में पढ़ चुके हैं कि आय बढ़ने से बचत क्षमता का विकास होता है। बचत सृजन एक हद तक मानसिकता पर भी निर्भर होती है, जिसे औसत बचत प्रवृत्ति (Average Propensity to Save – APS) कहते है। इसे इस प्रकार समझा जा सकता है, यदि किसी व्यक्ति की आय ` 10,000 प्रतिमाह है और वह 2,000 की बचत कर पाता है तो उसका $APS = \frac{S}{Y} = \frac{2000}{10000} = .2$ होगा।

आय का वह अंश जिसे कोई व्यक्ति बचाने का आदी हो, उसे औसत बचत प्रवृत्ति कहेंगे।

इसी प्रकार आय का वह अंश जिसे व्यक्ति उपभोग पर व्यय करने का आदी हो, उसे औसत उपभोग प्रवृत्ति (Average Propensity to Consume) कहेंगे। इसे इस उदाहरण से समझा जा सकता है कि यदि किसी व्यक्ति की आय ` 10,000 प्रतिमाह है और वह 8,000 का उपभोग व्यय करता है तो उसका $APC = \frac{C}{Y} = \frac{8000}{10000} = .8$ होगा।

$$\boxed{\underset{.2}{APS} + \underset{.8}{APC} = 1}$$

Copyright – Drishti The Vision Foundation

उपरोक्त सूत्र से जाहिर है कि उपभोग प्रवृत्ति में वृद्धि के साथ बचत प्रवृत्ति में गिरावट होती है और बचत प्रवृत्ति में वृद्धि के साथ उपभोग प्रवृत्ति में गिरावट होती है। ऐसे व्यक्तियों को जिनमें अविवेकपूर्ण उपभोग की उच्च प्रवृत्ति होती है, उसे भोगवादी/उपभोक्तावादी व्यक्ति कहते हैं और उनकी मानसिक आदत को भोगवाद (Consumerism) कहते हैं। अभी भी ग्रामीण व्यक्तियों में भोगवादी मनोवृत्ति ज्यादा देखी जाती है, जो संस्कारी कहलाने के लिए एक विशेष प्रकार के 'संस्कार सिद्धांत' में विश्वास रखते हैं।

अतः बचत की प्रवृत्ति को बढ़ावा देने के लिए ताकि निवेश में भी वृद्धि हो, आयोजन के शुरूआती दौर से ही सरकार ने दो प्रकार के कार्यक्रमों को बढ़ावा दिया है।

- बाध्यकारी कार्यक्रम (Compulsory Programme)
  - प्रत्यक्ष बाध्यकारी कार्यक्रम
    - भविष्य निधि में बाध्यकारी अंशदान
    - पेंशन निधि में बाध्यकारी अंशदान
    - स्वास्थ्य निधि में बाध्यकारी अंशदान
    - बीमा निधि में बाध्यकारी अंशदान
  - परोक्ष बाध्यकारी कार्यक्रम
    - विभिन्न प्रकार की वस्तुओं एवं सेवाओं, विशेषकर आरामदायक, विलासितापूर्ण एवं प्रदर्शनकारी वस्तुओं एवं सेवाओं पर करों की दरों को सरकार ने बढ़ते हुए क्रम में ऊँचा कर दिया है।
- प्रेरक/उत्साहवर्धक कार्यक्रम (Motivational Programme)
  - भविष्य निधि में अतिरिक्त अंशदान पर कर की छूट
  - पेंशन निधि में अतिरिक्त अंशदान पर कर की छूट
  - स्वास्थ्य निधि में अतिरिक्त अंशदान पर कर की छूट
  - शिक्षा निधि में अंशदान-अपने परिजनों के शिक्षा पर किये गये खर्च पर कर की छूट
  - सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश पर कर की छूट
  - बुनियादी ढाँचा कंपनियों द्वारा जारी Bond में निवेश पर कर की छूट
  - पारस्परिक निधि (Mutual Fund) में निवेश पर कर की छूट
  - सावधि जमा पर कर की छूट
  - आवास क्रय में किये गए निवेश के कारण देय ब्याज राशि पर कर की छूट
  - यदि कोई व्यक्ति दान-दक्षिणा (Philanthropy) करता है तो उस पर कर की छूट

Copyright – Drishti The Vision Foundation

5.13 बचत सृजन, बचत उगाहन तथा बचत का निवेश
(Generating Savings, Accumulating Savings and Investment of Savings)

(i) बचत सृजन : औसत बचत प्रवृत्ति (Averge Propensity to Save)

(ii) बचत उगाहन : वित्त प्रणाली : जमा ब्याज दर (बैंकों में पैसा जमा करने वालों को जो ब्याज दर)

- क्षमता
- आंचलिक प्रसार
- कार्य कुशलता (वित्तीय कार्यकर्त्ताओं की कार्यकुशलता)

[ब्याज दर ज्यादा तो उगाहने की प्रक्रिया ज्यादा]

(iii) बचत का निवेश :

आपूर्तिपक्षीय कारक	मांगपक्षीय कारक
1. निवेश निधि की मात्रा स्वयं के कारकों पर निर्भर।	1. उपभोक्ता वस्तुओं और सेवाओं की मांग (जैसे-जैसे मांग बढ़ती है निवेश निधि की मांग बढ़ती है)
2. ऋण के ऊपर देय ब्याज (i) यदि ऋण ब्याज दर कम होगा तो निवेश की मात्रा बढ़ेगी।	2. प्रत्यक्ष मांग — कीमत स्तर में वृद्धि से उत्पादन की मात्रा में ज्यादा वृद्धि (ब्याज की कीमत बढ़ने पर किसानों द्वारा प्याज का अधिक उत्पादन।

भारत में उच्च बचत एवं निम्न निवेश के विरोधाभास की व्याख्या

एक ओर जहाँ भारत में बचत की दर 38% के लगभग रही है, जो कि अन्य किसी भी देश की तुलना में काफी अधिक है, वहाँ इतने उच्च बचत के बाद भी निवेश उस स्तर का नहीं है। ज्यादा पूंजी बचाने के बाद भी उच्च निवेश तभी संभव है, जब जमा उगाही की प्रक्रिया सुचारू रूप से चले। साधारणतः ऋण ब्याजदर ऊँचा होता है जिसके कारण निवेश में कमी आ जाती है। कई वस्तुओं की कीमत कम होने के कारण मुनाफा कम होता है और इस प्रकार निवेश में पुनः कमी आती है।

हाल-फिलहाल की वैश्विक मंदी के कारण भी विदेशों में भारतीय वस्तुओं की मांग में कमी आई है, और इस कारण निर्यात क्षेत्र के अंदर भी निवेश में कमी आई है। यह भी सत्य है कि ग्रामीण बचत का एक बहुत बड़ा हिस्सा अनुत्पादक कार्यों में खर्च हो जाता है।

विभिन्न आयोजनों में निवेश का नीचा स्तर

भारत की विभिन्न आर्थिक आयोजनों में निवेश की दर में पर्याप्त सुधार हुआ है, लेकिन फिर भी निवेश की इस दर को संतोषजनक नहीं माना जा सकता। पहली पंचवर्षीय योजना में आशा की गई थी कि 1967-68 तक निवेश की दर निवल घरेलू उत्पाद का 20% हो जायेगी, लेकिन 1961 में यह समझ में आने लगा कि आय के वर्तमान स्तर पर यह लक्ष्य 1967-68 तक प्राप्त नहीं हो पायेगा और इसकी समय सीमा को बढ़ाकर पाँचवीं पंचवर्षीय योजना के अंतिम वर्ष को लक्ष्य माना गया। 1978-79 में निवल निवेश की दर 19.1% तक पहुँच गई। परंतु यह कहना कि लक्ष्य की सम्पूर्ण तरीके से प्राप्ति हुई, सही नहीं होगा। वास्तविक स्थिति यह है कि आयोजन के पहले तीन दशकों में घरेलू पूंजी निर्माण की दर 20% तक नहीं पहुँच सकी।

भारत में निवेश की दर अन्य विकासशील तथा अल्पविकसित देशों की तुलना में ही कम रही। जैसे कि- दक्षिण कोरिया, चीन, मलेशिया, थाईलैंड, सिंगापुर आदि कई देशों में निवेश की दर 90 के दशक तक में ही 30% या उससे ऊपर पहुँचने में सफल रही है। परंतु, भारत पूंजी निर्माण की यह तय स्तर अभी पिछले 3-4 वर्षों में ही प्राप्त कर सका है।

भारत में उच्च निवेश एवं निम्न संवृद्धि दर के विरोधाभास की व्याख्या

भारत के कई उत्पादन क्षेत्रों जैसे- बिजली उत्पादन, भारी उद्योग आदि का ICOR अन्य उद्योगों जैसे-संचार, होटल व्यवसाय आदि से काफी अधिक है। (संचार का ICOR - 0.6, होटल और रेस्तराँ व्यवसाय का ICOR - 0.7 तथा बिजली उत्पादन का ICOR -

Copyright – Drishti The Vision Foundation

16.7 है) अतः अधिक पूंजी निवेश के बाद भी पूंजी निर्माण उसके अनुरूप नहीं हो पाता। पुनः निम्न श्रम कौशल, निम्न प्रबंधन कौशल के साथ बुनियादी ढाँचे एवं शासन की निम्न गुणवत्ता एवं कम व्यापकता के कारण भी उच्च निवेश के बाद भी वांछित संवृद्धि दर प्राप्त होने में कठिनाई होती है।

भारत में निम्न आय एवं उच्च बचत के विरोधाभास की व्याख्या

चूँकि भारत में बचत की प्रवृत्ति दुनिया के कई अन्य देशों के सापेक्ष ऊँची है, इसलिए कम प्रतिव्यक्ति आय के बावजूद बचत दर ऊँची है। आजादी के बाद आम जनता में मूल अधिकारों के प्रति चेतना में अत्यधिक वृद्धि हुई है और लोग अपने हित के प्रति अधिक सजग हुए हैं। भविष्य के जीवन के प्रति बचत की चेतना में भी वृद्धि हुई है और इसके साथ ही परंपरागत संस्कार चेतना धीरे-धीरे कमजोर हो रही है। सरकार ने बचत को प्रभावी करने के लिए कई बाध्यकारी तथा उत्साहवर्द्धक कार्यक्रमों का विस्तार किया है, जिनकी चर्चा पूर्व में की जा चुकी है।

उच्चस्तरीय समितियाँ

बचत एवं निवेश पर उच्च स्तरीय समिति ने बचत तथा निवेश के आंकड़ों की संग्रहण पद्धतियों में सुधार करने के लिए सुझाव हेतु उच्च स्तरीय समिति का गठन केन्द्र सरकार द्वारा डॉ० सी० रंगराजन की अध्यक्षता में 31 दिसम्बर 2007 को किया गया।

सार्वजनिक व्यय के बेहतर प्रबंधन हेतु सुझाव देने के लिए उच्चस्तरीय समिति सार्वजनिक व्यय (Public Expenditure) के बेहतर प्रबंधन के लिए सुझाव देने हेतु प्रधानमंत्री ने अपने आर्थिक सलाहकार परिषद् (Economic Advisory Council) के अध्यक्ष डॉ० सी० रंगराजन की अध्यक्षता में 8 सदस्यीय उच्च स्तरीय समिति का गठन अप्रैल 2010 में किया है। यह समिति सरकार के खर्च को योजना व्यय (Plan Expenditure) तथा गैर-योजना व्यय (Non Plan Expenditure) में विभाजित करके मौजूदा व्यवस्था को खत्म करने का कार्य योजना भी सुझाएगी।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–6 *(Unit–6)*

बैंकिंग तथा वित्त प्रणाली : भाग-1
Banking & Finance : Part-1

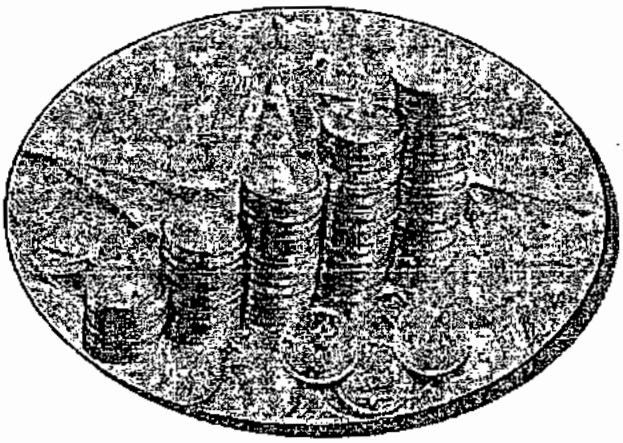

6.1 बैंकिंग तथा वित्त प्रणाली
(Banking & Finance)

6.2 वित्त
(Finance)

6.3 वाणिज्य बैंक
(Commercial Bank)

6.4 भारत में बैंकिंग विकास
(Development of Banks in India)

6.5 भारत में बैंकिंग उद्योग
(Banking Industry in India)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

6.1 बैंकिंग तथा वित्त प्रणाली *(Banking & Finance System)*

वित्त प्रणाली/बाजार (Finance/Market System)	
मुद्रा बाजार (Money Market)	**पूँजी बाजार (Capital Market)**
औपचारिक/संगठित	
1. वाणिज्यिक बैंक : 1806	1. DFI (विकास वित्त संस्थान) : ~~1806~~ 1991-8
2. RRB : 1975	2. प्रतिभूति बाजार : 1875
3. सहकारी बैंक : 1904	3. निवेश संस्थाएँ : 1904
4. Call Market :	4. NBFC (गैर वित्त) :
5. रेपो Market : 1994	5. Venture Capital Fund : 1992
6. Money Market : 1992	
7. Mutual Fund :	
अनौपचारिक/असंगठित	
श्रेष्ठि, सेटटी, सेठ, चेट्टी, महाजन (परंपरागत सारे)	

औपचारिक वित्त बाजार का उदय 1806 ई० से हुआ।

वित्तीय प्रणाली (Financial System) से आशय बाजार के उन संस्थाओं से है, जो अर्थव्यवस्था में बचत को बढ़ाने (Increasing Savings in Economy) तथा उसके कुशलतम प्रयोग (Optimum Utilisation) की ओर गतिशीलता बढ़ाने में भूमिका अदा करते हैं।

6.2 वित्त *(Finance)*

वित्त (Finance): मुद्रा के उपयोग के अधिकार को वित्त कहते हैं।

वित्तीय विनिमय (Financial Transaction): उधार में मुद्रा लेने एवं ऋण देने की क्रियाओं को वित्तीय विनिमय कहते हैं।

वित्त बाजार (Financial Market): एक ऐसी संस्थागत व्यवस्था, जिसमें नियमित रूप से क्रेता एवं विक्रेता वित्त का विनिमय करते हैं, वित्त बाजार कहलाता है।

भारतीय वित्त प्रणाली (Finance System) के दो प्रमुख अंग या भाग हैं:-

(i) मुद्रा बाजार (Money Market)

(ii) पूंजी बाजार (Capital Market)

मुद्रा बाजार (Money Market): मुद्रा बाजार एक ऐसी संस्था है, जहाँ मौद्रिक संपत्तियाँ सामान्यत: अल्पकालीन (Short Term) या एक वर्ष से कम अवधि के लिए व्यवहार में लाई जाती हैं। मुद्रा बाजार (Money Market) के द्वारा ही रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया (RBI) तरलता (Liquidity) की मात्रा नियंत्रित करता है। मुद्रा बाजार को मुख्यत: दो भागों में बाँटा जा सकता है:-

औपचारिक/संगठित (Formal / Organized)

अनौपचारिक/असंगठित (Informal / Unorganized)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था (Indian Economy) में रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया (RBI) को शीर्ष स्थान प्राप्त हैं। यह मुद्रा बाजार में तरलता (Liquidity) को नियंत्रित कर सकता है तथा ऋण की उपलब्धता को प्रभावित भी करता है। इसलिए, मुद्रा बाजार में रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया (RBI) की प्रमुख भूमिका होती है। संगठित मुद्रा बाजार वाणिज्यक बैंकों के कार्यों द्वारा अधिक प्रभावित होता है।

संगठित क्षेत्र (Organized Sector) के तीव्र विस्तार के बावजूद भी भारतीय मुद्रा बाजार (Indian Money Market) में एक असंगठित क्षेत्र (Unorganized Sector) है। देशी बैंकर्स (श्रेष्ठि, सेट्टी, सेठ, चेट्ठी, महाजन) तथा ग्रामीण साहुकार इसके प्रमुख अंग हैं। बैंकिंग क्षेत्र के तीव्र विस्तार के बावजूद अब भी ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण साहुकारों पर निर्भरता बहुत अधिक पाई जाती है। हालाँकि नाबार्ड (Nabard) द्वारा चलाया गया Self Help Group (SHG) कार्यक्रम (Scheme) उल्लेखनीय है। (SHG) लोगों का एक स्वैच्छिक संगठन है, जो कुछ मिलते-जुलते लक्ष्यों (Common Targets) को प्राप्त करने के लिए बनाया जाता है।

पूंजी बाजार (Capital Market): पूंजी बाजार में संपत्तियाँ या प्रतिभूतियाँ (Securities) मध्यम या दीर्घकाल (एक वर्ष से अधिक) के लिए व्यवहार में लाई जाती है। पूंजी बाजार का प्रमुख कार्य है– उन क्षेत्रों से जहाँ बचत आधिक्य है, से पूंजी निकालकर उन क्षेत्रों तक पहुँचाना जिनमें बचत की माँग है। इस प्रकार पूंजी बाजार अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों से बचत की गतिशीलता बढ़ाने के लिए तथा उन्हें उत्पादक क्षेत्रों की ओर निर्देशित करने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पूंजी बाजार (Capital Market) को दो बाजारों में बाँटा जाता है:- प्राथमिक (Primary) पूंजी बाजार तथा द्वितीयक (Secondary) पूंजी बाजार।

प्राथमिक बाजार (Primary Market)

यह नये निर्गमनों (New issues) का बाजार है। यह पूंजी बाजार (Capital Market) का वह अंग है जिसमें सभी प्रतिभूतियाँ (Securities) पहली बार बाजार में बिकने के लिए आती हैं। उल्लेखनीय है कि प्राथमिक बाजार (Primary Market) में घरेलू तथा विदेशी (Domestic & Foreign) दोनों ही फंड की उगाही हो सकती है।

द्वितीयक बाजार (Secondary Market)

यह पुरानी प्रतिभूतियों (Older Securities) के व्यापार का बाजार है। सेकेण्डरी मार्केट के अन्तर्गत कानून के अनुसार स्वीकृति प्राप्त रजिस्टर्ड स्टॉक एक्सचेंज (Registered Stock Exchange) आता है।

क्योंकि, पूंजी बाजार की संस्थाएँ दीर्घकालिक ऋण (Long Term Loans) देती है, अतः इससे उत्पादन क्षमता (Productive Capacity) के विस्तार में मदद मिलती है। मुद्रा बाजार और पूंजी बाजार का अंतर प्रायः 1991 के वित्तीय सुधार के पहले किया जाता था, अब इसका उतना महत्व नहीं है।

पुनः क्योंकि अल्पविकसित देशों (Less Developed Countries) में क्षमता विस्तार की संभावनाएँ ज्यादा होती हैं, इसलिए ऐसे देशों में पूंजी बाजार की आवश्यकता ज्यादा होती है और जो देश विकसित अर्थव्यवस्था (Developed Economy) बन चुका है उनके लिए मुद्रा बाजार की प्रासंगिकता अधिक होती है। 1947 से 1991 तक की भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए मुद्रा बाजार अधिक प्रासंगिक था, लेकिन 1991 के बाद भारत सरकार ने पूंजी बाजार को प्रोत्साहित करने को वरीयता दी।

1991 के बाद नई आर्थिक नीति (New Economic Policy-1991) अपनाई गई और एक व्यापक आर्थिक सुधार कार्यक्रम चलाया गया। जिसका महत्त्वपूर्ण अंश था **'वित्त बाजार का सुधार'**। वित्त बाजार के सुधार के लिए सरकार ने 'नरसिंहम् समिति-I' की सिफारिशें आमंत्रित की और उसे लागू भी किया गया। हालाँकि, इस समिति की सिफारिशों का मुख्य बल बैंकिंग सुधार पर था, लेकिन अन्य संस्थाओं में सुधार की सिफारिशें भी साथ में थीं।

(समिति की सिफारिशों पर विस्तृत चर्चा कक्षा में आगे की जायेगी)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

6.3 o kf. kfT; d c8 *(Commercial Bank)*

वाणिज्यिक बैंक (Commercial Bank) का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जाता है:-

वाणिज्यिक बैंक (Commercial Bank)

- अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक (Schedule Commercial Banks) (86)
  - देशी बैंक (48) (Domestic Banks)
    - सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक (Public Sector Banks) (26)
      - गैर-राष्ट्रीयकृत (Non-Nationalized) (7)
      - राष्ट्रीयकृत (Nationalized) (19)
    - निजी क्षेत्र के बैंक (Private Sector Banks) (22)
      - पुरानी पीढ़ी के बैंक (Banks of Old Generation)
      - नई पीढ़ी के बैंक (Banks of New Generation)
  - विदेशी बैंक (38) (Foreign Banks)
- गैर-अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक (Non-Schedule Commercial Banks)

वाणिज्यिक बैंक (Commercial Bank) की

- **कानूनी परिभाषा (Judicial Definition)**
  भारतीय बैंकिंग अधिनियम 1949 के तहत वाणिज्यिक बैंक के रूप में पंजीकृत किसी वित्त संस्था को वाणिज्यिक बैंक कहते हैं।
- **प्रकार्यात्मक परिभाषा (Functional Definition)**
  एक ऐसी वित्त संस्था, जो आवश्यक रूप से माँग जमा (अल्पकालिक जमा) उगाहने तथा साख सृजन की प्रक्रिया द्वारा ऋण वितरण के लिए अधिकृत हो, वाणिज्यिक बैंक कहलाती है।

वाणिज्यिक बैंकों के कार्य (Functions of Commercial Banks): वाणिज्यिक बैंकों के कार्यों को 2 भागों में बाँटा जाता है:

- मुख्य कार्य (Primary Functions)
- गौण कार्य (Secondary Functions)

(क) मुख्य कार्य (Primary Functions): बैंकों के दो मुख्य कार्य हैं- (i) जमा स्वीकार करना, और (ii) ऋण देना।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

(i) **जमा स्वीकार करना (Accepting Deposits):** एक बैंक जनता से जमा ग्रहण करता है। लोग अपनी नकदी को या तो चैक-जमाओं (Cheque Deposits) या गैर-चैक जमाओं (Non-cheque Deposits) के रूप में जमा करा सकता है। चैक जमाएँ वे जमाएँ होती हैं, जिन्हें किसी भी समय चैक जारी करके निकलवाया जा सकता है। गैर-चैक जमाएँ वे जमाएँ होती हैं, जिन्हें चैक जारी करके किसी भी समय निकलवाया नहीं जा सकता है। इसकी बजाए, इन जमाओं को बैंक, एक निश्चित समय अवधि के लिए, कोष के रूप में अपने पास रखता है। अत: इन जमाओं को निश्चितकालीन या सावधि जमा (Fixed or Time Deposits) भी कहा जाता है।

(ii) **ऋण देना (Advancing Loans):** वाणिज्यिक बैंकों का एक अन्य मुख्य कार्य ऋण देना है। बैंक अधिकतर उत्पादक कार्यों (Productive Purposes) के लिए अनुमोदित जमानत (Approved Security) पर ऋण देते हैं। सामान्यतया ऋण की राशि जमानत के मूल्य से कम होती है। स्मरण रहे कि ऋण की राशि कभी भी नकद रूप में नहीं दी जाती। सभी ऋणों को बैंकों की माँग जमाओं के रूप में दिखाया जाता है क्योंकि सभी जमाएँ एक ही समय पर नहीं निकलवाई जाती इसलिए बैंक कुल माँग जमाओं का केवल एक अल्प प्रतिशत ही अपने पास नकद कोष के रूप में रखते हैं। अत: बैंक अपने नकद कोषों से कई गुणा अधिक ऋण देते हैं। इस प्रकार बैंक साख का निर्माण (Credit Creation) करते हैं अथवा अर्थव्यवस्था में मुद्रा की पूर्ति में वृद्धि करते हैं।

(ख) **गौण कार्य (Secondary Functions):** बैंक उपरोक्त प्राथमिक कार्यों के अतिरिक्त कई गौण कार्य भी करते हैं। जैसे- (i) एजेंट के रूप में कार्य और (ii) सामान्य उपयोगिता सेवाएँ।

(1) **एजेंट के रूप में कार्य (Agency Functions):** बैंक अपने ग्राहकों के लिए विभिन्न तरीकों से एजेंट का कार्य करता है:

(i) **विभिन्न मदों का एकत्रीकरण और भुगतान (Collection and Payment of Various Items):** बैंक अपने ग्राहकों की ओर से चैक, किराया, ब्याज इत्यादि एकत्र करता है और इसी प्रकार उनकी ओर से करों, बीमा की किस्तों इत्यादि का अदायगी करता है।

(ii) **प्रतिभूतियों की खरीद तथा बिक्री (Purchase and Sale of Securities):** बैंक अपने ग्राहकों के लिए विभिन्न प्रकार के शेयर्स तथा स्टॉक की जानकारी प्राप्त करके उनकी ओर से प्रतिभूतियों को खरीदने, बेचने तथा उनको सुरक्षित रखने का कार्य भी करता है।

(iii) **ट्रस्टी तथा प्रबंधक (Trustee and Executor):** बैंक अपने ग्राहकों के आदेश पर उनकी संपत्ति के ट्रस्टी तथा प्रबंधक का कार्य भी करते हैं।

(iv) **रुपया भेजना (Remitting of Money):** एक स्थान से दूसरे स्थान पर रुपया भेजना भी बैंकों का एक महत्वपूर्ण कार्य है। यह कार्य बैंक ड्राफ्ट द्वारा किया जाता है।

(v) **विदेशी मुद्रा का क्रय-विक्रय (Purchase and Sale of Foreign Exchange):** बैंक विदेशी मुद्रा का क्रय-विक्रय करके अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ावा देते हैं। यह कार्य अधिकतर विदेशी विनिमय बैंकों द्वारा किया जाता है।

(vi) **संदर्भ पत्र (Letter of References):-** बैंक अपने ग्राहकों की आर्थिक स्थिति की सूचना देश-विदेश के व्यापारियों को देते हैं (तथा देश-विदेश के व्यापारियों की आर्थिक स्थिति की सूचना अपने ग्राहकों को देते हैं)।

(vii) **नये शेयरों के अविक्रित अंशों के खरीदने का आश्वासन (Under writing):** बिना बिके हुए नये शेयरों को खरीदने का बैंक आश्वासन देते हैं। इसका अर्थ यह है कि अपनी ओर से नये शेयरों के अविक्रित भाग को संपूर्ण या आंशिक रूप से खरीदते हैं।

(2) **सामान्य उपयोगिता की सेवाएँ (General Utility Services):** वाणिज्यिक बैंक समाज को कई साधारण उपयोगिता की सेवाएँ भी प्रदान करते हैं, वे हैं:

(i) **लॉकर की सुविधाएँ (Locker Facilities):** बैंक अपने ग्राहकों को लॉकर की सुविधाएँ भी प्रदान करता है, जिनमें लोग अपने सोने-चाँदी जैसे-मूल्यवान जेवरात तथा महत्वपूर्ण कागजात सुरक्षित रख सकते हैं। इसका वार्षिक किराया बहुत कम होता है।

(ii) **यात्री चैक तथा साख प्रमाण पत्र (Traveller's Cheques and Letters of Credit):** बैंक अपने ग्राहकों को यात्रा जाते समय नकद राशि साथ न ले जाकर सुविधा और सुरक्षा की दृष्टि से यात्री चैक तथा साख प्रमाण पत्रों की सुविधा प्रदान करता है। इसके फलस्वरूप यात्री निश्चित होकर यात्रा कर सकते हैं।

(iii) **वाणिज्यिक सूचनाएँ एवं आँकड़े (Business Information and Statistics):** बैंक आर्थिक स्थिति से परिचित होने के कारण व्यापार संबंधी सूचनाएँ एवं आँकड़े एकत्रित करके अपने ग्राहकों को वित्तीय मामलों पर सलाह देते हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

(iv) वस्तुओं के वहन में सहायता (Help in Transportation of Goods): बड़े-बड़े व्यापारी अपने ग्राहकों को माल भेजकर उसकी बिल्टी बैंक में भेज देते हैं। खरीददार बैंक में रुपये जमा करवाकर उस बिल्टी को छुड़वा लेते हैं और रेलवे स्टेशन के माल गोदाम से माल ले लेते हैं। इस प्रकार बैंक वस्तुओं को उत्पादन केंद्रों से उपभोग केंद्रों तक पहुँचाने में सहायता प्रदान करते हैं।

अतः साधारण भाषा में वाणिज्यिक बैंक एक ऐसी वित्तीय संस्था है, जो लोगों के रुपये को अपने पास जमा के रूप में स्वीकार करती है और उनको उपभोग अथवा निवेश के लिये उधार देती है। इसके अतिरिक्त आजकल वाणिज्यिक बैंक और भी कई कार्य करते हैं; जैसे-साख निर्माण, रुपये को एक स्थान से दूसरे स्थान पर हस्तांतरित करना, एजेंसी कार्य तथा सामान्य सेवाएँ।

अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक: (Reserve Bank of India – RBI) अधिनियम 1934 की दूसरी अनुसूचि में शामिल वाणिज्यिक बैंक जिसे (Reserve Bank of India – RBI) के दिशा निर्देशों के अनुसार काम करना होता है, अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक कहलाता है।

रिजर्व बैंक की द्वितीय अनुसूचि में उन्हीं बैंकों को सम्मिलित किया जाता है, जो निम्न शब्दों को पूरा करते हैं:

(i) बैंक की पूंजी और संचित कोष 5 लाख से अधिक होनी चाहिए।

(ii) भारतीय रिजर्व बैंक को इस बात की संतुष्टि होनी चाहिए कि बैंक के सभी क्रियाकलाप जमाकर्ताओं के हित में होगा।

अनुसूचित बैंकों को निम्नलिखित सुविधाएँ प्राप्त हो जाती हैं:

(a) वह बैंक रिजर्व बैंक से बैंक दर पर ऋण प्राप्त करने के लिए अधिकृत हो जाता है। (बैंक दर की चर्चा आगे की कक्षाओं में की जाएगी)

(b) ऐसे बैंकों को रिजर्व बैंक प्रथम श्रेणी के विनिमय पत्रों के पुनर्बट्टा की सुविधा भी प्रदान करता है, किंतु इन सुविधाओं के बदले अनुसूचित बैंकों को भारतीय रिजर्व के पास RBI द्वारा निर्धारित औसत दैनिक नकद कोष रखना पड़ता है।

गैर-अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक: वैसे बैंक, जो RBI अधिनियम 1934 की दूसरी अनुसूचि में शामिल हों लेकिन जिन्हें RBI के दिशा निर्देशों के अनुसार कार्य करना आवश्यक न हो गैर-अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक कहलाता है।

इस प्रकार के बैंकों की संख्या में अब निरंतर कमी हो रही है। इन बैंकों को भी सांविधिक नकद कोष शर्तों को मानना पड़ता है। लेकिन इस कोष को बैंक रिजर्व बैंक के पास रखने को बाध्य नहीं होते। यह बैंक इस राशि को अपने पास रख सकते हैं। हालांकि ये बैंक रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया से उधार लेने के अधिकारी नहीं होते, लेकिन असामान्य परिस्थितियों में ये रिजर्व बैंक से संपर्क करके उधार प्राप्त कर सकते हैं।

देशी बैंक: ऐसा बैंक जिसका अधिकांश (50% से अधिक) स्वामित्व एवं प्रबंधन नियंत्रण भारतीय नागरिकों या उनकी प्रतिनिधिक संस्थाओं के हक में हो (उनके नाम से पंजीकृत) तो इसे देशी बैंक कहते हैं।

विदेशी बैंक: ऐसा बैंक जिसका अधिकांश स्वामित्व एवं प्रबंध नियंत्रण विदेशी नागरिकों या उनकी प्रतिनिधिक संस्थाओं के हक में हो, विदेशी बैंक कहलाता है।

2 सितंबर 2011 को वित्त मंत्रालय द्वारा दी गयी एक जानकारी के अनुसार अगस्त 2011 के अंत तक 38 विदेशी बैंक कार्यरत थे और इन बैंकों की शाखाओं की कुल संख्या 321 बताई गई है। विश्व व्यापार संगठन (World Trade Organisation) के साथ किए गए वादे के अनुसार देश में विदेशी बैंकों की शाखाओं का विस्तार किया जाना है। एक रिपोर्ट के अनुसार विश्व व्यापार संगठन के साथ किए गए वायदे के अनुसार विदेशी बैंकों की कम से कम 12 शाखाओं की स्थापना की अनुमति प्रति वर्ष रिजर्व बैंक को प्रदान करनी है।

नए नियमों के तहत विदेशी बैंकों को भारत में अपनी पहली शाखा खोलते समय केवल 10 मिलियन डॉलर की पूंजी साथ लेकर आनी होती है, जबकि दूसरी व तीसरी शाखा के लिए अतिरिक्त पूंजी आवश्यकता क्रमशः 10 मिलियन डॉलर व 5 मिलियन डॉलर होगी।

सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक (Public Sector Bank): जिस बैंक का अधिकांश स्वामित्व एवं प्रबंध नियंत्रण प्रत्यक्षतः या परोक्षतः सरकार के हाथ में हो, जैसे:- राष्ट्रपति के नाम से पंजीकृत हो या राष्ट्रपति की संस्था (LIC, वित्त मंत्रालय आदि) के नाम से पंजीकृत हो, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक कहलाते हैं।

भारत सरकार की शेयरधारिता सरकारी क्षेत्र के 19 राष्ट्रीयकृत बैंक, Industrial Development Bank of India तथा भारतीय स्टेट बैंक समूह में हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

निजी क्षेत्र के बैंक (Private Sector Bank): जिस बैंक का अधिकांश स्वामित्व एवं प्रबंध नियंत्रण प्रत्यक्षत: या परोक्षत: निजी हैसियत से भारतीय नागरिकों के पास हो, उन्हें निजी क्षेत्र के बैंक (Private Sector Bank) कहते हैं।

नई पीढ़ी के बैंक (New Generation Bank): 1994 के बाद नरसिंहम् समिति-I द्वारा सुझाए गए नये बैंकिंग मानदंडों के अनुसार स्थापित निजी बैंकों को नई पीढ़ी के बैंक (New Generation Bank) कहते हैं।

पुरानी पीढ़ी के बैंक (Old Generation Bank): नरसिंहम् समिति-I के सुझावों से पूर्व पुराने मानदंडों के अनुसार स्थापित निजी बैंकों को पुरानी पीढ़ी के बैंक (Old Generation Bank) कहते हैं।

6.4 भारत में बैंकिंग विकास *(Development of Banks in India)*

ईस्ट इंडिया कंपनी ने 1806 में कलकत्ता प्रेसीडेंसी बैंक, 1840 में मुंबई प्रेसीडेंसी बैंक और 1843 में मद्रास प्रेसीडेंसी बैंक की स्थापना की। बैंकिंग कार्यों के अलावा ये तीनों बैंक मुद्रा निर्गमन (नोट छापना) तथा प्रबंधन का कार्य भी करते थे। अत: इन तीनों स्थानों कलकत्ता, मुंबई तथा मद्रास में टकसालें (नोट छापने वाली फैक्ट्री)। यद्यपि ये तीनों बैंक निजी शेयर धारकों (Private Share Holders) विशेष रूप से विदेशी व्यक्तियों के बैंक थे। फिर भी इन तीनों बैंकों की शेयर पूंजी में सरकार का भी कुछ हिस्सा था। इन बैंकों को सरकारी बैंकर के समान सभी अधिकार प्राप्त थे। पुन: भारत शासन अधिनियम 1858 के प्रावधानों के अनुसार ब्रिटिश सरकार ने भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी की समस्त संपत्ति का अधिग्रहण कर लिया और इस प्रक्रिया में उपरोक्त बैंकों का भी अधिग्रहण हो गया।

सन् 1921 में इन तीनों प्रेसीडेंसी बैंकों को मिलाकर Imperial Bank of India की स्थापना की गई। 1925 में भारतीय मुद्रा एवं वित्त पर 'शाही आयोग' का गठन किया गया और John Menard Keynes के मित्र Hilton Young को इसका अध्यक्ष नियुक्त किया गया और इस कारण इसे 'हिल्टन आयोग' के नाम से भी जाना जाता है। इस आयोग में भारतीय मुद्रा तथा वित्त व्यवस्था में सुधार के लिए डॉ. भीम राव अम्बेडकर से भी चर्चा की जो 1922 में London School of Economics में 'रुपये की समस्या' (Problem of Rupee) के ऊपर अध्ययन एवं शोध कर रहे थे और जिन्होंने क्रय शक्ति संतुल्यता (Purchasing Power Parity – PPP) के आधार पर रुपये के विनिमय दर (Exchange Rate) की सप्रमाण व्याख्या भी की थी।

शाही आयोग के ही सिफारिश पर ब्रिटिश संसद ने RBI Act 1934 पारित किया। जिसके अनुसार 1 अप्रैल 1935 को RBI का गठन हुआ। RBI पूर्णत: सरकारी संस्था नहीं थी बल्कि संयुक्त स्वामित्व वाली संस्था थी। अर्थात कुछ स्वामित्व सरकार के पास तथा ज्यादातर निजी कारोबारियों (Private Industrialists) के पास था। अपने स्वामित्व के आधार पर सरकार 'गवर्नर' की नियुक्ति करती थी, जबकि निदेशकों का चयन निजी शेयर धारक (Private Share Holders) करते थे।

A. O. Smith, RBI के पहले गवर्नर थे और कारोबारियों में भारत के बड़े उद्योगपति जैसे- श्रीराम आदि थे। RBI की स्थापना के बाद मुद्रा प्रबंधन एवं निर्गमन का कार्य Imperial Bank से लेकर RBI को सौंप दिया गया। अर्थात् मुद्रा प्रबंधन तथा वित्तीय प्रबंधन के कार्य को अलग-अलग कर दिया गया और अब Imperial Bank एक विशुद्ध कारोबारी अथवा वाणिज्यिक बैंक बन गया।

भारत स्वतंत्रता अधिनियम-1947 के अनुसार भारत में ब्रिटिश संपत्ति भारतीय संविधान सभा को अंतरित हो गई और इसी प्रक्रिया में Imperial Bank को भी भारत सरकार को दे दिया गया। हालांकि RBI अभी भी पूर्णता भारत सरकार के अधीन नहीं थी क्योंकि उसमें निजी शेयर धारकों का हिस्सा था। भारत सरकार ने (Reserve Bank of India – RBI) को अधिक शक्तिशाली बनाने के लिए 1 जनवरी, 1949 को उसका राष्ट्रीयकरण कर दिया और भारतीय बैंकिंग का समन्वित नियमन करने के लिए मार्च 1949 में भारतीय बैंकिंग अधिनियम पारित किया। इस कानून के अंतर्गत अनुसूचित बैंकों का निरीक्षण करने के लिए रिजर्व बैंक को अधिक अधिकार प्रदान किए गए।

26 जनवरी 1950 को संविधान सभा ने Imperial Bank का स्वामित्व भारत के राष्ट्रपति को सौंप दिया तथा संसद में 1955 में State Bank of India – SBI अधिनियम पारित किया। जिसके अनुसार Imperial Bank का पुनर्गठन एवं पुन: नामकरण करके 1956 में पुनर्स्थापित किया गया और इसका स्वामित्व RBI को सौंप दिया गया। इसके साथ अन्य 8 बैंकों को SBI के सहायक बैंकों के रूप में बदल दिया गया। जिन्हें स्टेट बैंक समूह के नाम से जाना जाता है।

(i) स्टेट बैंक ऑफ त्रावणकोर

(ii) स्टेट बैंक ऑफ मैसूर

(iii) स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद

(iv) स्टेट बैंक ऑफ इंदौर

(v) स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र

(vi) स्टेट बैंक ऑफ बिकानेर

Copyright – Drishti The Vision Foundation

(vii) स्टेट बैंक ऑफ जयपुर

(viii) स्टेट बैंक ऑफ पटियाला

आजादी से पहले स्टेट बैंक ऑफ जयपुर एवं स्टेट बैंक ऑफ बिकानेर का विलय कर स्टेट बैंक ऑफ बिकानेर एण्ड जयपुर बनाया गया।

उपर्युक्त सात बैंकों में से स्टेट ऑफ सौराष्ट्र का जुलाई 2008 में तथा स्टेट बैंक ऑफ इंदौर का जून 2009 में SBI में विलय करने के निर्णय फलस्वरूप SBI समूह में अब पाँच बैंक होंगे। बैंकों को समाज के लिए और अधिक उपयोगी बनाने के उद्देश्य से देश के 14 बड़े व्यावसायिक बैंकों का 19 जुलाई 1969 को राष्ट्रीयकरण कर दिया गया है। इनकी जमा राशि 50 करोड़ से अधिक थी। ये बैंक हैं:

(i) बैंक ऑफ इंडिया

(ii) सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया

(iii) पंजाब नेशनल बैंक

(iv) केनरा बैंक

(v) सिंडीकेट बैंक

(vi) यूनाइटेड कॉमर्शियल बैंक

(vii) बैंक ऑफ बड़ौदा

(viii) यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया

(ix) यूनियन बैंक ऑफ इंडिया

(x) देना बैंक

(xi) इंडियन बैंक

(xii) इलाहाबाद बैंक (1965 में राष्ट्रीयकृत)

(xiii) इंडियन ओवरसीज बैंक

(xiv) बैंक ऑफ महाराष्ट्र

लगभग एक दशक पश्चात् 15 अप्रैल 1980 को उन 6 निजी बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया, जिनकी जमा राशि 200 करोड़ से अधिक थी। ये बैंक निम्नलिखित हैं:

(i) आंध्रा बैंक

(ii) पंजाब एण्ड सिंध बैंक

(iii) न्यू बैंक ऑफ इंडिया

(iv) विजया बैंक

(v) कॉरपोरेशन बैंक

(vi) ओरियेन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स

1993 को सरकार ने न्यू बैंक ऑफ इंडिया को पंजाब नेशनल बैंक में मिला दिया और इस प्रकार राष्ट्रीयकृत बैंकों की संख्या 20 से घटकर 19 हो गई।

IDBI (Industrial Development Bank of India)

(i) 1964 में संसद में भारतीय औद्योगिक विकास बैंक अधिनियम को पारित कर एक विकास वित्त संस्था के रूप में, न कि वाणिज्यिक बैंक के रूप में IDBI की स्थापना का मार्ग प्रसस्त किया।

(ii) 1994 में IDBI ने एक वाणिज्यिक बैंक की स्थापना की पहल की और उसका नाम IDBI बैंक रखा। इसके अधिकांश शेयर निजी निवेशकों को बेचे गये। अतः इसे निजी क्षेत्र के बैंक की सूची में वर्गीकृत किया गया।

(iii) 2004 में संसद में IDBI अधिनियम में संशोधन किया गया और इस संशोधन के अनुसार IDBI का, IDBI बैंक में विलय कर लिया गया। अर्थात् स्वामी कंपनी का अनुषंगी कंपनी में प्रतिलोम विलय (Reverse Merger) हो गया। इस प्रतिलोम विलय के कारण IDBI बैंक में सरकारी स्वामित्व 50% से ज्यादा हो गया।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

1400 ई० में फ्लोरेंस नामक शहर में मेडिसि घराने के व्यावसायियों ने वाणिज्यिक बैंक खोला और इन्होंने ही सबसे पहले बैंकिंग शाखा की शुरूआत की और इस प्रकार शाखाएँ यूरोप के कई अन्य शहरों में भी खुली और वाणिज्यिक बैंक के प्रसार से वाणिज्यिक क्रांति पैदा हुई।

स्पष्ट है कि यदि भारत में वाणिज्यिक क्रांति पैदा करनी है तो हर दो हजार जनसंख्या पर एक बैंकिंग शाखा आवश्यक है।

6.5 भारत में बैंकिंग उद्योग *(Banking Industry in India)*

SBI एवं सहयोगी बैंक (SBI and its Associate Banks)

1. स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, मुम्बई	2. स्टेट बैंक ऑफ बिकानेर, जयपुर
3. स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद	4. स्टेट बैंक ऑफ मैसूर
5. स्टेट बैंक ऑफ पटियाला	6. स्टेट बैंक ऑफ त्रावणकोर

राष्ट्रीयकृत बैंक (Nationalised Banks)

1. इलाहाबाद बैंक कलकत्ता-700 001	2. आन्ध्रा बैंक हैदराबाद - 500 001
3. बैंक ऑफ बड़ोदा मुम्बई - 400 051	4. बैंक ऑफ इंडिया मुम्बई - 400 021
5. बैंक ऑफ महाराष्ट्र पुणे - 411 005	6. केनरा बैंक बंगलोर - 560 002
7. सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया मुम्बई - 400 021	8. कॉर्पोरेशन बैंक मंगलोर - 575 001
9. देना बैंक मुम्बई - 400 051	10. इंडियन बैंक चेन्नई - 600 001
11. इंडियन ओवरसिस बैंक चेन्नई - 600 002	12. ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स नई दिल्ली - 110 001
13. पंजाब नेशनल बैंक नई दिल्ली - 110 066	14. सिन्डीकेट बैंक मणिपाल - 576 119
15. यूनियन बैंक ऑफ इंडिया मुम्बई - 400 021	16. यूनाईटेड बैंक ऑफ इंडिया कलकत्ता - 700 001
17. पंजाब एण्ड सिंध बैंक नई दिल्ली - 110 008	18. यूको बैंक कलकत्ता - 700 001
19. विजया बैंक बैंगलोर - 560 025	

निजी क्षेत्र के बैंक (Private Sector Banks)

1. बैंक ऑफ राजस्थान लि० जयपुर - 302 001	2. कैथोलिक सीरियन बैंक लि० थ्रिसर, केरल
3. फेडरल बैंक लि० अलवर - 683 101	4. धनलक्ष्मी बैंक लि० थ्रिसर - 680 002
5. जम्मू एण्ड कश्मीर बैंक लि० श्रीनगर - 190 010	6. कर्नाटक बैंक लि० मैंगलोर - 575 002
7. करूर व्यासा बैंक लि० करूर - 639 002	8. सिटी यूनियन बैंक लि० कम्बाकोनम - 612 001

Copyright – Drishti The Vision Foundation

9. लक्ष्मी विलास बैंक लि० करूर - 639 006	10. नैनीताल बैंक लि० नैनीताल - 263 001
11. रत्नाकर बैंक लि० कोल्हापुर - 416 001	12. साउथ इंडियन बैंक लि० थ्रिसूर - 680 001
13. तमिलनाड मरकैन्टाइल बैंक लि० टूटीकोरिन - 628 002	14. आई.एन.जी व्यासा बैंक लि० बैंगलोर - 560 001
15. आई.सी.आई.सी.आई बैंक लि० मुम्बई - 400 051	16. एक्सिस बैंक लि० मुम्बई - 400 005
17. इंडसइंड बैंक लि० मुम्बई - 400 004	18. यैस बैंक लि० मुम्बई - 400 018
19. एस.बी.आई कॉमर्सियल एण्ड इंटरनेशनल बैंक लि० मुम्बई - 400 021	20. एच.डी.एफ.सी बैंक लि० मुम्बई - 400 020
21. डेवलपमेंट क्रेडिट बैंक लि० (DCB) मुम्बई - 400 025	22. कोटक महिंद्रा बैंक लि० मुम्बई - 400 021

निजी-विदेशी बैंक (Private-Foreign Banks)

1. अबु धाबी कॉमर्सियल बैंक लि० मुम्बई - 400 020	2. अमेरिकन एक्सप्रेस बैंकिंग कॉर्पोरेशन गुड़गाव-122 002
3. अरब बांग्लादेश बैंक लि० मुम्बई - 400 020	4. एटवर्प डायमंड बैंक एन.वी. मुम्बई - 400 004
5. बैंक इंटरनेशनल इंडोनेशिया मुम्बई - 400 020	6. बैंक ऑफ अमेरिका मुम्बई - 400 021
7. बैंक ऑफ बहरीन एण्ड कुवैत मुम्बई - 400 021	8. बैंक ऑफ सिंगापुर चेन्नई - 600 084
9. बैंक ऑफ नोवा स्कोटिया मुम्बई - 400 021	10. बैंक ऑफ टोकियो मित्सुबीशी-यू.एफ.जे लि० नई दिल्ली - 110 001
11. बारक्लेस बैंक पी.एल.सी मुम्बई - 400 021	12. बी.एन.पी. परीबास मुम्बई - 400 001
13. सिटीबैंक एन.ए मुम्बई - 400 051	14. क्रेडिट एग्रीकोल कॉरपोरेट एण्ड इन्वेस्टमेन्ट बैंक मुम्बई - 400 021
15. चाइनाट्रस्ट कॉमर्सियल बैंक नई दिल्ली - 110 001	16. क्रेडिट स्विस ए.जी मुम्बई - 400 018
17. कॉमनवेल्थ बैंक ऑफ ऑस्ट्रेलिया मुम्बई - 400 021	18. डी.बी.एस बैंक लि० मुम्बई - 400 021
19. डच बैंक मुम्बई - 400 001	20. फर्स्ट रैंड बैंक लि० मुम्बई - 400 020
21. हांग कांग एण्ड शहंगाई मुम्बई - 400 001	22. इंडस्ट्रीयल एण्ड कॉमर्सियल बैंक ऑफ चीन मुम्बई - 400 051
23. जे.पी. मॉर्गन चेस बैंक एन.ए मुम्बई - 400 098	24. जे.एस.सी. वी.टी.बी बैंक नई दिल्ली - 110 011
25. क्रूंग थाई बैंक पी.एल.सी मुम्बई - 400 021	26. मिज़ूहो कॉरपोरेट बैंक लि० मुम्बई - 400 021

Copyright – Drishti The Vision Foundation

27. मशरेक बैंक मुम्बई - 400 021	28. ऑमन इंटरनेशनल बैंक एस.ए.ओ.जी मुम्बई - 400 021
29. सिंहन बैंक मुम्बई - 400 021	30. सोसाइट जनेरल मुम्बई - 400 021
31. सोनाली बैंक कलकत्ता - 700 016	32. स्टैंडर्ड चार्टड बैंक मुम्बई - 400 001
33. स्टेट बैंक ऑफ मौरिटस चेन्नई - 400 021	34. सेबर बैंक नई दिल्ली
35. द रॉयल बैंक ऑफ स्कॉटलैंड एन.वी. मुम्बई - 400 021	36. यू.बी.एस ए.जी. मुम्बई - 400 051
37. यूनाईटेड ओवरसीस बैंक लि० मुम्बई - 400 051	

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–6 *(Unit–6)*

बैंकिंग तथा वित्त प्रणाली : भाग-2
Banking & Finance System : Part-2

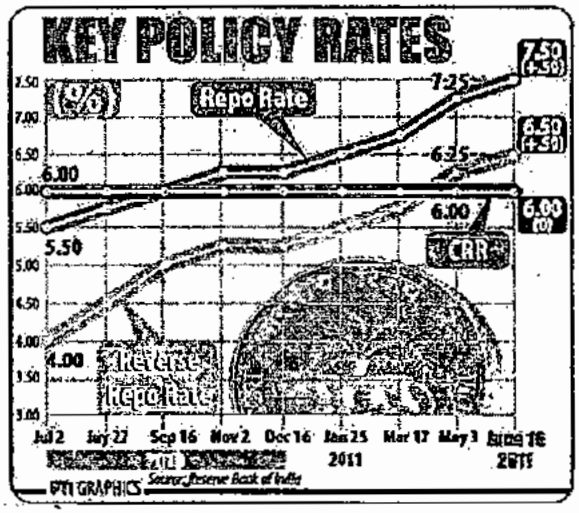

6.6 तुलन पत्र
(Balance Sheet)

6.7 तुलन पत्र का विवरण
(Description of Balance Sheet)

6.8 आरक्षित नकद अनुपात
(Cash Reserve Ratio – CRR)

6.9 सांविधिक तरलता अनुपात
(Statutory Liquidity Ratio – SLR)

6.10 प्रतिभूति
(Security)

6.11 ऋण योग्य निधि
(Lonable Fund)

6.12 प्राथमिकता क्षेत्र ऋणदान कार्यक्रम
(Priority Sector Lending Programme – PSL)

6.13 मुक्त ऋण योग्य निधि
(Free Lonable Fund)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

6.6 तुलन पत्र *(Balance Sheet)*

परिसंपत्ति मूल्य (Asset) (लेनदारी)	देयता मूल्य (Liability) (देनदारी)			
	जमा बारंबारता (Frequency of deposit)	निकासी बारंबारता (Frequency of withdrawal)	जमा ब्याज दर (Deposit Rate)	
100				स्वामित्व पूंजी (Owned) Tier-1
CRR −5				ऋण पूंजी (Debt) Tier-2
95				जमा पूंजी (Deposit Capital)
SLR −25	असीम	असीम	0%	चालू खाता (Current A/c Deposit)
ऋण योग्य निधि (Lonable Fund) 70	असीम	सीमित	4.0%*	बचत खाता (Saving A/c Deposit)
PSL −28	असीमित		7.5%	आवर्ती खाता (Recurring A/cDeposit)
(Free Loanable Fund) 42			4-10.5%	सावधि खाता (Fixed A/c Deposit)
गिरवी ऋण (Mortgage Loan)				
अग्रिम ऋण (Advance Loan)				FCNR Bank A/c
हमदर्द ऋण (Consortium Loan)				NRER Bank A/c
हमसफर ऋण (Syndicate Loan)				NRO Bank A/c
Call Money				
CC Account (A/c)-I				
CC Account (A/c)-II				
हुंडी का बट्टाकरण				
अन्य				

नियंत्रित

विनियमित

Gross Deposit

NR Deposit

* 25 अक्टूबर 2011 से बचत खाता (Saving A/c Deposit) पर ब्याज की दर को Decontrolled कर दिया गया है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

6.7 तुलन पत्र का विवरण *(Description of Balance Sheet)*

किसी संस्था का वित्तीय वक्तव्य जिसमें उसकी परिसंपत्ति (लेनदारी), उसकी देयता (देनदारी) एवं इन दोनों के बीच के अंतर संबंधी मूल्य दर्ज हों, संस्था का तुलन पत्र (Balance Sheet) कहलाता है।

यदि परिसंपत्ति (लेनदारी) - ₹ 12
देयता (देनदारी) - ₹ 10
₹ 2 की धनात्मक परिसंपत्ति (Positive Networth)

Positive Net Worth [Asset (परिसंपत्ति) > Liability (देयता)]

यदि परिसंपत्ति (लेनदारी) - ₹ 8
देयता (देनदारी) - ₹ 10
₹ 2 की ऋणात्मक परिसंपत्ति (Negative Networth)

Negative Net Worth [Asset (परिसंपत्ति) < Liability (देयता)]

यदि परिसंपत्ति (लेनदारी) - 10
देयता (देनदारी) - 10
0

Zero Net Worth [Asset (परिसंपत्ति) = Liability (देयता)]

(i) जिस Balance Sheet में (+ve) Net Worth हो तो उसे → गुलाबी (Pink) Balance Sheet कहेंगे।
(ii) जिस Balance Sheet में (-ve) Net Worth हो तो उसे → लाल (Red) Balance Sheet कहेंगे।
(iii) जिस Balance Sheet में (0) Net Worth हो तो उसे → काला (Black) Balance Sheet कहेंगे।
(iv) यदि किसी Company का Balance Sheet एक वर्ष से लाल (Red) हो, तो उसे Weak Company (कमजोर कंपनी) कहेंगे और यदि तीन वर्ष से अधिक समय तक लाल रह जाए तो उसे बीमार या Sick कंपनी कहेंगे।

औद्योगिक रुग्णता (Industrial Sickness): यदि बैंकिंग क्षेत्र के बैंक में रुग्णता (Sickness) हो, तो उसे औद्योगिक रुग्णता (Sickness in Banking) कहते हैं। इसी प्रकार Sickness in Automobile Industry, Sickness in Power Industry, Sickness in Small Sector Industry को परिभाषित किया जा सकता है।

औद्योगिक रुग्णता के सम्बन्ध में 1985 में तिवारी समिति की सिफारिश पर रुग्ण औद्योगिक कंपनी अधिनियम (Sick Industrial Companies Act – SICA) पारित किया गया, जो 15 मई 1987 से प्रभावी हुआ, तथा मई 1987 में औद्योगिक एवं वित्तीय पुनर्निर्माण बोर्ड (Board for Industrial and Financial Reconstruction – BIFR) की स्थापना की गयी।

किसी भी बैंक का प्राथमिक कार्य (Primary Work) होता है 'देयता सृजन'। देयता सृजन के तुरंत बाद बैंक का द्वितीयक कार्य (Secondary Work) होता है- यथाशीघ्र इस देयता को परिसंपत्ति में रूपांतरित करना और इस प्रक्रिया में परिसंपत्ति आधिक्य विकसित करना अर्थात् (+ve) Net Worth विकसित करना।

देयता सृजन के लिए एक बैंक के पास तीन रास्ते होते हैं:

(i) स्वामित्व पूंजी (Owned Capital) / Tier 1
(ii) ऋण पूंजी (Debt Capital) / Tier 2
(iii) जमा पूंजी (Deposit Capital) / जमा पूंजी

स्वामित्व पूंजी (Owned Capital): बैंक के मालिकों/शेयर धारकों द्वारा Bank में निवेशित पूंजी को बैंक की स्वामित्व पूंजी कहते हैं। शेयर बेच कर बैंक जो पूंजी बनाती है, वह Tier I Capital होता है।

Take Over Code: भारतीय कंपनियों को अनुमति है कि यदि उन्हें लगता हो कि उनकी छवि को ठेस पहुँचाने के लिए कोई देशी/विदेशी कंपनी शेयर खरीदकर धड़ल्ले से बेच देती है और इस कारण शेयर के दाम टूट जाते हैं तथा निवेशकों में बगदड़ मच जाती है, तो वे अपना शेयर स्वयं खरीद सकते हैं, जिसे Buy Back Option कहा जाता है।

पूंजी (Tier I Capital): पूंजी का वह अंश, जिसकी सहायता से कोई संस्था या बैंक का कारोबार शुरू किया जाता है अर्थात् इसी पैसे से से बैंक का पंजीकरण, RBI की दूसरी अनुसूचि में नामांकन आदि होता है, अर्थात् बैंक के पंजीकरण से उद्घाटन की संपूर्ण प्रक्रिया में जो पैसे लगते हैं, उसे Tier I Capital कहते हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

ऋण पूंजी (Debt Capital): एक निश्चित ब्याज के वायदे के आधार पर उगाही गई पूंजी को ऋण पूंजी (Debt Capital) कहते हैं। क्योंकि, इसका उपयोग कारोबार के विस्तार के लिए किया जाता है, इसलिए इसे (Tier 2 Capital) पूंजी भी कहते हैं।

जमा पूंजी (Deposit Capital): लोगों से बचत उगाहने के लिए बैंक चार प्रकार के जमा खाते पेश करती है, ये चार खाते निवासी व्यक्तियों के लिए होते हैं, जो निम्नलिखित हैं:

(i) चालू खाता (Current Deposit Account)
(ii) बचत खाता (Saving Deposit Account)
(iii) आवर्ती खाता (Recurring Deposit Account)
(iv) सावधि खाता (Fixed Deposit Account)

NRI के लिए तीन अलग तरह के खाते खोले जाते हैं, जो निम्नलिखित हैं:

(i) FCNR – अनिवासी विदेशी मुद्रा बैंक खाता (Foreign Currency Non Resident Bank Account)
(ii) NRER – अनिवासी बाह्य रुपया खाता (Non Resident External Rupees Account)
(iii) NRO – साधारण अनिवासी खाता (Non Resident Ordinary Account)

जमा खातों (Deposit Accounts) में अंतर करने के लिए तीन लक्षणों को आधार बनाया जाता है:

(i) जमा बारंबारता (Frequency of Deposit): एक निश्चित अवधि में खाताधारी (Account Holder) अधिकतम जितनी बार राशि जमा करने को अधिकृत हो, खाते की जमा बारंबारता (Frequency of Deposit) कहलाता है।
सावधि जमा खातों (Fixed Deposit Accounts) की जमा बारंबारता एक होती है, आवर्ती खाते की सीमित बारंबारता होती है, तो बचत खातों तथा चालू खातों की बारंबारता असीमित होती है।

(ii) निकासी बारंबारता (Frequency of Withdrawal): एक निश्चित अवधि में खाताधारी (Account Holder) अपने खाते से अधिकतम जितनी बार राशि निकालने को अधिकृत हो, इसे खाते की निकासी बारंबारता (Frequency of Withdrawal) कहते हैं।
आवर्ती (Recurring) तथा सावधि (Fixed Deposit) दोनों खाते एक निश्चित परिपक्वता अवधि (Maturity Period) के लिए होते हैं और इस अवधि के समापन के बाद ही राशि एक मुश्त निकाली जाती है, यदि राशि नहीं निकाली गई तो आगे ब्याज नहीं मिलता है।

फिलहाल रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया ने बचत जमा पर 4.0% ब्याज दर देना तय किया है। 31 मार्च 2010 तक बचत जमा (Savings) पर ब्याज का आकलन करने के लिए एक महीने में न्यूनतम शेष राशि का उपयोग किया जाता था, लेकिन 1 अप्रैल 2010 से ब्याज का आकलन न्यूनतम दैनिक शेष के आधार पर किया जाता है।

आकलन विधि में इस परिवर्तन के कारण बचत जमा पर ब्याज आय में वृद्धि हुई है और बचत कर्ताओं का मनोबल बढ़ा है। साथ ही, जमा उगाही की प्रक्रिया तेज हुई है और इस प्रकार पूंजी निर्माण भी बढ़ा है।

चालू जमा (Current Deposit) एवं बचत जमा (Saving Deposit) को खाताधारी अपनी मर्जी के अनुसार निकाल सकते हैं। इसलिए इन्हें संयुक्त रूप से माँग जमा (Demand Deposit – DD) कहते हैं।

चूँकि आवर्ती जमा (Recurring Deposit) एवं सावधि जमा (Fixed Deposit) राशियों को खाताधारी एक निश्चित जमा अवधि के बाद ही निकाल सकते हैं। इसलिए इन्हें संयुक्त रूप से आवधि जमा (Term Deposit – TD) कहते हैं।

Demand Deposit & Term Deposit = Gross Deposit (सकल जमा)

विभिन्न खातों में जमा राशियों को समग्र रूप से सकल जमा (Gross Deposit) कहते हैं।

ब्याज और सकल जमा राशि को जोड़कर सकल देयता (Gross Liability) कहते हैं।

सकल जमा	+ ब्याज	= सकल देयता (सकल माँग एवं आवधि देयता)
Gross Deposit	+ Interest	= Gross Liability (Gross Demand and Term Liability – GDTL)

भारत के समग्र बैंक में खाताधारियों की संख्या करोड़ों में है। अतः जाहिर है कि खाताधारी एक खाते से दूसरे खाते में राशि का अंतरण करते होंगे। करोड़ों खातों से होने वाली राशि के अंतरण को सुचारू रूप से चलाने के लिए विभिन्न बैंक एक-दूसरे के यहाँ अपने खाते रखते हैं, जिन्हें अंतर बैंक खाता (Inter Bank Accounts) कहते हैं। इन खातों से जुड़ी देयता को अंतर बैंक देयता (Inter Bank Liability – IBL) कहते हैं। यह अंतर बैंक देयता सकल माँग एवं आवधि देयता (Gross Demand and Term Liability – GDTL) का एक छोटा अंश होता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

GDTL से अंतर बैंक देयता निकाल देने के बाद जो राशि शेष बचती है, उसे **निवल माँग एवं आवधि देयता (Net Demand and Term Liability)** कहते हैं।

GDTL – IBL = NDTL

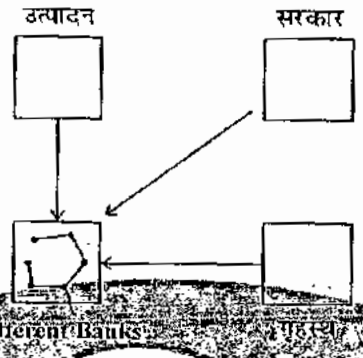

एक बैंक का NDTL उसकी बाह्य देयता (बैंकों से इतर अन्य खाताधारियों के प्रति देयता) होती है। अंतर बैंक देयता (Inter Bank Liability) को उनकी आंतरिक देयता कहते हैं।

(आंतरिक + बाह्य) देयता = सकल देयता

बैंकों की निगरानी के लिए RBI, NDTL का आधारभूत मानदंड के रूप में उपयोग करता है। अर्थात इसी के आधार पर अन्य नीतिगत मानक तय किये जाते हैं। RBI का बैंकों के प्रति लेखांकन मानक बैंकों का NDTL होता है।

लेखांकन मानक: सभी बैंक NDTL को अपनी नकद परिसंपत्ति के रूप में दिखाते हैं अर्थात अपनी देनदारी (Liability) वाली संपत्ति को लेनदारी (Asset) के रूप में दिखाते हैं जो कि दोहरी प्रविष्टि विधि (Double Entry System) का एक उदाहरण है।

दोहरी प्रविष्टि विधि (Double Entry System): अगर एक संसाधन को Balance Sheet की लेनदारी (Asset) तथा देनदारी (Liability) में भी दिखाया जाये तो लेखांकन की इस विधि को दोहरी प्रविष्टि विधि (Double Entry System) भी कहते हैं।

परिसंपत्ति (Asset): परिसंपत्ति को प्रकार्यात्मक लक्षण के आधार पर या गुणात्मक रूप से तीन वर्गों में बाँटा जाता है:

निष्क्रिय परिसंपत्ति (Idle Asset)	निष्पादक परिसंपत्ति (Performing Asset)	गैर-निष्पादक परिसंपत्ति (Non-Performing Asset – NPA)
जिस संसाधन का रचनात्मक उपयोग या उत्पादक उपयोग शुरू न हुआ हो और इस कारण मालिक को आय न मिल रही हो, उसे निष्क्रिय परिसंपत्ति कहते हैं।	जिस संसाधन का उत्पादक उपयोग हो रहा हो और निर्धारित समय पर स्वामी को आय मिल रही हो, उसे निष्पादक परिसंपत्ति कहते हैं।	जिस संसाधन का कब्जा स्वामी ने किसी अन्य को दे रखा हो, लेकिन पिछले कुछ समय से तय समय पर आय मिलनी बंद हो गई हो, उसे NPA कहते हैं।

बैंकों द्वारा वितरित वैसे सभी ऋण, निष्पादक परिसंपत्ति (Performing Asset) माने जाते हैं, जिनका मूलधन एवं उस पर देय ब्याज समय रहते बैंकों को प्राप्त होता है और इसी कारण इन्हें मानक परिसंपत्तियों की संज्ञा भी दी जाती है। इनमें ऐसे ऋणों को शामिल किया जाता है, जिनका बकाया मूलधन तथा उस पर देय ब्याज का भुगतान क्रमशः 91 दिन तथा 365 दिन से अधिक समय तक किसी वित्तीय वर्ष में नहीं रोका गया है और इस तरह की परिसंपत्तियों के लिए बैंकों को किसी भी प्रकार का प्रावधान नहीं करना पड़ता।

हालाँकि, यह सत्य है कि बैंकों के राष्ट्रीयकरण (Nationalization) के बाद वाणिज्यिक बैंकों (Commercial Banks) ने भारत के विकास में उल्लेखनीय भूमिका निभाई लेकिन इसके साथ ही यह भी सत्य है कि विगत वर्षों में बैंकों की लाभदायिकता में कमी आई है, जिसका एक प्रमुख कारण बैंकों की गैर-निष्पादक परिसंपत्तियों (Non-Performing Assets) में वृद्धि होना है। इन

Copyright – Drishti The Vision Foundation

गैर-निष्पादक परिसंपत्तियों के मूलधन एवं उन पर देय ब्याज की वापसी समय से नहीं हो पाती या बिल्कुल नहीं हो पाती। रिजर्व बैंक की एक सूचना के अनुसार अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों की कुल परिसंपत्तियों के प्रतिशत रूप में इनकी गैर-निष्पादक परिसंपत्तियाँ 2008-09 के दौरान 1.97% से बढ़कर 2009-10 में 2.19% हो गई।

हाल ही में SBI ने Kingfisher Airlines को दिये गये ऋण को NPA (Non Performing Asset) घोषित किया है।

इन गैर-निष्पादक परिसंपत्तियों (Non-Performing Assets) पर किसी वित्तीय वर्ष में मूलधन का भुगतान 365 दिन तथा ब्याज का भुगतान 91 दिन से अधिक दिनों तक रोक लिया जाता है।

ऋण वितरण के कार्य को नियमित करने के लिए पहले RBI एक मानक लगाता है, जिसे CRR कहते हैं।

6.8 आरक्षित नकद अनुपात *(Cash Reserve Ratio – CRR)*

बैंक के NDTL (निवल देयता) का वह प्रतिशत अंश, जिसे RBI के लिए आरक्षित करना आवश्यक हो आरक्षित नकद अनुपात (Cash Reserve Ratio – CRR) कहलाता है या निवल जमा राशि का वह प्रतिशत अंश जिस पर RBI का वैधानिक अधिकार हो, CRR कहलाता है।

इस मानक द्वारा RBI अपने नियंत्रण में एक आरक्षित निधि विकसित कर पाता है ताकि यदि किसी एक या अधिक बैंक को नकद राशि की आकस्मिक किल्लत हो जाए तो उसकी मदद की जा सके। यह बैंकों को नकदी की सुरक्षा प्रदान करने के लिए एक कवच की भांति काम करता है। इस अनुपात में वृद्धि का परिणाम यह होता है कि बैंकों को अपेक्षाकृत अधिक राशि रिजर्व बैंक के पास आरक्षित रखनी होती है, जिससे उनके पास तरलता (Liquidity) में कमी आती है और इस प्रकार ऋण प्रदान करने की क्षमता भी कम हो जाती है।

विभिन्न वर्षों में CRR की स्थिति

20 नवम्बर 1998	:	9
अक्टूबर 2001	:	5.5
24 जनवरी 2006	:	6.0
17 अप्रैल 2008	:	8
21 अप्रैल 2009	:	6.5
19 मार्च 2010	:	5.75
20 अप्रैल 2010 से अभी तक	:	6.0

6.9 सांविधिक तरलता अनुपात *(Statutory Liquidity Ratio – SLR)*

एक बैंक के NDTL का वह प्रतिशत अंश, जिसे सरकारी प्रतिभूतियों अथवा RBI द्वारा मान्यता प्राप्त अन्य प्रतिभूतियों में निवेश करना आवश्यक हो अथवा निवेश के उचित अवसर के आगमन तक कुछ समय के लिए नकद रूप में रखने की अनुमति हो, सांविधिक तरलता अनुपात (Statutory Liquidity Ratio – SLR) कहलाता है।

SLR मानक द्वारा उगाही गयी बचत राशि का एक निश्चित अंश स्वचालित रूप से सरकारी निधि में प्रवाहित होती रहती है, जिससे सरकार को विभिन्न योजनाओं के वित्त पोषण में मदद मिलती है। इस अनुपात में कमी किये जाने से बैंकों को अपनी जमाओं का अपेक्षाकृत कम भाग सरकार के पास अनिवार्य रखना होता है, जिससे बैंकों के पास उधार देने के लिए अधिक राशि उपलब्ध होती है।

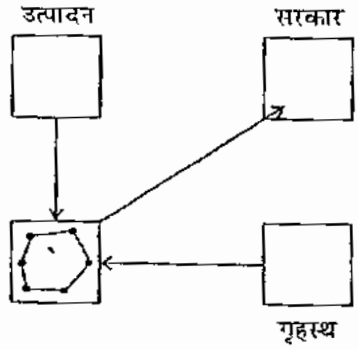

Copyright – Drishti The Vision Foundation

जैसे-जैसे विकास की प्रक्रिया समावेशीकरण की ओर बढ़ती है, SLR की दर कम होती जाती है, क्योंकि सरकार पर समाज के भरण-पोषण का दायित्व कम होता जाता है और समाज आत्मनिर्भर होता जाता है। आजादी के तत्काल बाद SLR का मान बहुत ज्यादा था। 2006 से पहले तक CRR की न्यूनतम (3%) तथा अधिकतम (15%) सीमा निर्धारित थी। इसी प्रकार 2007 से पहले तक SLR की न्यूनतम (25%) और अधिकतम (40%) की सीमा रखी गयी थी, लेकिन एक कानून के तहत 2006 में पहले CRR और 2007 में SLR की सीमाओं को एक संशोधन के माध्यम से समाप्त कर दिया गया है।

सीमाओं को समाप्त करने का अर्थ है कि इनके निर्धारण के संदर्भ में संसदीय नियंत्रण नहीं होगा। अर्थात् संसद ने निर्धारण का प्राधिकार अवरोपित (नीचे की तरफ Authority Deligation) कर दिया गया है। CRR का अधिकार RBI को Deligate किया गया है और SLR का अधिकार RBI एवं वित्त मंत्रालय का बैंकिंग विभाग मिलकर तय करता है, हालाँकि घोषणा RBI करता है।

सीमाएँ समाप्त होने से RBI की नीतिगत स्वायत्तता में वृद्धि हुई है। अर्थात् मौद्रिक नीति की स्वायत्तता बढ़ी है।

विभिन्न वर्षों में SLR की स्थिति:

1989	:	38.5
अक्टूबर 1997	:	25.0
3 नवम्बर 2008	:	24.0
अक्टूबर 27, 2009	:	25.0
29 जनवरी 2010	:	25.0
18 दिसम्बर 2010 से अभी तक	:	24.0

बैंकों के लिए सांविधिक तरलता अनुपात (SLR) और नकद कोष अनुपात (CRR) को कम करना

1991 के आर्थिक सुधार के पूर्व भारत में मुद्रास्फीति पर नियंत्रण के लिए CRR और SLR दोनों को काफी ऊंचा कर दिया गया था। एक समय ऐसा भी था जब भारत में CRR 14.5% और SLR 38.5% हो गया था। नरसिंहम समिति की सिफारिशों के बाद दोनों को कम करके इसके न्यूनतम स्तर पर लाने का प्रयास शुरू किया गया, क्योंकि इनमें कमी से बैंकों की लाभप्रदता में सुधार होता तय होता है।

6.10 प्रतिभूति *(Security)*

ऐसा कोई भी प्रमाण पत्र/दस्तावेज जिसके विक्रय द्वारा वित्त की उगाही की जाती है, चाहे यह वित्त अंश पूंजी (Share) के रूप में उगाही जाये या ऋण पूंजी (Bond) के रूप में, प्रतिभूति कहलाता है।

- स्वामित्व पूंजी (Owned Capital) के लिए कंपनी Share बेचती है, जिसे अंश पूंजी - Tier-1 कहते हैं।
- ऋण पूंजी (Debt Capital) के लिए कंपनी Bond बेचती है, जिसे ऋण पूंजी - Tier-2 कहते हैं।

इसे इस प्रकार भी समझा जा सकता है कि जिस दस्तावेज को बेचने से कंपनी के मालिकाना हक में अंश दे दिया जाये, Share कहलाता है और जिस दस्तावेज से धारक को ब्याज देने का वादा किया जाये, वह Bond कहलाता है।

ध्यातव्य है कि संप्रभु संस्था (जैसे कि भारत के राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, संसद आदि) कभी Share नहीं बेच सकते। Share हमेशा कारोबारी संस्थाएँ ही बेचती हैं, लेकिन Bond संप्रभु संस्था और कंपनी दोनों बेच सकते हैं।

(प्रतिभूति की विस्तृत चर्चा अगले नोट्स में की जायेगी)

6.11 ऋण योग्य निधि *(Lonable Fund)*

एक बैंक के NDTL का वह प्रतिशत अंश जो CRR एवं SLR के वित्तीय प्रावधान (Financial Provisioning) के बाद बैंक के नियंत्रण में शेष रह जाये, बैंक का ऋण योग्य निधि कहलाता है।

(i) CRR↑ ⟶ LF↓ ⟶ निवेश की मात्रा↓ (GDI)↓ ⟶ Growth Rate↓

⟶ उपभोक्ता ऋण↓ ⟶ Inflation Rate↓

CRR को बढ़ाने से बैंकों को ऋण योग्य निधि (Lonable Fund) के लिए धन की उपलब्धता में कमी आती है, जिसका परिणाम होता है कि निवेश के लिए धन की उपलब्धता में कमी आती है, जिसे कई बार Liquidity Crunch कहा जाता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

(ii) CRR↓ ⟶ LF↑ ⟶ (GDI)↑ ⟶ Growth Rate↑

⟶ उपभोक्ता ऋण↑ ⟶ Inflation Rate↑

CRR को कम करने से बैंकों के ऋण योग्य निधि (Lonable Fund) में वृद्धि होती है, जिसके कारण निवेश के लिए धन की उपलब्धता में वृद्धि होती है और इस प्रकार महँगाई बढ़ती है।

(iii)

⟶ (GDI)↓ ⟶ Growth Rate↓

SLR↑ ⟶ LF↓

⟶ उपभोक्ता ऋण↓ ⟶ Inflation Rate↓

⟶ सरकारी निवेश/व्यय↑

यदि सरकार के पास SLR के रूप में अतिरिक्त पूंजी आती है तो सरकारी निवेश तथा कल्याण योजनाओं के ऊपरी व्यय में वृद्धि होगी, लेकिन बैंकों के पास ऋण योग्य निधि (Lonable Fund) में कमी आयेगी। जिसके कारण निवेश (GDI) में भी कमी आयेगी और अंतिम रूप से संवृद्धि दर (Growth Rate) में गिरावट आयेगी। साथ ही ऋण योग्य निधि (Lonable Fund) में कमी के कारण बैंक उपभोक्ताओं को कम ऋण दे पायेंगे, जिससे महंगाई में कमी आयेगी।

(iv)

(GDI)↑ ⟶ Growth Rate↑

SLR↓ ⟶ LF↑

⟶ उपभोक्ता ऋण↑ ⟶ Inflation Rate↑

⟶ सरकारी निवेश/व्यय↓

यदि सरकार के SLR पूंजी में कमी आती है, तो सरकारी निवेश तथा कल्याण योजनाओं के ऊपर व्यय में कमी होगी, लेकिन बैंकों के पास ऋण योग्य निधि (Lonable Fund) में वृद्धि होगी, जिसके कारण निवेश (GDI) में भी वृद्धि होगी और अंतिम रूप से संवृद्धि दर (Growth Rate) में वृद्धि होगी। साथ ही ऋण योग्य निधि (Lonable Fund) में वृद्धि के कारण बैंक उपभोक्ताओं को अधिक ऋण दे पायेंगे, जिससे अंतिम रूप से महँगाई में वृद्धि होगी।

6.12 प्राथमिकता क्षेत्र ऋणदान कार्यक्रम *(Priority Sector Lending Programme – PSL)*

बैंकों के राष्ट्रीयकरण के पूर्व तक बैंकों के धन का फायदा उठाने वाले मुख्य रूप से वे लोग थे, जो बैंकों के प्रबंधन पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष नियंत्रण रखते थे। अतः कृषि तथा दूसरे प्राथमिकता वाले क्षेत्रों को देश की अर्थव्यवस्था में उनके महत्व के बावजूद आवश्यक मात्रा में बैंकों से ऋण नहीं मिल पाता था। 1965 में पहली बार साख अधिकृतिकरण योजना (Credit Authorization Scheme) लागू की गई। जिसके अंतर्गत व्यापारिक बैंकों के लिए यह आवश्यक कर दिया गया कि वे प्राथमिक क्षेत्रों को ज्यादा ऋण दें।

फरवरी 1968 में सरकार ने 'सामाजिक Banking' [एक बैंक का इस प्रकार प्रबंधन ताकि उसके कारोबारी हित एवं व्यापक सामाजिक हित में समन्वय स्थापित हो] की अवधारणा अपनाई, 1969 में 14 बड़े निजी बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया, अर्द्धशहरी एवं ग्रामीण अंचलों में शाखा प्रसार की एक व्यापक प्रक्रिया शुरू की गई तथा 1970 में उन्हें निर्देश दिया गया कि ऋण योग्य निधि (Lonable Fund) का एक निर्धारित प्रतिशत अंश उत्पादन के उन क्षेत्रों, उन भौगोलिक अंचलों एवं समाज के उन समूहों को आवंटित किया जाये, जिन्हें सरकार ने 'प्राथमिकता क्षेत्र' की मान्यता दी है। इस कार्यक्रम को प्राथमिकता क्षेत्र ऋणदान कार्यक्रम (Priority Sector Lending Programme – PSL) कहते हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

फिलहाल देशी बैंकों के लिए ऋण योग्य निधि (Lonable Fund) का 40% एवं विदेशी बैंकों के लिए ऋण योग्य निधि (Lonable Fund) का 32% इस क्षेत्र को देने का निर्देश है और ब्याज की भी अधिकतम सीमा 11% तय कर दी गई है।

प्राथमिक क्षेत्र के घटक

- कृषि (1970)
- ग्रामीण कुटीर एवं लघु उद्योग (सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम)
- मुद्रा की क्रय शक्ति के अनुसार आवास ऋण (25 लाख तक)
- समाज के कमजोर समुदाय

कृषि प्रसंस्करण एवं खाद्य प्रसंस्करण (1996) [कुल 40% ऋण के 18% भाग को कृषि तथा कृषि एवं खाद्य प्रसंस्करण हेतु आवंटित करना। सरकार ने बैंकों के लिए अनिवार्य कर दिया है]

- क) अनुसूचित जाति
- ख) अनुसूचित जनजाति समुदाय
- ग) लघु एवं सीमांत कृषक समुदाय
- घ) अल्पसंख्यक समुदाय
- ङ) निर्धन परिवार के सदस्य/व्यक्ति
- च) अन्य

निर्धन व्यक्तियों के लिए 1972 में इसी कार्यक्रम के अंदर एक उप-कार्यक्रम शुरू किया गया, जिसे विभेदकारी ब्याज दर कार्यक्रम (Differential Rate of Interest Scheme – DRI) कहते हैं। इस कार्यक्रम के तहत बैंकों को निर्देश दिया गया कि प्राथमिकता क्षेत्र ऋण का कम से कम 1% अंश, 4% ब्याज दर पर निर्धन व्यक्तियों को आवंटित करें।

नरसिंहम् समिति-I ने DRI कार्यक्रम का मूल्यांकन किया और पाया कि यह लगभग पूर्णतः विफल रहा क्योंकि 1% लक्ष्य के सापेक्ष बैंकों ने निर्धन व्यक्तियों को प्राथमिकता क्षेत्र ऋण का मात्र 0.01% आवंटित किया था। अतः समिति ने सिफारिश की कि इस कार्यक्रम को बंद कर दिया जाए और इसके स्थान पर अधिक कारगर कार्यक्रम शुरू किया जाए। DRI को जारी रखते हुए गरीबों के लिए 1992 में एक और नया कार्यक्रम शुरू हुआ, जिसे स्व-सहायता समूह- बैंक संपर्क कार्यक्रम (Self Help Group Bank Linkage Programme) कहते हैं।

DRI के तहत व्यक्तिगत रूप से गरीबों को सूक्ष्म मात्रा में ऋण दिया जाता था। नये कार्यक्रम के तहत पहले गरीब व्यक्तियों को स्व-सहायता समूह में संगठित किया जाता है, उसके बाद पंचायत द्वारा मान्यता दी जाती है, फिर स्थानीय प्रशासनिक संस्था (प्रखंड Office) द्वारा मान्यता दी जाती है और बैंक की स्थानीय शाखा से संबंध स्थापित करा दिया जाता है।

व्यक्तिगत रूप से ऋण आपूर्ति के मानक के कारण गरीब व्यक्तियों में अस्वस्थ स्पर्धा विकसित हो जाती थी, जिसका स्थानीय प्रभावशाली लोग एवं बैंक के अधिकारी दुरुपयोग करते थे। समूहीकरण के नए मानक के कारण गरीबों में एकता की भावना बढ़ रही है, जिससे उनकी सौदेबाजी की शक्ति बढ़ रही है। अतः पुराने कार्यक्रम (Bargaining Power) के मुकाबले नया कार्यक्रम अधिक कारगर सिद्ध हो रहा है। अगस्त 2010 तक 69 लाख स्व-सहायता समूहों का गठन हो चुका था और उन्हें प्राथमिकता क्षेत्र ऋण का 0.5% से थोड़ा अधिक अंश आवंटित किया जा चुका था।

ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाएँ उपलब्ध कराने का अभियान 'स्वाभिमान'

ग्रामीण क्षेत्रों में जन-जन तक बैंकिंग सुविधाएँ उपलब्ध कराने के लिए वित्तीय समावेशन (Financial Inclusion) हेतु भारतीय बैंक संघ (IBA) के सहयोग से केन्द्र सरकार द्वारा स्वाभिमान अभियान फरवरी 2011 से संचालित किया गया है।

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह व वित्त मंत्री प्रणव मुखर्जी की उपस्थिति में 'स्वाभिमान' के लिए एक विशेष अभियान का शुभारम्भ यूपीए अध्यक्ष श्रीमती सोनिया-गाँधी ने 10 फरवरी, 2011 को नई दिल्ली में किया। इस अभियान का उद्देश्य मार्च 2012 तक 2 हजार से अधिक जनसंख्या वाले सभी 73 हजार 'बैंक रहित गाँवों' को बुनियादी बैंकिंग सेवाएँ उपलब्ध कराकर ग्रामीण व शहरी

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारत के बीच आर्थिक दूरी को कम करना है। 'बिजनेस कॉरेस्पान्डेंट्स' (बैंक साथी) द्वारा संचालित इस अभियान के तहत घर बैठे-बैठे बैंकिंग सुविधा लक्षित क्षेत्रों में उपलब्ध कराई जा रही है। शाखा रहित बैंकिंग के तहत 5 करोड़ नए ग्रामीण बैंक खाते खोलने का लक्ष्य 'स्वाभिमान' के तहत निर्धारित है।

असंगठित क्षेत्र के कामगारों को नई पेंशन योजना में भागीदारी हेतु प्रोत्साहित करने को केन्द्र सरकार की नई 'स्वावलम्बन' योजना

असंगठित क्षेत्र के कामगारों को नई पेंशन योजना में शामिल होने हेतु प्रेरित करने के लिए केन्द्र सरकार ने एक नई 'स्वावलम्बन' योजना का शुभारम्भ 2010 में किया है। इसके वित्तीयन हेतु अगले चार वर्षों तक ` 1000 व अधिकतम ` 12000 का योगदान सम्बन्धित कामगार को करना होगा। योजना का उद्देश्य अगले चार वर्षों में प्रतिवर्ष 10 लाख उपभोक्ताओं को नई पेंशन योजना (New Pension Scheme – NPS) से जोड़ना है।

6.13 मुक्त ऋण योग्य निधि *(Free Lonable Fund)*

एक बैंक के NDTL का वह प्रतिशत अंश जो CRR, SLR तथा PSL के वित्तीय प्रावधानों के बाद बैंक के नियंत्रण में शेष रह जाये, वह बैंक का मुक्त ऋण योग्य निधि (Free Lonable Fund) कहलाता है।

प्रत्येक बैंक के प्रबंधन की सर्वोच्च सत्ता बैंक के निदेशक मंडल में निहित होती है। Free Lonable Fund के वितरण के लिए निदेशक मंडल पूर्णतः मुक्त होता है।

1991 तक CRR तथा SLR के अधिक होने के कारण प्राथमिकता क्षेत्र को भी कम ऋण प्राप्त होता था और शेष अर्थव्यवस्था (गैर- प्राथमिकता क्षेत्र) को भी कम ऋण ही मिल पाता था और इस प्रकार दोनों जगह निवेश की मात्रा भी कम रह जाती थी, जिस कारण Growth Rate 4-5% से ज्यादा नहीं हो पाता था, इसे इस उदाहरण से समझा जा सकता है:

(i)

जैसे- 1991 में CRR 14.5% था
+ SLR 38.5% था
53%

बची हुई राशि = (100 - 53)% = 47%

बची हुई राशि का 40% प्राथमिकता क्षेत्र में देने के बाद

47 × 40/100 = 18.8

अतः मुक्त ऋण योग्य निधि (Free Loanable Fund) = 47.0 - 18.8 = 28.2

अतः मुक्त ऋण योग्य निधि (Free Loanable Fund) = 28.2%

(ii)

जैसे- 2011 में CRR 06% है
+ SLR 24% है
30%

बची हुई राशि = (100 - 30)% = 70%

बची हुई राशि का 40% प्राथमिकता क्षेत्र में देने के बाद

70 × 40/100 = 28

अतः मुक्त ऋण योग्य निधि (Free Loanable Fund) = 70 - 28 = 42

अतः मुक्त ऋण योग्य निधि (Free Loanable Fund) = 42%

1991 में वित्तीय सुधार के लिए नरसिंहम् गठन समिति के बाद 1992 में आई रिपोर्ट में यह सुझाव दिया गया कि CRR तथा SLR का अत्यधिक होना अर्थव्यवस्था की प्रगति में बाधा है, इसलिए इन्हें क्रमबद्ध रूप से कम करना चाहिए। यही कारण था कि 2006 में CRR तथा 2007 में SLR की दरों के ऊपर से संसदीय नियंत्रण समाप्त कर दिया गया और RBI की नीतिगत स्वायत्तता में वृद्धि की गई।

■■■

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–6 *(Unit–6)*

बैंकिंग तथा वित्त प्रणाली : भाग-3
Banking & Finance System : Part-3

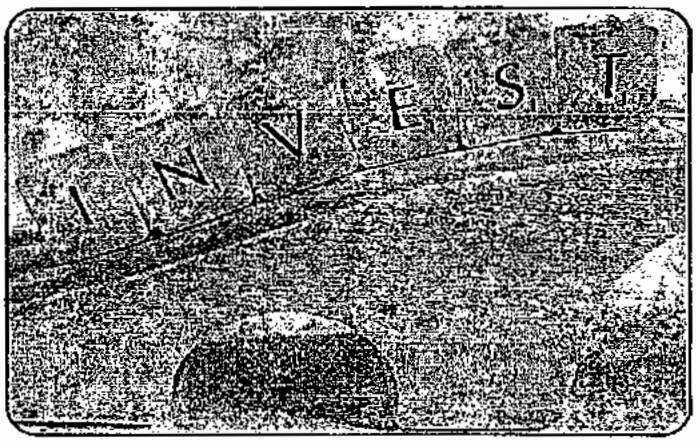

6.14 निवेश
(Investment)

6.15 प्रतिभूति
(Security)

6.16 *CC Account (Cash Credit Account) – I*

6.17 साख परीक्षण
(Credit Rating)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

6.14 निवेश *(Investment)*

निवेश (Investment) - ऐसा व्यय जिससे भविष्य में आय (Income in Future) की संभावना विकसित हो, **निवेश (Investment)** कहलाता है।

जिस व्यय से आय की संभावना न विकसित हो सिर्फ वर्तमान जरूरतों की पूर्ति हो जाये, उसे **उपभोग व्यय** कहते हैं। ऋण वितरण भी ऋणदाता के नजरिये से निवेश होता है।

सभी निवेशकों के मन में तीन श्रद्धा/उद्देश्य होती है:

सुरक्षा (S) (Security)	तरलता (L) (Liquidity)	प्रतिदान (R) (Return)

अब हम सुरक्षा (Security), तरलता (Liquidity) तथा प्रतिदान (Return) के बीच संबंधों का अध्ययन करेंगे।

तरलता और सुरक्षा में संबंध (Relation between Liquidity and Security): अक्सर तरलता (Liquidity) और सुरक्षा (Security) में प्रतिलोम संबंध (Inverse Relation) देखा जाता है। पैसा जितना अधिक तरल (More Liquid) होगा, वह उतना ही असुरक्षित (Insecure) होगा।

$S\uparrow \rightarrow L\downarrow$

सुरक्षा और प्रतिदान में संबंध (Relation between Security and Return): अक्सर सुरक्षा (Security) और प्रतिदान (Return) में प्रतिलोम संबंध (Inverse Relation) होता है। पैसा जितना अधिक सुरक्षित (More Secure) रखा जायेगा, उससे प्रतिदान (Return) उतना ही कम मिलेगा (Less Return) और जिस पैसे पर रिस्क ज्यादा लिया जायेगा, उससे रिटर्न की संभावना भी बढ़ेगी।

$S\uparrow \rightarrow R\downarrow$

Pocket का पैसा पूर्णतः तरल (Liquid) होता है, लेकिन वह उतना सुरक्षित (Secure) नहीं होता जितना कि बैंक में रखा पैसा सुरक्षित होता है, लेकिन बैंक में रखा पैसा जेब के पैसे से कम तरल (Liquid) होता है।

तरलता और प्रतिदान में संबंध (Relation between Liquidity and Return): अक्सर तरलता (Liquidity) और प्रतिदान (Return) में प्रतिलोम संबंध (Inverse Relation) होता है। पैसा जितना अधिक तरल होगा, उससे रिटर्न उतना ही कम मिलेगा।

$L\uparrow \rightarrow R\downarrow$

ब्याज (Interest) या प्रतिदान (Return), जोखिम (Risk) का पुरस्कार होता है, जो जितने लंबे समय तक जोखिम लेता है, उसे बड़ा पुरस्कार मिलता है। इसी प्रकार प्रतिदान (Return) या ब्याज (Interest), Liquidity के परित्याग का पुरस्कार होता है। जितने लंबे समय तक Liquidity का परित्याग किया जायेगा, उतना ही बड़ा पुरस्कार मिलेगा। इसे इस उदाहरण से समझा जा सकता है कि बचत खाता (Saving A/c) में ब्याज चालू खाते (Current A/c) से अधिक होता है, क्योंकि बचत खाते में पैसा अधिक सुरक्षित और कम तरल होता है। किसी भी बैंक की कोशिश होती है कि वह तीनों घटकों सुरक्षा, तरलता तथा प्रतिदान को अधिकतम कर सके और इसी के लिए एक अमेरिकन अर्थशास्त्री James Tobin ने **निवेश का पोर्टफोलियो (Portfolio in Investment)** सिद्धांत दिया।

निवेश का पोर्टफोलियो (Portfolio Investment): Tobin ने यह सिफारिश की कि निवेश योग्य संसाधन का अधिकतम संभव विविधिकृत निवेश (Diversified Investment) किया जाए। कुछ संसाधन सुरक्षित (Secure) अवसरों में, कुछ तरल (Liquid) अवसरों में और कुछ High Return वाले अवसरों में निवेशित किये जाये ताकि तरलता (Liquid), सुरक्षा (Security) एवं प्रतिदान (Return) के औसत मूल्य की महत्ता (Maximisation) सुनिश्चित की जा सके।

विविधिकृत निवेश (Diversified Investment) का सिद्धांत वित्तीय मामलों में Tobin ने 1957 में दिया। (फ्रांसीसी चिंतक मांटेस्क्यु ने शासन के Portfolio सिद्धांत का प्रतिपादन किया था। उनका कहना था कि संप्रभु की समस्त सत्ता एक राजा/पदाधिकारी में निवेश करने के बजाए कई पदाधिकारियों/मंत्रियों में निवेश करना चाहिए, ताकि शासन की औसत उत्पादकता बढ़ाई जा सके। Portfolio System of Governance भारत में 1861 में ही अपना लिया गया था।)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

पोर्टफोलियो निवेश में विविधिकरण (Diversification) का मतलब इस उदाहरण से समझा जा सकता है: जैसे- यदि एक व्यक्ति को ₹ एक लाख शेयर बाजार में निवेश करना है और यदि यह ₹ एक लाख एक ही कंपनी के शेयरों में लगा दिये गये तो पैसे डूबने की प्रायिकता (Probability) $\frac{1}{2}$ है, वहीं यदि इसे दो कंपनियों में निवेश किया जाये तो पूरे पैसे डूबने की प्रायिकता $\frac{1}{2^2}$ होगी और इसी प्रकार यदि दस कंपनियों में ये पैसे निवेश किये जाये तो पूरे पैसे डूबने की प्रायिकता $\frac{1}{2^{10}}$ होगी। इस प्रकार देखा जा सकता है कि निवेश का विविधिकरण करने से जोखिम में कमी आती जाती है, साथ ही तरलता (Liquidity) का औसत मूल्य भी विविधिकरण से बढ़ता है। और यही कारण है कि दुनिया में आज भी निवेश का सबसे लोकप्रिय सिद्धांत पोर्टफोलियो सिद्धांत (Portfolio Theory) ही है। किसी की भी परिसंपत्ति के संपूर्ण विविधिकृत ढाँचे को Asset Portfolio कहते हैं।

गिरवी ऋण (Mortgage Loan): किसी संपत्ति के कब्जा अधिकार के बदले दिये गये ऋण को गिरवी ऋण (Mortgage Loan) कहते हैं। जैसे- होम लोन, कार लोन इत्यादि। अर्थात् जब तक होम लोन या कार लोन की अंतिम किस्त ना चुकाई जाये तब तक वह बैंक के पास गिरवी रहेगी। लोन के Default होने की स्थिति में न्यायालय से बैंक गुहार लगाता है और न्यायालय के आदेश में संपत्ति कुर्क (Attachment) कर ली जाती है। फिर बैंक संपत्ति को जब्त कर नीलाम कर देता है।

अग्रिम (Advance): भविष्य में धन प्राप्ति के साक्ष्य के आधार पर दिये गये ऋण को अग्रिम ऋण (Advance Loan) कहते हैं। यह ऋण किसी साक्ष्य (भविष्य निधि, सैलरी सर्टिफिकेट आदि) के आधार पर दिया जाता है।

Consortium Loan: दो या अधिक ऋण दाताओं या बैंकों में अस्थायी आपसी समझौते के आधार पर दिये गये एक बड़े ऋण को Consortium Loan कहते हैं।

यह ऋण जोखिम को न्यूनतम (Minimum) करने के लिए 5-10 बैंक मिलकर देते हैं।

Syndicate Loan: दो या दो से अधिक बैंकों द्वारा आपसी स्थायी समझौते के अनुसार दिए गए बड़े ऋण को Syndicate Loan कहते हैं।

Syndicates of Bank: मिलकर कारोबार करने वाले बैंकों के स्थायी समूह को बैंकों का Syndicate कहते हैं।

इसे बैंकों का स्थायी (Permanent) समूह माना जाता है और जब-जब ऋण के लिए कोई बड़ा ग्राहक आता है, ये बैंक मिलकर दीर्घकालिक ऋण (Long Term Loan) देते हैं।

Call Money: अगले दिन की वापसी की शर्त पर दिये गये ऋण को Call Money कहते हैं। अर्थात् एकदिवसीय ऋण Call Money कहलाता है और इस पर दिये ब्याज दर को **Call Rate** कहते हैं।

दिन-प्रतिदिन के कारोबार में जिस बैंक के पास नकद राशि शेष रह जाती है, वह ऐसा ऋण देता है और जिस अन्य बैंक के पास नकद राशि की कमी हो जाती है, वह ऐसा ऋण लेता है। इस प्रकार Call Money का विनिमय प्रायः बैंकों के बीच ही होता है और आपसी सौदेबाजी द्वारा विभिन्न बैंक Call Rate का निर्धारण करते हैं। ध्यातव्य है कि प्रत्येक Call Money का Interest Rate अलग-अलग हो सकता है।

Call Money के विनिमय के लिए स्थापित संस्थागत व्यवस्था को **Call Money Market** या **Inter Bank Call Money Market** कहते हैं।

ऐसा माना जाता है कि दुनिया में Call Money Market का सबसे बड़ा केन्द्र (Hub), London Money Market है। वहाँ के अग्रणी बैंक जिस ब्याज पर Call Money का लेन-देन करते हैं, उसे लंदन अंतर बैंक प्रस्ताव दर (**London Inter Bank Offer Rate – LIBOR**) कहते हैं।

भारत के पाँच बड़े बैंकों में से चार का मुख्यालय मुम्बई में स्थित है।

आई.डी.बी.आई (IDBI)

आई.सी.आई.सी.आई (ICICI)

एस.बी.आई (SBI)

एच.डी.एफ.सी (HDFC)

ये बैंक आपस में जिस ब्याज दर पर Call Money का लेन-देन करते हैं, उसे मुम्बई अंतर बैंक प्रस्ताव दर (**Mumbai Inter Bank Offer Rate – MIBOR**) कहते हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

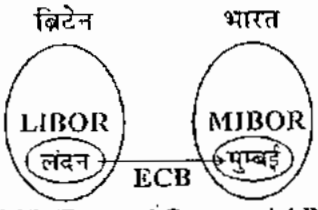

विदेशी बाजार से लिये गये ऋण को **ECB (External Commercial Borrowing)** कहते हैं और इस पर ब्याज का निर्धारण LIBOR के आधार पर ही किया जाता है।

यदि ब्रिटेन में विभिन्न बैंक Call Money का लेन-देन 6% की दर से कर रहे हैं। अर्थात् यदि LIBOR 6% है, तो जाहिर है कि भारत के कंपनियों को 6% से अधिक ब्याज की दर पर ही ऋण प्राप्त होगा। इन ऋण दरों को **$LIBOR^{+x}$** संकेत से सूचित किया जाता है।

$LIBOR^{+x}$: यहाँ यदि x=1 हो, तो **$LIBOR^{+1}$** का अर्थ हुआ LIBOR ऋण दर से 1% ज्यादा, इसी प्रकार

यदि x=2 हो, तो **$LIBOR^{+2}$** का अर्थ हुआ LIBOR ऋण दर से 2% ज्यादा।

क्योंकि ब्याज दर में बहुत कम परिवर्तन होता है, अतः Call Rates की दर में भी इसका मान बहुत कम होता है। इसलिए एक प्रतिशत के हिस्से को 100 भागों में बाँट दिया जाता है। अर्थात्

100 Basis Point = 1%

1 Basis Point = .01%

25 Basis Point = .25%

इस प्रकार $LIBOR^{+2\%}$ = $LIBOR^{+200}$ Basis Points

+ को Spread, (विस्तार) कहा जाता है।

अतः 200 Points का Spread = $LIBOR^{+200}$ Basis Point = $LIBOR^{+2\%}$

क्योंकि ECB (External Commercial Borrowing) के लिए ब्याज दर का निर्धारण LIBOR के आधार पर ही होता है, अतः यदि LIBOR में कमी होती है, तो ECB का ब्याज दर भी कम हो जाता है और इस प्रकार LIBOR में उच्चावच के अनुसार ही ECB के ब्याज में भी उच्चावच होता है।

ध्यातव्य है कि भारत के साथ-साथ दुनिया के बहुत से देशों में LIBOR को Reference Interest Rate माना जाता है, अतः विश्व अर्थव्यवस्था में LIBOR के अनुसार ब्याज दर में परिवर्तन होता रहता है। यही कारण है कि इसे विश्व अर्थव्यवस्था का संदर्भ ब्याज दर (Reference Interest Rate) कहते हैं।

6.15 प्रतिभूति *(Security)*

ऐसा कोई भी प्रमाण-पत्र अथवा दस्तावेज जिसके विक्रय द्वारा वित्त उगाही की जाती है, प्रतिभूति (Security) कहलाता है।

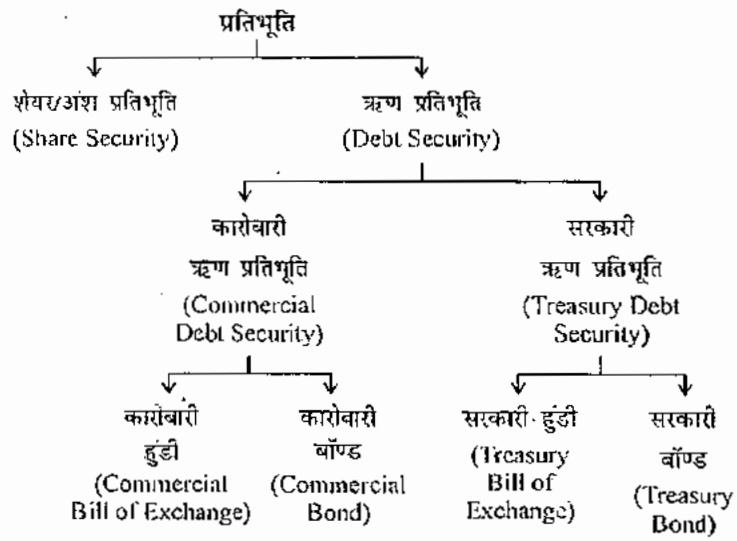

Copyright – Drishti The Vision Foundation

(1) **शेयर/अंश प्रतिभूति (Share Security):** जिस प्रतिभूति से क्रेता को जारी किये गये संस्था (Company) के स्वामित्व में एक निश्चित अंश प्राप्त होता है, उसे **शेयर/अंश प्रतिभूति** कहते हैं। 1956 के कंपनी अधिनियम तथा Financial Security Act के अनुसार शेयर केवल कंपनियाँ ही जारी कर सकती हैं, न कि कोई संप्रभु संस्था।

(इसकी विस्तृत चर्चा आगे की कक्षाओं में की जायेगी)

(2) **ऋण प्रतिभूति (Bond Security):** जिस प्रतिभूति से क्रेता (निवेशक) को ऋण जारी करने वाली संस्था से एक निर्धारित दर पर ब्याज पाने का अधिकार मिले, उसे **ऋण प्रतिभूति** कहते हैं।

(i) **कारोबारी ऋण प्रतिभूति (Commercial Debt Security):** कारोबारी संस्था द्वारा जारी प्रमाण-पत्र या दस्तावेज जिसके जारी होने के बाद एक निर्धारित दर पर ब्याज पाने का अधिकार मिले, उसे **कारोबारी ऋण प्रतिभूति (Commercial Debt Security)** कहते हैं।

कारोबारी ऋण प्रतिभूति (दस्तावेज) का एक उदाहरण:

मैं,
रतन टाटा धारक को 12 जनवरी 2012 को ₹ 10,000 देने का वचन करता हूँ।
रतन टाटा

(ii) **सरकारी ऋण प्रतिभूति (Treasury Debt Security):** सरकारी संस्था द्वारा जारी प्रमाण-पत्र या दस्तावेज जिसके जारी होने के बाद एक निर्धारित दर पर ब्याज पाने का अधिकार मिले, उसे **सरकारी ऋण प्रतिभूति (Treasury Debt Security)** कहते हैं।

सरकारी ऋण प्रतिभूति (दस्तावेज) का एक उदाहरण:

मैं,
भारत का/की राष्ट्रपति धारक को 12 जनवरी, 2012 को ₹ 10,000 देने का वादा करता/ती हूँ।
राष्ट्रपति

बॉण्ड जारी करने की तिथि से रिटर्न मिलने तक की अवधि **परिपक्वता अवधि (Maturity Period)** कहलाती है। तथा प्रतिभूति प्रमाण-पत्र पर जो राशि अंकित होती है, उसे प्रतिभूति का **अंकित मूल्य** या **Face Value** कहते हैं। जैसे- उपरोक्त उदाहरणों में अंकित मूल्य (Face Value) ₹ 10,000 है।

जिसे ऋण प्रतिभूति की परिपक्वता अवधि (Maturity Period) एक वर्ष से कम होती है, उसे **हुंडी (Bill of Exchange)** या विनिमय पत्र कहते हैं तथा जिस ऋण प्रतिभूति की परिपक्वता एक वर्ष से अधिक होती है, उसे **बॉण्ड** कहते हैं। जिसकी परिपक्वता अवधि असीम हो जाये, उसे **शाश्वत बॉण्ड (Perpetual Bond)** कहते हैं।

हुण्डी का विक्रय अंकित मूल्य से कम कीमत पर होता है। अर्थात् बट्टे (Discount) पर विक्रय होता है। अंकित मूल्य से कम कीमत पर हुण्डी के क्रय को हुण्डी का बट्टाकरण (Discount) कहते हैं। इस प्रकार हुण्डी का बट्टाकरण भी बैंक के लिये एक निवेश है क्योंकि इससे आय अर्जन होता है।

शाश्वत बॉण्ड (Perpetual Bond): ऐसा बॉण्ड जिसका मूलधन कभी नहीं लौटाया जाता, लेकिन ब्याज साल-दर-साल मिलता रहता है, शाश्वत बॉण्ड (Perpetual Bond) कहलाता है। भारत में शाश्वत बॉण्ड (Perpetual Bond) की अवधारणा नहीं है, लेकिन दुनिया के कई अन्य देशों में है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

जीरो कूपन बॉण्ड (Zero Coupon Bond): ऐसे बॉण्ड जिन पर ब्याज दर शून्य होता है, जीरो कूपन बॉण्ड कहलाता है। कहने के लिए इन पर कोई ब्याज नहीं प्राप्त होता, लेकिन इन बॉण्डों को भारी बट्टा (Heavy Discount) पर निर्गत किया जाता है तथा सम मूल्य (Par Value) पर इनकी अदायगी होती है। इस प्रकार निर्गमन तथा अदायगी मूल्य में जो अंतर होता है, वही ब्याज है।

10,000
कूपन दर–0%
समय – 5 वर्ष

6.16 CC Account (Cash Credit Account) – I

यह एक ऋण खाता है, अर्थात् इस खाते द्वारा ऋण दिया जाता है। यह जमा खाता नहीं है। इस खाते द्वारा ऋण सिर्फ कारोबारी संस्थाओं (Commercial Institution) को उपलब्ध कराई जाती है। इसका अर्थ है कि परिवार (Family), गृहस्थ (House Hold) या उपभोक्ताओं (Consumers) को इस खाते से ऋण नहीं दिया जाता। पुनः इस खाते द्वारा उत्पादन संस्था को कार्यशील पूंजी उपलब्ध कराई जाती है, स्थिर पूंजी नहीं (मतलब इस खाते द्वारा दुकान नहीं खोला जा सकता, लेकिन खुला हुआ दुकान चलाया जा सकता है) अर्थात् उत्पादन क्षमता की स्थापना यहां विस्तार नहीं हो सकता बल्कि उपलब्ध उत्पादन क्षमता (Available Productive Capacity) का बेहतर दोहन होता है। यहां ऋण का उपयोग चक्रीय विधि (Circular Method) से किया जाता है। अर्थात् जरूरत पड़ने पर राशि निकाल ली (Withdraw) जाती है और आने पर पैसा चुका (Deposite) दिया जाता है।

इसके प्रचालन का तरीका चालू खाते की तरह नहीं होता है, लेकिन यह ऋण खाता है। सामान्यतः सभी कारोबारियों की इच्छा CC Account खोलने की होती है, जिसके लिए वे बैंक में आवेदन जमा करते हैं। खाता खोलने के लिए कारोबारी सबसे पहले निवेश प्रस्ताव पत्र (Investment Project Report) जमा करते हैं। जिसमें इसका विवरण होता है कि कारोबारी पैसे का उपयोग किस प्रकार करने वाले हैं?

आवेदन तथा निवेश पत्र हासिल करने के बाद बैंक के विशेषज्ञ आवेदक का साख परीक्षण (Credit Rating) करते हैं, जो दो प्रकार का होता है:

सामाजिक साख परीक्षण (Social Credit Rating)

सामाजिक साख परीक्षण के लिए सबसे पहले बैंक कर्मी आवेदक के सामाजिक और आर्थिक स्थिति के साथ उसके वैध और अवैध कार्यों का पता लगाते हैं। इसके बाद बैंक कर्मी एक पैमाना तय करते हैं और एक मान्य साख (Benchmark) मान्यता बना लेते हैं।

अगर सामाजिक साख Benchmark से ऊपर हो तो आवेदक को प्रथम दर्जे का सामाजिक व्यक्ति (Primar Social Person) की श्रेणी में रखा जाता है और यदि सामाजिक साख Benchmark से नीचे हो, तो आवेदक को दोयम दर्जे का सामाजिक व्यक्ति (Sub Prime Social Person) माना जाता है।

व्यावसायिक साख परीक्षण (Commercial Credit Rating)

व्यावसायिक साख परीक्षण के लिए सबसे पहले बैंक कर्मी आवेदक का वित्तीय साख परीक्षण करते हैं। अर्थात् संस्थान की वित्तीय हालत कैसी है। मसलन बैंक का तुलन पत्र (Balance Sheet) गुलाबी (Pink), लाल (Red) या काला (Black) में किस प्रकार का है। पुनः आवेदक के संस्थान की स्थिर पूंजी की गुणवत्ता कैसी है। जैसे- यदि आवेदक की ट्रांसपोर्ट कंपनी है तो उसके ट्रक आदि की स्थिति कैसी है। यदि इनकी गुणवत्ता अच्छी है और तुलन पत्र भी गुलाबी है तो आवेदक को Prime Capital माना जायेगा और यदि खराब है, तो Sub Prime Capital माना जायेगा।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

जाहिर है Sub Prime आवदेकों को ऊँचे ब्याज दर पर ऋण दिया जाता है।

पुनः बैंक कर्मी इस बात का भी पता लगाते है कि कारोबारी के संस्था के प्रति व्यावसायिक दुनिया के लोगों की क्या धारणा है और संस्था के कर्मचारियों की संस्था के प्रति क्या मनः स्थिति है? इस आधार पर भी यदि छवि अच्छी है तो इन्हें Prime Borrower कहेंगे और यदि छवि अच्छी नहीं है, तो इन्हें Sub Prime Borrower कहेंगे।

उपरोक्त सभी कारकों का एक औसत मान निकाला जाता है और इस आधार पर Prime और Sub Prime Borrower का निर्धारण किया जाता है।

Sub Prime Loan के भुगतान में गड़बड़ी के कारण वित्तीय संकट पैदा होता है, जिसे Sub Prime Crisis कहते हैं। अगर किसी देश के ज्यादातर ऋणी अपने बैंक की किश्त न चुकाये तो देश में Sub Prime Crisis आयेगा, जैसा कि अमेरिका में हुआ। इस कारण से ही विभिन्न संस्थानों की साख परीक्षण (Credit Rating) के लिए कुछ संस्थाए प्रमाण पत्र (Certificate) जारी करती हैं।

कोई भी कंपनी कई सारी संस्थाओं से साख परीक्षण करा सकती है और ऋण आवेदन के समय अपने आवेदन के साथ स्वतंत्र संस्थाओं द्वारा जारी साख प्रमाण-पत्र को संलग्न कर सकता है। साख परीक्षण की प्रक्रिया यदि निम्न हो, तो Sub Prime संकट की गुंजाइश बनी रहती है। बैंकों के बकनाकों विश्लेषणों द्वारा भी कभी-कभी नीतिगत चूक हो जाती है, तो कभी देश की कानून व्यवस्था में ही खोट होता है। अतः Sub Prime Crisis से बचने के लिए साख परीक्षण की प्रक्रिया को सुदृढ़ीकरण करना होगा और साथ ही देश की कानून व्यवस्था में भी सुधार करना होगा। जैसा कि 2009 में अमेरिका ने Financial Civilization Act कानून पास करके किया। यही कारण था कि जी-20 के सदस्य देशों ने लंदन और पिट्सबर्ग में स्वतंत्र साख परीक्षण करने वाली संस्थाओं के लिए निगरानी व्यवस्था को चुस्त करने और Sub Prime Borrowers पर कानूनी लगाम लगाने की वकालत की और जिस पर निर्णय सीओल सम्मेलन (Seol Summit) में लिया गया।

यदि सारी चीजें सही हो तो बैंक आवेदक के साथ ऋण के ऊपर सहमति देता है, जिसे अनुमोदन (Approval) कहते हैं। अनुमोदन का अर्थ ऋण पर सैद्धान्तिक सहमति होती है और बैंक प्रायः दो शर्तें ऋण आवेदकों के पास रखता है:

MR
(Margin Requirements)

किसी Project के बाजार मूल्य का वह प्रतिशत अंश, जो ऋण आवेदक के पास होना एक आवश्यक शर्त हो उस Project संबंधी ऋण का **Margin Requirements** कहलाता है।

यह प्रतिशत में व्यक्त किया जाता है। जैसे- यदि किसी ऋण आवेदक को एक मकान खरीदना है, जिसका बाजार मूल्य ₹ 30 लाख है तो बैंक 30 लाख का 20 या 30 प्रतिशत जो भी आवेदक की साख परीक्षण के बाद बैंक निर्धारित करेगा, Margin Requirements के रूप में आवेदक को सौंपना होगा।

CR
(Collateral Requirements)

किसी ऋण के उपयोग का अधिकार हासिल करने के लिए किसी चल या अचल संपत्ति के प्रमाण-पत्र जमा करने की शर्त को **Collateral Requirements** कहते हैं।

आमतौर पर Collateral Requirement Paper का मूल्य अधिकृत ऋण से ज्यादा होता है। जैसे- यदि बैंक ने ₹ 24 लाख के मकान के लिए ₹ 30 लाख की संपत्ति प्रमाण-पत्र जमा करने की शर्त रखता है, तो यहाँ CR 125% है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

MR की दर आवेदक की साख के व्युत क्रमानुपाती (Inversely Proportional) होती है।

MR बाजार में अनिश्चितता से सीधे तौर पर जुड़ी होती है। अर्थव्यवस्था में जितनी अधिक अनिश्चितता होगी MR उतना ही अधिक रखना विवेकपूर्ण होगा। सामान्यत: RBI यह निर्धारित करता है कि विभिन्न प्रकार के ऋणों (कार लोन, होम लोन आदि) के लिए MR का मान क्या होगा। सामान्यत: Sub Prime ग्राहकों के लिए यह होम लोन का 30 प्रतिशत होता है। आवास क्षेत्र में MR का मान अधिक होने से ऋण का प्रवाह कम होगा और आवासों की बिक्री कम होगी।

RBI अर्थव्यवस्था के उतार-चढ़ाव के साथ इसे भी कम अधिक कर सकता है। यदि RBI, CR का मान बढ़ाता है, तो ऋण के लिए पात्र आवेदकों की संख्या कम होती है।

जब उपर्युक्त दोनों शर्तें पूरी हो जाती हैं तो यह कहा जाता है कि ऋण स्वीकृत (Sanction) हो गया।

असीमित भुगतान दायित्व- अगर ऋण चुकाने का दायित्व न सिर्फ उस संपत्ति मूल्य के बराबर हो, जिसके लिए ऋण लिया गया है बल्कि संपूर्ण ऋण राशि और उस पर आकलित ब्याज के बराबर हो, तो ऐसे ऋण को असीमित भुगतान दायित्व कहते हैं।

सीमित भुगतान दायित्व- अगर ऋण चुकाने का दायित्व सिर्फ उस संपत्ति मूल्य के बराबर हो, जिसके लिए ऋण लिया गया है, तो ऐसे दायित्व को सीमित भुगतान दायित्व कहते हैं।

यदि किसी देश में ऋण भुगतान का दायित्व सीमित (Limited) प्रकार का होता है और वहाँ संपत्ति के मूल्य में गिरावट आती है तो ऋण देने वालों में जानबूझकर भुगतान बन्द करने की प्रवृत्ति बढ़ जाती है और लोग Deliberate Default करते हैं। (जैसे- यदि आवास का मूल्य ₹ 34 लाख से ₹ 20 लाख हो गया है और ग्राहक के पास विकल्प है कि 34 लाख के ऋण दायित्व के बदले 20 लाख की संपत्ति लेने दें)

कीमत गिरने से आवंटित ऋण Sub Prime प्रकार का हो जाता है और बैंकों को इसके लिए अत्यधिक परेशानी उठानी पड़ती है, जैसा कि अमेरिका में 2008 में Lehman Brothers के साथ हुआ।

सारी शर्तें पूरी होने के बाद ऐसा कहा जाता है कि **Loan Sanction** हो गया। Loan Sanction का अर्थ है कि ऋण आवेदक संस्था के नाम से बैंक, चालू (Current) प्रकृति का खाता खोल देता है और आवेदक को CC Account से एक निश्चित राशि निकालने का अधिकार दे दिया जाता है। इसके बाद आवेदक को एक चैकबुक (Check Book) और ए.टी.एम कार्ड (A.T.M. Card) आवंटित कर दिया जाता है।

अधिकतम जितनी राशि निकालने का अधिकार दिया जाता है, उसे **Sanction Loan** कहते हैं।

Sanction Loan, Approved Loan से हमेशा बराबर या कम होता है।

Sanction Loan ≤ Approved Loan

वितरित ऋण राशि (Disbursal of Money): जितनी राशि ऋणी व्यक्ति उपयोग करता है, उस राशि विशेष को वितरित ऋण राशि कहते हैं, जो अधिकृत ऋण राशि के बराबर हो सकता है या कम हो सकता है।

वितरित ऋण राशि (Disbursal of Money) पर ही बैंक ब्याज लगाता है। जाहिर है कि बैंक उतना ही पैसा खाताधारी के खाते में रखना चाहेगा जितना की वह उपयोग करेगा।

ऋण का नकद प्रावधान (Cash Provision of Loan): अनुमोदित ऋण का वह अंश, जिसे बैंक ऋणी संस्था की जरूरतों की पूर्ति के लिए अपने पास नकद रूप में रखता है ऋण का नकद प्रावधान कहलाता है।

कभी-कभी बैंक के लिए जटिल परिस्थिति उपस्थित हो जाती है, जैसे- यदि बैंक को लगता है कि 'A' बस 5 करोड़ ही

Copyright – Drishti The Vision Foundation

इस्तेमाल करेगा, लेकिन Sanction Loan 15 करोड़ है तो Cash Shortage होने पर एक बैंक को दूसरे बैंक से Call Money का इंतजाम (Arrangement) करना पड़ता है। अत: इन परिस्थितियों से बचने के लिए Cash Provision का प्रबंधन करना बड़े अधिकारियों (High Authorities) का काम होता है, ताकि बैंक की छवि धूमिल न हो।

नकद अधिशेष (Cash Surplus): नकद प्रावधान के सापेक्ष बैंक के पास उपलब्ध नकद राशि के आधिक्य को बैंक का **नकद आधिक्य (Cash Surplus)** कहते हैं। यदि माना जाये कि अनुमोदित ऋण (Approved Loan) ₹ 42 करोड़ है और ऋण का नकद प्रावधान (Cash Provision of Loan) ₹ 5 करोड़ है तो नकद अधिशेष (Cash Surplus) की राशि ₹ 37 करोड़ होगी।

चूँकि नकद अधिशेष की राशि यानि कि 37 करोड़ बैंक के पास निष्क्रिय पड़ा है, जिस पर बैंक को कोई ब्याज नहीं मिल रहा, अत: बैंक इस राशि को भी सक्रिय (Active) करना चाहेगा और इस प्रकार पूरी प्रक्रिया किसी अन्य ग्राहक 'B' के साथ दोहराई जायेगी। पुन: 'B' के लिए ऋण का नकद प्रावधान (Cash Provision of Loan) यदि 5 करोड़ हैं तो बैंक के पास अभी भी 32 करोड़ का आधिक्य है। इस प्रकार यह पूरी प्रक्रिया क्रमश: अन्य ग्राहकों 'C', 'D' आदि के साथ दोहराई जायेगी, जब तक कि नकद अधिशेष (Cash Surplus) का मान शून्य न हो जाये।

नकद अधिशेष को शून्य करने के लिए बैंक अधिकाधिक व्यक्तियों को ऋण अनुमोदित करता है। जब नकद अधिशेष का मान शून्य हो जाता है, तो नकद प्रावधान का समग्र मूल्य बैंक के पास उपलब्ध नकद राशि के बराबर हो जाता है।

इस प्रकार ऋण अनुमोदन की प्रक्रिया में समग्र अनुमोदित ऋण का मूल्य उपलब्ध नकद राशि से कई गुणा ज्यादा होता है।

माना कि ₹ (42 + 37 + 33 + ...) करोड़ = ₹ 300 करोड़ है।

इसे अगले चित्र से समझा जा सकता है:

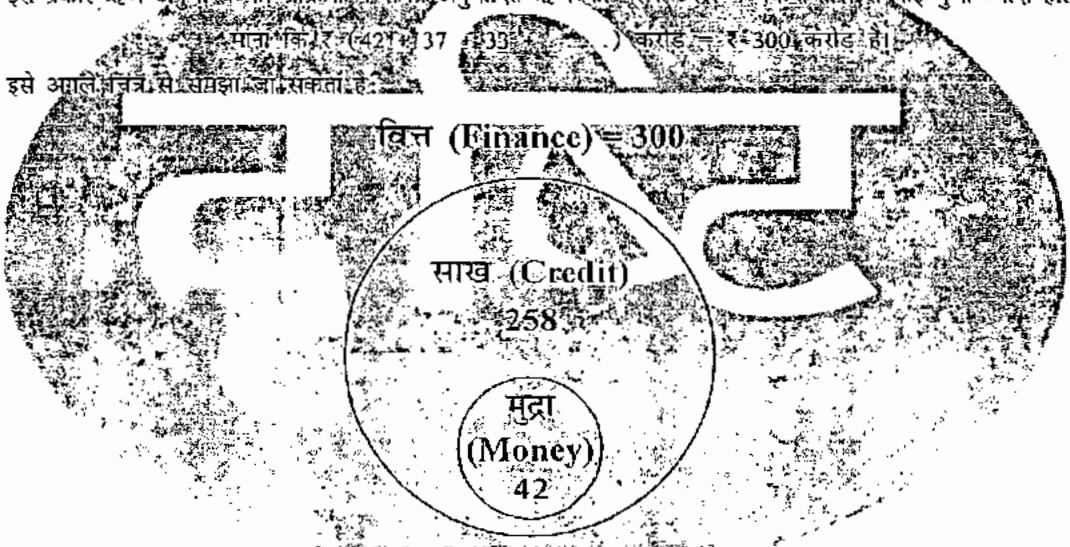

बैंक के हाथ में उपलब्ध मुद्रा (Cash in Hand) के सापेक्ष अनुमोदित ऋण के समग्र मूल्य (वित्त) के आधिक्य को साख (Credit) कहते हैं। अगर अनुमोदन की प्रक्रिया सावधानी से की गई हो, तो साख सुरक्षित या **धारणीय (Sustainable)** प्रकार का होगा। पुन: यदि अनुमोदन की प्रक्रिया मानकीकृत (Standardised) नहीं हो, तो साख (Credit) **गैर-धारणीय** प्रकार का होगा और उसमें संकट की आशंका बनी रहेगी। ऐसे साख को **Financial Bubble** कहते हैं।

उपलब्ध नकद राशि के मुकाबले अधिक मात्रा में ऋण अनुमोदक की प्रक्रिया को **साख सृजन** कहते हैं। यदि साख सृजन की प्रक्रिया धारणीय है तो पूंजी निर्माण की पूरी प्रक्रिया भी धारणीय होगी और इस प्रकार संवृद्धि की प्रक्रिया के साथ निवेश की प्रक्रिया भी धारणीय होगी।

साख सृजन का अधिकार केवल वाणिज्यिक बैंकों को ही है, उसके अलावा किसी को नहीं। RBI साख सृजन नहीं करता मुद्रा सृजन करता है

उच्च शक्ति मुद्रा (High Powered Money): ऐसी मुद्रा उच्च शक्ति मुद्रा कहलाती है, जिसके आधार पर साख सृजन किया जाता है।

6.17 साख परीक्षण *(Credit Rating)*

क्रेडिट रेटिंग का सामान्य अर्थ होता है- 'विश्वसनीयता की परख या मूल्यांकन।' यह किसी देश की सरकार या किसी अन्य निकाय की उधार लौटाने की क्षमता के मूल्यांकन की प्रक्रिया को इंगित करती है। यह मूल्यांकन साख निर्धारण एजेंसियों (क्रेडिट रेटिंग एजेंसी) द्वारा किया जाता है। ये एजेंसियाँ अपना कार्य गणितीय फार्मूलों के आधार पर नहीं करती बल्कि ये इस कार्य में अपने विवेक व अनुभव के आधार पर निश्चित करती हैं कि साख निर्धारण करते समय किन-किन कारकों को संज्ञान में लेना है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

Credit Rating उधार लेने वाले की साख क्षमता या उधार लौटाने की क्षमता का निर्धारण करता है। इसका मुख्य उद्देश्य उधार देने वाले या उधार लेने वाले की प्रत्याशित भुगतान क्षमता का मूल्यांकन प्रस्तुत करना है, जिससे उधार देने से पहले यह जाना जा सके कि जिसको यह उधार दिया जा रहा है, उससे मूलधन तथा ब्याज की अदायगी की क्या संभावना है? Credit Rating वित्तीय बाजार के विकसित होने में सहायक होता है। इस धारणा की शुरूआत 1909 में अमेरिका में हुई।

अन्तर्राष्ट्रीय	(S & P) Standard & Poor
	Moody's
	Fitch
घरेलू	CRISIL
	ICRA
	CARE
	FRIPL

(i) CRISIL – क्रेडिट रेटिंग एण्ड इन्वेस्टमेंट सर्विसेज ऑफ इंडिया लिमिटेड
(ii) ICRA – इनवेस्टमेंट इनफार्मेशन एण्ड क्रेडिट रेटिंग एजेन्सी आफ इण्डिया लि.
(iii) CARE – क्रेडिट एनालिसिस एण्ड रिसर्च लि.
(iv) FRIPL – फिच रेटिंग इण्डिया प्राइवेट लि.

विभिन्न कंपनियाँ ऊपर लिखे गये Credit Rating एजेंसियों को अपने साख परीक्षण हेतु आमंत्रित करती है और ये रेटिंग एजेंसियाँ विभिन्न कंपनियों का साख परीक्षण कर उन्हें प्रमाण-पत्र सौंपती है। प्रमाण-पत्र में साख का अंक Grade Form में होता है।

AAA सर्वोच्च सुरक्षा
AA उच्च सुरक्षा
A पर्याप्त सुरक्षा
BBB मॉडरेट सुरक्षा
BB सब-मॉडरेट सुरक्षा
.....
B', C आदि।

उल्लेखनीय है कि जो संस्थाएँ AAA Rating प्रदर्शित करती हैं, वे मूलधन तथा ब्याज दायित्व की दृष्टि से बहुत सुदृढ़ है और कोई भी प्रतिकूल परिवर्तन जैसे-वैश्विक मंदी आदि इन्हें प्रभावित नहीं करेगा। इसी तर्ज पर C Rating पर्याप्त जोखिम का द्योतक है।

स्टैंडर्ड एंड पुअर्स *(Standard & Poor – S&P)*

स्टैंडर्ड एंड पुअर्स संयुक्त राज्य अमेरिका स्थित वित्तीय सेवा प्रदान करने वाली कंपनी है। यह मैक्ग्रा हिल कंपनी का एक खंड है, जो वित्तीय अनुसंधान व स्टॉक तथा बॉण्ड पर विश्लेषण प्रकाशित करता है। मूलतः इसकी स्थापना 1860 में हुयी थी पर इसका मौजूदा स्वरूप 1941 में उभरकर आया था। यह अपने स्टॉक सूचकांकों व क्रेडिट रेटिंग के लिए प्रसिद्ध है। भारत की एसएंडपी सीएनएक्स निफ्टी, ऑस्ट्रेलिया का एएंडपी/एएसक्स 200 इसके स्टॉक एक्सचेंज इंडेक्स हैं। विश्व के 23 देशों में इसका कार्यालय है। विश्वभर के निवेशकों में इसे वित्तीय-बाजार अन्वेषक के रूप में जाना जाता है। इसका मुख्यालय न्यूयार्क में स्थित है।

क्रेडिट रेटिंग एजेंसी स्टैण्डर्ड एण्ड पुअर्स रेटिंग एजेन्सी ने ऐतिहासिक निर्णय लेते हुये 5 अगस्त, 2011 को 95 वर्ष में पहली बार विश्व की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था संयुक्त राज्य अमेरिका की क्रेडिट रेटिंग को AAA से घटाकर AA' कर दिया। एजेन्सी के अनुसार अमेरिका में जिस तरीके से कर्ज की ऊपरी सीमा में बढ़ोतरी व संबंधित राजकोषीय नीति पर बहस हुयी और संदेह के बादल पैदा हुये, उससे यह स्पष्ट संकेत मिलता है कि सार्वजनिक व्यय में कटौती के द्वारा निकट भविष्य में विकास या राजस्व में वृद्धि के लिए एक समझौते पर पहुँचना अब कठिन लगता है। अमेरिका की रेटिंग में इस गिरावट का तात्पर्य है कि वित्तीय स्थिरता को प्राप्त करने की अमेरिकी प्रशासन के प्रयास अपेक्षित परिणाम प्राप्त करने में असफल रहे हैं। एजेन्सी ने अमेरिकी सरकार को चेतावनी दी है कि अगले दो वर्षों में अमेरिका की क्रेडिट रेटिंग में और भी गिरावट आ सकती है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि क्रेडिट रेटिंग एजेन्सी 'मूडीज' ने जापान की क्रेडिट रेटिंग Aa2 से Aa3 कर दी। 'मूडीज' के अनुसार जापान की रेटिंग में गिरावट का कारण कमजोर विकास संभावनाएँ, व्यापक ऋण तथा राजनैतिक अनिश्चितता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–6 *(Unit–6)*

बैंकिंग तथा वित्त प्रणाली : भाग-4
Banking & Finance System : Part-4

6.18 *CC Account (Cash Credit Account)-II*

6.19 किसान क्रेडिट कार्ड *(KCC)*

6.20 लघु उद्यमी क्रेडिट कार्ड *(LUCC)*

6.21 अतिलघु, लघु तथा मध्यम उद्यम विकास अधिनियम, 2006
(Enactment of MSMED Act, 2006)

6.22 मध्यम व लघु उद्योग क्लस्टर विकास कार्यक्रम
(Cluster Development Programme – MSE)

6.23 स्वरोजगारी क्रेडिट कार्ड *(SCC)*

6.24 भारत में सहकारी बैंक तथा सहकारी बैंकों की वाणिज्यिक बैंकों से भिन्नता

6.25 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक *(Regional Rural Banks)*

6.26 राष्ट्रीय कृषि तथा ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड)
[National Bank for Agriculture and Rural Development (NABARD)]

6.27 भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक–सिडबी
(Small Industries Development Bank of India – SIDBI)

6.28 वित्तीय प्रणाली समिति की रिपोर्ट (नरसिंहम् समिति-I की रिपोर्ट)
(Report of the Committee on the Financial System)

6.29 चक्रवर्ती समिति तथा बैंकिंग सुधार

6.30 बैंकिंग सुधारों हेतु नरसिंहम् समिति की सिफारिशें (नरसिंहम् समिति - II की रिपोर्ट)
(Narasinham Committee Recommendations on Banking Reforms)

6.31 भारत में गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (NBFC) की भूमिका

6.32 बैंकिंग सेवाओं में सुधार हेतु दामोदरन समिति के सुझाव

Copyright - Drishti The Vision Foundation

6.18 *CC Account (Cash Credit Account)-II*

इसके आवेदन और अनुमोदन की प्रक्रिया पूर्व में बताई गई CC Account जैसी ही होती है। यह भी एक ऋण खाता है तथा यह ऋण उपभोक्ताओं को दिया जाता है। इस खाते से उपभोक्ता ऋण का प्रवाह होता है, जिससे उपभोक्ता वस्तु व सेवाओं की माँग बढ़ती है। माँग बढ़ने के कारण विक्रय में वृद्धि होती है और विक्रय में इस वृद्धि से परोक्ष रूप से उत्पादकों को उत्पादन बढ़ाने की प्रेरणा मिलती है।

लेकिन इससे नुकसान भी हैं क्योंकि इस खाते के कारण माँग में वृद्धि होती है और माँग में वृद्धि के कारण महँगाई भी बढ़ती है।

क्रेडिट कार्ड का उपयोग करने के बाद ऋण राशि किस्तों में चुकानी होती है। अतः आमदनी में कमी होने पर Sub Prime ऋण का खतरा बना रहता है और इस प्रकार बैंक को सही समय पर पैसे नहीं मिलने के कारण बैंक के तुलन पत्र (Balance Sheet) के लाल (Red) होने की संभावना बढ़ जाती है। पुनः पूंजी नहीं चुका पाने पर उपभोक्ता के मन में तनाव पैदा होता है और इस प्रकार उपभोक्ता समाज में कई प्रकार की बुराइयाँ पनपने के साथ उपभोक्तावाद (Consumerism) को बढ़ावा मिलता है।

वहाँ अनुमोदित राशि (₹ 42 करोड़) यहाँ के Credit Limit के समान होती है। इस Credit Card Account में एक Cash Limit का प्रावधान होता है। यदि Cash Limit ₹10 हजार है तो कार्डधारी ए.टी.एम. में जाकर कभी भी इतनी राशि निकाल सकते हैं।

ए.टी.एम (Automated Teller Machine - A.T.M.)

बैंक द्वारा अपने उपभोक्ताओं को व्यापक स्तर पर जमा राशि को निकालने वाली सुविधा ए.टी.एम. मशीन के द्वारा दी जाती है। इस पर एक नंबर होता है, जिसकी सहायता से कार्डधारी कम्प्यूटर नेटवर्क से जुड़ी हुई, देशभर में फैली हुई किसी भी बैंक की किसी भी शाखा से ऑटोमैटिक तरीके से रुपये की निकासी कर सकता है। इस प्रकार यह ए.टी.एम व्यवस्था बैंक ड्राफ्ट, नकद मुद्रा और ट्रैवलर्स चैक का स्थानापन्न बन गया है।

एम बैंकिंग (Mobile Banking)

यह प्रणाली मोबाइल फोन या किसी अन्य मोबाइल युक्ति की सहायता से किसी ग्राहक के खाते से सीधे जोड़कर वित्त का आदान-प्रदान करते हैं। भारत के साथ विकासशील तथा अन्य अल्पविकसित देशों में मोबाइल फोन के व्यापक प्रयोग के कारण ही यह सम्भव हो पाया है। एम बैंकिंग सेवाएँ अत्यंत ही कम लागत पर संचालित की जा सकती हैं क्योंकि मोबाइल नेटवर्क पहले से ही तैयार टेक्नोलॉजी का आधार उपलब्ध कराता है और जिसके माध्यम से अन्य सेवाएँ जैसे- M. Payment या M. Banking काफी कम लागत पर उपलब्ध हो सकती है। भारतीय अर्थव्यवस्था के संदर्भ में यह और महत्त्वपूर्ण है क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाली अधिकांश जनसंख्या बैंक से नहीं जुड़ी है। वहाँ इस मॉडल के आधार पर अल्प लागत पर लोगों को वित्तीय सेवाएँ उपलब्ध कराई जा सकती हैं।

डेबिट कार्ड (Debit Card)

डेबिट कार्ड की सहायता से कार्डधारक बैंक में अपनी जमा राशि तक की पूंजी इस कार्ड की सहायता से उपयोग कर सकता है। डेबिट कार्ड स्वैप करने के साथ ही कम्प्यूटर कोड को समझ लेता है और खाताधारी के खाते से पैसे निकालकर विक्रेता के खाते में डाल देता है। ऐसे कार्ड जिसमें ए.टी.एम और डेबिट दोनों की सुविधा उपलब्ध हो ए.टी.एम कम डेबिट कार्ड (ATM cum Debit Card) कहलाता है। इसमें खाताधारी अपनी ही बचत राशि का उपयोग करता है।

क्रेडिट कार्ड अकाउन्ट दो प्रकार के होते हैं:

Credit Card

- सामान्य क्रेडिट कार्ड — सामान्यतः सभी के लिए उपलब्ध
- विशिष्ट क्रेडिट कार्ड — विशिष्ट वर्ग के आवेदकों के लिए उपलब्ध
  - किसान विशिष्ट (KCC) (केवल किसानों के लिए)
  - लघु उद्यमियों के लिए LUCC
  - स्वरोजगारियों के लिए SCC

Copyright - Drishti The Vision Foundation

6.19 किसान क्रेडिट कार्ड *(KCC)*

1996 में भारत सरकार ने एक नई कृषि विकास रणनीति अपनाई और इसे लागू करने की मंशा से कृषि साख पर आर.वी. गुप्ता समिति का गठन किया, जिसे **R.V. Gupta Committee on Farm Credit** नाम दिया।

आर.वी. गुप्ता समिति ने 1997 में एक प्रतिवेदन पेश किया और सिफारिश की कि कृषि ऋण के प्रवाह में वृद्धि करने हेतु नये प्रकार के कार्यक्रम शुरू किये जाएँ, इसे ध्यान में रखते हुए नाबार्ड (National Bank for Agriculture and Rural Development) द्वारा KCC कार्यक्रम बनाया गया और 1998 में इसे लागू किया गया। क्रियान्वयन की प्रक्रिया में इसमें तीन प्रकार की संस्थाओं को शामिल किया गया–

(i) वाणिज्यिक बैंक

(ii) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक

(iii) सहकारी बैंक

KCC में कोई Margin Requirement नहीं रखा गया, Collateral Requirement के रूप में भू-धारिता को रखा गया है। अर्थात् जिसके पास भी जमीन है वह KCC Card प्राप्त करने का हकदार है। हालाँकि शुरूआत में भू-धारिता की जो सीमा तय की गई, उसके कारण सीमान्त (1 हेक्टेयर से कम) लघु (2 हेक्टेयर से कम) किसान इससे बाहर हो गए और यह योजना मुख्यतः बड़े और मध्यम किसानों तक सिमट कर रह गयी।

भू-धारिता के आधार पर नाबार्ड ने 24 करोड़ किसानों में से 10 करोड़ अर्थात् 40% किसानों को इसका पात्र पाया। इस योजना से फायदा यह हुआ कि कृषि में निवेश बढ़ गया। जिसके कारण कृषि में संवृद्धि बढ़ी, लेकिन इसके कई नुकसान भी हुए, जैसे यह संवृद्धि गैर-समावेशी प्रकार की रही जिसका गिनी गुणांक (Gini Coefficient) अधिक था। अतः जुलाई 2004 में एक नई कृषि साख नीति की घोषणा की गई और लक्ष्य रखा गया कि अगले तीन वर्षों में कृषि साख (Agricultural Credit) की मात्रा को कम से कम दो गुना कर दिया जाएगा। यानि की दिसम्बर 2007 तक इसे दोगुना करने का लक्ष्य रखा गया।

इस घोषणा के बाद KCC के वितरण की प्रक्रिया तेज हो गई और अनुमोदन की प्रक्रिया में थोड़ी ढिलाई बरती गई, क्योंकि सरकार की तरफ से बैंकों को किसान साख परीक्षण में ऐसा करने का निर्देश था। इसके बाद भी 2006 की मध्यावधि समीक्षा में ऐसा पाया गया कि कृषि ऋण में वृद्धि के लाभ से कई प्रकार के किसान वंचित रह गए। इसलिए जून 2006 में Collateral शर्त का नरमीकरण किया गया। इससे पहले भूमि के स्वामित्व प्रमाण-पत्र पर अनुमोदन होता था, लेकिन क्योंकि हमारी सामाजिक व्यवस्था ऐसी है जहाँ ज्यादातर भूमि पुरुषों के नाम से पंजीकृत है, अतः KCC के लाभ से महिला किसान वंचित रह गई, क्योंकि उनके पास भूमि स्वामित्व का कोई प्रमाण-पत्र नहीं था। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सरकार ने कब्जा अधिकार पर भी महिलाओं को KCC कार्ड उपलब्ध कराने का प्रयास किया और इस प्रकार 2006 में RBI ने निर्देश दिया कि स्वामित्व के बजाए कब्जे (Attachment) के प्रमाण-पत्र के आधार पर KCC का अनुमोदन किया जाएगा।

इस प्रकार KCC का सामाजिक आधार व्यापक हुआ, कृषि में निवेश बढ़ा और समग्र उत्पादन में वृद्धि हुई, जिसे अब समावेशी प्रकार का विकास कहा जा सकता है। 2007 तक KCC कार्ड के वितरण का लक्ष्य दोगुना रखा गया था। लेकिन इसकी वास्तविक प्राप्ति इससे कहीं ज्यादा थी। इसके कुछ महत्त्वपूर्ण दोष इस प्रकार हैं :

1. ऐसा पाया गया कि कुछ किसान कम ब्याज पर KCC कार्ड की सहायता से बैंक का पैसा लेकर और अधिक ब्याज पर अन्यों को देने लग गए और महाजनी पेशे में शामिल हो गए तथा जिन किसानों को KCC कार्ड उपलब्ध नहीं हो सका, उन्हें इस प्रकार प्रताड़ित करने लग गए।
2. कुछ किसान KCC कार्ड की सहायता से अपना सामाजिक और आर्थिक मूल्य बढ़ाने के प्रयास में लग गए और उनमें भोगवाद बढ़ा। हालाँकि इसके कई दोष थे, लेकिन उससे कहीं अधिक इसके फायदे थे।

समस्या: कुछ ग्रामीण किसान खास तौर पर जो वर्षा आधारित अंचलों में निवास करते हैं, वे वक्त पर ऋण नहीं चुका पाये। इसको ध्यान में रखकर सरकार ने 2008 में एक और कार्यक्रम **'कृषि ऋण पुनर्गठन कार्यक्रम'** शुरू किया। जिसे साधारण भाषा में 'ऋण माफी कार्यक्रम' भी कहते हैं। सरकार का निर्णय था कि सीमान्त किसानों की बकाया ऋण राशि पूर्णतः माफ कर दी जाये और अन्य किसानों की बकाया राशि का ¼ या 25% माफ किया जायेगा, बशर्ते शेष 75% का भुगतान वे कर देते हैं। इस योजना के लिए उन किसानों को सीमान्त किसान माना जाएगा, जिनकी भू-धारिता 4 हेक्टेयर से कम होगी। ऐसा आकलन किया गया कि ऋण माफी के लिए 4 करोड़ किसान पात्र पाए गए, जिनका ऋण माफ कर दिया गया।

इस ऋण माफी योजना की बुद्धिजीवी वर्ग में काफी आलोचना हुई। इनका कहना था कि इस प्रकार के ऋण माफी से समाज में अनुशासनहीनता बढ़ती है, बैंकों के स्वामित्व पूंजी में कमी आती है और सरकार अपने इस घाटे का वित्त पोषण उच्च मध्यम वर्ग पर टैक्स बढ़ाकर करती है।

Copyright - Drishti The Vision Foundation

हालाँकि इन आलोचनाओं को किसानों की बढ़ती आत्महत्या के संदर्भ में कहीं से भी सही नहीं ठहराया जा सकता और यही कारण था कि वर्ष 2005 में प्रधानमंत्री ने स्वयं नागपुर की यात्रा की और किसानों में बढ़ती आत्महत्या का मुद्दा उठाया। कृषकों dhv Regr kdhtlp dsfy, 'जयंती घोष समिति' का गठन किया गया। इस समिति ने किसानों के आत्महत्या के कारणों को निम्नलिखित वरीयता क्रम में पेश किया।

1) भारत के कई अंचलों में एकल फसल कृषि का प्रचलन है और ऐसा प्रायः वर्षा निर्भर अंचलों में होता है। सिंचाई के अभाव में कई किसान बाढ़-सूखा दुष्चक्र में फँसे रह जाते हैं। अतः इस दीर्घकालिक समस्या को समाप्त करने के लिए धैर्यपूर्वक दोहरी एवं तीसरी फसल की आदत को प्रोत्साहित करना होगा।

2) भारत में अभी भी 60% कृषि आंचल मानसून पर निर्भर है, जो किसानों के लिए एक बड़ी समस्या है।

3) संगठित क्षेत्र के बैंकों का आचरण किसानों के प्रति मैत्रीपूर्ण नहीं होता यानि कि बुरे वक्त में बैंक किसानों का साथ छोड़ देते हैं।

4) बैंकों के नकारात्मक आचरण के कारण किसानों की महाजनों पर निर्भरता बढ़ जाती है। जिसका एक कारण यह है कि वे कम से कम मुश्किल के क्षणों में ऋण देने के लिए तैयार हो जाते हैं।

इसकी सिफारिश के आधार पर ही 2008 में सरकार ने व्यापक रूप से ऋण माफी कार्यक्रम चलाया। जयंती घोष की इसी भूमिका के कारण International Labour Organisation – ILO ने पिछले वर्ष उन्हें पुरस्कृत भी किया।

6.20 लघु उद्यमी क्रेडिट कार्ड *(LUCC)*

1 जनवरी 1995 को विश्व व्यापार संगठन (World Trade Organisation) की स्थापना हुयी। इसकी स्थापना के साथ ही भारत तथा विकासशील देशों में कुछ लोगों ने यह आशंका व्यक्त की कि भूमण्डलीकरण के कारण उत्पन्न होने वाले अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता दबाव का सामना करने के लिए लघु उद्यमी एवं किसान समर्थ नहीं हैं, अर्थात् उन पर दुष्प्रभाव पड़ सकता है।

इसी कारण दिसम्बर 1995 में लघु उद्योगों में सुधार की सिफारिशें आमंत्रित करने के लिए 'आबिद हुसैन समिति' का गठन किया गया। समिति की अन्तरिम सिफारिश 1996 में आई और इसके आधार पर एक लघु उद्योग नीति की घोषणा की गई और सुधार की प्रक्रिया शुरू की गयी। समिति ने अपनी अन्तिम सिफारिश 1997 में पेश की, जिसे 1998 में सार्वजनिक किया गया और इसके आधार पर वर्ष 2000 में प्रधानमंत्री ने लघु उद्योग नीति की घोषणा की। अन्य उपायों के साथ-साथ ऋण का प्रवाह बढ़ाने के लिए 2001 में लघु उद्यमी CC कार्यक्रम शुरू किया गया। संसद ने 2006 में MSMEDA कानून भी बनाया।

इससे इन उद्यमों के विकास की प्रक्रिया और अधिक कारगर हो पायी है।

6.21 अतिलघु, लघु तथा मध्यम उद्यम विकास अधिनियम, 2006 *(Enactment of MSMED Act, 2006)*

अतिलघु, लघु तथा मध्यम उद्योगों के विकास के लिए यह अधिनियम 2006 में पारित किया गया, जिसमें इन तीन प्रकार के उद्यमों के एकीकरण की बात की गयी है। इस अधिनियम से सम्बन्धित मुख्य बातें निम्नलिखित हैं:

1. इन उद्यमों में प्रतिस्पर्द्धा को प्रोत्साहित करने के साथ-साथ विकास एवं वृद्धि के लिए Special Fund बनाने का प्रावधान है।
2. सेवाओं एवं अतिलघु उद्यमों के उत्पादों को प्राथमिकता देना।
3. लघु एवं अतिलघु इकाइयों को भुगतान में देरी न हो, इसके लिए अधिक प्रभावी नीतियों का अनुमोदन करना।
4. इन तीनों प्रकारों के उद्योगों को बन्द करने में उनके मालिकों को जिस प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है, उसे आसान बनाना। मतलब, यदि विभिन्न उद्यमी अपनी ईकाइयाँ बन्द करना चाहते हैं, तो उन्हें ऐसी सुविधाएँ मुहैया करना, जिससे वे इसे आसानी से बन्द कर सकें।

6.22 मध्यम व लघु उद्योग क्लस्टर विकास कार्यक्रम *(Cluster Development Programme – MSE)*

देश के मध्यम व लघु औद्योगिक इकाइयों की उत्पादकता तथा प्रतिस्पर्द्धा एवं क्षमता निर्माण के लिए सरकार ने इस कार्यक्रम को अपनाया है। वर्ष 2010 में इस कलस्टर विकास कार्यक्रम के मार्ग निर्देशों को मध्यम व लघु क्षेत्र के उद्यमों को बेहतर सहायता प्रदान करने के लिए इसमें कई संशोधन किये गए।

Copyright - Drishti The Vision Foundation

माइक्रोफाइनेंस पर मालेगाम समिति (Microfinance Institution – MFIs) के कार्यकलापों के बारे में सिफारिशें देने के लिए गठित की गयी। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट को RBI के समक्ष जनवरी 2011 में प्रस्तुत किया है। रिपोर्ट में समिति का कहना है कि Microfinance Institutions द्वारा दिए जाने वाले ऋणों पर ब्याज की मात्रा 24% से अधिक नहीं होनी चाहिए तथा ऐसे संस्थाओं द्वारा दी जाने वाली वैयक्तिक ऋणों की अधिकतम सीमा भी ₹ 25 हजार निर्धारित करने की वकालत समिति ने की है। साथ ही, भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा गठित की गई इस समिति ने माइक्रोफाइनेंस संस्थाओं के लिए NBFC कंपनियों की एक अलग श्रेणी NBFC–MFI बनाने की वकालत भी अपनी रिपोर्ट में की है।

6.23 स्वरोजगारी क्रेडिट कार्ड *(SCC)*

इसकी शुरूआत नाबार्ड ने की। यह योजना मूलतः कारीगर समुदाय के व्यक्तियों खासकर बुनकरों, मछुआरों आदि के लिए शुरू किया गया है। इसके द्वारा उन्हें सूक्ष्म ऋण (Micro Credit) दिया जाता है। (Micro Credit) के अन्तर्गत 50 हजार तक के ऋण को सूक्ष्म ऋण कहते हैं।

जैसे-जैसे ज्यादा मछुआरों, बुनकरों को क्रेडिट कार्ड दिया जाएगा, उनकी मासिक आय बढ़ेगी। मासिक आय बढ़ने से उनकी उत्पादकता में वृद्धि होगी और इस प्रकार वे गरीबी रेखा से ऊपर आ पाने में सक्षम होंगे।

KCC, LUCC और SCC तीनों ही प्राथमिकता क्षेत्र ऋण दान (Primary Sector Lending) को कारगर बनाने वाले उपकरण माने जाते हैं अर्थात् ये वित्तीय समावेशन के उपकरण हैं।

6.24 भारत में सहकारी बैंक तथा सहकारी बैंकों की वाणिज्यिक बैंकों से भिन्नता

सहकारी बैंक भी बैंकिंग के क्षेत्र में आधारभूत कार्य संपन्न करते हैं, लेकिन ये वाणिज्यिक बैंकों से भिन्न होते हैं, क्योंकि वाणिज्यिक बैंकों का गठन संसद द्वारा पारित अधिनियम द्वारा होता है, जबकि सहकारी बैंकों की स्थापना अलग-अलग राज्यों द्वारा बनाई गई सहकारी समितियों के अधिनियमों द्वारा होता है।

(वाणिज्यिक बैंक पर विस्तृत चर्चा पूर्व की कक्षाओं में की जा चुकी है।)

भारत में सहकारी बैंकों का गठन तीन स्तरी वाली (Three Tier Setup) है। राज्य सहकारी बैंक, संबंधित मामलों में शीर्ष संस्था होती है। इसके बाद, केन्द्रीय सहकारी बैंक जिला स्तर पर कार्य करते हैं और तृतीय स्तर प्राथमिक ऋण समितियों का होता है, जो ग्राम स्तर पर कार्य करती हैं।

प्रत्येक वाणिज्यिक बैंक भारतीय रिजर्व बैंक से पुनर्वित्त की सुविधायें ले सकते हैं, जबकि सहकारी ढाँचे के अंतर्गत केवल राज्य सहकारी बैंकों को ही भारतीय रिजर्व बैंक के पास पहुँच का अधिकार प्राप्त है।

किसी भी वाणिज्यिक बैंकों को अपने काम-काज तथा अपने क्रियाकलापों हेतु किसी राज्य विशेष अथवा जिला विशेष की सीमाओं में बँधना नहीं पड़ता। इसका अर्थ यह है कि वाणिज्यिक बैंक अपनी शाखाओं को राज्यों और देशों के विभिन्न भागों में स्थापित कर सकते हैं, यहाँ तक कि कुछ वाणिज्यिक बैंकों की शाखाएँ विदेशों में भी स्थापित की गई हैं, जबकि सहकारी बैंकों की सीमा है कि वे केवल निर्धारित क्षेत्र में ही अपना कार्य सीमित रखते हैं। उदाहरण के लिए राज्य सहकारी बैंक जो कि शीर्ष सहकारी बैंक होता है, का कार्य क्षेत्र एक राज्य के अंदर ही सीमित होता है। इसी प्रकार, केन्द्रीय सहकारी बैंक किसी एक जिला विशेष में ही कार्य करने के लिए सीमित होता है और प्राथमिक ऋण सहकारी समिति किसी एक स्थानीय क्षेत्र में ही अपना कार्य कर सकती है।

एक अंतर यह भी है जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि सहकारी बैंक, सहकारिता के सिद्धांत पर चलते हैं, जबकि वाणिज्यिक बैंक विशुद्ध व्यापारिक सिद्धांतों का परिचालन करते हैं। प्राथमिक सहकारी बैंकों (स्थानीय स्तर के सहकारी बैंक) को अपनी कुल अग्रिम का 60% प्राथमिक क्षेत्र की गतिविधियों तथा कम से कम 25% कमजोर वर्गों (Weaker Sections) को आवंटित करना होता है।

देश में सहकारी बैंकों के अनुमानित आँकड़ें:

(i) महाराष्ट्र – 670
(ii) गुजरात – 362
(iii) कर्नाटक – 324
(iv) आंध्र प्रदेश – 169
(v) तमिलनाडु – 136

Copyright - Drishti The Vision Foundation

प्राथमिक साख समितियाँ

इनकी स्थापना कृषि क्षेत्र की अल्पकालीन ऋणों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया गया है। एक गाँव या क्षेत्र के कम से कम 10 व्यक्ति मिलकर एक प्राथमिक साख समिति का निर्माण कर सकते हैं और यह समितियाँ सामान्यतया उत्पादक कार्यों के लिए अल्पकालीन (एक वर्ष के लिए) ऋण देती है, लेकिन विशेष परिस्थितियों में इनकी अवधि तीन वर्ष के लिए बढ़ाई जा सकती है।

केन्द्रीय सहकारी बैंक

ये जिला सहकारी बैंक भी कहलाते हैं, जिनका कार्य क्षेत्र एक जिले तक सीमित होता है। केन्द्रीय सहकारी बैंक को दो भागों में विभाजित किया जाता है:

सहकारी बैंकिंग संघ	मिश्रित केन्द्रीय सहकारी बैंक
(i) सहकारी बैंकिंग संघों की सदस्यता केवल सहकारी समितियों को ही प्राप्त होती है।	(i) मिश्रित सहकारी बैंकों के सदस्य सहकारी समितियाँ तथा व्यक्ति दोनों ही हो सकते हैं। (ii) भारत के समस्त राज्यों में प्रायः मिश्रित सदस्यता वाले केन्द्रीय सहकारी बैंक जो सरकारी साख समितियों को आवश्यकतानुसार ऋण उपलब्ध कराते हैं।

6.25 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक *(Regional Rural Banks)*

ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ बैंकिंग सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं, इन सुविधाओं की उपलब्धता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों (Regional Rural Banks – RRBs) की स्थापना की गई। इन बैंकों का मूलभूत उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र के कमजोर तबकों को रियायती दरों पर ऋण उपलब्ध कराने के साथ-साथ इन क्षेत्रों के लोगों की बचतों को जुटाकर उत्पादक कार्यों में लगाना भी है।

2 अक्टूबर, 1975 को इस कार्यक्रम का सूत्रपात हुआ। 1987 तक इन बैंकों की संख्या 196 तक पहुँच गई। नाबार्ड (National Bank for Agriculture and Rural Development – NABARD) तथा उसके प्रवर्तक बैंकों द्वारा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को कुछ विशेष प्राथमिकता वाले कार्यों का वित्तीयकरण करने के लिए पुनर्वित्त की सुविधा प्रदान की गई है। 50 प्रतिशत, 15 प्रतिशत और 35 प्रतिशत निर्गत पूंजी के वितरण के साथ क्षेत्रीय बैंकों का स्वामित्व क्रमशः भारत सरकार, संबंधित राज्य सरकार और इनके प्रायोजक (Sponsors) बैंकों के पास है।

6.26 राष्ट्रीय कृषि तथा ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) *[National Bank for Agriculture and Rural Development (NABARD)]*

यह देश में कृषि एवं ग्रामीण विकास हेतु वित्त उपलब्ध करने वाली शीर्ष संस्था है।

राष्ट्रीय कृषि तथा ग्रामीण विकास बैंक (NABARD) की स्थापना 12 जुलाई, 1982 को की गई थी। नाबार्ड की चुकता पूंजी (Paid up Capital) 100 करोड़ में भारत सरकार तथा रिजर्व बैंक का बराबर (50:50) का योगदान था। RBI ने NABARD की इक्विटी में अपनी लगभग सारी हिस्सेदारी सरकार को अक्टूबर 2010 में बेच दी है। 13 अक्टूबर, 2010 को किए गए इक्विटी हस्तान्तरण के तहत RBI ने NABARD की केवल 1% हिस्सेदारी अपने पास रखी है। अतः अब नाबार्ड की इक्विटी में केन्द्र सरकार व RBI की हिस्सेदारी क्रमशः 99% व 1% रह गई है। कृषि ऋणों को बढ़ावा देने के लिए 'नाबार्ड' की चुकता पूंजी (Paid up Capital) में चरणबद्ध तरीके से ₹ 3000 करोड़ की वृद्धि का फैसला केन्द्रीय मंत्रिमण्डल की 25 अक्टूबर, 2011 की बैठक में किया गया। इसमें ₹ 1000 करोड़ की पूंजी वित्तीय वर्ष 2011-12 में व शेष ₹ 2000 करोड़ की पूंजी 2012-13 में बैंक को दी जाएगी। इससे बैंक की कुल चुकता पूंजी बढ़कर ₹ 5000 करोड़ हो जाएगी।

Copyright - Drishti The Vision Foundation

नाबार्ड ग्रामीण ऋण ढाँचे में एक शीर्षस्थ संस्था के रूप में अनेक वित्तीय संस्थाओं (राज्य भूमि विकास बैंक, राज्य सहकारी बैंक, अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक) को पुनर्वित्त सुविधाएँ प्रदान करता है। जो ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादक गतिविधियों के विस्तृत क्षेत्रों को बढ़ावा देने के लिए ऋण देती हैं। अपनी ऋण सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नाबार्ड भारत सरकार, विश्व बैंक तथा अन्य एजेन्सियों से राशियाँ प्राप्त करता है। यह केन्द्र सरकार की गारण्टी प्राप्त बॉण्ड तथा ऋणपत्र जारी करके भी संसाधन जुटा सकता है। इसके अतिरिक्त यह राष्ट्रीय ग्रामीण साख (स्थिरीकरण) निधि के संसाधनों का भी प्रयोग करता है।

6.27 भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (सिडबी)
Small Industries Development Bank of India – SIDBI)

अप्रैल 1990 में सिडबी की स्थापना की गई। इस बैंक को भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (Industrial Development Bank of India) के पूर्ण स्वामित्व में एक सहायक बैंक के रूप में स्थापित किया गया। यह छोटे स्तर के उद्योगों की स्थापना, वित्त पोषण, विकास करने हेतु प्रमुख वित्तीय संस्था है। इसका मुख्यालय लखनऊ में है तथा मुख्यालय के अतिरिक्त इसके 5 क्षेत्रीय कार्यालयों के साथ 21 शाखा कार्यालय देश के विभिन्न भागों में स्थापित किए जा चुके हैं। सिडबी की स्थापना के बाद लघु क्षेत्र के उद्योगों के लिए जो काम IDBI करता था, वह अब इसे हस्तांतरित कर दिया गया है।

सिडबी की India Micro Finance Equity Fund: अपेक्षाकृत छोटी वित्त संस्थाओं को Equity उपलब्ध कराने हेतु India Micro Finance Equity Fund के नाम से सिडबी में 2011-12 में ₹ 100 करोड़ की निधि सृजित करने की घोषणा सरकार ने की है। साथ ही महिलाओं के सुदृढ़ीकरण हेतु उनके Self Help Group के लिए ₹ 500 करोड़ की राशि वाली अन्य समर्पित निधि Womens, SHG Development Fund का सृजन की घोषणा भी की गई है।

6.28 वित्तीय प्रणाली समिति की रिपोर्ट (नरसिंहम् समिति-I की रिपोर्ट)
(Report of the Committee on the Financial System)

भारत सरकार ने अगस्त 1991 में वित्तीय प्रणाली की तत्कालीन संरचना तथा उनके विभिन्न अवयवों की समीक्षा के लिए रिजर्व बैंक के पूर्वपूर्व गवर्नर एम. नरसिंहम् की अध्यक्षता में एक 9 सदस्यीय समिति का गठन किया, जिसकी रिपोर्ट 17 नवम्बर 1991 को संसद में पेश की गई। वित्तीय सुधारों के प्रति समिति का दृष्टिकोण मुख्यतया इन बातों पर आधारित था:

- वित्तीय क्षेत्र में प्रतिस्पर्द्धात्मक दक्षता लाने का प्रयास करना।
- प्रतिस्पर्द्धात्मक दक्षता के माहौल में सभी कार्य सुचारू और प्रभावी ढंग से होने के लिए वित्तीय क्षेत्र का स्वस्थ व लाभप्रद होना।
- वित्तीय क्षेत्र में हस्तक्षेप कम कर स्वतंत्रता प्रदान करना तथा बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के निवेश निर्णयों का निर्धारण केवल उच्च व्यावसायिक मानकों के आधार पर करना।

नरसिंहम् समिति के कुछ सुझाव निम्नलिखित हैं:

(i) वित्तीय संस्थाओं पर निरीक्षण का काम रिजर्व बैंक के तत्वाधान में गठित एक अर्द्ध-स्वायत्त संस्था को सौंप देना चाहिए।

(ii) बैंकिंग संरचना में चार स्तर होने चाहिए। सबसे ऊपरी स्तर पर स्टेट बैंक के साथ-साथ तीन-चार बड़े अन्य बैंक होने चाहिए, जिनका स्वरूप अंतर्राष्ट्रीय भी हो सकता है। सबसे निचले स्तर पर ग्रामीण बैंक जिनमें क्षेत्रीय बैंक भी शामिल हैं, होने चाहिए। ग्रामीण बैंकों का कार्य क्षेत्र ग्रामीण क्षेत्रों तक ही सीमित होना चाहिए और उनका काम कृषि एवं सहायक गतिविधियों को ऋण देना होना चाहिए।

(iii) 1991-92 से सांविधिक तरलता अनुपात (Statutory Liquidity Ratio) में धीरे-धीरे क्रमबद्ध रूप से कमी लानी चाहिए।

(iv) वित्तीय संस्थाओं के बीच प्रतिस्पर्द्धा को बढ़ावा देना चाहिए।

(v) भारतीय औद्योगिक विकास बैंक Industrial Development Bank of India – IDBI) द्वारा केवल पुनर्वित्त का काम अपने पास रख, प्रत्यक्ष ऋण देने का काम एक पृथक इकाई को सौंप देना चाहिए।

(vi) वित्तीय संस्थाओं की परिसंपत्तियों का नियमित वर्गीकरण करना चाहिए तथा खातों में पूरा विवरण देना चाहिए।

(vii) ब्याज दरों का नियमन समाप्त करके उन्हें चक्रवर्ती समिति के सुझाव के अनुसार बैंक दर से संबंधित किया जाना चाहिए।

मीडिया आदि ने इस समिति को 'बैंकिंग सुधार समिति' भी कहा। इस सिफारिश के बाद भारत में बैंकों का महत्त्व काफी बढ़ गया।

Copyright - Drishti The Vision Foundation

6.29 चक्रवर्ती समिति तथा बैंकिंग सुधार

बैंकिंग क्षेत्र में सुधारों के लिए कुछ सिफारिशें 1985 में गठित चक्रवर्ती समिति ने की थी, बैंकिंग क्षेत्र में उच्च स्तर की निष्पत्ति को प्राप्त करने के लिए इस समिति का गठन किया गया, हालाँकि सरकार इन उपायों को प्रतिबद्धता से लागू नहीं कर पायी। 1991 के आर्थिक सुधारों के बाद सरकार ने वित्तीय व्यवस्था पर एम. नरसिंहम् की अध्यक्षता में अगस्त 1991 में एक समिति का गठन किया था और इन्हीं की अध्यक्षता में बैंकिंग क्षेत्र में दूसरी समिति का गठन किया। इस समिति ने अप्रैल 1998 में अपनी सिफारिशें दीं। 1990 के दशक में और उसके बाद अर्थात् उदारीकरण के दौर में बैंकिंग क्षेत्र में जितने भी सुधार हुए, उन सब पर नरसिंहम् समिति की सिफारिशों का प्रभाव देखा जा सकता है।

6.30 बैंकिंग सुधारों हेतु नरसिंहम् समिति की सिफारिशें (नरसिंहम् समिति - II की रिपोर्ट) *(Narasinham Committee Recommendations on Banking Reforms)*

बैंकिंग सुधार के लिए गठित दूसरी नरसिंहम् समिति ने अपनी रिपोर्ट 23 अप्रैल, 1998 को तत्कालीन केन्द्रीय वित्त मंत्री यशवन्त सिन्हा को सौंप दी।

अपनी नई रिपोर्ट में नरसिंहम् समिति ने देश में मजबूत व प्रभावी वित्तीय व्यवस्था विकसित करने, बैंकों की परिसम्पत्तियों की गुणवत्ता में सुधार लाने, गैर-निष्पादन परिसम्पत्तियों (NPAS) में कमी करने, पूंजी पर्याप्तता अनुपात (CAR) में वृद्धि करने, बैंकों की खराब परिसम्पत्तियों के अधिग्रहण के लिए एक एसेट रिकंस्ट्रक्शन फंड (ARF) की स्थापना करने, रिजर्व बैंक की नियामक व देख-रेख सम्बन्धी क्रियाओं को पृथक करने के लिए 'बोर्ड फॉर फाइनेंशियल सुपरविजन' (BFS) को स्वायत्तता प्रदान करने, बैंकों को राजनीति से मुक्त करने, निदेशक बोर्ड में पेशेवर व्यक्तियों को शामिल करने तथा बैंक कर्मियों के विरुद्ध किसी भी कार्यवाही से पूर्व समुचित जांच-पड़ताल करने आदि की संस्तुतियाँ की हैं।

समिति की प्रमुख सिफारिशें बिन्दुवार निम्नलिखित हैं-

मुद्दे

- सुदृढ़ वाणिज्यिक बैंकों का पारस्परिक विलय वृहत्तर आर्थिक और वाणिज्यिक माहौल पैदा करेगा और इसका उद्योगों पर गुणक प्रभाव होगा।
- सुदृढ़ बैंकों का विलय कमजोर बैंकों के साथ नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि इससे सुदृढ़ बैंक की आस्तियों (Assets) की गुणवत्ता पर ऋणात्मक प्रभाव पड़ता है।
- देश के कतिपय बड़े बैंकों को अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान किया जाना चाहिए।
- जोखिम भारित आस्तियों से पूंजी के अनुपात अर्थात् पूंजी पर्याप्तता को सन् 2000 तक 9 प्रतिशत तथा सन् 2002 तक 10 प्रतिशत के स्तर पर लाया जाना चाहिए।
- परिसम्पत्तियों का वर्गीकरण उनकी गुणवत्ता के आधार पर किया जाये।
- सरकारी प्रतिभूतियों द्वारा कवर किए गए असुविधाजनक हो चुके ऋणों को गैर-निष्पादन आस्ति माना जाए।
- ₹ दो लाख से कम के ऋणों पर ब्याज निर्धारण का अधिकार बैंकों को दिया जाए।
- प्राथमिकता क्षेत्र के लिए ऋणों में ब्याज सम्बन्धी आर्थिक सहायता अवयव को पूर्णतया समाप्त किया जाए।

6.31 भारत में गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (NBFC) की भूमिका

जून 2007 के अंत में भारतीय रिजर्व बैंक में पंजीकृत गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों की संख्या 12,968 थी। NBFC प्राय: उन क्षेत्रों के लिए ऋण की व्यवस्था करती है, जहाँ ऋण अंतराल विद्यमान है। उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं और मोटर कारों के लिए वित्त पोषण करने में इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। चूँकि NBFC के कारोबार में तीव्र वृद्धि हुई है, अत: निवेशकों के हितों की रक्षा के लिए प्रभावी नियामक कार्यवाही की आवश्यकता उत्पन्न हुई है, जिसके लिए RBI ने NBFC की गतिविधियों को नियमित करना प्रारंभ किया है।

RBI द्वारा जारी 3 जनवरी 2001 को निजी क्षेत्र में नये बैंकों के प्रवेश संबंधी दिशा-निर्देशों में अच्छे रिकॉर्ड वाले NBFC को निम्न आधार पर निजी क्षेत्र के बैंक बनने की अनुमति दी गई है।

- NBFC की तुलन-पत्र (Balance Sheet) के अनुसार अभी तक कम से कम ₹ 200 करोड़ की निवल आस्ति (Net Asset) होनी चाहिए। जिसे रूपांतरण की तारीख से तीन वर्षों के भीतर ₹ 300 करोड़ तक बढ़ाया जाना होगा।

Copyright - Drishti The Vision Foundation

- NBFC को पिछले वर्ष AAA Rating (या इसके समकक्ष) से कम क्रेडिट रेटिंग प्राप्त नहीं होनी चाहिए।
- NBFC को किसी बड़े औद्योगिक घराने द्वारा समर्थित (Promotion) नहीं होना चाहिए। इसे राज्य तथा केन्द्रीय सरकार सहित सरकारी प्राधिकरणों के नियंत्रण में भी नहीं होना चाहिए।
- NBFC को भारतीय रिजर्व बैंक (RBI) के निर्देशों का अनुपालन करना चाहिए और सार्वजनिक जमाओं की वापसी इत्यादि में पिछला रिकॉर्ड त्रुटियों से रहित होना चाहिए।
- NBFC के पास कम से कम 12% की पूंजी पर्याप्तता होनी चाहिए और इनका निवल NPA (Non Performing Asset) 5% से अधिक नहीं होना चाहिए।
- NBFC's के पास कम से कम ₹ 25 लाख तक का Net Owned Fund होना रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया ने अनिवार्य कर दिया है।
- NBFC's द्वारा सार्वजनिक जमाओं (Public Deposits) पर अब अधिकतम 11% प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से ही ब्याज दिया जायेगा। इसके पूर्व इसके लिए 12.5% की उच्चतम सीमा निर्धारित थी। ब्याज की नयी उच्चतर सीमा 4 मार्च, 2003 से प्रभावी की गयी थी।

6.32 बैंकिंग सेवाओं में सुधार हेतु दामोदरन समिति के सुझाव

'सेबी' (SEBI) के पूर्व अध्यक्ष एम. दामोदरन की अध्यक्षता वाली समिति ने बैंकिंग सेवाओं में सुधार के लिए कई महत्वपूर्ण सिफारिशें अपनी रिपोर्ट में की हैं। यह रिपोर्ट भारतीय रिजर्व बैंक (RBI) की वेबसाइट पर अगस्त 2011 में जारी की गई थी तथा रिपोर्ट पर आम जनता की टिप्पणियां 27 अगस्त 2011 तक रिजर्व बैंक द्वारा आमंत्रित की गई थीं। बैंकिंग सेवाओं में सुधार के लिए जो सुझाव समिति द्वारा दिए गए हैं, उनमें बचत खाता (Savings Accounts) में चेक बुक व एटीएम कार्ड जैसी सुविधाओं के लिए खाते में 'Minimum Balance' का बन्धन समाप्त करने का सुझाव शामिल है। इन्हीं के साथ पास बुक भरने जैसी अन्य आवश्यक सेवाएं खाताधारकों को निःशुल्क उपलब्ध कराने की समिति ने कही है। न्यूनतम बैलेंस से कम बैलेंस होने की स्थिति में बैंकों द्वारा वसूला जाने वाला दण्डात्मक शुल्क उतने ही अनुपात में रखने की समिति ने कहा है, जितनी राशि से खाते में बैलेंस कम हुआ हो। बचत खाते में जमा राशि के लिए वर्तमान में उपलब्ध बीमा सुरक्षा की राशि को एक लाख रुपए से बढ़ाकर ₹ 5 लाख तक करने की समिति ने कहा है। सावधि जमाओं को स्वतः ही Renew करने की बैंकों की प्रवृत्ति को गलत बताते हुए समिति ने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि सावधि जमाओं (Fixed Deposits) को खातेदार की लिखित अनुमति के बिना स्वतः ही 'Renew' न किया जाए।

'होम लोन' उपभोक्ताओं को किसी अन्य बैंक या वित्तीय संस्थान द्वारा कम ब्याज पर ऋण उपलब्ध होने पर उसके द्वारा सम्बन्धित बैंक में अपने होम लोन अकाउंट समय पूर्व बन्द कराने की स्थिति में बैंक द्वारा कोई दण्डात्मक शुल्क न वसूले जाने की सिफारिश इस रिपोर्ट में की गई है। साथ ही होम लोन के नए ग्राहकों को रियायती ब्याज दर पर यह लोन उपलब्ध कराए जाने पर ऐसी रियायत पुराने ग्राहकों को भी उपलब्ध कराने की समिति ने कहा है। इस सम्बन्ध में यह सिफारिश भी समिति ने की है कि होम लोन चुकता होने के पश्चात् सम्बन्धित सम्पत्ति के कागजात उसके स्वामी को 15 दिन के भीतर बैंक द्वारा लौटाए जाएँ। इसमें चूक होने पर बैंक द्वारा मुआवजा भी अदा किया जाए।

बैंक ग्राहकों की बैंकिंग सम्बन्धी शिकायतों व अन्य सुनवाइयों के लिए सभी बैंकों का एक ही कॉमन निःशुल्क काल सेंटर नम्बर (फोन नम्बर) स्थापित करने की संस्तुति के साथ रिपोर्ट में कहा गया है कि एकीकृत कॉल सेंटर से फोन कॉल को आगे सम्बन्धित बैंक को ट्रांसफर करने की व्यवस्था की जाए।

दामोदरन समिति की इन सिफारिशों पर कोई निर्णय रिजर्व बैंक ने अभी नहीं लिया है। आम लोगों की प्रतिक्रियाओं के अध्ययन के पश्चात् इस मामले में कोई कदम रिजर्व बैंक द्वारा उठाया जाएगा।

■■■

Copyright - Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–7 (Unit– 7)

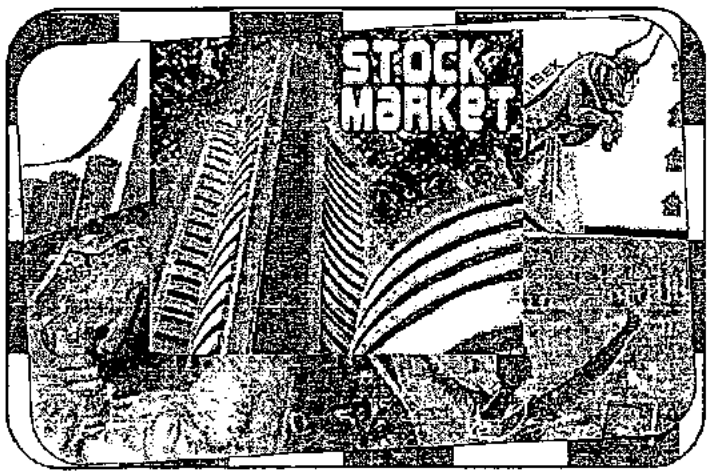

7.1 प्रतिभूति *(Security)*

7.2 राष्ट्रीय शेयर बाजार *(National Stock Exchange)*

7.3 बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज *(Bombay Stock Exchange)*

7.4 *Over the Counter Exchange of India*

7.5 भारत में वायदा कारोबार *(Commodity Exchange in India)*

7.6 डेरिवेटिव्स का परिचय *(Introducation of Derivatives)*

7.7 ब्याज की दरों के बारे में जानकारी *(Information About Interest Rates)*

7.8 इंडेक्स के आंकड़ों की समझ *(Understanding The Stock Index)*

7.9 इंडेक्स के घटने-बढ़ने का आर्थिक महत्व *(Economic Significance of Index Movements)*

7.10 एक शेयर सूचकांक से अपेक्षा *(Desirable Attributes of an Index)*

7.11 भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड *(Securities and Exchange Board of India-SEBI)*

7.12 विदेशी मुद्रा का वायदा कारोबार *(Future Trading of Foreign Currency)*

7.13 ब्याज दरों का वायदा कारोबार *(Future Trading of Interest Rates)*

7.14 शेयर बाजारों में कम्प्यूटरीकृत ऑनलाइन ट्रेडिंग *(BOLT & DOTS System)*

7.15 भारतीय बीमा उद्योग *(Indian Insurance Industry)*

7.16 *Pension Fund Regulatory Development Authority (2011)*

7.17 राउंड-ट्रिपिंग *(Round-Tripping)*

7.18 भारत में म्यूचुअल फण्ड *(Mutual Fund in India)*

Copyright – Drishti The Vision Foundation

7.1 प्रतिभूति *(Security)*

ऐसा कोई भी प्रमाण-पत्र अथवा दस्तावेज जिसको विक्रय द्वारा वित्त उगाही की जाती है, प्रतिभूति (Security) कहलाता है।

- प्रतिभूति
  - शेयर/अंश प्रतिभूति (Share Security)
  - ऋण प्रतिभूति (Debt Security)
    - कारोबारी ऋण प्रतिभूति (Commercial Debt Security)
      - कारोबारी हुंडी (Commercial Bill of Exchange)
      - कारोबारी बॉण्ड (Commercial Bond)
    - सरकारी ऋण प्रतिभूति (Treasury Debt Security)
      - सरकारी हुंडी (Treasury Bill of Exchange)
      - सरकारी बॉण्ड (Treasury Bond)

शेयर/अंश प्रतिभूति (Share Security): जिस प्रतिभूति से क्रेता को जारी किये गये संस्था (Company) के स्वामित्व में एक निश्चित अंश प्राप्त होता है, उसे शेयर/अंश प्रतिभूति कहते हैं। 1956 के कंपनी अधिनियम तथा Financial Security Act के अनुसार शेयर केवल कंपनियाँ ही जारी कर सकती हैं, न कि कोई संप्रभु संस्था।

औद्योगिक वित्त एवं पूँजी निर्माण *(Industrial Finance and Capital Formation)*

उद्योगों की स्थापना और विकास में पूँजी की उपलब्धता एक महत्वपूर्ण कारक है। बड़े उद्योगों में पूँजी प्रधान तकनीकों के द्वारा ही उत्पादन किया जाता है और ऐसी स्थिति में औद्योगीकरण की प्रक्रिया तभी तीव्र की जा सकती है जब विभिन्न साधनों से भारी मात्रा में वित्तीय साधन जुटा पाना संभव हो।

इच्छित पूँजी को दो प्रकार से वर्गीकृत करते हैं।

- पूँजी की प्रकृति के आधार पर
  - स्थिर पूँजी (Fixed Capital)
  - कार्यशील पूँजी (Working Capital)
- पूँजी की अवधि के आधार पर
  - दीर्घकालिक
  - मध्यकालिक
  - अल्पकालिक

विभिन्न उद्योगों में स्थिर पूँजी और कार्यशील पूँजी का अनुपात अलग-अलग होता है। किसी उद्योग विशेष में जिस अनुपात में पंजीकरण होगा, उत्पादन की प्रक्रिया जितनी अधिक जटिल होगी स्थिर पूँजी का अनुपात उसी अनुपात में अधिक होगा, जैसे- लौह इस्पात उद्योग, बिजली निर्माण उद्योग, सूती वस्त्र उद्योग आदि में कार्यशील पूँजी के अनुपात में स्थिर पूँजी का निवेश अधिक करना होता है।

दीर्घकालिक, माध्यमिक तथा अल्पकालिक पूँजी *(Long, Intermediate and Short Term Capital)*

साधारणतः उद्योगों में एक वर्ष या उससे कम समय के लिए आवश्यक वित्त अल्पकालिक, 1-10 वर्ष तक के लिए आवश्यक वित्त मध्यमकालिक और उससे अधिक समय के लिए आवश्यक वित्त दीर्घकालिक होता है। सामान्य रूप से स्थिर परिसंपत्ति की व्यवस्था करने के लिए प्रदान की जाने वाली साख को दीर्घकालिक वित्तीय पूँजी कहा जा सकता है तो वहीं मजदूरी के भुगतान, कच्चे माल की खरीद इत्यादि के लिए उद्योगों द्वारा प्राप्त की जाने वाली पूँजी अल्पकालिक वित्तीय पूँजी कहलाती है। उद्योगों के छोटे-मोटे विस्तार के लिए मध्यकालिक वित्त की आवश्यकता पड़ती है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

औद्योगिक वित्त के साधन *(Sources of Industrial Finance)*

औद्योगिक वित्त को प्राप्त करने के लिए विभिन्न साधनों को दो भागों में बाँटकर देखा जाता है-

औद्योगिक वित्त के साधन

आंतरिक साधन (Internal Source) | बाह्य साधन (External Source)

आंतरिक साधनों में शेयर/अंश प्रतिभूति (Share Security) तथा ऋण प्रतिभूति (Bond Security) के निर्गमन द्वारा प्राप्त होने वाली राशि का प्रयोग किया जाता है तो बाह्य साधनों में वाणिज्यिक बैंकों, सीमा निगमों तथा विशिष्ट अर्थ संस्थाओं द्वारा प्रदान की जाने वाली पूँजी को शामिल किया जाता है।

अधिकांश औद्योगिक उद्योगों की स्थापना कंपनी एक्ट के अंतर्गत स्थापित होने वाली मिश्रित पूँजी कंपनियों के द्वारा की जाती है। इन कंपनियों को स्थायी पूँजी जुटाने के लिए शेयर या अंश प्रतिभूति के निर्गमन का अधिकार प्राप्त होता है। दूसरी ओर ऋण प्रतिभूति (Bond Security) का निर्गमन उन निवेशकों को आकर्षित करता है जो निवेश पर जोखिम उठाने की इच्छा नहीं रखते और निश्चित आय से संतुष्ट होते हैं।

प्रतिभूति बाजार *(Security Market)*

सामान्यतः प्रतिभूति बाजार को दो भागों में बाँटा जाता है-

प्राथमिक प्रतिभूति बाजार (Primary Security Market)	द्वितीयक प्रतिभूति बाजार (Secondary Security Market)
यह प्रतिभूति बाजार कंपनी और निवेशकों के प्रत्यक्ष संबंध से बनता है।	यह प्रतिभूति बाजार विभिन्न निवेशकों के बीच संबंध को दर्शाता है।

प्राथमिक बाजार : प्राथमिक बाजार नये निर्गमनों (New Issues) का बाजार है जिसमें सभी प्रतिभूतियाँ पहली बार बाजार में बिकने के लिए जाती हैं। ध्यातव्य है कि प्राथमिक बाजार में दोनों ही घरेलू और विदेशी फंड की उगाही हो सकती है और इसमें निर्गमित प्रतिभूतियाँ शेयर या ऋण प्रपत्र हो सकते हैं।

प्राथमिक बाजार से फंड की गतिशीलता चार प्रकार से होती है-

1. Prospectus
2. Right Issues (राईट इश्यू)
3. Private Placement (निजी आबंटन)
4. Bonus Issue (बोनस इश्यू)

Prospectus के द्वारा जनता के लिए अंशों का निर्गमन किया जाता है तो Right Issue के अंतर्गत नये अंशों का निर्गमन वर्तमान अंशधारियों को उनकी धारिता के आधार पर किया जाता है। बोनस अंश भी वर्तमान अंशधारियों को ही निर्गमित किये जाते हैं जो सामान्यतया लाभांश के बदले दिये जाते हैं।

On Line IPO (Initial Public offer) स्टॉक इलेक्ट्रॉनिक नेटवर्क पर जनता को प्रारंभिक रूप से अंशपत्रों के निर्गमन को On Line IPO कहते हैं। सेबी (SEBI) के अनुसार कोई भी कंपनी वर्तमान में लागू बैंकिंग चैनल (On Line System) के द्वारा Public Issue कर सकती है। यदि कोई कंपनी सार्वजनिक निर्गमन ऑन लाइन प्रणाली के अंतर्गत करना चाहे तो उसे किसी ऐसे स्टॉक एक्सचेंज जिसमें ऑन लाइन व्यवहार करने के लिए सुविधाएँ उपलब्ध हों, रजिस्टर कराना होगा और साथ ही उसे एक ब्रोकर व रजिस्ट्रार नियुक्त करना होगा जो स्टॉक एक्सचेंज के साथ नेटवर्क पर जुड़ा हो। इस प्रणाली में निवेशक विलम्ब से उत्पन्न होने वाली कठिनाइयों से बच जाता है तथा कंपनी भी छपाई, स्टेशनरी एवं संबंधित अन्य व्ययों से बच जाती है।

प्राइमरी मार्केट का संबंध स्टॉक मार्केट से नहीं होता है। इसमें निर्गमित प्रतिभूतियाँ सर्वथा नयी होती हैं और ये अर्थव्यवस्था में पूँजी निर्माण करती हैं लेकिन सेकेन्डरी मार्केट में प्रतिभूतियों का क्रय-विक्रय पूँजी निर्माण का सृजन नहीं करता बल्कि स्टॉक मार्केट में विक्रय के लिये आये अंशपत्रों तथा ऋण प्रपत्रों को तरलता एवं विनिमय क्षमता (Market Ability) प्रदान करता है। इस प्रकार

Copyright – Drishti The Vision Foundation

सेकेन्डरी मार्केट में प्रतिभूतियों का क्रय-विक्रय केवल संसाधनों का चैनेलाइजेशन करता है। इसमें बिकने वाली प्रतिभूतियों के विक्रय से उसको निर्गत करने वाली कंपनी को लाभ नहीं मिलता, उसके विक्रय से कंपनी को कोई प्राप्ति नहीं होती, प्राप्ति प्रतिभूति के धारक को होती है। प्रतिभूति के मूल्य में वृद्धि से कंपनी का पूँजीकरण बढ़ जायेगा।

उल्लेखनीय है कि सेकेन्डरी मार्केट या स्टॉक एक्सचेंज मार्केट में उन्हीं प्रतिभूतियों (समता अंश एवं ऋण पत्र) में ट्रेडिंग होती है जो स्टॉक मार्केट में सूचीबद्ध (Listed) होती है। सूचीबद्ध से आशय किसी मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज द्वारा प्रतिभूति को ट्रेडिंग के लिए स्वीकार किये जाने से है।

विनिमय के प्रकार

- स्पॉट ट्रेडिंग (हाजिर मार्केट) (Spot Trading)
  - Cash
  - T+2
- वायदा मार्केट (Future Trading)

ऐसा बाजार जिसमें प्रतिभूति तत्काल सुपुर्दगी के साथ बेची जाए उसे Spot Market कहते हैं। यदि प्रतिभूति उसी दिन खरीदी या बेची जाए तो वह Cash Spot Market कहलाता है और यदि इसे दो दिनों के अंदर खरीदा या बेचा जाय तो वह T+2 Spot Market कहलाता है।

जब प्रतिभूतियों आदि का व्यापार भविष्य में सुपुर्दगी के वायदे के साथ किया जाए तो इसे Future या वायदा बाजार कहते हैं।

अब हम भारत के प्रमुख शेयर बाजारों (Important Share Markets in India) की चर्चा करेंगे।

7.2 राष्ट्रीय शेयर बाजार (National Stock Exchange)

फेरवानी समिति (Pherwani Committee) ने 1991 में National Stock Exchange की स्थापना की संस्तुति की। 1992 में भारत सरकार के Industrial Development Bank of India को इसकी स्थापना का कार्य दिया गया और IDBI ही NSE का प्रमुख प्रवर्तक (Promoter) है। NSE के लिए आरंभिक अधिकृत पूँजी 25 करोड़ रुपये है। NSE का मुख्यालय दक्षिणी मुम्बई (वर्ली) में है। ध्यातव्य है कि Stock Exchange में 49% तक विदेशी निवेश की अनुमति होती है।

7.3 बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज (Bombay Stock Exchange)

1875 में स्थापित बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज (BSE) अपनी स्थापना के 130 वर्षों बाद 19 अगस्त 2005 में एक पब्लिक लिमिटेड कंपनी में रूपान्तरित हो गया है। 2002 में Stock Exchange मुंबई का नाम बदलकर BSE-Bombay Stock Exchange कर दिया गया। इसमें लगभग 5 हजार से भी अधिक भारतीय कंपनियाँ पंजीकृत हैं। अब यह दक्षिणी एशिया का सबसे बड़ा तथा विश्व का 5वाँ सबसे बड़ा स्टॉक एक्सचेंज बन गया है।

मुंबई शेयर बाजार के शेयर मूल्य सूचकांक

1994 में 2 शेयर मूल्य सूचकांक BSE 200 और Dollex को चालू किया गया था, जैसा कि नाम से स्पष्ट है कि BSE 200 में 200 चुनी हुई कंपनियों के शेयर हैं जिनमें 85 कंपनियों के शेयर Specified List A के तथा 115 कंपनियों के शेयर None specified list B के शेयर हैं। BSE 200 का ही Dollar मूल्य में दूसरा सूचकांक Dollex है, जिसका आधार वर्ष 1989-1990 निर्धारित किया गया है।

ध्यातव्य है कि मुंबई स्टॉक एक्सचेंज का नेशनल इंडेक्स 100 शेयरों का होता है। वहीं मुंबई स्टॉक एक्सचेंज का संवेदी शेयर सूचकांक 30 शेयरों का होता है।

सेंसेक्स (Sensex) सूचकांक की रचना वर्ष 1986 में की गई थी और माना जाता है कि भारत के शेयर बाजार की इतनी लंबी अवधि की समीक्षा के लिए सेंसेक्स का इतिहास महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। शेयर बाजार के उतार-चढ़ाव को मापने के लिए देश में अपने प्रकार का यह पहला सूचकांक है। संवेदी सूचकांक का आधार वर्ष 1978-79 है तो वहीं राष्ट्रीय सूचकांक का आधार वर्ष 1983-84 है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

7.4 Over the Counter Exchange of India

मुंबई में 1992 में स्थापित किए गए लघु व मध्यम औद्योगिक इकाइयों के एक्सचेंज के रूप में OTCEI भारत का पहला Online Trading सुविधा से सम्पन्न Computerised Exchange है। इसकी शुरूआत अमेरिका के Nasdaq के आधार पर की गयी है क्योंकि Nasdaq का कम्प्यूटर नेटवर्क पूरे अमेरिका में जुड़ा हुआ है, जिसके कारण वहाँ की लघु व मध्यम इकाइयों से तुरंत संबंध स्थापित किया जा सकता है। OTCEI में मुख्यत: उन कंपनियों को सूचीबद्ध किया गया है जिनकी पूँजी का स्तर 30 लाख रुपये से 25 करोड़ रुपये तक हो।

7.5 भारत में वायदा कारोबार *(Commodity Exchange in India)*

अब हम जानते हैं कि भारत में शेयरों की खरीद-फरोख्त के लिए दो प्रमुख शेयर बाजार बम्बई स्टॉक एक्सचेंज (BSE) तथा नेशनल स्टॉक एक्सचेंज (NSE) हैं।

जिस तरह शेयरों के कारोबार के लिए स्टॉक एक्सचेंज का प्रावधान है, उसी प्रकार Commodity बाजारें में कारोबार के लिए Commodity एक्सचेंजों की स्थापना की गयी है। शेयर बाजारों की तरह गाँव तथा कस्बों के हाट बाजार भी अब धीरे-धीरे हाई-टेक होते जा रहे हैं तथा खाद्य तेलों एवं प्रमुख अनाजों का मूल्य Online कोट कर रहे हैं, इसे ही वायदा कारोबार (Commodity Market) या जिन्स बाजार के नाम से जाना जाता है। इस बाजार में दलहन, तिलहन, गेहूँ, चावल, तेल इत्यादि का व्यापार होता है।

Commodity Exchange में Commodities जैसे- सोना, चाँदी, खाद्य पदार्थ, कच्चे तेल आदि जैसी वस्तुओं की कीमत का व्यापार होता है। किसी भी वस्तु की भविष्य में कीमतों का अनुमान लगाकर उसकी खरीद-फरोख्त करना (Future Trading) ही कीमत का व्यापार कहलाता है, जैसे- आज से 6 महीने बाद खाद्य तेल, गेहूँ, चावल, दलहन आदि की कीमत क्या होगी? इसके लिए किसान, विक्रेता, व्यापारी, निवेशक सभी अपना भाव कोट करते हैं और इसी आधार पर 6 महीने पहले उनके भावी मूल्य का अनुमान लगाकर खरीद-फरोख्त की जाती है, जिसे Commodity Exchange भी कहा जाता है।

भारत में कुल चार Commodity Exchange हैं, जिनमें Multi Commodity Exchange (MCX) तथा National Commodity and derivatives Exchange प्रमुख हैं, जो मुंबई में स्थित है। तीसरा National Multi Commodity Exchange अहमदाबाद में स्थित है। भारत का चौथा Commodity Exchange MMTC तथा India Commodity Exchange गुड़गाँव में स्थित है।

1952 में वायदा अधिनियम के अन्तर्गत स्थापित वायदा बाजार आयोग (Future Market Council) - FMC स्थापित किया गया है। ऐसा अनुमान है कि देश का Commodity बाजार शेयर बाजार की तुलना में 5 गुना अधिक है। हालाँकि यह भी सत्य है कि देश की ज्यादातर मंडियाँ असंगठित और अव्यवस्थित हैं और इन्हें एक व्यवस्था के अनुरूप ढालने में काफी वक्त लगेगा।

इन Commodity एक्सचेंजों में वायदा कारोबार के लिए Clearing and Settlement System मौजूद है। इन Commodity एक्सचेंजों में बाजार Online होता है। यानि कि विक्रेता के बेचने के समय यह पता नहीं होता कि उसे खरीदने वाला कौन है, साथ ही क्रेता को भी यह पता नहीं होता कि उसे सामान का विक्रेता कौन है। बाजार में काम करने के लिए किसी ब्रोकर (Broker) के अन्तर्गत D-mat खाता खुलवाना होता है, जो शेयर बाजार के D-emat खाते से अलग होता है।

Commodity Trading का समय भी शेयर बाजार से अलग होता है, यहाँ पर कृषि आधारित जिन्सों का कारोबार प्रात: 10 बजे से शाम 5 बजे तक होता है और धातुओं का कारोबार प्रात: 10 बजे से रात्रि लगभग 12 बजे तक होता है। निवेशक बिना ब्रोकर के कार्यालय में गये Online कारोबार कर सकता है जिसके लिए Broker कंपनी निवेशक को एक User Name और Password देती है।

निवेशक जिस ब्रोकर के पास D-mat Account खुलवाता है, वहाँ उसे अपने खाते में मार्जिन मनी (Margin Money) जमा करवानी पड़ती है ताकि उसी अनुपात में वायदा कारोबार की अनुमति प्राप्त हो सके। साधारणत: मार्जिन मनी 5% से 10% होती है। इन सौदों का निपटारा उन्हीं बैंकों के साथ हो सकता है, जिनका संबंधित कोमोडिटी एक्सचेंज (Commodity Exchange) के साथ करार हो।

कमोडिटी एक्सचेंज भविष्य में मूल्यों का निर्धारण कर किसानों को बिचौलियों की मनमानी से बचाता है तो साथ ही किसानों को विभिन्न फसलों के उगाने आदि के निर्णय लेने में मदद करता है, जैसे यदि किसानों को पहले से ही पता हो कि छ: महीने बाद चावल की कीमत दो हजार रुपये प्रति क्विंटल हो, तो किसान उसी अनुसार चावल की फसल पर खर्च करेगा। इसी प्रकार विभिन्न व्यापारी भी भविष्य की कीमत की ऑनलाइन जानकारी हासिल करके अपने माल की बुकिंग करवा सकते हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

हेजिंग और आर्बिट्रेज के माध्यम से निवेशक लाभ भी कमा सकते हैं, जैसे– यदि किसी निवेशक ने Commodity Future Market में 11,000 रुपये प्रति तोले के हिसाब से 10 तोला सोना बुक कराया और अगले सप्ताह ही सोने की कीमत में वृद्धि होकर यह 15,000 रुपये प्रति तोला हो गया। अगर निवेशक इस भाव से सोने को बेचता है तो उसे 10,000 रु० का लाभ होता है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि निवेशक ने अभी तक सोना खरीदा नहीं था, बल्कि केवल उसकी बुकिंग कराई थी।

कमोडिटी एक्सचेंज में रोजगार प्राप्ति की भी अत्यधिक संभावना है। इसे इस प्रकार समझा जा सकता है कि जैसे-जैसे वायदा कारोबार का एक्सचेंजों के जरिए विस्तार होगा तो उसके साथ ही विभिन्न क्षेत्रों में कंप्यूटर ऑपरेटर, पेशेवर प्रबंधक, बिजनेस डेवलपमेंट मैनेजर आदि की भी आवश्यकता होगी क्योंकि अभी Future Trading में बैंकों, म्यूचुअल फंडों जैसे कई संस्थाओं को सीधे हिस्सेदारी की अनुमति सरकार ने नहीं दी है लेकिन एक बार अनुमति मिलने के बाद इसमें कई प्रकार के रोजगारों का सृजन हो सकता है। स्पष्ट है कि कमोडिटी एक्सचेंज का भविष्य भारत में अच्छा है लेकिन फिर भी कुछ सैद्धान्तिक और तकनीकी कमियाँ बनी हुई हैं, जिन्हें दूर करना आवश्यक है।

7.6 डेरिवेटिव्स का परिचय *(Introducation of Derivatives)*

डेरिवेटिव्स शब्द का अर्थ ऐसे कांट्रैक्ट से है जिसका भाव अंडरलाइंग एसेट (Underlying Assest) से प्राप्त किया जाता है, अथवा उस पर निर्भर होता है। अंडरलाइंग एसेट वित्तीय संपत्ति हो सकती है, जैसे- मुद्रा, स्टॉक (शेयर), बाजार इंडेक्स, ब्याज रखने वाली सिक्युरिटी अथवा व्यापार की हाजिर जिंसेंस (कमोडिटी)। आज विश्वभर में बिजली, मौसम और ऊष्ण तापमान तक पर डेरिवेटिव कांट्रैक्टस का सौदा होता है। सिक्युरिटी कांट्रैक्ट रेग्युलेशन एक्ट (1956) के अनुसार, डेरिवेटिव शब्द में निम्नलिखित मदों का समावेश किया जाता है।

1. डेट् इंस्ट्रमेंट (Debt Instrument), शेयर, लोन, सिक्योर्ड या अनसिक्योर्ड, रिस्क इंस्ट्रमेंट अथवा सिक्युरिटी के अन्य किसी भी स्वरूप से सिक्युरिटी प्राप्त की जाती है।
2. ऐसा कांट्रैक्ट जो अंडरलाइंग सिक्युरिटीज के भाव के इंडेक्स से अपना मूल्य प्राप्त करता है।

ओवर द काउंटर (OTC) डेरिवेटिव कांट्रैक्ट्स

जिन Derivatives का एक्सचेंज पर सौदा होता है, उसे एक्सचेंज ट्रेडेड डेरिवेटिव (Exchange Traded Derivative) कहा जाता है, जबकि निजी व्यवहार में लाये जाने वाले डेरिवेटिव कांट्रैक्ट्स को OTC कांट्रैक्ट के रूप में जाना जाता है। एक्सचेंज ट्रेडेड डेरिवेटिव्स की तुलना में OTC डेरिवेटिव्स बाजारों की निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं:-

1. काउंटर पार्टी (ऋण) जोखिम को विकेन्द्रित किया जाता है और वह व्यक्तिगत संस्थाओं में समाहित हो जाता है।
2. व्यक्तिगत पोजिशन, लिवरेज अथवा मार्जिनिंग पर केन्द्रित कोई औपचारिक मर्यादाएँ, ओवर द काउंटर (OTC) डेरिवेटिव कांट्रैक्ट्स में नहीं रहती।
3. जोखिम और बोझ में सहभागी होने के लिए कोई औपचारिक नियम नहीं है।
4. बाजार की स्थिरता और प्रामाणिकता का ध्यान रखने और बाजार में शामिल लोगों के सामूहिक हितों की रक्षा करने के लिए कोई औपचारिक नियम या प्रणाली नहीं है।
5. सामान्य रूप से OTC कांट्रैक्टों का नियमन प्राधिकरण एवं एक्सचेंज की स्व-नियामक संस्थाओं द्वारा नहीं किया जाता। हालाँकि, राष्ट्रीय कानून व्यवस्था, बैंकिंग निगरानी से परोक्ष रूप से प्रभावित होती है।

NSE में डेरिवेटिव ट्रेडिंग का इतिहास

NSE पर डेरिवेटिव ट्रेडिंग, S&P CNX निफ्टी इंडेक्स पर फ्यूचर्स ट्रेडिंग के साथ 12 जून 2000 को शुरू हुआ था। उसके बाद इंडेक्स ऑप्शंस और व्यक्तिगत सिक्युरिटीज पर ऑप्शंस में ट्रेडिंग क्रमशः 4 जून 2001 और 2 जुलाई 2001 को शुरू हुई। सिंगल स्टॉक फ्यूचर्स 9 नवम्बर 2001 को शुरू किया गया। उसके बाद से CNX IT इंडेक्स, बैंक निफ्टी मिडकैप 50 इंडेक्स आदि पर फ्यूचर्स और ऑप्शंस में ट्रेडिंग का समावेश करने के लिए उत्पादन का आधार बढ़ाया गया है। वाल्यूम और टर्नओवर दोनों की दृष्टि से NSE आज भारत में सबसे बड़ा डेरिवेटिव्स एक्सचेंज है। पाँच वर्ष की परिपक्वता के निफ्टी ऑप्शंस कांट्रैक्ट को छोड़कर डेरिवेटिव्स कांट्रैक्ट में अवधि समाप्ति के लिए अधिक से अधिक 3 महीने का चक्र होता है। ट्रेडिंग के लिए 1 महीना, 2 महीना और 3 महीने की अवधि वाले कांट्रैक्ट ट्रेडिंग उपलब्ध हैं। आने वाले महीने के कांट्रैक्ट की अवधि पूर्ण होने के बाद ट्रेडिंग के दूसरे दिन नया कांट्रैक्ट को शुरू किया जाता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

7.7 ब्याज की दरों के बारे में जानकारी *(Information about Interest Rates)*

ब्याज की दरें निश्चित (Discrete) अथवा निरंतर (Continuous) हो सकती हैं। लोग जब वित्तीय बाजारों में (जैसे कि इक्विटी शेयरों में) निवेश करते हैं तब संपत्तियों पर प्रतिफल निरंतर (Continuos) रूप में बदलता रहता है, जो Accuracy की ओर ले जाता है, अतः निरंतर गणना (कॉम्पाउंडिंग) का उपयोग करना चाहिए। दूसरी ओर फिक्स्ड डिपॉजिट Discretely Compounded होता है और उसकी फ्रिक्वेन्सी वार्षिक, तिमाही या दैनिक हो सकती है।

ब्याज दरों को वार्षिक आधार पर गणना की जाती है। हालाँकि वह वार्षिक दरों के साथ फ्रिक्वेन्सी का भी संकेत करती है। उदाहरण के रूप में Fixed deposite पर वार्षिक दर 10 प्रतिशत के समान है। इसका अर्थ यह हुआ कि बैंक जमा वार्षिक रूप से गणना के आधार पर 10 प्रतिशत का ब्याज प्रदान करती है। फार्मूला $A = P(1+r/t)^t$ का उपयोग कर जिसमें P (मूल रकम- प्रिंसिपल) है, r ब्याज दर और t समय (टाइम) है। यदि फिक्स्ड डिपॉजिट में 100 रु. जमा किया जाए तो उसे 100 रु. के आधार पर (1+0.1) = 110 रु. प्रतिफल दिया जाएगा, परंतु यदि गणना की मात्रा में बदलाव तो अंतिम रकम अलग होगी। उदाहरण के रूप में यदि गणना की मात्रा बदलकर छमाही की जाती है और 100 रु. पर ब्याज दर 10 प्रतिशत है तो फिर परिपक्वता पर रकम 110.250 रु. होगी।

नीचे तालिका में ऐसा दर्शाया गया है कि समान ब्याज दर की बारंबार गणना (Compounded More Frequency) की जाए, तब रकम बदलती है।

ब्याज दर और गणना की मात्रा (फ्रिक्वेंसी)

मूल रकम (प्रिंसिपल) (रु.)	ब्याज दर (%)	गणना की मात्रा	गणना	एक वर्ष में रकम (रु.)
100	10%	वार्षिक	$100(1+10\%)$	110.00
100	10%	छमाही	$100(1+10\%/2)^2$	110.250
100	10%	तिमाही	$100(1+10\%/4)^4$	110.381
100	10%	मासिक	$100[1+(10\%/12)]^{12}$	110.471
100	10%	दैनिक	$100[1+(10\%/365)]^{365}$	110.516
100	10%	निरंतर रूप से	$100e^{(0.1)(1)}$	110.517

गौरतलब है कि भारत में बैंकों द्वारा बचत खातों की बचतों की गणना करने के लिए दैनिक गणना का नया नियम 1 अप्रैल, 2010 से शुरू हुआ है। e एक्सपोनेंशियल फंक्शन है, जो 2.718 के समान है।

आर्बिट्रेज *(Arbitrage)*

विभिन्न विदेशी मुद्राओं का एक-साथ ही इस उद्देश्य से खरीदना और बेचना जिसके कारण विश्व के विभिन्न बाजारों में विदेशी विनिमय दरों में पाये जाने वाले अंतर से लाभ उठाया जा सके, आर्बिट्रेज (Abitrage) कहलाता है, जैसे- यदि पेरिस में एक पौण्ड के लिए विदेशी विनिमय दर = 2.5 डॉलर हो और लंदन में एक पौण्ड = 2 डॉलर हो तो अब यह संभव है कि कोई व्यक्ति पेरिस में एक पौण्ड के बदले 2.5 डॉलर प्राप्त करके उसे लंदन बाजार में 2 डॉलर ही देकर 1 पौण्ड प्राप्त कर ले फिर उसे पेरिस के बाजार में दुबारा बेचे और ऐसी स्थिति में प्रत्येक बार वह 0.5 डॉलर का लाभ अर्जित करता रहे।

Arbitrage के कारण एक तरफ Arbitrager लाभ कमाता है, तो वहीं दूसरी ओर यह क्रिया दोनों बाजारों में एक ही विनिमय दर स्थापित करने में मदद करती है।

हेजिंग *(Hedging)*

अपने को विभिन्न प्रकार के जोखिमों में उत्पन्न हानि से सुरक्षित करना हेजिंग कहलाता है। विदेशी विनिमय (Foreign Exchange) के संदर्भ में हेजिंग का अर्थ अपने आप को निर्यात जोखिम से सुरक्षित करना (Covering of Export Risk) है। हेजिंग यह व्यवस्था प्रदान करती है कि निर्यातक और आयातक विदेशी विनिमय दरों में होने वाले उच्चावचों से उत्पन्न हानियों से अपने आपको सुरक्षित कर सकें।

7.8 इंडेक्स के आंकड़ों की समझ *(Understanding The Stock Index)*

एक इंडेक्स नंबर कुछ निश्चित समयावधि में कुछ निश्चित सिक्युरिटीज या एसेट्स के समूह के मूल्य में होने वाले परिवर्तन को दर्शाता है। यह एक संबंधित मूल्य इसलिए है कि उसके शुरू होने की तारीख या बेस पीरियड को एक्सचेंज द्वारा निर्धारित किया जाता

Copyright – Drishti The Vision Foundation

है और वर्तमान मूल्य की उसके साथ तुलना होती है। शुरू होने की तारीख या बेस पीरियड के दिन यह इंडेक्स मूल्य सामान्य रूप में भी 100 अथवा 1000 जैसे आंकड़ों में होता है। उदाहरण के रूप में निफ्टी का बेस मूल्य उसकी शुरूआत की तारीख 3 नवंबर 1995 को 1000 का था।

शेयर बाजार के सूचकांक विभिन्न कारणों से उपयोगी होते हैं। उनके कुछ उपयोग इस प्रकार हैं-

- मार्केट का रूख दर्शाने वाले एक बेरोमीटर के रूप में।
- एक बैंचमार्क पोर्टफोलियो के कामकाज के रूप में।
- इंडेक्स फ्यूचर्स जैसे डेरिवेटिव्स साधनों में एक अंडरलाइंग के रूप में और
- इंडेक्स फंड के मार्फत एक निष्क्रिय (Passive) फंड मैनेजमेंट में।

7.9 इंडेक्स के घटने-बढ़ने का आर्थिक महत्व *(Economic Significance of Index Movements)*

हम शेयर सूचकांक की घटने-बढ़ने का किस तरह वर्णन करेंगे? यह घट-बढ़ क्या है? वह कार्पोरेट क्षेत्र के भावी लाभांश के संबंध में शेयर बाजार की बदलती अपेक्षाओं का भी प्रतिबिंब प्रदान करता है। यदि पूर्व की धारणा की तुलना में भविष्य में लाभांश की संभावनाएँ अधिक होना शेयर बाजार को प्रतीत हो तब शेयर सूचकांक घटता है। एक उपयुक्त इंडेक्स हमें कार्पोरेट क्षेत्र के भविष्य के बारे में शेयर बाजार कैसी धारणा रखता है, उसकी तत्काल जानकारी प्रदान करता है। प्रत्येक शेयर के भाव दो संभावित कारणों से घटते या बढ़ते हैं-

1. कंपनी संबंधी समाचार- व्यष्टि आर्थिक घटक (Micro Economic Element) (उदाहरण के रूप में एक प्रोडक्ट का लांच किया जाना या फैक्ट्री बंद होना, कंपनी से संबंधी अन्य निश्चित घटक)
2. अर्थव्यवस्था संबंधी समाचार- समष्टि आर्थिक घटक (Macro Economic Element) (उदाहरण के रूप में बजट की घोषणा, कर ढांचा और दरों में परिवर्तन, राजनीतिक समाचार जैसे राष्ट्रीय सरकार का बदल जाना, देश में सभी कंपनियों को असर करने वाले अन्य सामान्य घटक)

एक इंडेक्स का कार्य कुल मिलाकर शेयर बाजार की घट-बढ़ (देश के समाचार) का प्रतिबिंब प्रदान करना है। हर शेयर में दो घटकों का मिश्रण होता है जिसमें शेयर संबंधी और इंडेक्स संबंधी समाचार का समावेश होता है। जब हम अनेक शेयरों पर मिलने वाले प्रतिफल के औसत को ध्यान में लेते हैं, तो इसमें व्यक्तिगत शेयर संबंधी समाचार का महत्व नहीं रहता है। यह औसत करने की पद्धति वेटेड एवरेज की है जिसमें प्रत्येक शेयर को उसकी इंडेक्स में मात्रा उसके बाजार पूँजीकरण के अनुसार ली जाती है।

उदाहरण के रूप में मान लें कि एक इंडेक्स में दो शेयर 'ए' और 'बी' हैं। 'ए' का बाजार पूँजीकरण 1000 करोड़ रु. है तथा 'बी' का बाजार पूँजीकरण 3000 करोड़ रु. है, तो इस इंडेक्स में 'ए' का वेटेड चौथा भाग (¼) का और 'बी' का वेटेड तीन चौथाई भाग (¾) लिया जाता है।

7.10 एक शेयर सूचकांक से अपेक्षा *(Desirable Attributes of an Index)*

एक अच्छे शेयर सूचकांक में तीन प्रकार की विशेषताएं होनी चाहिए-

- उसे बाजार में एक प्रकार के विभिन्न पोर्टफोलियो का रुख दर्शाना चाहिए।
- इंडेक्स में समाविष्ट किये गये शेयर अधिक तरल होने चाहिए।
- उसका संचालन व्यावसायिक ढंग से होना चाहिए।

संक्षेप में एक स्टॉक इंडेक्स के विविधीकरण की निरंतर आधार पर निगरानी करनी चाहिए। यह सुनिश्चित करना चाहिए कि इंडेक्स सट्टेबाजी के समक्ष उभेद्य नहीं है। कम ट्रेडिंग वौल्यूम वाले स्टॉक इंडेक्स का हिस्सा नहीं होना चाहिए। इंडेक्स को उसके सर्जन में कोई नाट्यात्मक परिवर्तन किए बगैर सहजतापूर्वक व्यवस्थित करना चाहिए।

7.11 भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड *(Securities and Exchange Board of India - SEBI)*

शेयर बाजार के इतने वृहत् कारोबार को नियंत्रित और विनियमित करने का कार्य सेबी द्वारा किया जाता है। साथ ही, यह बोर्ड कंपनियों द्वारा शेयर बाजार में होने वाली गड़बड़ियों को रोकने के लिए विभिन्न कानूनों को लागू करवाने का कार्य भी करता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारत का शेयर बाजार एशिया के सबसे पुराने शेयर बाजारों में एक है और निवेशकों का इसमें विश्वास बनाये रखने तथा उसे संरक्षण प्रदान करने का विशेष कार्य सेबी कर रहा है। सेबी एक गैर-संवैधानिक संस्था है जिसकी स्थापना संसद ने एक कानून के माध्यम से अप्रैल 1988 में की और बाद में 1992 में एक अध्यादेश द्वारा इस संस्था को वैधानिक दर्जा प्रदान कर दिया गया।

सेबी का प्रबंधन 6 सदस्यों की देख-रेख में होता है और इसका अध्यक्ष केन्द्र सरकार द्वारा नामनिर्दिष्ट विशेष योग्यता प्राप्त व्यक्ति होता है। इसके दो अन्य सदस्यों में केन्द्रीय मंत्रालयों के अधिकारियों में से ऐसे व्यक्ति नामित होते हैं, जो वित्त एवं कानून के विशेषज्ञ होते हैं। सेबी के प्रबंधन का एक सदस्य रिजर्व बैंक के अधिकारियों में से होता है तो दो अन्य सदस्य केन्द्र सरकार द्वारा नामांकित किये जाते हैं।

सेबी का मुख्यालय मुंबई में है और इसके क्षेत्रीय कार्यालय कोलकाता, चेन्नई तथा दिल्ली में स्थापित किये गये हैं। सेबी के लिए निर्धारित कुछ प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–

- स्टॉक एक्सचेंजों और अन्य प्रतिभूति बाजारों के व्यवसाय को नियमित करना।
- स्टॉक ब्रोकर्स, ट्रस्टी, शेयर ट्रान्सफर एजेंटों तथा पोर्टफोलियो मैनेजरों के विभिन्न कार्यों को नियमित करने के साथ उन्हें पंजीकृत करना।
- म्यूचुअल फंड की सामूहिक निवेश की योजनाओं को नियमित और पंजीकृत करना।
- नियमित संगठनों को प्रोत्साहित करना।
- सिक्योरिटी मार्केट में निवेशकों को संरक्षण प्रदान करना तथा विभिन्न उपायों के माध्यम से सिक्योरिटी मार्केट को विनियमित तथा विकसित करना।
- प्रतिभूति बाजार में काम करने वाले विभिन्न संगठनों के कार्यकलापों का निरीक्षण करने के साथ उन्हें व्यवस्था प्रदान करना।
- प्रतिभूति बाजार से जुड़े कामगारों को प्रशिक्षण देना और निवेशकों को शिक्षा प्रदान कर प्रोत्साहित करना।

सेबी को अधिक प्रभावी और क्रियाशील बनाने के लिए सरकार द्वारा काफी प्रयास किये जा रहे हैं और शेयर बाजार में विसंगतियों और गड़बड़ियों को दूर करने के लिए सेबी को अधिक कठोर सजा का अधिकार उपलब्ध कराने के लिए संसद में सेबी संशोधन अधिनियम, 2002 पारित कराकर 29 अक्टूबर 2002 से लागू कर दिया गया। लघु निवेशकों के साथ धोखाधड़ी करने के मामले में एक लाख से एक करोड़ रुपये तक का जुर्माना आरोपित करने का प्रावधान इस अधिनियम में किया गया। शेयर बाजार को मान्यता प्रदान करने का अधिकार भी अब सेबी को हस्तांतरित कर दिया गया है और इसके अतिरिक्त शेयर बाजार के किसी सदस्य के, किसी बैठक में मताधिकार आदि के संबंध में नियम बनाने और नियमों को संशोधित करने का अधिकार सेबी को प्रदान किया गया। इस प्रकार देखा जा सकता है कि दिन-प्रतिदिन सेबी द्वारा सशक्त एवं प्रभावशाली भूमिका अदा की जा रही है और भारतीय पूँजी बाजार में निवेशकों का विश्वास तो बढ़ा ही है, साथ ही साथ नए और छोटे निवेशक भी इसकी तरफ आकर्षित हो रहे हैं।

निवेशकों के हितों की सुरक्षा के लिए सेबी ने कारपोरेट गवर्नमेंट के नियमों को और अधिक कड़ा किया है और सेबी के दिशा-निर्देशों में कहा गया है कि ऐसी सूचीबद्ध कंपनियां, जिनका चेयरमैन गैर-कार्यकारी होने के साथ यदि प्रमोटर भी हो तो बोर्ड में स्वतंत्र निदेशकों की संख्या कम से कम 50 प्रतिशत होनी चाहिए, जो पूर्व में एक-तिहाई रखना ही अनिवार्य था। सेबी के एक अन्य दिशा-निर्देश के तहत सार्वजनिक निर्गमों के माध्यम से धन जुटाने वाली कंपनियों के पास दृश्य परिसंपत्ति कम से कम तीन करोड़ रुपये होना अनिवार्य है।

7.12 विदेशी मुद्रा का वायदा कारोबार *(Future Trading of Foreign Currency)*

देश में विदेशी मुद्रा के वायदा कारोबार (Currency Futures) के लिए अब तक चार वायदा बाजारों को स्वीकृति प्रदान की जा चुकी है। इस कारोबार का शुभारंभ नेशनल स्टॉक एक्सचेंज में हुआ था और बाद में बंबई स्टॉक एक्सचेंज के करेंसी डेरिवेटिव सेगमेंट में और मल्टी कोमोडिटी एक्सचेंज के स्टॉक एक्सचेंज MCX-SX में विदेशी मुद्रा की फ्यूचर ट्रेडिंग शुरू की गई।

करेंसी फ्यूचर ट्रेडिंग के तहत् भविष्य की तिथि के लिए "विदेशी मुद्रा" की खरीद-बिक्री का सौदा तय मूल्य पर स्टॉक एक्सचेंज में किया जाता है, जिससे आयातकों, निर्यातकों तथा विदेश यात्रा पर जाने के इच्छुक लोगों के विनिमय दर (Exchange Rate) में होने वाले उतार-चढ़ाव के जोखिम से सुरक्षा मिल सके। इससे फायदा यह होता है कि विदेशी मुद्रा का सौदा पहले से ही कर लेने के कारण विनिमय दर में होने वाले उतार-चढ़ाव के जोखिम से लोग मुक्त रह पाते हैं और विदेशी मुद्रा का क्रय-विक्रय करने वाले बैंकों और डीलरों को इस व्यवस्था का विशेष रूप से लाभ मिलता है।

डॉलर और रुपये के बीच के वायदा कारोबार की अनुमति रिजर्व बैंक द्वारा सबसे पहले प्रदान की गई और इसके बाद अब यूरो, पाउन्ड व येन में भी वायदा कारोबार की अनुमति सेबी ने प्रदान कर दी है। इन विदेशी मुद्राओं में वायदा कारोबार शुरू होने से इन मुद्राओं की विनिमय दर में होने वाले उतार-चढ़ाव से आयातकों व निर्यातकों को जोखिम कम करने में मदद मिलेगी।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

7.13 ब्याज दरों का वायदा कारोबार *(Future Trading of Interest Rates)*

2008 में विदेशी मुद्रा का वायदा कारोबार शुरू होने के साथ ही भारत में अब ब्याज दरों का कारोबार भी शुरू हो गया है। 21 अगस्त 2009 को नेशनल स्टॉक एक्सचेंज में इसका शुभारंभ किया गया, जिसके अंतर्गत म्यूचुअल फंड, बैंक, बीमा कंपनियाँ, विदेशी संस्थागत निवेशक (FIIs) एवं अन्य वित्तीय संस्थान ब्याज दरों का वायदा कारोबार कर सकेंगे।

ध्यातव्य है कि जहाँ विश्व के अन्य देशों में ब्याज-दर का वायदा कारोबार शेयर कारोबार से कई गुना अधिक है, वहीं भारत में अभी इसकी शुरुआत ही मानी जाती है।

7.14 शेयर बाजारों में कम्प्यूटरीकृत ऑन लाइन ट्रेडिंग *(BOLT & DOTS System)*

मुंबई का शेयर बाजार, जो भारत का पहला शेयर बाजार है अब अंतर्राष्ट्रीय स्तर का अति आधुनिक शेयर बाजार बन गया है क्योंकि शेयरों की खरीद-बिक्री के लिए 120 वर्षों से प्रचलित पुरानी खुली बोली प्रणाली (Open out cry system) का स्थान अब स्क्रीन आधारित बोल्ट (BSE Online Trading-BOLT) प्रणाली ने ले लिया है। इस प्रणाली के तहत शेयर दलाल अपने चैम्बर में बैठे-बैठे ही स्क्रीन पर मूल्यों के उतार-चढ़ाव को देखकर सौदे सम्पन्न कर सकते हैं। मई 1995 से इस प्रणाली का शुभारंभ कर दिया गया था। मुंबई स्टॉक एक्सचेंज की बोल्ट (BOLT) प्रणाली के बाद दिल्ली स्टॉक एक्सचेंज में भी कम्प्यूटरीकृत ऑनलाईन ट्रेडिंग प्रणाली (Delhi Online Trading System-DOTS) 1996 से प्रारंभ हो गई है।

7.15 भारतीय बीमा उद्योग *(Indian Insurance Industry)*

भारतीय बीमा उद्योग
(Indian Insurance Industry)

बीमा उद्योग के दो क्षेत्र हैं

- जीवन बीमा (Life Insurance)
- सामान्य बीमा (General Insurance)

जीवन बीमा *(Life Insurance)*

अंग्रेजों के शासनकाल में 1818 में एक ब्रिटिश फर्म ने कलकत्ता में ओरिएन्टल लाइफ इन्श्योरेंस की शुरूआत की और यहीं से भारत में जीवन बीमा की शुरूआत मानी जाती है। 1871 तक भारतीयों के जीवन को अंग्रेजों ने सामान्य से निम्न माना और उनके जीवन के बीमे के लिए संदेह से 20% तक अधिक प्रीमियम बीमा कंपनियों द्वारा वसूला गया लेकिन 1871 में ही बॉम्बे म्यूचुअल लाईफ इन्श्योरेंस सोसाइटी की स्थापना हुई जो पहली ऐसी बीमा कंपनी थी जिसने सामान्य प्रीमियम पर ही भारतीयों के जीवन का बीमा प्रारंभ किया।

जीवन बीमा व्यवसाय को विनियमित करने के लिए पहली बार 1912 को एक भारतीय बीमा कंपनी अधिनियम लागू किया गया और बाद में 1928 में एक और भारतीय बीमा कंपनी अधिनियम पास किया गया, जिसका उद्देश्य भारतीय और विदेशी बीमा करने वाली सभी कंपनियाँ, जो भारत में कार्यरत हैं, द्वारा जीवन बीमा तथा अन्य प्रकार के बीमा से संबंधित सूचनाएँ सरकार को उपलब्ध कराना था। 1938 में उपर्युक्त सभी अधिनियमों को समन्वित करने के बाद व्यापक प्रावधानों के साथ इन्श्योरेंस एक्ट, 1938 लागू किया गया।

19 जनवरी 1956 तक केंद्र सरकार ने इन सभी 245 भारतीय और विदेशी बीमा कंपनियों को अपने अधिकार में ले लिया तथा एक सितंबर 1956 को इन सभी का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। सितंबर 1956 में ही संसद ने एक अधिनियम के तहत पाँच करोड़ रुपये की भारत सरकार की पूँजी के साथ भारतीय जीवन बीमा निगम (Life Insurance Corporation of India-LIC) की स्थापना की। बीमा क्षेत्र में सुधार के लिए मल्होत्रा समिति ने LIC के लिए 5 करोड़ रुपये की पूँजी आधार को बढ़ाकर 200 करोड़ करने की सिफारिश की थी। लेकिन सरकार ने इसे बढ़ाना स्वीकार नहीं किया है। जीवन बीमा के राष्ट्रीयकरण का उद्देश्य बीमा के व्यापक प्रसार के साथ जनता के बचत को देश के हित के साथ समन्वित करना था।

राष्ट्रीयकरण के पहले देश में 245 निजी बीमा कंपनियाँ थीं, जो अधिकतर शहरी क्षेत्रों में ही कार्यरत थीं। वर्तमान में जीवन बीमा निगम अपने मुंबई स्थित मुख्यालय और सात अन्य क्षेत्रीय कार्यालयों के माध्यम से काम कर रहा है। इसका व्यवसाय विदेशों में भी है। विदेशों में इसके कार्यालय इंग्लैण्ड, मॉरिशस तथा फिजी में हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

- **सामाजिक सुरक्षा सामूहिक बीमा योजना :** सामाजिक सुरक्षा कोष की स्थापना 1988-89 में हुई। जिसका उद्देश्य समाज के कमजोर और संवेदनशील वर्गों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना है और इनकी बीमा संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए LIC द्वारा सामाजिक सुरक्षा कोष का प्रबंधन किया जाता है। इस योजना के तहत 18-60 वर्ष तक आयु के व्यक्तियों को स्वाभाविक मृत्यु होने ही स्थिति में उनके परिवार को 5000 रु॰ की बीमा सुरक्षा प्रदान की जाती है तथा दुर्घटना से आंशिक या स्थायी रूप से विकलांग होने पर 12500 रु॰ दिये जाते हैं। बीमा में किस्त की राशि का 50% भाग सामाजिक सुरक्षा कोष (Social Security Fund) से दिया जाता है और बाकी का 50% लाभार्थी को स्वयं देना होता है।
- **जनश्री बीमा योजना :** निर्धनता रेखा से नीचे जीवन-यापन करने वाले 18-60 आयु वर्ग के व्यक्तियों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने के लिए जनश्री बीमा योजना का आरंभ 10 अगस्त 2000 को किया गया। इस योजना ने सामाजिक सुरक्षा सामूहिक योजना और ग्रामीण सामूहिक बीमा योजना की जगह ली। इसके तहत सामान्य मृत्यु की स्थिति में 20,000 रु॰, दुर्घटना से मृत्यु के मामले में 50,000 रु॰ और दुर्घटना से स्थायी रूप से अयोग्य होने की स्थिति में भी 50,000 रु॰ की सुरक्षा उपलब्ध कराने का प्रावधान है। इसके लिए 200 रु॰ का वार्षिक प्रीमियम भारतीय जीवन बीमा निगम को देय होगा और गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों को (Below Poverty Line-BPL) प्रीमियम की 50% राशि सीमित व्यक्ति द्वारा चुकायी जाएगी और शेष 50% राशि का भुगतान LIC की सामाजिक सुरक्षा निधि से किया जाएगा।
- **बीमा प्लस योजना :** भारतीय जीवन बीमा निगम LIC ने पहली बार एक पूँजी बाजार संबद्ध (Capital Market Linked) बीमा योजना का शुभारंभ 2001 में किया है। "बीमा प्लस" नाम की इस योजना के तहत बीमा करवाने वालों को जीवन बीमा के अतिरिक्त दुर्घटना बीमा तथा पूँजी बाजार में निवेश के लाभ भी प्राप्त होंगे और साथ ही सामान्य बीमा योजनाओं की तरह बीमा प्लस के तहत चुकायी गई प्रीमियम की राशि को आयकर छूट भी प्राप्त होगी।

इस योजना के तहत प्राप्त होने वाली प्रीमियम राशि के एक भाग का निवेश पूंजी बाजार में शेयरों एवं बॉण्डों में किया जाएगा। और बीमा धारकों की योजना के तहत तीन विकल्प होंगे :

(i) सुरक्षित निधि (Secured Fund) → (ii) संतुलित निधि (Balanced Fund) → (iii) जोखिम निधि (Risk Fund)

निवेशक या पॉलिसी धारक अपनी पसंद के हिसाब से किसी भी विकल्प को चुन सकते हैं। बीमा प्लस जीवन बीमा निगम की पूँजी बाजार संबंधी पहली बीमा योजना मानी जाती है।

सामान्य बीमा *(General Insurance)*

भारत में सामान्य बीमा का प्रारंभ भी ब्रिटेन की देन है। शुरूआत में यह व्यवसाय ब्रिटिश तथा अन्य विदेशी बीमा कंपनियों की एजेंसियों के माध्यम से किया जाता था लेकिन 1850 में देश में पहली सामान्य बीमा कंपनी (ट्राइटन इन्श्योरेंस कंपनी लिमिटेड) कोलकाता में स्थापित की गई। हालांकि इस कंपनी के अधिकांश शेयर अंग्रेजों के थे और भारतीयों द्वारा इस प्रकार की पहली कंपनी (Indian Merchantile Insurance Company Ltd.) मुंबई में 1907 में स्थापित की गई।

राष्ट्रीयकरण से पूर्व देश में कार्यरत समस्त सामान्य बीमा कंपनियों का प्रबंध 1971 में सरकार ने अपने हाथों में ले लिया और 1 जनवरी, 1973 को सरकार ने सामान्य बीमा व्यवसाय अधिनियम 1972 के तहत सामान्य बीमा व्यवसाय का राष्ट्रीयकरण कर दिया। नवंबर 1972 में भारत सरकार ने भारतीय साधारण बीमा निगम (Government Insurance Corporation) के नाम से एक सरकारी कंपनी की स्थापना की, जिसने 1 जनवरी 1973 से कार्य करना प्रारंभ कर दिया। राष्ट्रीयकरण से पहले देश में काम कर रही 107 भारतीय एवं विदेशी बीमा कंपनियों को चार प्रमुख कंपनियों में विभाजित कर दिया गया, जिनके नाम हैं–

(i) National Insurnace Company Ltd.

(ii) New India Insurance Company Ltd.

(iii) Oriental Insurance Company Ltd.

(iv) United India Insurance Company Ltd.

वर्तमान में LIC और अन्य चार कंपनियों की अंश पूँजी सरकार के पास है और ये सभी पाँच संस्थाएँ सरकारी कंपनियाँ हैं और कंपनी अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत हैं। इन चार कंपनियों ने एक एसोसिएशन बना लिया है जिसे General Insurance Association of India कहते हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

- **भाग्यश्री बाल कल्याण पॉलिसी :** 19 अक्टूबर 1998 को शुरू की गई इस योजना में 18 वर्ष तक की ऐसी बालिकाओं को लक्षित किया गया है जिनके माता-पिता की आयु 60 वर्ष से ऊपर न हो। इस बीमे का वार्षिक प्रीमियम 15 रु० है। योजना के अंतर्गत प्रावधान है कि माता-पिता में से किसी एक की मृत्यु होने पर बालिका के नाम से किसी वित्तीय संस्थान में 25000 रु० जमा कराए जाएँगे। उसमें से 18 वर्ष की आयु होने तक बालिका को एक निश्चित रकम प्रदान की जायेगी और बाकी की रकम 18 वर्ष पूरे होने के बाद दी जाएगी। यदि बालिका की 18 वर्ष से पहले दुर्घटना में मृत्यु हो जाती है तो उसकी शेष बीमा राशि जीवित माता-पिता या अभिभावक को दे दी जाती है।

- **व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा सामाजिक सुरक्षा योजना :** यह योजना पूरे देश में गरीब परिवारों के लिए है। इस योजना में 18-60 वर्ष की आयु वाले वे सभी व्यक्ति आते हैं जिनकी वार्षिक आमदनी 7200 रुपए से कम है। इसके तहत किसी भी दुर्घटना में कमाने वाले सदस्य की मृत्यु होने पर उसके आश्रितों को 300 रुपए का मुआवजा दिया जाता है तथा इसका सारा प्रीमियम केन्द्र सरकार अदा करती है।

- **मेडीक्लेम (Mediclaim) बीमा योजना :** इसके अंतर्गत बीमा अवधि के दौरान किसी रोग या बीमारी के इलाज पर खर्च की राशि की क्षतिपूर्ति की जाती है। मुआवजे की राशि को 1 नवंबर, 1999 से 5 लाख रुपए कर दी गई है। यह योजना 5 से 80 वर्ष तक की आयु वाले लोगों के लिए है। 3 से 5 साल तक ही आयु वाले बच्चों की भी पॉलिसी इस योजना में extra प्रीमियम देकर किया जा सकता है।

- **राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना :** 1999 से 2000 के रबी के मौसम से राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना की शुरूआत की गई है। इस नयी योजना में उन सभी खाद्य फसलों जैसे अनाज, बाजरी, दालें, तिलहनों तथा कुछ बागवानी फसलों को शामिल किया गया है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य प्राकृतिक आपदाओं से फसल नष्ट होने पर किसानों को सहारा देना है।

- **राजराजेश्वरी महिला कल्याण योजना :** 19 अक्टूबर 1998 को 10-75 वर्ष की महिलाओं को उनके व्यवसाय को देखे बिना बीमा सुरक्षा प्रदान की जाती है जिसमें 15 रुपए वार्षिक के प्रीमियम में पूर्ण विकलांगता की स्थिति में 25000 रुपया तक बीमा संरक्षण दिया जाता है और महिला के पति की मृत्यु होने पर भी 2500 रुपये का बीमा संरक्षण दिया जाता है। किसी अविवाहित महिला की मृत्यु की स्थिति में 25000 रुपये की बीमा राशि उसके द्वारा नामांकित व्यक्ति या कानूनी उत्तराधिकारी को प्राप्त होती है।

बीमा क्षेत्र में निजी कंपनियों का प्रवेश

केन्द्र सरकार ने 19 April 2000 को 'बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण' (Insurance Regulatory Development Authority-IRDA) का गठन किया जो कि देश में बीमा क्षेत्र के निजीकरण हेतु मल्होत्रा समिति की सिफारिशों के आधार पर था। बीमा क्षेत्र में प्रवेश करने वाली निजी कंपनियों में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (Foreign Direct Investment) की अधिकतम सीमा जो पहले 26 प्रतिशत निर्धारित थी, को बढ़ाकर 49 प्रतिशत करने का फैसला सरकार ने किया है। बीमा क्षेत्र में बैंकों के प्रवेश के लिए भारतीय रिजर्व बैंक ने मार्च 2000 में दिशा-निर्देश जारी किये थे जिसके तहत प्रस्तावित मानकों को पूरा करने वाले बैंक ही देश में बीमा कारोबार संपन्न करने के लिए संयुक्त उपक्रम कंपनियों की स्थापना कर सकते हैं। इन संयुक्त उपक्रम कंपनियों की इक्विटी में बैंकों की भागीदारी अधिकतम 50% संभव है।

- **स्वास्थ्य बीमा पोर्टेबिलिटी की सुविधा प्रारंभ :** देश में अब मोबाईल नम्बर पोर्टेबिलिटी के आधार पर स्वास्थ्य बीमा पोर्टेबिलिटी की व्यवस्था शुरू की गई है। यह सुविधा IRDA (बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण) के निर्देश पर 1 अक्टूबर 2011 से शुरू की गई है। इससे अब स्वास्थ्य बीमा पॉलिसियों के धारक मौजूदा कंपनी की सेवाओं से संतुष्ट न होने पर कंपनी बदल सकेंगे और वह मेडीक्लेम (Mediclaim) पॉलिसी के लाभार्थी बने रहेंगे। इसके लिए दिशा-निर्देश फरवरी 2011 में IRDA द्वारा जारी किया गया था, जो 1 जुलाई 2011 से शुरू होने वाली थी लेकिन तैयारियों में कमी के कारण इसे आगे बढ़ा दिया गया है।

- **कर्मचारी राज्य बीमा योजना :** कर्मचारी राज्य बीमा निगम ने इस योजना के अंतर्गत आने वाले कर्मचारियों के लिए अधिकतम वेतन सीमा को 6500 रुपए प्रतिमाह से बढ़ाकर 7500 रुपए प्रतिमाह करने का निर्णय दिसम्बर 2003 में किया है।

उल्लेखनीय है कि वेतन सीमा के बढ़ने से विगत पाँच वर्षों में औद्योगिक संस्थानों के 13 लाख से अधिक कर्मचारी ESI योजना के लाभ से वंचित हो गये थे। इसके अंतर्गत आने वाले कर्मचारियों ने वेतन सीमा में वृद्धि के साथ-साथ कर्मचारी संख्या की सीमा को भी घटाया है। निगम के अनुसार अब 10 कर्मचारियों वाले कारखाने या संस्थान भी इसके दायरे में आयेंगे, भले ही वह निर्माण प्रक्रिया में विद्युत का प्रयोग करता हो अथवा नहीं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

11 November 2011 तक भारत में Life Insurance कंपनियाँ

सार्वजनिक क्षेत्र में जीवन बीमा की कंपनी

(1) भारतीय जीवन बीमा निगम

निजी क्षेत्र में जीवन बीमा की कंपनी

(1) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया (SBI) जीवन बीमा
(2) मेटलाइफ इंडिया जीवन बीमा
(3) ICICI प्रूडेंसियल जीवन बीमा
(4) बजाज एलाइंज बीमा
(5) मैक्स न्यूयार्क (Max New York) जीवन बीमा
(6) सहारा जीवन बीमा
(7) टाटा AIG बीमा
(8) HDFC Standard बीमा
(9) बिरला Sun बीमा
(10) Kotak जीवन बीमा
(11) Aviva जीवन बीमा
(12) Reliance जीवन बीमा
(13) ING Vysya जीवन बीमा
(14) Shriram जीवन बीमा
(15) Bharti AXA जीवन बीमा कार्पोरेशन लिमिटेड
(16) Future Generali जीवन बीमा कार्पोरेशन लिमिटेड
(17) IDBI Fortis जीवन बीमा
(18) AEGON Religare जीवन बीमा
(19) DLF Pramerica जीवन बीमा
(20) केनरा HSBC ओरिएंटल बैंक ऑफ कॉमर्स जीवन बीमा
(21) India First जीवन बीमा कंपनी लिमिटेड
(22) Star Union Dai-ichi जीवन बीमा कॉर्पोरेशन लिमिटेड
(23) Edelweiss Tokio जीवन बीमा कंपनी लिमिटेड

7.16 Pension Fund Regulatory Development Authority (2011)

पेंशन प्रणाली भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अवकाश ग्रहण करने के बाद लोगों की आर्थिक सुरक्षा पेंशन पर निर्भर करती है। भारत में जो पुरानी पेंशन व्यवस्था थी उससे सार्वजनिक वित्त पर बहुत ज्यादा बोझ पड़ता था क्योंकि पेंशन के लिए पूँजी का प्रावधान सरकार को अपने बजट से करना पड़ता था। हालाँकि सरकार ने 2004 से New Pension Scheme (NPS) लागू किया है। 2011 में सरकार ने एक नया विधेयक National Pension Scheme (NPS) को प्रस्तुत किया है। NPS की इस प्रणाली को आर्थिक दृष्टि से Contributory Pension System भी कहते हैं, जिसका अर्थ है कि अब लोग Pension कोष में योगदान करेंगे, उनका व्यक्तिगत पेंशन खाता होगा और पेंशन खाते में नियोक्ता (Employer) का योगदान होगा।

इस पेंशन Fund की राशि का निवेश किया जाएगा, जिसके लिए Fund Managers होंगे और लोगों को इसके माध्यम से निवेश हेतु विकल्प दिया जाएगा।

निवेश

Govt Bonds	(Corporate Bond)	Equity Bond
(सरकारी ऋण प्रतिभूति)	(निगम ऋण प्रतिभूति)	(शेयर ऋण प्रतिभूति)
सबसे सुरक्षित लेकिन न्यूनतम लाभ	more secure more return	maximum return least secure.

Copyright – Drishti The Vision Foundation

इस नयी NPS प्रणाली में जिस व्यक्ति का पेंशन Account होगा वह उस पर निर्भर करेगा कि वे अपने पेंशन पूँजी का निवेश उपलब्ध तीनों विकल्पों में से किसमें करना चाहता है। जैसे–यदि कोई व्यक्ति अपने पेंशन का 100 प्रतिशत Govt. Bond में निवेश करना चाहता है तो वह इसके लिए स्वतंत्र है लेकिन उसका Return न्यूनतम होगा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि पेंशन की मात्रा इस नयी Scheme के अंतर्गत निश्चित नहीं रहेगी क्योंकि यहाँ व्यक्तिगत स्तर पर निवेश हो रहा है और जितना लाभ आएगा, पेंशन उसी के अनुसार मिलेगा। हालाँकि, इस प्रणाली में अनिश्चितता ज्यादा है लेकिन Return को महत्तम करने का विकल्प भी नियोक्ता (Employer) को मिलता है।

PFRDA (Pension Fund And Regulatory Development Authority) 2004 से ही काम कर रही है जिसका मुख्य कार्य पेंशन से जुड़े विभिन्न विनियमनों को सँभालना है। पेंशन फंड मैनेजर की नियुक्ति का कार्य भी PFRDA का ही है।

निक्षेप-निधि (डिपॉजिटरी) प्रणाली की अवधारणा

निक्षेप-निधि प्रणाली (Depository System) एक ऐसी व्यवस्था है जिसके अन्तर्गत स्वामित्व सम्बन्धी परिवर्तन इलेक्ट्रॉनिक बही प्रविष्टि अन्तरण के द्वारा किया जाता है। इस प्रणाली में प्रतिभूतियों का भौतिक आदान-प्रदान नहीं किया जाता, निक्षेप-निधि के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–

(i) प्रतिभूतियों को सुरक्षित रूप से रखने के लिए उनके निक्षेप स्वीकार करना।

(ii) स्वामित्व के हस्तान्तरण के साक्ष्य के रूप में प्रतिभूतियों को कम्प्यूटराइज्ड बही प्रविष्टि करना।

(iii) बन्धक रखी गई प्रतिभूतियों के विवरण को कम्प्यूटर पर रखना।

विश्व के अलग-अलग देशों में प्रायः निम्नलिखित दो प्रकार की निक्षेप-निधियाँ पाई जाती हैं–

1. **प्रतिभूतियों की भौतिक आदान-प्रदान विहीन निक्षेप-निधि प्रणाली (Securities Immobilisation System of Depository) :** इस प्रणाली के अन्तर्गत प्रतिभूतियों के प्रमाण-पत्र निक्षेप-निधि में सुरक्षित रूप से जमा हो जाते हैं तथा इनका सम्पूर्ण विवरण कम्प्यूटर पर ले लिया जाता है। इसके बाद इन प्रमाण-पत्रों का भौतिक चलन जाम कर दिया जाता है। इन प्रतिभूतियों के भावी क्रय-विक्रय से उत्पन्न स्वामित्व सम्बन्धी परिवर्तन निक्षेप-निधि के इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों में ही किए जाते हैं। कोई भी प्रमाण-पत्र जब एक बार निक्षेप-निधि में जमा कर दिया जाता है, तो उससे सम्बन्धित समस्त कारोबार उस समय तक केवल इलेक्ट्रॉनिक लेखांकन प्रणाली के द्वारा ही किया जा सकता है, जब तक कि वह प्रतिभूति उस निक्षेप-निधि से वापस न निकाल ली जाए।
2. **प्रतिभूति प्रमाण-पत्र विहीन निक्षेप-निधि प्रणाली (Securities Dematerialisation System of Depository) :** इस प्रणाली में प्रतिभूतियों के स्वामित्व के साक्ष्य के रूप में भौतिक रूप से कोई प्रमाण-पत्र आदि नहीं रखा जाता। स्वामित्व सम्बन्धी अभिलेख केवल इलेक्ट्रॉनिक प्रविष्टियों के रूप में कम्प्यूटर पर रखे जाते हैं। इस प्रकार की प्रणाली उस समय परिपक्व मानी जाती है, जब शेयरधारकों को शेयर प्रमाण-पत्र जारी किए जाने की आवश्यकता नहीं रहती। स्वामित्व में परिवर्तन सम्बन्धी प्रविष्टियाँ कम्प्यूटर द्वारा कर ली जाती हैं। इस प्रकार यह प्रणाली पूर्व प्रणाली की तुलना में काफी सस्ती है, किन्तु भारत में निवेशकों की मनोवृत्ति को देखते हुए इस प्रणाली को यकाएक नहीं अपनाया जा सकता। इसके लिए पहले निवेशकों में विश्वास पैदा करना होगा।

भारत में निक्षेप-निधि अथवा डिपॉजिटरी प्रणाली *(Depository System in India)*

भारत में 1992 के शेयर घोटाले के बाद, ऐसे घोटालों की पुनरावृत्ति को रोकने के लिए एक तकनीकी समिति की सिफारिश पर प्रारम्भ में शेयर प्रमाण-पत्रों के भौतिक आदान-प्रदान विहीन निक्षेप निधि प्रणाली को अपनाने का निर्णय लिया गया। डिपॉजिटरी की स्थापना भारतीय शेयर बाजारों के विकास क्रम में एक बड़ी बात है। इसका उद्देश्य प्रतिभूतियों के मालिकाना हक के हिसाब-किताब का रखरखाव और हस्तांतरण इलेक्ट्रॉनिक बहीखाते के रूप में रखना और स्टॉक एक्सचेंजों में मूलपत्र के बिना कारोबार को सम्भव बनाना है, ताकि सौदों के निपटान में कोई जोखिम नहीं हो। भारतीय प्रतिभूति एवं एक्सचेंज बोर्ड (सेबी) ने डिपॉजिटरी अधिनियम, 1996 के अन्तर्गत दो डिपॉजिटरी कम्पनियों-नेशनल सिक्यूरिटीज डिपॉजिटरी लि. (NSDL) और सेन्ट्रल डिपॉजिटरी सर्विसेज इण्डिया लि. को पंजीकृत कर दिया है। शेयरों को डिपॉजिटरी के माध्यम से इलेक्ट्रॉनिक खातों में दर्ज कर उनके कारोबार में मूलपत्र की आवश्यकता समाप्त कर दी गई है। इस प्रक्रिया को शेयरों को डि-मैटीरियलाइज करना कहा जाता है। नौ शेयर बाजारों में प्रतिभूतियों की पत्रहीन यानी डिमैटीरियलाइज्ड खरीद-फरोख्त होने लगी है। प्रतिभूतियों के डिमैटीरियलाइजेशन पर सेबी के कार्यकारी दल की सिफारिशों के आधार पर सभी निवेशकों द्वारा अनिवार्य डिमेट व्यापार के लिए स्क्रिपों की संख्या 31 मार्च, 2000 को 462 से बढ़कर अक्टूबर 2000 के अन्त में 1413 हो गई। 31 मार्च, 2001 तक सभी सक्रिय व्यापारिक स्क्रिपों के सम्बन्ध में डिमेट में अनिवार्य कारोबार हासिल करने का निर्णय किया गया है। राष्ट्रीय प्रतिभूति निक्षेप-निधि (National Security Depository Ltd. – NSDL) तथा केन्द्रीय निक्षेप निधि (Central Depository Security Ltd. – CDSL) द्वारा प्रस्तुत आँकड़ों के अनुसार डिमैटीरियलाइजेशन में काफी प्रगति हुई

Copyright – Drishti The Vision Foundation

है। डिपॉजिटरियों के साथ करार हस्ताक्षरित करने वाली कम्पनियों की संख्या 31 मार्च, 2000 में 1013 से बढ़कर 15 नवम्बर, 2000 को 1790 हो गई। डिपॉजिटरी सेवाओं की पेशकश करने वाले डिपॉजिटरी सेवाओं की पेशकश करने वाले डिपॉजिटरी भागीदारों की संख्या इस अवधि के दौरान 150 से बढ़कर 170 हो गई।

7.17 राउंड-ट्रिपिंग *(Round-Tripping)*

साधारण शब्दों में इसे 'जाने और पुन: वापस लौटने' के व्यवहार के रूप में समझा जा सकता है। Wall Street Journal इसे अदला-बदली के व्यवहार (Barter) के रूप में देखता है, जिसके अंतर्गत एक कंपनी अपने अप्रयुक्त संपत्ति को दूसरी कंपनी को बेचने का समझौता करती है और साथ में यह भी स्वीकार करती है कि भविष्य में वह उसका क्रय कर लेगी और इस प्रकार उसकी संपत्ति उसी को वापस आ जायेगी।

सामान्यत: Round-Tripping का प्रयोग Money Launding और Black-Money के संदर्भ में करते हैं। भारत के संदर्भ में Round-Tripping को इस उदाहरण से समझा जा सकता है कि भारत में जनित काले धन (Black-Money) को भारत में ही फिर से विदेशी निवेश (Foreign Investment) के रूप में वापस लौटा दिया जाय।

कुछ लोगों का यह भी मानना है कि इनके संबंध में ज्यादा चिंता नहीं करनी चाहिए क्योंकि चाहे मुद्रा सफेद हो या काली, देश में निवेश की मात्रा तो बढ़ती ही है। हालाँकि, इस दृष्टिकोण को सही नहीं कहा जा सकता क्योंकि इससे देश में अवांछित महँगाई आने के साथ कई अन्य अस्थिरताएँ पैदा होती हैं।

7.18 भारत में म्यूचुअल फण्ड *(Mutual Fund in India)*

म्यूचुअल फण्ड अथवा साझा कोष में जनसाधारण के निवेश योग्य धन को ऐच्छिक आधार पर एकत्रित करके विनियोग के सर्वोत्तम अवसरों में प्रयुक्त किया जाता है। इसकी स्थापना वित्तीय संस्थानों, बैंकिंग कंपनियों, बीमा कंपनियों या अन्य विशिष्ट संस्थानों द्वारा की जाती है। ये संस्थान स्टॉक का निर्गमन करके जनता से धन एकत्रित करती हैं और उस धन को लाभप्रद परियोजनाओं में विनियोजित करने का प्रयास करती हैं।

अर्थात् साझा कोष एक 'सामूहिक बचत योजना' है जो लघु निवेशकों की बचतों को प्रगतिशील तथा लाभप्रद परियोजनाओं में विनियोजित करती है।

भारत में साझा कोष का आरंभ Unit Trust of India द्वारा 1964 में किया गया। अमरीकन पद्धति पर आधारित इस कोष को 'US-64' के नाम से पुकारा गया। उसके बाद UTI द्वारा 1987 के Open-ended तक योजनाओं के साथ-साथ 'मास्टर शेयर' नामक Close-Ended योजना का संचालन भी शुरू किया गया। इस मास्टर शेयर स्कीम ने अनेक सफलताएँ हासिल कीं। वर्ष 1987 में 'SBI साझा कोष' ने भारतीय साझा कोष उद्योग में प्रवेश किया। जनवरी 1993 में भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (SEBI) के द्वारा जब देश में सर्वप्रथम 'साझा कोष नियामक' जारी किया गया तब भारतीय साझा कोष उद्योग में नवीन युग का अभ्युदय हुआ। हमारे देश में 1993 से पहले सिर्फ सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों द्वारा ही साझा कोष योजनाओं का संचालन होता था लेकिन 1993 के सेबी द्वारा दिए गए दिशा-निर्देशों के अंतर्गत देशी-विदेशी निजी उद्यमियों को भी साझा कोष योजनाओं के संचालन में छूट दी गई। प्रथम निजी साझा कोष की स्थापना 1993 में कोठारी समूह द्वारा की गई। उसके बाद अनेक निजी साझा कोष योजनाएं शुरू हो गईं।

भारतीय रिजर्व बैंक ने विदेशी मुद्रा कोषों में लगातार हो रही वृद्धि को देखते हुए घरेलू म्यूचुअल फंडों को अप्रैल 2008 में विदेश में और अधिक निवेश की अनुमति प्रदान की थी। विदेशों में इस फंड के लिए निवेश की सीमा को 5 अरब डॉलर से बढ़ाकर 7 अरब डॉलर किया गया है।

इण्डियन डिपॉजिटरी रिसीप्टस् (IDR) निर्गमों को सरकार की अनुमति

सरकार ने 2 मार्च, 2004 में दिशा-निर्देश जारी किए हैं कि अब विदेशों में निगमित कंपनियाँ भारतीय पूँजी बाजार से संसाधन जुटाने के लिए Indian Depository Receipts-IDRS जारी कर सकेंगी। इसके तहत् मजबूत पृष्ठभूमि एवं बड़ी विदेशी कंपनियाँ ही भारत में IDR जारी कर सकेंगी तथा इसके लिए इसे 'SEBI' की अनुमति लेनी पड़ती है। इन निर्देशों के अनुसार भारत में IDR जारी करने वाली कंपनियों की चुकता पूँजी व रिजर्व 10 करोड़ से कम नहीं होने चाहिए तथा तीन वित्तीय वर्षों में इसका औसत टर्नओवर 50 करोड़ डॉलर का होना चाहिए। ये तीन वर्ष लगातार तथा निर्गम से पूर्व होने चाहिए और पिछले पाँच वर्षों में IDR जारी करने वाली कम्पनी लगातार लाभ अर्जित कर रही होनी चाहिए तथा प्रत्येक वर्ष में कम-से-कम 10 प्रतिशत का लाभांश घोषित किया हुआ होना चाहिए। भारत में किसी मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज में इसकी सूचीबद्धता (Listing) आवश्यक की गई जबकि निर्गमित IDRs की किसी विदेशी शेयर बाजार में सूचीबद्धता आवश्यक नहीं होगी।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

साझा कोष योजनाओं के प्रकार *(Types of Mutual Fund Schemes)*

(1) **खुला साझा कोष योजनाएँ (Open Ended Schemes)**–इस योजना में यूनिट्स का क्रय और विक्रय वर्ष भर चालू रहता है, इसलिए यूनिट्स का धारक किसी भी समय अपने धन को इच्छानुसार वापस प्राप्त कर सकता है। इसका सर्वोत्तम उदाहरण 'US-64' है। इसके तहत् एक निवेशक प्रतिमाह धन जमा कराने वाली योजना का चयन कर सकता है। और, वह प्रतिमाह आहरण वाली योजना को भी पसंद कर सकता है। इस योजना की एक मुख्य बात यह है कि इसमें एक निवेशक बिना किसी शुल्क के प्रवेश ले सकता है, बाहर आ सकता है तथा उसमें बना रह सकता है।

(2) **बन्द साझा कोष योजनाएँ (Close Ended Schemes)**–इसका संचालन एक निश्चित अवधि (2 से 5 वर्ष) के लिए होता है। इसमें निर्धारित अवधि तक सदस्यों से अंशदान एकत्रित किया जाता है तथा अवधि पूरा होने के बाद यूनिट्स के पूँजी में होने वाली वृद्धि को सदस्यों में बाँट दिया जाता है। जहाँ ये सूचीबद्ध (Listings) होता है, वहीं इसका क्रय-मूल्य उसी स्टॉक-एक्सचेंज में किया जा सकता है। इसका सर्वोत्तम उदाहरण 'केन विकास फण्ड' है।

(3) **आय फण्ड (Income Funds)**–इसमें निवेशकों या सदस्यों को नियमित आय प्राप्त होती है। इससे प्राप्त कोषों को कम जोखिम तथा अच्छी प्रत्याय दर वाली कंपनियों में ही विनियोजित किया जाता है। इस तरह के विनियोजन बॉण्डस्, ऋणपत्र, वाणिज्यिक पत्र, सरकारी प्रतिभूतियों आदि में किया जाता है। आयकोष योजनाओं में विकास कोष योजनाओं की तुलना में आय तथा जोखिम दोनों ही कम होती हैं।

(4) **संतुलित फण्ड (Balanced Funds)**–इस योजना के अन्तर्गत निवेशकों को पूँजी-वृद्धि और नियमित रूप से आय दोनों का लाभ प्राप्त होता है।

(5) **कर-बचत योजनाएँ (Tax Saving Schemes)**–इस योजना से प्राप्त कोषों को प्रायः Public Sector कंपनियों के नवीन निर्गमों में विनियोजित किया जाता है और निवेशकों को कर-बचत की सुविधा भी प्रदान की जाती है। इस योजना के अंतर्गत विकास या पूँजी वृद्धि वाले विकल्पों की सुविधा प्रदान करने वाली योजनाओं का संचालन कर-नीति के आधार पर किया जाता है और इनकी अवधि 10 वर्षों तक होती है। निवेशक चाहे तो 3 वर्ष बाद अपना धन वापस माँग सकते हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–8 (Unit– 8)

मौद्रिक नीति : भाग–1
(Monetary Policy : Part–1)

8.1 रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया *(Reserve Bank of India – RBI)*

8.2 भारतीय रिजर्व बैंक की संरचना *(Structure of Reserve Bank of India)*

- 1949 के बैंकिंग अधिनियम में संशोधन
- बैंकिंग संशोधन अधिनियम, 2011

8.3 रिजर्व बैंक के प्रकार्य *(Function of Reserve Bank of India)*

1. मुद्रा निर्गमन तथा मुद्रा भंडार का प्रबंधन
   - नोटों का निर्गमन
   - भारत में मुद्रा का ऐतिहासिक पक्ष
   - RBI के मानदण्ड
2. सरकारों के बैंकर के रूप में RBI के कार्य
   - नीलामी विक्रय
   - रेपो विनिमय
   - तरलता समायोजन कार्यक्रम

Copyright – Drishti The Vision Foundation

8.1 रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया *(Reserve Bank of India – RBI)*

1 अप्रैल 1935 को भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना हुई, जैसे कि पूर्व की कक्षाओं में बताया जा चुका है कि शाही आयोग की सिफारिश पर ब्रिटिश संसद ने RBI Act 1934 पारित किया, जिसके अनुसार 1 अप्रैल 1935 को RBI का गठन हुआ। RBI पूर्णतः सरकारी संस्था नहीं थी, बल्कि संयुक्त स्वामित्व वाली संस्था थी। यानि कि, कुछ स्वामित्व सरकार के पास तथा ज्यादातर निजी कारोबारियों (Private Industrialists) के पास था। अपने स्वामित्व के आधार पर ही सरकार 'गवर्नर' की नियुक्ति करती थी, जबकि निवेशकों का चयन निजी शेयरधारक (Private Share Holder) करते थे।

A.O. Smith, RBI के पहले गवर्नर थे और कारोबारियों में भारत के बड़े उद्योगपति जैसे श्रीराम आदि थे। भारत स्वतंत्रता अधिनियम 1947 के बाद जब भारत में ब्रिटिश संपत्ति भारतीय संविधान सभा को अंतरित हो गई तब भी RBI पूर्णतः भारत सरकार के अधीन नहीं आ पाया, क्योंकि उसमें निजी शेयरधारकों का हिस्सा था।

भारत सरकार ने RBI को अधिक शक्तिशाली बनाने के लिए 1 जनवरी 1949 को उसका राष्ट्रीयकरण कर दिया और भारतीय बैंकिंग का समन्वित नियमन करने के लिए मार्च 1949 में भारतीय बैंकिंग अधिनियम पारित किया गया। इस कानून के अंतर्गत अनुसूचित बैंकों का निरीक्षण करने के लिए रिजर्व बैंक को अधिकार प्रदान किया गया।

8.2 भारतीय रिजर्व बैंक की संरचना *(Structure of Reserve Bank of India)*

बैंक में सामान्य प्रबंधन एवं निदेशन का कार्य 20 सदस्यों की एक केन्द्रीय टीम द्वारा किया जाता है, जिसमें एक गवर्नर, चार डिप्टी गवर्नर तथा एक वित्त मंत्रालय द्वारा नियुक्त सरकारी अधिकारी और भारत सरकार द्वारा नामजद दस ऐसे विद्वान होते हैं, जो देश के आर्थिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा 4 निदेशक स्थानीय बोर्डों (Local Boards) का प्रतिनिधित्व करने के लिए केंद्र सरकार द्वारा नामजद किये जाते हैं।

केन्द्रीय बोर्ड के अतिरिक्त RBI के 4 स्थानीय बोर्ड भी हैं, जिनके मुख्य कार्यालय मुंबई, कलकत्ता, चेन्नई एवं नई दिल्ली में स्थित हैं। स्थानीय बोर्ड में 5 सदस्य होते हैं, जो केंद्र सरकार द्वारा 4 वर्ष की अवधि के लिए नियुक्त किए जाते हैं। रिजर्व बैंक का मुख्यालय मुंबई में है तथा वर्तमान में डॉ० डी. सुब्बाराव रिजर्व बैंक के गवर्नर हैं।

1949 के बैंकिंग अधिनियम में संशोधन

1949 के बैंकिंग नियमन अधिनियम (Banking Regulation Act) में संशोधन के लिए एक विधेयक 2003 में लोकसभा में प्रस्तुत किया गया। "बैंकिंग नियमन (संशोधन) अन्य प्रावधान विधेयक-2003" नामक इस विधेयक के कानून के रूप में परिवर्तित होने से भारतीय रिजर्व बैंक के नियमन की शक्तियों में वृद्धि हुई है।

बैंकिंग संशोधन अधिनियम, 2011

मार्च 2011 में वित्तमंत्री प्रणव मुखर्जी द्वारा बैंकिंग कानून (संशोधन) विधेयक, 2011 नामक संशोधन विधेयक प्रस्तुत किया गया।

एक ओर जहाँ इस संशोधन विधेयक द्वारा बैंकिंग नियमन अधिनियम, 1949 और बैंकिंग कंपनीज (एक्विजिशन एण्ड ट्रांसफर ऑफ अंडरटेकिंग) 1970 व 1980 में संशोधन प्रस्तावित है, वहीं दूसरी ओर इस विधेयक द्वारा बैंकिंग क्षेत्र में निजी निवेश को बढ़ावा देने के आशय से निम्नलिखित प्रावधान प्रस्तावित हैं-

- बैंकिंग क्षेत्र में निजी निवेश को प्रोत्साहन तथा बैंकों को शेयर पूंजी जुटाने के संबंध में अधिक स्वतंत्रता देने के लिए उपबंध बनाना।
- राष्ट्रीयकृत बैंकों में निजी निवेश को बढ़ाने के लिए शेयर धारकों के मताधिकार की वर्तमान सीमा को 1 प्रतिशत से बढ़ाकर 10 प्रतिशत करना।
- निजी क्षेत्र के बैंकों में शेयर धारकों के लिए 10 प्रतिशत की मताधिकार सीमा को समाप्त करना, क्योंकि इस विधेयक के कानून बनने के साथ ही निजी क्षेत्र के बैंकों के संबंध में शेयर धारकों (Share Holders) का मताधिकार उनकी शेयरधारिता (Shareholding) पर निर्भर करेगा।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

8.3 रिजर्व बैंक के प्रकार्य

RBI के प्रकार्य

- परंपरागत प्रकार्य
  - मुद्रा निर्गमन तथा मुद्रा भंडार का प्रबंधन
  - सरकारों (केंद्र तथा राज्य) के बैंक का कार्य
  - बैंक एवं अन्य वित्त संस्थाओं के बैंकर का कार्य
  - वित्त बाजार का विनियमन
  - विदेशी विनिमय बाजार का विनियमन
  - मौद्रिक एवं वित्तीय तथ्यों का संग्रह, विश्लेषण एवं प्रकाशन
- विकासपरक प्रकार्य
  - वित्त प्रणाली का विस्तार एवं आधुनिकीकरण
  - वित्तीय नवाचार को प्रोत्साहित करना
  - विकास की मुख्य धारा से वंचित सामाजिक समूहों, उत्पादन क्षेत्रों एवं अंचलों के लिए विशिष्ट या लक्षित कार्यक्रम बनाना एवं उन्हें लागू करवाना।

अब हम एक-एक कर के रिजर्व बैंक के परम्परागत प्रकार्यों की विस्तृत चर्चा करेंगे-

1. मुद्रा निर्गमन तथा मुद्रा भंडार का प्रबंधन

नोटों का निर्गमन

एक रुपये तक के नोटों/सिक्कों को छोड़कर भारत में शेष विभिन्न मूल्य वर्ग (Various Denominations) के नोटों/सिक्कों को निर्गत करने का अधिकार भारतीय रिजर्व बैंक (Reserve Bank of India – RBI) को प्राप्त है। साथ ही भारत सरकार के प्रतिनिधि के रूप में एक रुपये तथा उससे कम मूल्य के सिक्कों तथा एक रुपये के नोटों के देशभर में वितरण का कार्य भी रिजर्व बैंक ही करता है। वर्तमान समय में भारतीय रिजर्व बैंक करेंसी नोटों को जारी करने के लिए बैंक नोटों के प्रचलन की न्यूनतम आरक्षित निधि पद्धति (Minimum Reserve System – MRS) का अनुसरण करता है।

भारत में मुद्रा का ऐतिहासिक पक्ष

भारत में सबसे पहली मुद्रा 'आहत' मानी जाती है (व्यापारिक संगठन अपने Logo मुद्रा पर अंकित करते थे, जो आहत कहलाता था)। हालाँकि राज्य प्रायोजित मुद्रा की शुरूआत 'पण' से हुई। भारत में स्वर्ण मुद्रा की शुरूआत हिन्द यवणों ने की, लेकिन प्राचीन काल की सबसे संश्लिष्ट मुद्रा प्रणाली गुप्तकाल में शुरू हुई और गुप्तकाल से ही स्वर्ण मुद्राओं को 'दीनार' कहा जाने लगा। इस समय चाँदी की मुद्राओं को 'रूपक' कहा जाता था।

चूँकि गुप्तकाल से भारत का व्यापार हिन्द महासागर के इर्द-गिर्द फैल गया था, अतः माना जाता है कि भारत की मुद्रा (रुपया) का नाम इसी से व्युत्पन्न है। उस समय ताँबे की मुद्रा का भी प्रचलन था, जिसे 'कार्षापण' कहा जाता था। इन सभी मुद्राओं में एक चीज जो समान थी, वह था इनका पूर्णकाय मुद्रा होना।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

बनावट और क्रय शक्ति के आधार पर मुद्रा दो प्रकार की होती है-

पूर्णकाय मुद्रा (Full Bodied Money)	सांकेतिक मुद्रा (Indicative Money) /Token Money
जिस मुद्रा का पदार्थ मूल्य उसके अंकित मूल्य के बराबर हो उसे पूर्णकाय मुद्रा कहते हैं।	जिस मुद्रा का पदार्थ मूल्य उसके अंकित मूल्य का संकेत मात्र हो उसे सांकेतिक मुद्रा कहते हैं।

ध्यातव्य है कि सांकेतिक मुद्रा की सफलता के लिए एक धारणीय सामाजिक सहमति का होना आवश्यक है। यह समस्या पूर्णकाय मुद्राओं के साथ नहीं थी, क्योंकि धातुओं का मूल्य मुद्राओं के बराबर हुआ करता था। भारत में सांकेतिक मुद्रा की शुरूआत सबसे पहले मुहम्मद बिन तुगलक ने 1326 में शुरू कर 1327 से लागू किया। हालाँकि उनका यह प्रयास असफल रहा और 1332 तक आते-आते इसे वापस ले लिया गया था।

समाज में विनिमय के माध्यम के रूप में मुद्रा की स्वीकृति के आधार पर मुद्रा दो प्रकार की होती है:

मुद्रा की स्वीकृति के आधार पर

भरोसा आधारित मुद्रा (Fuduciary Money)	विधिक मुद्रा (Fiat Money)

मुद्रा की क्रय शक्ति (Purchasing Power of Money): इकाई मुद्रा जितनी मात्रा में किसी वस्तु विशेष या पदार्थ विशेष का क्रय कर सकती है, उसे मात्रा को मुद्रा की क्रय शक्ति कहते हैं।

क्रय शक्ति (Purchasing Power)

घरेलू क्रय शक्ति (Domestic Purchasing Power)	अंतर्राष्ट्रीय क्रय शक्ति (International Purchasing Power)
देश की घरेलू सीमा के अंदर वस्तुओं के क्रय करने की शक्ति घरेलू क्रय शक्ति (Domestic Purchasing Power) कहलाती है।	विदेशी बाजार में वस्तुओं के क्रय करने की शक्ति अंतर्राष्ट्रीय क्रय शक्ति (International Purchasing Power) कहलाती है।

इसे इस प्रकार समझा जा सकता है कि ग्राहक यदि एक रुपये में बाजार से 1 कि.ग्रा. टमाटर खरीद पा रहे हैं, तो मुद्रा की क्रय शक्ति 1 कि.ग्रा. टमाटर है। अब यदि ग्राहक एक रुपये में ½ कि.ग्रा. टमाटर ही खरीद पायेंगे तो यहाँ मुद्रा की क्रय शक्ति ½ कि.ग्रा. टमाटर होगी। घरेलू तथा अंतर्राष्ट्रीय संदर्भों में विभिन्न वस्तुओं की औसत मात्रा निकाल कर क्रय शक्ति निर्धारित की जाती है।

$$\text{कीमत} \propto \frac{1}{\text{क्रय शक्ति}}$$

यदि आपके खाते में ₹ 1 लाख जमा है और वस्तुओं की कीमत दोगुनी हो गई है, तो एक लाख का मूल्य भी आधा हो जायेगा। पूर्णकाय मुद्रा की बाह्य क्रय शक्ति और वास्तविक क्रय शक्ति बराबर होती है, लेकिन सांकेतिक मुद्रा के प्रबंधन के लिए आवश्यक है कि उसका भरोसा मूल्य अक्षुण्ण रहे। जिसके लिए कीमत स्तर में स्थायित्व बने रहना आवश्यक है। मुद्रा का भरोसा मूल्य जैसे-जैसे गिरता है लोग मुद्रा भंडार को स्वर्ण भंडार, जमीन भंडार, मकान, तेल भंडार जैसी किसी भी वस्तु में रूपांतरित करने लग जाते हैं, ताकि उनकी संपत्ति का मूल्य अक्षुण्ण बना रहे।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

जिस तरीके के भंडार में मुद्रा का निवेश किया जायेगा उसके मूल्य में वृद्धि होगी। जैसे-

(i) यदि अनाज में मुद्रा का निवेश करेंगे, तो अनाज की कीमत बढ़ेगी।

(ii) यदि मकान में मुद्रा का निवेश करेंगे, तो मकान की कीमत बढ़ेगी।

(iii) यदि जमीन में मुद्रा का निवेश करेंगे, तो जमीन की कीमत बढ़ेगी।

मुद्रा में भरोसा↓ ⟶ मुद्रा भंडार↓ ⟶ स्वर्ण भंडार ↑ / तेल भंडार ↑ / अनाज भंडार ↑

RBI के लिए अपनी मुद्रा का भरोसा मूल्य बनाये रखना एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। यदि समाज में मुद्रा की स्वीकृति कानून के भय के कारण है तो ऐसी मुद्रा को विधिक मुद्रा (Fiat Money) कहते हैं और यदि समाज में मुद्रा की स्वीकृति संप्रभु या मुद्रा प्राधिकारी के प्रति श्रद्धा या भरोसे के कारण हो, तो इसे भरोसा आधारित मुद्रा (Fiduciary Money) कहते हैं। मुद्रा के अबाध प्रचलन के लिए मुद्रा को भरोसा आधारित तथा विधिक दोनों होना चाहिए।

भारत की मुद्रा प्रथमतः विधिक मुद्रा है, लेकिन साथ-साथ यह भरोसा मुद्रा भी है। हालांकि, अभी भी भारत के कई गाँवों में भारतीय मुद्रा पर भरोसा नहीं किया जाता।

सामान्यतः सांकेतिक मुद्रा को अचानक से स्वीकार करना कठिन होता है। यूरोप में भी सांकेतिक मुद्रा को प्रचलन में लाने में काफी समय लग गया था।

स्वर्णमान पद्धति (Gold Standard) के अनुसार मुद्रा का स्वरूप:

मैं, धारक को ₹100 मूल्य का स्वर्ण देने का वादा करता/ती हूँ।	स्वर्णमान पद्धति (Gold Standard)

यदि सांकेतिक मुद्रा पर अंकित मूल्य के बराबर स्वर्ण देने का धारक को आश्वासन हो, तो यह पद्धति स्वर्णमान पद्धति कहलाती है और इस प्रकार यह सांकेतिक मुद्रा एक निश्चित मात्रा में स्वर्ण का प्रतिनिधित्व करती है। स्वर्णमान पद्धति के अनुसार मुद्रा प्राधिकारी अपने पास स्वर्ण भंडार रखता है, ताकि लोगों का भरोसा सांकेतिक मुद्रा में बना रहे।

लेकिन यदि देश वाणिज्यिक क्रांति से गुजर रहा हो, जैसा कि यूरोपियन देशों के साथ हो रहा था, वहाँ मुद्रा की खपत बढ़ने लगी और स्वर्णमान पद्धति के तहत अधिक मुद्रा की आपूर्ति के लिए स्वर्ण भंडार को बढ़ाना आवश्यक हो गया, चूँकि ऐसी क्रांतियाँ दुनिया के कई देशों में एक साथ हुई, अतः सभी देशों में स्वर्ण की माँग बढ़ी और स्वर्णमान मुद्रा को मानक बनाकर रखना मुश्किल हो गया। ये पूरी घटना 19वीं शताब्दी में हुई।

रजत मानक के अनुसार मुद्रा का स्वरूप:

मैं, धारक को 60 रुपये के मूल्य का रजत देने का वादा करता/ती हूँ।	रजत पद्धति (Silver Standard)

आनुपातिक धातुमान (Proportional Metallic Value): अंकित मूल्य के एक निश्चित अंश के बराबर यदि मुद्रा देने का वादा किया जाये, तो इसे आनुपातिक धातुमान (Proportional Metallic Standard) कहते हैं।

जाहिर है आनुपातिक धातुमान में लोगों का भरोसा कम हुआ क्योंकि पहले की मुद्राएँ पूर्णकाय थी और जिनकी क्रय शक्ति वास्तविक क्रय शक्ति के बराबर थी, लेकिन आनुपातिक धातुमान (Proportional Metallic Standard) में यह वास्तविक से कम थी।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

आनुपातिक धातुमान पद्धति के अनुसार मुद्रा का स्वरूप:

मैं, धारक को 60 रुपये के मूल्य का धातुमान देने का वादा करता/ती हूँ। 100 रुपये	धातुमान पद्धति (Proportional Metallic Standard)

न्यूनतम आरक्षित मान (Minimum Reserve Standard): यह भारत में 1957 में अपनाया गया, जिसे कागजी मुद्रा मान (Paper Standard) भी कहते हैं। यहाँ पुरानी कागजी मुद्रा के स्थान पर नई कागजी मुद्रा देने का वादा किया जाता है। अब यही पद्धति दुनिया के विभिन्न देशों में प्रचलित है और इस मुद्रा के प्रचलन के लिए अपेक्षित है कि देश की जनता का मुद्रा प्राधिकारी के प्रति भरोसा हो।

न्यूनतम धातुमान पद्धति के अनुसार मुद्रा का स्वरूप:

RBI अपने भंडार में ₹ 200 करोड़ का सोना या डॉलर रखने के लिए वचनबद्ध है और इस आधार पर RBI मुद्रा जारी करने का अधिकार अपने पास रखता है। विधि के अनुसार RBI को ₹1 से अधिक की मुद्रा जारी करने का अधिकार है। ₹ 1 तक की मुद्रा जारी करने का अधिकार वित्त मंत्रालय को है।

RBI के मानदंड:

यदि माना जाए कि, मुद्रा की उपलब्ध इकाई = 100
वस्तु की उपलब्ध इकाई = 100

अब यदि माना जाए कि मुद्रा का विनिमय वर्ष में 1 बार होता है:

$$\text{तो, कीमत} = \frac{1\,\text{मुद्रा}}{1\,\text{वस्तु}} = \frac{\text{मुद्रा}:100}{\text{वस्तु}:100}$$

वस्तु की कीमत (Cost of Good): वस्तु की इकाई मात्रा के विनिमय के लिए वांछित मुद्रा राशि (मात्रा) को वस्तु की कीमत कहते हैं।

यदि वस्तु के उत्पादन में वृद्धि के कारण वस्तु की मात्रा 110 इकाई हो, लेकिन मुद्रा की मात्रा 100 इकाई ही बनी रहे, तो कीमत स्तर में गिरावट आएगी और यह अवस्फीति (Deflation) की स्थिति होती है।

अवस्फीति के कारण उत्पादन हतोत्साहित होता है और उत्पादन हतोत्साहित होने से उत्पादकों की आय में कमी आती है, जिससे उपभोग करने की क्षमता में गिरावट आती है, और इस प्रकार Spiral down Pressure का निर्माण होता है। अतः इससे बचने के लिए मुद्रा में भी 10 इकाई की वृद्धि करना आवश्यक होगा।

पुनः यदि देश की संवृद्धि दर आठ प्रतिशत हो तो मुद्रा की वृद्धि दर भी 8% प्रतिशत होनी चाहिए, ताकि मुद्रा का भरोसा मूल्य बना रहे।

हम पहले **फिलिप्स वक्र** के अध्ययन में यह पढ़ चुके हैं कि विकासशील देशों में महँगाई की दर अपेक्षाकृत अधिक होती है और हम यह भी जानते हैं कि वांछित महँगाई दर (Inflation Rate) 4 से 5 प्रतिशत होनी चाहिए। अतः इस वांछित महँगाई दर को बनाए रखने के लिए 5 इकाई अतिरिक्त मुद्रा की आवश्यकता होगी। ऊपर के विवरण से स्पष्ट है कि वांछित महँगाई दर (5%) और वांछित संवृद्धि दर (8%) दोनों को बनाए रखने के लिए मुद्रा के मूल्य में 8+5=13 इकाई की वृद्धि करनी होगी।

क्योंकि, भारत गाँवों का देश है, जहाँ अभी भी वस्तु विनिमय प्रणाली प्रचलित है और RBI का मानना है कि इस वस्तु विनिमय प्रणाली को मौद्रिक विनिमय प्रणाली में रूपान्तरित करने की प्रक्रिया में 4% अतिरिक्त मुद्रा की आवश्यकता होगी। इस प्रकार वांछित महँगाई दर, वांछित संवृद्धि दर और मौद्रिकरण के दर को मिलाकर मुद्रा में 8+5+4=17 इकाई की वृद्धि करनी होगी। इस प्रकार RBI का कार्य मुद्रा के भण्डार में अनुशासित रूप से वृद्धि करना है।

यदि आर्थिक संवृद्धि अपेक्षा से कम हो तो वास्तविक मुद्रा भण्डार वांछित से ज्यादा हो जाएगा और महँगाई बढ़ेगी। कभी-कभी विदेशी मुद्रा की आवक अचानक से बढ़ जाती है और उसके विनिमय की प्रक्रिया में बाजार में रुपया भी बढ़ जाता है, जिससे महँगाई

Copyright – Drishti The Vision Foundation

की दर बढ़ जाती है। पुन: यदि विदेशी मुद्रा का बाह्य प्रभाव बढ़ता है तो रुपया RBI के पास वापस आने लगता है। बाजार में रुपये के कम होने के कारण महँगाई की दर कम होती है। इस प्रकार RBI का काम विभिन्न स्थितियों में मुद्रा का विनियमन करना है।

2. सरकारों के बैंकर के रूप में RBI के कार्य

नोट निर्गमन के अलावा भारतीय रिजर्व बैंक का दूसरा सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य सरकार के बैंकर, सलाहकार तथा एजेंट का कार्य करना है, जिसके तहत रिजर्व बैंक जहाँ एक ओर केंद्र तथा राज्य सरकारों के समस्त बैंकिंग संबंधी कार्यों को सम्पन्न करता है, वहीं दूसरी ओर यह सरकार को आर्थिक तथा मौद्रिक नीति के संबंध में परामर्श भी देता है और साथ ही, सरकार के लिए सार्वजनिक ऋण की भी व्यवस्था रिजर्व बैंक ही करता है।

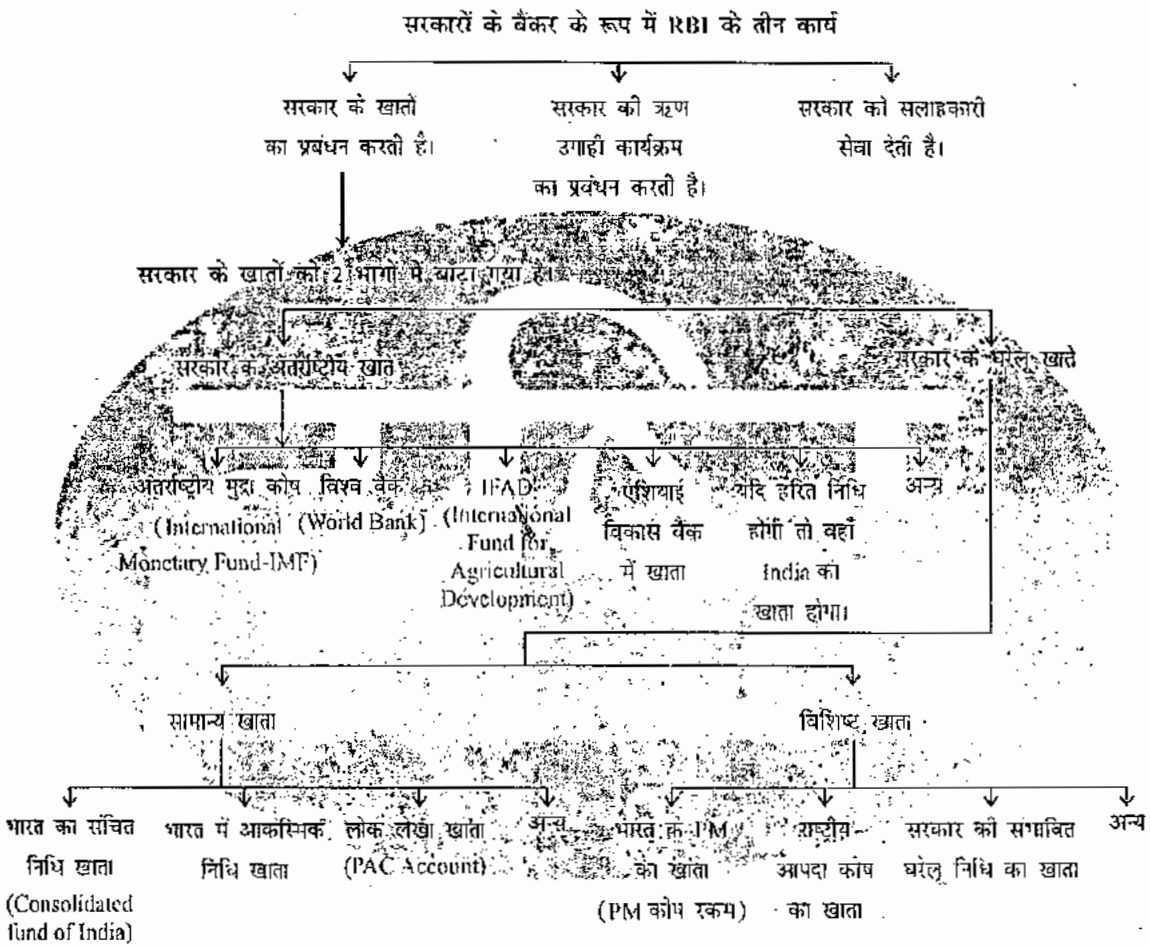

इन सभी खातों का Statement बनाकर RBI, वित्त मंत्रालय को देता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

RBI राज्य तथा केन्द्र सरकार की प्रतिभूतियों का विक्रय करके पैसे सरकार के खाते में डालता है और वित्त बाजार का विनियमन (Regulation) करता है। RBI प्रतिभूतियों (Securities) के रूप में प्रमाण-पत्र अथवा दस्तावेज का विक्रय कर वित्त उगाही इस प्रकार से करता है।

- प्रतिभूति
  - शेयर/अंश प्रतिभूति (Share Security)
  - ऋण प्रतिभूति (Debt Security)
    - कारोबारी ऋण प्रतिभूति (Commercial Debt Security)
      - कारोबारी हुंडी (Commercial Bill of Exchange)
      - कारोबारी बॉण्ड (Commercial Bond)
    - सरकारी ऋण प्रतिभूति (Govt./Treasury Debt Security)
      - सरकारी हुंडी (Treasury Bill of Exchange)
      - सरकारी बॉण्ड (Treasury Bond)

RBI सरकारी प्रतिभूतियों का विक्रय कर पैसे सरकार के खाते में डालता है।

यह कार्य RBI तीन प्रकार से करता है

- नीलामी विक्रय
- Repo विनिमय
- खुले बाजार की क्रियाएँ (OMO's)

नीलामी विक्रय

बोली लगाकर कीमत निर्धारण और विक्रय की प्रक्रिया को नीलामी (Auction) कहते हैं। RBI नीलामी का कार्य करता है। यदि RBI को हुण्डी की नीलामी करनी होती है तो वह सारे सम्भाव्य क्रेताओं को कार्यालय (Office) में बुलाता है और बोली लगाने का आवेदन करता है। बोली लगाने के लिए जो न्यूनतम कीमत आरक्षित होती है, उसे आरक्षित कीमत (Reserved Price) कहते हैं। सबसे ऊँची कीमत पर बोली लगाने वाले को हुण्डी का विक्रय किया जाता है, बॉण्ड क्रेता को बॉण्ड के सम्बन्ध में चीजों की जानकारी होनी चाहिए।

(i) अंकित मूल्य (Face Value)

(ii) कूपन दर (Coupon Rate)

(iii) परिपक्वता अवधि (Maturity Period)

बॉण्ड के नीलामी के लिए आरक्षित कीमत (Reserved Price), अंकित मूल्य (Face Value) के बराबर होगा। बॉण्ड के विक्रय में भी जो उच्चतम बोली लगाता है उसे बॉण्ड का विक्रय किया जाता है। साधारणतः ऐसा देखा जाता है कि जैसे-जैसे बाजार में ब्याज की दर गिरती जाती है, बॉण्ड की कीमत बढ़ने लगती है।

रेपो विनिमय *(Repurchase Option)*

1994 से पुनर्क्रय विकल्प/रेपो विनिमय की शुरूआत हुई, जिसके तहत 2 प्रकार के विनिमय होते हैं-

- Repo ऋण का विनिमय
- प्रतिलोम Repo ऋण का विनिमय

1. **Repo ऋण का विनिमय** : RBI द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों के आधार पर दिया गया ऐसा ऋण जिसे वे एक निश्चित दिनों की अवधि में वापस लेने का अधिकार सुरक्षित रखें या पुनर्क्रय करने का अधिकार सुरक्षित रखें, रेपो ऋण कहलाता है।

Copyright - Drishti The Vision Foundation

रेपो विनिमय के लिए सरकारी प्रतिभूति को ही Collateral Rate (CR) की तरह इस्तेमाल किया जाता है और RBI जिस दर से इस ऋण पर ब्याज देती है, उसे रेपो रेट कहते हैं।

2. **Reverse Repo ऋण का विनिमय :** सरकारी प्रतिभूतियों के धरोहर के आधार पर RBI द्वारा लिया गया ऐसा ऋण जिसे वह निर्धारित दिनों के अन्दर वापस लौटाने का अधिकार सुरक्षित रखे Reverse Repo Loan कहलाता है।
RBI जिस दर से ऋण पर ब्याज देता है उसे **Reverse Repo Rate** कहते हैं।
सामान्य परिस्थितियों में इन ऋणों का समय अन्तराल 3 से 14 दिनों का होता है।

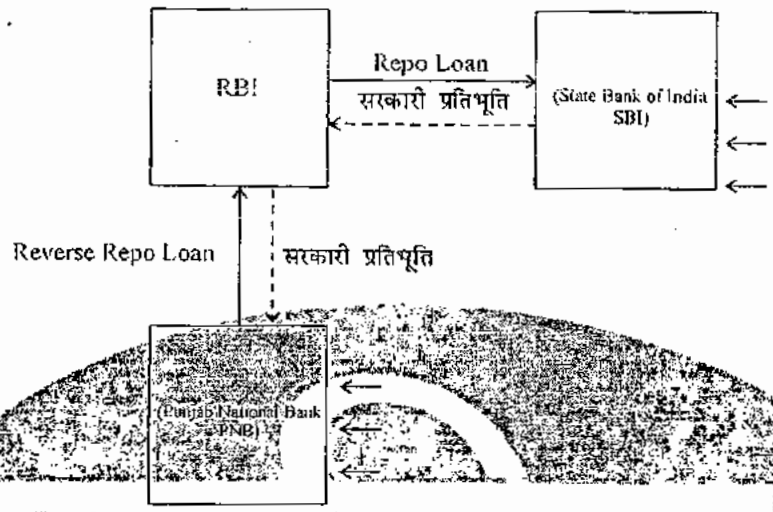

ऐसा संभव है कि कभी PNB का पैसा निष्क्रिय रह जाए अत: ऐसी स्थिति में Reverse Repo loan की सहायता से RBI, PNB से ऋण ले ले और बदले में RBI अपना सरकारी प्रतिभूति PNB के पास रखे। स्पष्ट है कि PNB के लिए अच्छी स्थिति वह होगी जिसमें वह अपने निष्क्रिय पैसे पर RBI को Reverse Repo Rate पर ऋण देकर कुछ ब्याज प्राप्त करे।

इसी प्रकार संभव है कि SBI के पास ऋण का अभाव हो। अत: RBI, Repo Rate की दर पर SBI को ऋण दे दे, जिसके बदले में SBI सरकारी प्रतिभूति RBI को देगा।

कई बार बैंकों के पास पैसा निष्क्रिय पड़ा रहता है और उनकी परिसंपत्ति पर निष्क्रियता का दबाव बना रहता है। इन नकद आधिक्य वाले बैंकों के लिए अपनी पूंजी को विपादक परिसंपत्ति में रूपान्तरित करने का अवसर Reverse Repo से मिलता है।

इसी प्रकार जिन बैंकों के पास नगद उगाही कम होती है या ऋण वितरण की मात्रा अधिक होती है, वे नगद अभाव की समस्या से ग्रस्त हो जाते हैं, ऐसे में Repo ऋण सेवा से उन्हें अपने कारोबार को गतिशील बनाए रखने में मदद मिलती है। उदाहरणस्वरूप, यदि टाटा को पैसे की आवश्यकता हो और वे SBI से ऋण लेना चाहते हैं और SBI के पास उतना नकद उपलब्ध न हो तो SBI के लिए उचित विकल्प है कि वे एक अच्छे ग्राहक को खोने की बजाय RBI से ऋण ले ले। Repo विनिमय से बैंकों को अपना कारोबार बढ़ाने में मदद मिलती है, इस प्रकार यह बैंक व्यवस्था बैंकिंग उद्योग के लिए अत्यधिक कारगर है।

इस व्यवस्था से बैंकों को RBI से यह आश्वासन मिल जाता है कि वे अपनी इच्छानुसार RBI से प्रतिभूतियों के आधार पर ऋण ले सकते हैं और इस कारण विभिन्न बैंक प्रतिभूतियाँ भी अधिक खरीदते हैं।

Repo विनिमय से सरकारी प्रतिभूतियों में तरलता बढ़ती है, इसीलिए प्रतिभूतियों के नीलामी के समय इसके क्रेता खुलकर प्रतिभूतियों का क्रय करते हैं और इस प्रकार प्रतिभूतियों का विक्रय पहले से काफी बढ़ जाता है, अर्थात् ऋण उगाही का कार्य सरकार के लिए आसान हो जाता है।

Repo व्यवस्था से सरकार द्वारा जारी किये गए हुण्डी (Bill of Exchange) को खरीदने में ग्राहक बोली ज्यादा लगायेंगे और सरकार पर ब्याज का भार कम होगा। निवेश बढ़ने से प्रतिभूतियों का मूल्य बढ़ता है जिसके कारण सरकार पर ऋण का बोझ कम होता है। इस प्रकार सरकार को इस व्यवस्था से दोहरा फायदा होता है क्योंकि सरकार की प्रतिभूतियों की बिक्री बढ़ती है और साथ ही ऋण का बोझ भी कम होता है। इन पैसों से सरकार नरेगा, NRHM आदि कल्याणकारी कार्यक्रमों में प्रगति कर सकती है और इस पूंजी का विवेकपूर्ण प्रयोग कर गरीबों को फायदा पहुँचा सकती है। यदि RBI का नीलामी कार्य सफल होगा तो RBI की साख भी मजबूत होगी और इस प्रकार RBI अपनी प्रतिभूति नीलामी का कार्य अधिक कारगर तरीके से कर पायेगी।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

1996 तक सरकारी प्रतिभूतियों का बाजार में पूर्ण विक्रय नहीं हो पाता था, इसलिए RBI को कुछ सरकारी प्रतिभूतियाँ मजबूरन खरीदनी पड़ती थी और इस कार्य के लिए RBI को अतिरिक्त मुद्रा जारी करनी पड़ती थी। बाजार में तरलता बढ़ने से देश में मंहगाई बढ़ती थी। अब बाजार में ही प्रतिभूति के पूर्ण विक्रय के कारण RBI को सरकारी प्रतिभूति नहीं खरीदनी पड़ती और इस कारण RBI के मुद्रा निर्गमन का कार्य अधिक अनुशासित हो पाया है और सरकार को इससे मँहगाई कम करने में मदद मिली है।

जितने मूल्य की प्रतिभूतियाँ RBI खरीद लिया करती थी, यानि की जितना ऋण RBI, सरकार को दिया करती थी उसे बजट घाटा (Budget Deficit) कहते थे जो 1998 से शून्य (0) हो गया है और इससे बजट की गुणवत्ता में भी सुधार हुआ है और इस प्रकार Repo विनिमय से बजट में सुधार करने में भी मदद मिली है।

1997 में भारत के वित्त मंत्री और RBI के गवर्नर ने अपनी समझ का एक समझौता Memorandum of Understanding – MOU किया, कि अगले वर्ष से यानि कि 1998 से न तो RBI सरकार को ऋण देगी, न वित्त मंत्रालय ऋण माँगेगा।

यदि थोड़े समय के लिए नगद राशि की समस्या आती है तो RBI सरकार को अग्रिम देगा, जिसे अर्थोपाय अग्रम (Ways And Means Advance-WMA) कहते हैं। प्रतिवर्ष WMA की अधिकतम सीमा तय की जाती है और उसे पुनः दो छमाही हिस्सों में बाँटा जाता है। यदि सरकार इस सीमा तक अग्रिम लेती है तो उस पर कोई ब्याज नहीं लगता। यदि सरकार सीमा से अधिक राशि लेती है तो अतिरिक्त राशि पर ब्याज लगता है, जिसकी दर बैंक दर (Bank Rate) के बराबर होती है। यह सुविधा केन्द्र और राज्य दोनों सरकारों के लिए है अर्थात् Repo विनिमय से केन्द्र और राज्य दोनों सरकारों को वित्त प्रबंधन में मदद मिलती है।

इस प्रकार नीलामी में यदि विभिन्न बैंक स्वेच्छा से ही प्रतिभूतियों में ज्यादा पैसा लगाने को राजी हो जाए तो सरकार SLR का मान धीरे-धीरे कम कर सकती है। जैसे-जैसे सरकारी प्रतिभूतियों की लोकप्रियता बढ़ती है, RBI SLR की दर को कम करता है जिसका साक्षात प्रमाण 1991 में SLR की दर को 38.5% से घटाकर 24% करना है, यदि सरकारी प्रतिभूतियों की बिक्री पहले ही कर दी जाए और फिर SLR का मान कम किया जाए तो सरकार को नुकसान भी नहीं होगा और बैंकों की स्वायत्तता बढ़ेगी।

सरकार इन पैसों का प्रयोग कूटनीतिक संबंधों को सुधारने में भी कर सकती है। सरकार ने अपनी बढ़ती वित्तीय शक्ति का प्रयोग करते हुए Gujral Doctrine अपनाया है अर्थात् मित्र देशों की सहायता की है। इसलिए भारत की अंतर्राष्ट्रीय साख में सुधार होता जा रहा है।

तरलता समायोजन कार्यक्रम *(Liquidity Adjustment Facility Programme)*

जिस कार्यक्रम के एक तहत RBI को प्रतिभूतियाँ दी गई ताकि वो अतिरिक्त तरलता का अवशोषण कर सके उसे LAF कार्यक्रम कहते हैं और इस कार्यक्रम के चलते Repo विनिमय का महत्व और ज्यादा बढ़ गया है।

यदि तरलता का आधिक्य होगा तो RBI प्रतिभूति बेचेगी और यदि तरलता का अभाव होगा तो RBI ने जिस तरलता को अवशोषित कर रखा था उसे बाजार में डालेगी।

LAF की भूमिका व महत्व (Role and importance of LAF)

रिजर्व बैंक के अनुसार, बाजार स्थिरीकरण में LAF महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जो निम्नलिखित है-

- LAF से नियमित तरलता चक्रों को स्थिर किया जा सकता है तथा बैंक हर पखवारे (Fortnight) में तरलता का नियमन अपनी औसत आवश्यकताओं के अनुरूप कर सकता है। इसके अलावा LAF के माध्यम से महीने के आरंभ में वेतनखातों से भारी निकासी के कारण एवं महीने के अंत में व्यावसायिक चालू खातों में बिक्री-उपरांत वृद्धि के कारण पैदा हुए असंतुलन को दूर करने में सहायता मिलती है।
- प्रत्येक तिमाही के बाद अग्रिम कर भुगतान के माध्यम से और मार्च के अंत तक कर भुगतान के माध्यम से तरलता में जो कमी आती है, उसकी भरपाई LAF के द्वारा की जाती है। अप्रैल के आरंभ में जब सरकार अपने Borrowing Programmes को शुरू करने के लिये बड़े पैमाने पर अर्थोपाय ऋण (Ways and Means Advances) का सहारा लेती है तो LAF के माध्यम से तरलता को कम किया जाता है।
- बहिर्प्रवाहों तथा ऋण अदायगी से सरकारी नीलामी के कारण अंतर्प्रवाहों के बीच कुछ समयांतर होने से पैदा हुए अस्थायी असंतुलन का निदान LAF की सहायता से किया जाता है।
- विदेशी मुद्रा में आकस्मिक पूंजी बहिर्प्रवाहों के कारण जो अनिश्चितता की स्थिति उत्पन्न हो सकती है, के संदर्भ में वित्तीय बाजारों में सुव्यवस्थित स्थिति बनाए रखने में LAF ने प्रभावी भूमिका निभाई है।
- LAF निजी स्थानन (Private Placement) के माध्यम से सरकार को फंड उपलब्ध करवा कर तथा आकर्षक दरों पर भारी प्रतिलोम रेपो क्रियाओं द्वारा तरलता को इकट्ठा करके लोक ऋण की लागत पर बाजार उतार-चढ़ाव के प्रभाव को कम से

Copyright – Drishti The Vision Foundation

कम (Minimum) करने में सहायक होती है।

- हाल के वर्षों में देश में व्यापक स्तर पर जो पूंजी अंतर्प्रवाह होते रहे हैं, LAF ने उनके प्रभाव को निष्क्रिय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाया है। इसके लिए प्रतिलोम रेपो की मदद से तरलता (Liquidity) को इकट्ठा किया गया है। अप्रैल 2004 से बाजार स्थिरीकरण योजना (Market Stabilization Scheme) के माध्यम से पूंजी अंतर्प्रवाहों के प्रभाव को निष्क्रिय करने का काम किया जा रहा है।
- LAF रिजर्व बैंक को यह कार्यकारी लोचशीलता प्रदान करती है कि वह अर्थ प्रणाली में तरलता में परिवर्तन कर सके एवं बाजार परिस्थितियों के अनुसार ब्याज दरों की संरचना में समायोजन कर सके।

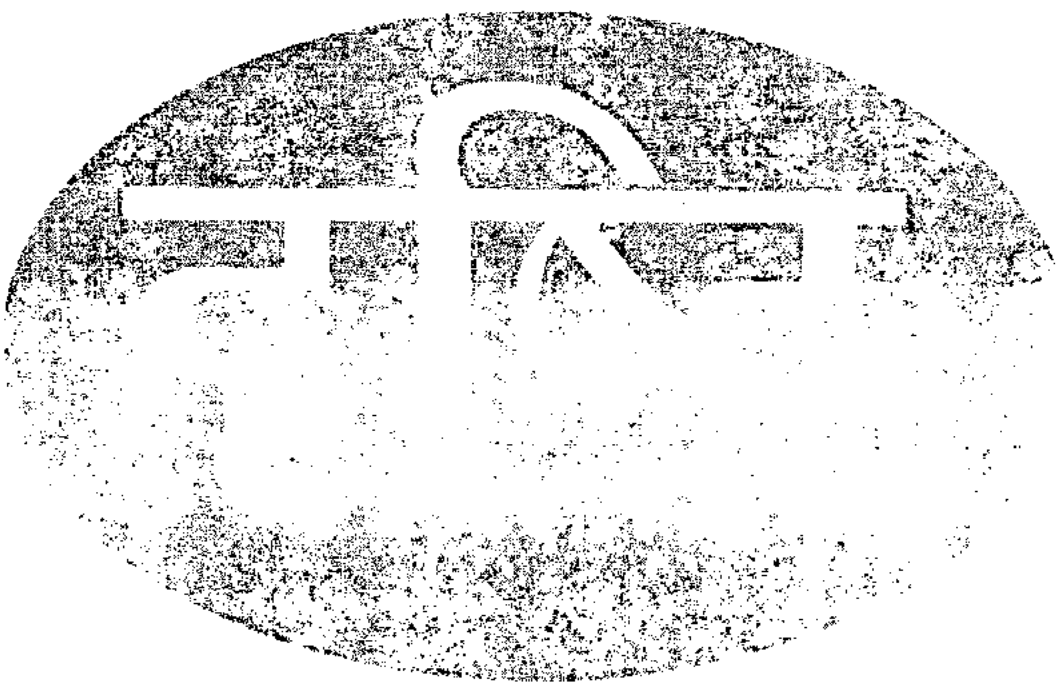

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–8 (Unit– 8)

मौद्रिक नीति : भाग–2
(Monetary Policy : Part–2)

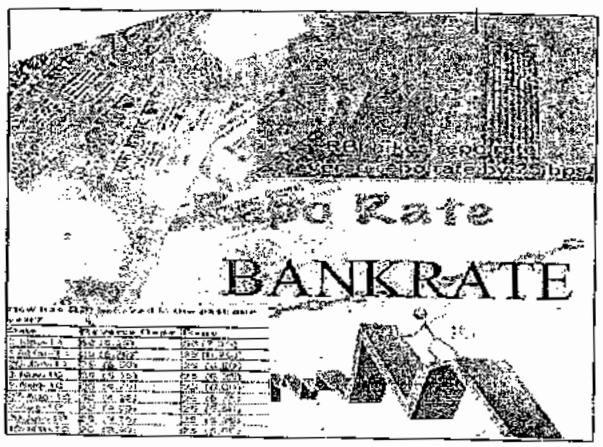

8.3 रिजर्व बैंक के प्रकार्य *(Function of Reserve Bank of India)*

2. सरकारों के बैंकर के रूप में RBI के कार्य (*Continued*)
   - खुले बाजार की क्रियाएँ *(Open Market Operations)*
   - बैंक दर *(Bank Rate)*
3. बैंकों के बैंक के रूप में कार्य करना *(Functioning as a Banker of Different Bank)*
4. वित्त बाजार का विनियमन एवं साख नियन्त्रण *(Regulating Financial Market & Credit Control)*
   - घरेलू बाजार का विनियमित करना *(Regulating Domestic Market)*
5. विदेशी विनिमय पर नियन्त्रण *(Controlling Foreign Exchange)*
6. अन्य प्रकार्य *(Other Functions)*

8.4 वित्तीय संस्थाओं के लिए पूँजी पर्याप्तता मानक

8.5 बैंकिंग दरें : एक दृष्टि में

8.6 भारतीय रिजर्व बैंक के गवर्नरों की सूची

Copyright – Drishti The Vision Foundation

खुले बाजार की क्रियाएँ *(Open Market Operations)*

RBI द्वारा बाजार में सरकारी प्रतिभूतियों के शर्तमुक्त क्रय-विक्रय को खुले बाजार की क्रियाएँ (Open Market Operations) कहते हैं। खुले बाजार की क्रियाओं के अंतर्गत रिजर्व बैंक अर्थव्यवस्था में मुद्रा की पूर्ति को नियंत्रित करने के लिए बैंकों से सरकारी प्रतिभूतियों का क्रय-विक्रय करता है। रिजर्व बैंक द्वारा प्रतिभूतियों के विक्रय का अर्थ होता है अर्थव्यवस्था से मुद्रा को निकालना तथा क्रय का अर्थ होता है अर्थव्यवस्था में मुद्रा को डालना और, इस प्रकार इन दोनों क्रियाओं के द्वारा अर्थव्यवस्था में तरलता का समायोजन (Adjustment of Liquidity) प्रत्यक्ष रूप से और बैंकों की तरलता का समायोजन परोक्ष रूप से होता है। अधिक मुद्रा की स्थिति में प्रतिभूतियों के विक्रय द्वारा RBI अधिक से अधिक मुद्रा बाजार से निकाल सकता है और मंदी (Recession) की स्थिति में प्रतिभूतियों के खरीदने की नीति अपना सकता है, जिससे अर्थव्यवस्था में मुद्रा का प्रवाह हो।

इस प्रकार खुले बाजार की क्रियाओं का प्रयोग केवल साख नियंत्रण या मौद्रिक नीति के अस्त्र के रूप में ही नहीं होता बल्कि इसका प्रयोग सरकारी प्रतिभूतियों के क्रय-विक्रय के माध्यम से राजकोषीय यंत्र के रूप में भी किया जाता है। खुले बाजार की क्रियाओं को बैंक दर नीति की सफलता हेतु जरूरी माना जाता है। भारत में जहाँ रिजर्व बैंक की बैंक दर अधिक महत्वपूर्ण नहीं है, वहाँ खुले बाजार का महत्व बढ़ जाता है। इसके अंतर्गत RBI खुले बाजार में सरकारी प्रतिभूतियों, Tragery Bills (ट्रेजरी बिलों) तथा अन्य स्वीकृत पत्रों का क्रय-विक्रय करता है। साख नियंत्रण के उद्देश्य से भी खुले बाजार की क्रियाओं की नीति बैंक दर की नीति से कहीं अधिक श्रेष्ठ है, क्योंकि खुले बाजार की क्रियाओं की सफलता के लिए केन्द्रीय बैंक (RBI) किसी दूसरे बैंक के सहयोग पर निर्भर नहीं रहता है।

OMO's की सफलता RBI के साधन (Resources), प्रतिभूतियों की प्रकृति (Nature of Securities) तथा मुद्रा बाजार की क्षमता (Capacity of Money Market) एवं संवेदनशीलता (Responsivness) पर निर्भर होती है। हालाँकि, RBI को यह अधिकार है कि विशेष परिस्थितियों में यदि वह अनुभव करे कि अर्थव्यवस्था में स्थिरता की दृष्टि से साख नियंत्रण आवश्यक है तो वह खुले बाजार में सरकारी प्रतिभूतियों, हुण्डियों और विदेशी विनिमय का क्रय-विक्रय कर सकता है। भारत में सरकारी प्रतिभूतियों का बाजार विकसित है और खुले बाजार की क्रियाओं के लिए आवश्यक संस्थागत व्यवस्था भी ठीक है।

जब RBI प्रतिभूतियों का विक्रय खुले तौर पर करता है तो बाजार में तरलता का संकुचन होता है। इसी प्रकार, RBI प्रतिभूतियों का क्रय खुले तौर पर करे तो यह प्रसारकारी कार्य होगा। Repo विनिमय के माध्यम से तरलता का समायोजन छोटे समय के लिए होता है, लेकिन OMO's से तरलता का अपेक्षाकृत दीर्घकालीन समायोजन होता है, अतः RBI के पास दोनों औजार होने चाहिए। खुले बाजार की क्रियाओं से यह भी फायदा है कि यदि बैंक के NDTL में समय-समय पर परिवर्तन हो रहा हो तो SLR मानक के तहत सरकार प्रतिभूतियों में निवेश को भी वह समय-समय पर समायोजित करते रहे। इस प्रकार पूँजी के समायोजन हेतु बैंकों के पास दो विकल्प होते हैं

1. Repo विनिमय द्वारा (3 से 14 दिन)
2. OMO's द्वारा (हफ्ते में एक बार)

सरकार RBI के अधिकारियों से परामर्श कर सकता है। इस प्रकार RBI, Consultancy का भी कार्य करता है। ये तीनों कार्य RBI बैंकों के लिए भी करता है।

बैंक दर *(Bank Rate)*

जिस दर पर रिजर्व बैंक बैंकों द्वारा पेश हुंडियों की पुनः कटौती करता है, उसे बैंक दर कहते हैं। व्यवहार में यह वह दर होती है जिस पर रिजर्व बैंक वाणिज्यिक बैंकों को उधार देती है और यह दर बैंकों द्वारा दी जाने वाली उधार पर ब्याज दर की न्यूनतम सीमा निर्धारित करती है। इस दर की सहायता से रिजर्व बैंक साख की उपलब्धता तथा साख की लागत को प्रभावित कर सकता है और इस प्रकार RBI बैंकों की साख सृजन शक्ति को प्रभावित कर सकता है जैसे–यदि रिजर्व बैंक, बैंक दर को ऊँचा कर दे तो वाणिज्यिक बैंकों को अपनी प्रतिभूतियों पर जिसके आधार पर वे ऋण ले सकते थे, पहले की अपेक्षा ज्यादा बट्टा देना पड़ेगा, जिसका अर्थ हुआ कि उनको पहले की अपेक्षा कम फंड प्राप्त होगा और जिस ब्याज दर पर वे पहले उधार देते थे। अब उसकी अपेक्षा अधिक ब्याज दर पर उधार दे पायेंगे।

पुनः यदि रिजर्व बैंक, बैंक दर में कमी ला देता है तो फंड की लागत कम हो जाती है और ऐसे में सामान्यतः नीची ब्याज दर पर अर्थव्यवस्था में बैंक द्वारा साख सृजन अधिक होता है और निवेश प्रोत्साहित होता है, इसके विपरीत ऊँची ब्याज दर पर बैंक

Copyright – Drishti The Vision Foundation

द्वारा साख सृजन या निवेश हतोत्साहित होता है, मतलब यह हुआ कि जब मुद्रा की अत्यधिक वृद्धि के कारण मुद्रास्फीति की स्थिति हो तो रिजर्व बैंक, बैंक दर को ऊँचा रखेगा अन्यथा यह कम रहेगा।

कुछ दिनों पहले तक बैंक रेट की दर 6% थी लेकिन 14 फरवरी 2012 से बैंक रेट की दर के तकनीकी समायोजन के लिए इसे MSF (Marginal Standing Facility) की दर के साथ जोड़ दिया गया है। अर्थात् MSF की दर (जोकि वर्तमान में 9.5% है) के साथ ही बैंक रेट की दर भी परिवर्तित होगी और इस प्रकार अब बैंक रेट का मान 6% के बजाय 9.5% हो गया।

3. बैंकों के बैंक के रूप में कार्य करना

रिजर्व बैंक न केवल व्यापारिक बैंकों का ही बैंकर है बल्कि उनका अंतिम ऋणदाता भी है, इसके अलावा यह देश के सभी बैंकों के लिए वही कार्य करता है, जो ये बैंक अपने ग्राहकों के लिए करते हैं। प्रश्न है कि RBI किस प्रकार बैंकों के बैंक तथा बैंकों के अंतिम ऋणदाता की भूमिका निभाता है। यह कार्य रिजर्व बैंक दो प्रकार से करता है– पहला वह उनकी तरलता को बनाये रखने की कोशिश करता है, क्योंकि तरलता को ही सकल बैंकिंग प्रणाली का आधार माना जाता है। प्रत्येक बैंक को CRR (Cash Reserve Ratio) के रूप में रिजर्व बैंक के पास नकद पूँजी रखनी होती है।

4. वित्त बाजार का विनियमन एवं साख नियन्त्रण *(Regulating Financial Market & Credit Control)*

अर्थव्यवस्था में तरलता समायोजन या साख नियंत्रण के तरीके अपनाये जाते हैं, जिनमें चयनात्मक तरीकों की तुलना में परिमाणात्मक तरीके अधिक प्रभावशाली होते हैं। SLR तथा CRR की वृद्धि अनिवार्य रूप से तरलता को प्रभावित करती है, लेकिन बैंक दर, Repo rate, Reverse Repo Rate तथा खुले बाजार की क्रियाओं में अनिवार्यता निहित नहीं होती। और इस प्रकार इनकी वृद्धि से आवश्यक रूप में तरलता में कमी नहीं आ पायेगी। इनके कारण तरलता में कमी तभी आयेगी जब व्यापारिक बैंक RBI से उधार लें अन्यथा नहीं।

रिजर्व बैंक वाणिज्यिक बैंकों द्वारा निर्मित साख की मात्रा तथा दिशा पर नियन्त्रण करने का कार्य भी सम्पन्न करता है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वह परिमाणात्मक व गुणात्मक उपायों का उपयोग करता है, इन रीतियों का विस्तृत विवेचन आगे किया गया है-

परिमाणात्मक एवं गुणात्मक नियंत्रण *(Quantitative and Qualitative Credit Control)*

कार्यों के निष्पादन की दृष्टि से साख नियंत्रण रिजर्व बैंक (RBI) का एक अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य है, जिसके तहत [illegible] (Credit) की मात्रा एवं दिशा को नियंत्रित किया जाता है। साख नियंत्रक के रूप में रिजर्व बैंक के कार्यों को दो वर्गों में रखा सकता है–

1. परिमाणात्मक उपाय: इसके तहत रिजर्व बैंक मुख्य रूप से बैंक दर, नकद आरक्षण अनुपात (Cash Reserve R[illegible] – CRR), सांविधिक तरलता अनुपात (Statutory Liquidity Ratio – SLR), खुले बाजार की क्रियाओं जैसे [illegible] नियंत्रक उपायों का उपयोग करता है। चूँकि ऐसे उपायों को साख (उधारी) की कुल मात्रा पर नियंत्रण के उद्देश्य [illegible] अपनाया जाता है, अतः ये समस्त प्रकार के व्यवसायों और उद्योगों पर समान रूप से लागू होते हैं।
2. गुणात्मक उपाय: इसके तहत रिजर्व बैंक द्वारा उपभोक्ता साख नियमन (Consumer Credit Regulation), [illegible] राशनिंग, प्रत्यक्ष कार्यवाही, मार्जिन आवश्यकताओं में परिवर्तन और नैतिक दबाव जैसे उपायों का सहारा लिया जाता [illegible]

चयनात्मक साख नियन्त्रण (Selective Credit Control)

कम आपूर्ति वाली वस्तुओं के लिए बैंकों द्वारा उधार देने की मात्रा को नियंत्रित करने के उद्देश्य से रिजर्व बैंक 1956 से [illegible] चयनात्मक साख नियन्त्रण को एक महत्त्वपूर्ण एवं प्रभावी उपाय के रूप में प्रयोग करता रहा है। चयनात्मक साख नियन्त्रण के [illegible] रिजर्व बैंक द्वारा तीन उपबन्धों का प्रयोग किया जाता है:

(i) विशेष प्रकार के कुछ अग्रिमों के लिए विभेदकारी दरों का प्रयोग।

(ii) विशिष्ट प्रतिभूतियों के लिए न्यूनतम उधार प्रतिभूति अंतर का प्रयोग।

(iii) विशेष उद्देश्य के लिए दिए गए ऋण की मात्रा की अधिकतम सीमा का निर्धारण करना।

1955-56 तक रिजर्व बैंक ने चयनात्मक साख नियन्त्रण का प्रयोग नहीं किया था। 1956 से 1990 के दशक के पूर्वार्द्ध [illegible] 40 वर्षों में रिजर्व बैंक ने अनिवार्य आवश्यकता की वस्तुओं की जमाखोरी द्वारा इनके मूल्यों में वृद्धि करने की व्यापारियों की [illegible] विरोधी प्रवृत्ति को रोकने के लिए मूल्यांतर निर्धारण की रीति का नियमित रूप से प्रयोग किया है। चयनात्मक साख नियन्त्रण [illegible]

Copyright – Drishti The Vision Foun[illegible]

अन्तर्गत आने वाली वस्तुएँ थीं–खाद्यान्न, तिलहन, तेल, वनस्पति घी, कपास, खांडसारी, गुड़, चीनी सूती कपड़ा और सूती धागा। इन वस्तुओं की धरोहर पर ऋण के लिए ब्याज की दर अपेक्षाकृत ऊँची रही है।

1965 में लागू की गई साख अधिकृतीकरण योजना (Credit Authorisation Scheme) भी चयनात्मक साख-नियंत्रण की एक रीति है। इसके अन्तर्गत व्यापारिक बैंकों के लिए यह आवश्यक कर दिया गया कि वे यदि किसी एक पार्टी को बड़ी मात्रा में ऋण देना चाहें तो इसके लिए रिजर्व बैंक की पूर्व अनुमति प्राप्त करें। जुलाई 1987 में साख अधिकृतिकरण योजना को उदार बनाया गया और अक्टूबर 1988 में इसे समाप्त कर दिया गया। इसका लाभ यह है कि उत्पादक क्षेत्रों की साख की जरूरी माँगों को पूरा करने के लिए व्यापारिक बैंको को रिजर्व बैंक की पूर्व अनुमति नहीं करती होगी। अक्तूबर 1996 में चयनात्मक नियंत्रण को लगभग समाप्त कर दिया गया।

वित्त बाजार के विनियमन के लिए RBI मौद्रिक नीति बनाता और लागू करता है।

मौद्रिक नीति का तीन अलग-अलग आधार पर वर्गीकरण

- वित्त प्रणाली में वित्त की मात्रा पर पड़ने वाले प्रभाव के आधार पर मौद्रिक नीति दो प्रकार की होती है।
  - संकुचनकारी मौद्रिक नीति
  - प्रसारकारी मौद्रिक नीति
- वित्त की लागत अर्थात् ब्याज दर पर पड़ने वाले प्रभाव के आधार पर मौद्रिक नीति दो प्रकार की होती हैं।
  - सस्ती मुद्रा नीति (Cheap money Policy)
  - मँहगी मुद्रा नीति Dear Money Policy
- आर्थिक क्रियाकलापों (उत्पादन, व्यापार, उपभोग आदि) की मात्रा एवं संरचना पर पड़ने वाले प्रभाव के आधार पर मौद्रिक नीति दो प्रकार की होती है।
  - सामान्य या मात्रात्मक मौद्रिक नीति (Quantitative/General Money Policy)
  - चयनात्मक या गुणात्मक मौद्रिक नीति (Selective/Quantitative Money Policy)

प्रसारकारी मौद्रिक नीति: यदि मौद्रिक नीति वित्त प्रणाली में वित्त की मात्रा को बढ़ाने के उद्देश्य से बनायी गयी हो तो इसे प्रसारकारी मौद्रिक नीति कहते हैं।

संकुचन कारी मौद्रिक नीति: यदि मौद्रिक नीति वित्त प्रणाली में वित्त की मात्रा को घटाने के उद्देश्य से बनाई गयी हो तो इसे संकुचनकारी मौद्रिक नीति कहते हैं।

यदि CRR तथा SLR दरों में कमी की जायें तो यह प्रसारकारी मौद्रिक नीति होगी और यदि CRR तथा SLR की दरों में वृद्धि की जाए तो यह संकुचनकारी मौद्रिक नीति होगी। पुनः यदि Repo ऋण की मात्रा RBI बढ़ा देता है तो यह प्रसारकारी मौद्रिक नीति होगी और RBI रेपो ऋण की मात्रा घटा देता है तो यह मौद्रिक नीति होगी।

सस्ती मुद्रा नीति : यदि मौद्रिक नीति के तहत ब्याज की दर को कम कर दिया जाए तो इसे सस्ती मुद्रा नीति कहते हैं Repo Rate, Reverse Repo Rate, Bank Rate आदि को कम करने की नीति सस्ती मुद्रा के अंतर्गत आती है।

मंहगी मुद्रा नीति : यदि मौद्रिक नीति के तहत ब्याज की दर को बढ़ा दिया जाए तो यह मंहगी मुद्रा नीति के तहत आएगी। CRR, SLR, Rep Rate, Reverse Reop Rate आदि सभी दरों को कम करना प्रसारकारी एवं सस्ती मौद्रिक नीति होगी।

यदि मौद्रिक नीति प्रसारकारी और सस्ती एक साथ हो तो उसे Loose Money Policy कहते हैं।

Extra Loose Money Policy : यदि इन सभी दरों को तेजी से भारी मात्रा में घटा दिया जाए तो इस Extra Loose Money Policy अपनाए जाने को Monetary Stimulation भी कहते हैं।

अमेरिका में निवेश बढ़ाने के लिए ऐसा ही किया गया ताकि देश को 2008 में आई मंदी से बाहर निकाला जा सके।

कठोर मौद्रिक नीति (Tight Monetary Policy) : यदि मौद्रिक नीति एक साथ संकुचनकारी एवं मँहगी हो तो उसे सख्त कठोर मौद्रिक नीति (Tight money policy) कहते हैं।

सामान्य मौद्रिक नीति (General Monetary Policy) : ऐसी मौद्रिक नीति जो अर्थव्यवस्था के सभी घटकों पर समरूप प्रभाव डालने के उद्देश्य से बनाई जाए, सामान्य स्वभाव वाली नीति कहलाती है। सामान्य मौद्रिक नीति संकुचनवादी या प्रसारवादी दोनों हो सकती हैं।

Copyright - Drishti The Vision Foundation

यदि सबके लिए ऋण की मात्रा बढ़ा दी जाए तो सामान्य प्रसारकारी मौद्रिक नीति है और यदि सबके लिए ऋण की मात्रा घटा दी जाए तो यह सामान्य संकुचनकारी मौद्रिक नीति है।

यदि सभी के लिए ऋण मँहगा कर दिया जाए या सभी के लिए ऋण सस्ता कर दिया जाए तो उत्पादन ढाँचें में विभिन्न घटकों का आनुपातिक अंशदान स्थिर रहेगा।

इस प्रकार सामान्य मौद्रिक नीति से उत्पादन या उपभोग के आन्तरिक संघटन में परिवर्तन नहीं होता, उनकी मात्रा में परिवर्तन होता है इसलिए ऐसी नीति को परिमाणात्मक मौद्रिक नीति (Quantitative Monetary Policy) कहते हैं।

चयनात्मक मौद्रिक नीति (Selective Money Policy) : यदि मौद्रिक नीति, उत्पादन के अलग-अलग क्षेत्रों पर अथवा उपभोक्ताओं के अलग-अलग वर्गों पर अलग-अलग प्रभाव उत्पन्न करने के उद्देश्य से बनाया जाए तो इसे चयनात्मक मौद्रिक नीति कहते हैं, जैसे- सरकार ने KCC पर ब्याज दर 7% रखी है।

लेकिन सट्टेबाजों के लिए यह 14% है।

चूँकि इस नीति से उत्पादन या उपभोग की आन्तरिक संरचना में परिवर्तन होता है, इसलिए इसे गुणात्मक मौद्रिक नीति (Qualititative Monetary Policy) भी कहते हैं।

आर्थिक समावेश के लिए चयनात्मक मौद्रिक नीति आवश्यक है।

मौद्रिक नीति के कई उपकरण होते हैं, जिनका विस्तार से वर्णन पूर्व में किया जा चुका है।

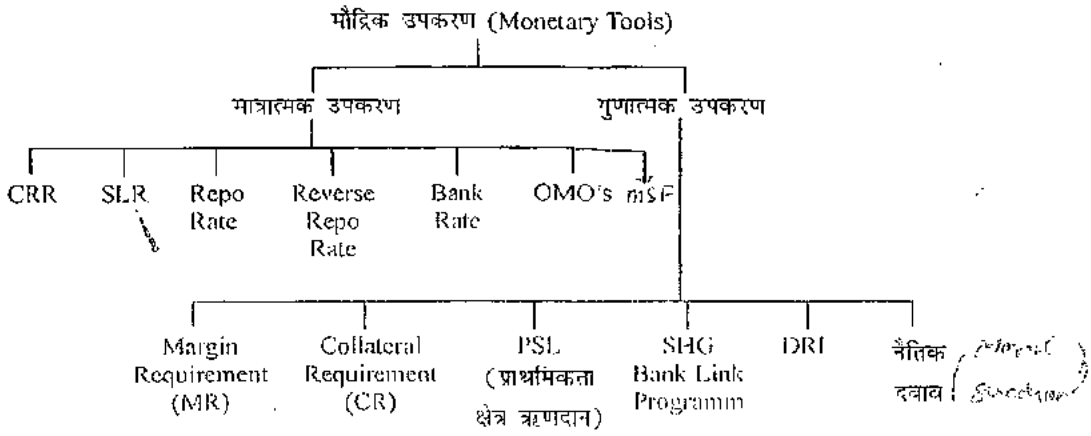

नैतिक दबाव : इसे RBI के हाथों में एक बड़ा अस्त्र माना जाता है। RBI के किसी अधिकारी द्वारा सार्वजनिक रूप से जारी वक्तव्यों का असर दूर तक पड़ता है और इन नैतिक दबावों की वजह से विभिन्न बैंकों के आचरण पर भी दबाव पड़ता है।

भारत के लोगों के पास इस समय 86 बैंकों का विकल्प है और RBI इस नैतिक उपकरण का प्रयोग कर किसी भी बैंक के कारोबार पर ऋणात्मक प्रभाव डाल सकता है। चूँकि यह किसी भी वित्तीय संस्था पर प्रतिकूल असर डालता है और इसमें बेईमानी की पर्याप्त आशंका होती है। अतः RBI इसे को अंतिम विकल्प के रूप में प्रयोग में लाना चाहिए।

पिछले कुछ दिनों में RBI ने भारत में संचालित दो बैंकों ICICI और Citi Bank पर इस उपकरण का इस्तेमाल किया है।

5. विदेशी विनिमय पर नियन्त्रण *(Controlling Foreign Exchange)*

रुपए के विनिमय मूल्य को स्थिर बनाए रखने के उद्देश्य से रिजर्व बैंक विदेशी मुद्रा का क्रय-विक्रय करता है तथा देश के विदेशी मुद्रा कोषों का संरक्षण करता है।

भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा-40 के अनुसार RBI का उत्तरदायित्व है कि वह विदेशी विनिमय भंडार के परिरक्षण (Custodian) का कार्य करे और RBI की यह जिम्मेदारी है कि वह IMF में भारत के खोते की निगरानी करे।

रूपए के मूल्य में स्थिरता लाने के लिए प्रायः मौद्रिक और राजकोषीय उपायों का सहारा लेना पड़ता है। लेकिन द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान इनकी सहायता से भुगतान संतुलन संबंधी समस्याओं का समाधान कर पाना काफी कठिन हो गया था। युद्ध की बुरी स्थितियों में जब भुगतान संतुलन संबंधी समस्याओं का हल नहीं निकल पा रहा था तो विनिमय नियंत्रण के प्रत्येक उपायों का सहारा लिया जाने लगा और यही विदेशी विनिमय व्यवस्था के नियमन के स्थायी उपकरण बन गए।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

1947 के विदेशी विनिमय अधिनियम बन जाने के बाद रिजर्व बैंक अपना कार्य स्वतंत्र रूप से करने लगा। इस अधिनियम का स्थान बाद में Foreign Exchange Regulating Act (FERA) 1973 ने लिया जिसमें समय के साथ संशोधन होते रहे हैं, और अब इसका स्थान विदेशी विनिमय प्रबंधन अधिनियम (FEMA) ने ले लिया है, जिसका अर्थ हुआ कि इस अधिनियम का उद्देश्य विदेशी विनिमय का 'नियंत्रण' न करके उसका 'प्रबंधन' करना है।

6. अन्य प्रकार्य *(Other Functions)*

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद आर्थिक विकास पर अधिक बल देने के फलस्वरूप रिजर्व बैंक के कार्यों का लगातार विस्तार हुआ है। बैंक द्वारा विकास सम्बन्धी और भी बहुत से कार्य किए जाते हैं। RBI मासिक 'रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया बुलेटिन' में इन विषयों पर अपनी समीक्षा की प्रस्तुति करता है।

उपरोक्त कार्यों के निष्पादन के अलावा रिजर्व बैंक कुछ अन्य महत्वपूर्ण प्रकृति के कार्यों को भी सम्पन्न करता है, जैसे–

(i) कृषि साख की व्यवस्था

(ii) आर्थिक आँकड़े एकत्रित तथा प्रकाशित करना

(iii) सरकारी प्रतिभूतियों और व्यापारिक बिलों का क्रय-विक्रय

(iv) समाशोधन गृह कार्य

(v) मूल्यवान वस्तुओं का क्रय-विक्रय

(vi) ऋण उपलब्ध कराना तथा

(vii) अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (International Monetary Fund – IMF) में भारत सरकार का प्रतिनिधित्व

प्राथमिकता क्षेत्र को साख का विस्तार

राष्ट्रीयकरण के बाद सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को सौंपा गया एक प्रमुख कार्य अर्थव्यवस्था के अब तक उपेक्षित वर्ग के लोगों को ऋण उपलब्ध कराना था। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए बैंकों ने कृषि, लघु उद्योगों, सड़क और जल परिवहन, फुटकर व्यापार और छोटे-मोटे व्यापार में लगे उन लोगों को ऋण देने की योजनाएँ बनाई हैं, जिनकी परम्परागत रूप से बैंक ऋण में बहुत कम भागीदारी होती थी। कमजोर वर्ग को बैंकों के द्वारा विनिर्दिष्ट आवश्यकताओं के लिए वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराने के लिए प्राथमिकता क्षेत्र में उपभोक्ता ऋण (सीमित रूप में) शामिल कर लिया गया है। इसी प्रकार किसी स्थान को ध्यान में न रखते हुए ₹ 20 लाख तक के प्रति इकाई गृह ऋण को भी प्राथमिकता क्षेत्र की अग्रिम राशियों हेतु वर्गीकृत किया गया है। इस सम्बन्ध में 6 दिसम्बर, 2008 को RBI अधिसूचना जारी की गई।

बैंकों द्वारा जून 1969 से 31 मार्च, 2008 के बीच प्राथमिकता वाले क्षेत्र को दिए गए ऋण के रूप में बकाया राशि ₹441 करोड़ से बढ़कर ₹ 6,08,963 करोड़ तक पहुँच गई। आवास ऋणों की पूर्ति हेतु राष्ट्रीय आवास बैंक (NHB) के लिए ₹4000 करोड़ की पुनर्वित्त सुविधा (Refinance Facility) भी रिजर्व बैंक ने वर्ष 2008 के दौरान घोषित की है। लघु उद्योग विकास बैंक 'सिडबी' (SIDBI) के लिए ₹ 7000 करोड़ तथा निर्यात आयात बैंक (EXIM Bank) के लिए ₹ 4000 करोड़ की पुनर्वित्त सुविधा रिजर्व बैंक ने इसके साथ ही घोषित की है। इससे उन क्षेत्रों में ऋण प्रवाह बढ़ाने में मदद मिलेगी।

उल्लेखनीय है कि RBI के निर्देशानुसार बैंकों को अपनी उधारियों का कम-से-कम 40% प्राथमिकता क्षेत्र को जबकि 18% भाग बैंकों से कृषि को उपलब्ध कराना होता है। जो बैंक इस लक्ष्य को पूरा नहीं कर पाते हैं उनके विरुद्ध RBI उचित कार्यवाही भी कर सकता है। विदेशी बैंकों द्वारा प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को 32% का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। वर्ष 2009-10 के दौरान कुल शुद्ध बैंक साख का 41.68% प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को उपलब्ध कराया गया था, जबकि कृषि क्षेत्र को उपलब्ध साख 17.3% थी।

8.4 वित्तीय संस्थाओं के लिए पूँजी पर्याप्तता मानक

वाणिज्यिक बैंक, वित्तीय संस्थान और गैर-बैंकिंग वित्तीय कम्पनियाँ अपनी निधियों तथा प्राप्त जमाओं के आधार पर विभिन्न प्रकार के ऋण उपलब्ध कराती हैं या परिसंपत्तियों का सृजन करती हैं। इन ऋणों का पुनर्भुगतान न हो पाने या भुगतान में विलम्ब होने तथा ब्याज की प्राप्ति न हो पाने का जोखिम भी प्रायः बना रहता है। पिछले वर्षों में भारत में बैंकों ने जिस प्रकार से पूँजी बाजार में ऋण का आबंटन किया और मंदी की स्थिति में उन ऋणों की वसूली न हो पाने की वजह से अधिकांश बैंकों की लाभप्रात्यता में कमी आई। इसी तरह 1997-98 में दक्षिण कोरिया में आए आर्थिक संकट का एक महत्त्वपूर्ण कारण यह भी था कि वहाँ के बैंकों ने जनता से प्राप्त अल्पकालिक ऋणों से सृजित निधियों के आधार पर ही कंपनियों तथा घरेलू नागरिकों को दीर्घकालिक ऋणों का आबंटन किया, परिणामस्वरूप इन बैंकों द्वारा समय से देनदारियाँ पूरी न कर पाने के कारण दक्षिण कोरियाई अर्थव्यवस्था में आर्थिक संकट की स्थिति उत्पन्न हो गई। इसी प्रकार 2008 में भी अमेरिका तथा विश्व की कई अन्य अर्थव्यवस्थाओं में आर्थिक संकट उत्पन्न हो गया और वर्तमान में यूरोजोन संकट (Eurozone Crisis) भी इसी का एक उदाहरण है। अतः वैश्विक स्तर पर

Copyright – Drishti The Vision Foundation

उत्पन्न होने वाले ऐसे आर्थिक संकटों को रोकने हेतु बैंक ऑफ इंटरनेशनल सेटलमेंट द्वारा वास्ले समिति (Wasle Committee) का गठन किया गया जिसने 1988 में सर्वप्रथम पूँजी पर्याप्तता मानक की अवधारणा प्रस्तुत की।

पूँजी पर्याप्तता का आशय ऐसी पूँजी से है जिसे उस कम्पनी द्वारा किसी व्यावसायिक परिसंपत्ति के सृजन के एक निश्चित स्तर तक अपने पास रखना चाहिए। पूँजी पर्याप्तता अनुपात (CAR) व्यवसाय के उस स्तर को सुनिश्चित करती है जिसे कोई वाणिज्यिक बैंक या वित्तीय संस्थान या गैर-बैंकिंग वित्तीय कम्पनी कर सकती है। उदाहरण के लिए अगर पूँजी पर्याप्तता अनुपात 8% सुनिश्चित किया जाता है, तो इसका तात्पर्य यह है कि वित्तीय संस्थान को प्रति एक सौ रुपए की व्यावसायिक परिसंपत्ति हेतु 8 रुपए की पूँजी अनिवार्यतः अपने पास रखनी चाहिए। भारत में भी 1992-93 से वास्ले समिति की अनुशंसाओं के अनुरूप सभी बैंकों के लिए पूँजी पर्याप्तता मानक को लागू कर दिया गया।

नरसिंहम समिति-II की सिफारिशों का अनुसरण करते हुए CAR में को चरणबद्ध तरीके से वर्तमान 8% से बढ़ाकर 10% करने का निर्णय लिया गया और तदोपरांत क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा 31 मार्च, 2000 से मानक CAR को बढ़ाकर 9% करने का निर्णय लिया गया। विदित है कि विदेशी बैंकों तथा ऐसे भारतीय बैंकों, जिनका परिचालन देश के बाहर भी है, के लिए बेसल-2 मानकों को 31 मार्च, 2008 से लागू करना था, जबकि अन्य वाणिज्यिक बैंकों, स्थानीय बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों (Regional Rural Banks – RRBs) को छोड़कर अन्य के लिए यह नियम 31 मार्च, 2009 से लागू किया जाना था। वर्तमान समय में CAR में सुधार होना यही दर्शाता है कि भारतीय बैंकिंग क्षेत्र वैश्विक वित्तीय संकट से उबर रहा है। सभी अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के समग्र CRAR में भी सुधार देखा गया है, जो मार्च 2008 में 13% से सुधरकर मार्च 2009 के अन्त में 13.2% हो गया। इस प्रकार यह 9% के निर्धारित न्यून स्तर से काफी अधिक बना हुआ है।

8.5 बैंकिंग दरें : एक दृष्टि में

बैंक दर	6.0 प्रतिशत (30 अप्रैल, 2003 से)
नकद आरक्षिण अनुपात (CRR)	5.5 प्रतिशत (24 जनवरी, 2012 से)
सांविधिक तरलता अनुपात (SLR)	24.0 प्रतिशत (18 दिसम्बर, 2010 से)
रेपो दर	8.50 प्रतिशत (25 अक्टूबर, 2011 से)
रिवर्स रेपो दर	7.50 प्रतिशत (25 अक्टूबर, 2011 से)

मार्च 2010 के पश्चात् प्रमुख बैंकिंग दरों में वृद्धि

(प्रतिशत में)

तिथि	रेपो दर (Repo Rate)	रिवर्स रेपो दर (Reverse Repo Rate)	सी.आर.आर (C.R.R)
19 मार्च, 2010	5.00	3.50	5.75
20 अप्रैल, 2010	5.25	3.75	6.00
2 जुलाई, 2010	5.50	4.00	6.00
27 जुलाई, 2010	5.75	4.50	6.00
16 सितम्बर, 2010	6.00	5.00	6.00
2 नवम्बर, 2010	6.25	5.25	6.00
16 दिसम्बर, 2010	6.25	5.25	6.00
25 जनवरी, 2011	6.50	5.50	6.00
17 मार्च, 2011	6.75	5.75	6.00
3 मई, 2011	7.25	6.25	6.00
16 जून, 2011	7.50	6.50	6.00
26 जुलाई, 2011	8.00	7.00	6.00
16 सितम्बर, 2011	8.25	7.25	6.00
25 अक्टूबर, 2011	8.50	7.50	6.00
24 जनवरी, 2012	8.50	7.50	5.50

Copyright – Drishti The Vision Foundation

वित्तीय वर्ष 2011-12 के लिए घोषित नई मौद्रिक एवं साख नीति (Annual Monetary & Credit Policy) में आर्थिक वृद्धि की तुलना में 'मुद्रास्फीति पर नियंत्रण' को प्राथमिकता प्रदान की गई है। 3 मई, 2011 को घोषित इस नीति के तहत रेपो दर व रिवर्स रेपो दर में वृद्धियों का सिलसिला रिजर्व बैंक ने बरकरार रखा है। 3 मई 2011 को इस नीति की घोषणा के समय ही रेपो दर व रिवर्स रेपो दर में 0.50-0.50 प्रतिशत बिन्दु की वृद्धियाँ रिजर्व बैंक ने की थीं, जो मार्च 2010 के पश्चात् इन दरों में नौवीं बार वृद्धि थी। बाद में इस नीति की पहली मध्य त्रैमासिक समीक्षा (16 जून, 2011) के तहत 0.25 प्रतिशत, दूसरी मध्य त्रैमासिक समीक्षा (26 जुलाई, 2011) के तहत 0.25 प्रतिशत तथा तीसरी त्रैमासिक समीक्षा (25 अक्टूबर, 2011) के तहत 0.25 प्रतिशत की वृद्धि रिजर्व बैंक द्वारा रेपो दर में की गई जिससे इतनी ही वृद्धियाँ रिवर्स रेपो दर में भी स्वतः हो हुई हैं। 25 अक्टूबर, 2011 को रेपो दर में की गई वृद्धि मार्च 2010 के पश्चात् इस दर में पाँचवी वृद्धि थी जिससे अक्टूबर 2011 में रेपो दर 8.50 प्रतिशत व रिवर्स रेपो दर 7.50 प्रतिशत हो गई थी। एक नई पहल के तहत आगे से इन दोनों दरों में से केवल रेपो दर को ही सन्दर्भ दर घोषित करते हुए रिवर्स रेपो दर को उसके साथ ही रिजर्व बैंक ने सम्बद्ध कर दिया है। RBI की 3 मई, 2011 की इस घोषणा के अनुसार रिवर्स रेपो दर अब रेपो दर से 1 प्रतिशत बिन्दु नीचे बनी रहेगी तथा रेपो दर में कोई परिवर्तन किए जाने पर रिवर्स रेपो दर भी स्वतः ही तदनुरूप (रेपो दर से 1 प्रतिशत बिन्दु नीचे) परिवर्तित हो जाएगी।

एक अन्य महत्वपूर्ण परिवर्तन के तहत बैंकों में बचत खातों पर देय ब्याज दर को भी अब RBI ने 25 अक्टूबर, 2011 से नियन्त्रणमुक्त कर दिया है। यह नियन्त्रण हटाने से पूर्व बचत खातों पर ब्याज दर में 0.50 प्रतिशत बिन्दु की वृद्धि रिजर्व बैंक ने 2011-12 की मौद्रिक नीति की घोषणा के समय 3 मई, 2011 को कर दी थी। यह दर 3.50 प्रतिशत प्रति वर्ष से बढ़ाकर अब 4.0 प्रतिशत की गई थी। 8 वर्ष के अन्तराल के पश्चात् बचत बैंक खातों पर ब्याज दर में वृद्धि रिजर्व बैंक ने की थी। अप्रैल 2003 से यह दर 3.5 प्रतिशत बनी हुई थी।

बैंकों के लिए एक नई मार्जिनल स्टैंडिंग फैसिलिटी (MSF) शुरू करने की घोषणा रिजर्व बैंक ने मौद्रिक एवं साख नीति (2011-12) के तहत की है। 7 मई, 2011 से शुरू की गई इस सुविधा के तहत बैंक अपनी विशुद्ध माँग एवं सावधि दायित्वों (Net Demand and Time Liabilities) के 1 प्रतिशत एक ऋण तुरन्त प्राप्त कर सकेंगे जिसके लिए ब्याज की दर रेपो दर से 1 प्रतिशत बिन्दु अधिक होगी। नई मौद्रिक एवं साख नीति के तहत बैंक दर (6.0 प्रतिशत) व सांविधिक तरलता अनुपात (SLR, 24.0 प्रतिशत) में कोई परिवर्तन रिजर्व बैंक ने नहीं किया था लेकिन 14 फरवरी 2012 से बैंक रेट की दर के तकनीकी समायोजन के लिए इसे MSF (Marginal Standing Facility) की दर के साथ जोड़ दिया गया है। अर्थात् MSF की दर (जोकि वर्तमान में 9.5% है) के साथ ही बैंक रेट की दर भी परिवर्तित होगी और इस प्रकार अब बैंक रेट का मान 6% के बजाय 9.5% हो गया।

विश्व भर में तेल व अन्य उत्पादों के मूल्य उच्च स्तर पर बने होने तथा स्फीतिक दबाव पर अंकुश के लिए रिजर्व बैंक के उपर्युक्त कठोर कदमों के चलते देश में आर्थिक वृद्धि प्रभावित होने की सम्भावना रिजर्व बैंक ने व्यक्त की है तथा 2011-12 में वृद्धि दर लगभग 8 प्रतिशत (तेल का औसत मूल्य 110 डॉलर प्रति बैरल रहने तथा मानसून सामान्य रहने पर) ही रहने का पूर्वानुमान बैंक ने 3 मई, 2011 को व्यक्त किया था, किन्तु बाद में यह वृद्धि 7.6 प्रतिशत से कुछ कम ही रहने का पूर्वानुमान रिजर्व बैंक ने अक्टूबर 2011 में व्यक्त किया। इसी प्रकार 2011-12 के अन्त में (मार्च 2012 में) थोक मूल्य सूचकांक आधारित मुद्रास्फीति की दर 6.0 प्रतिशत रहने का रिजर्व बैंक का पूर्वानुमान रिजर्व बैंक ने मई 2011 में व्यक्त किया था। किन्तु बाद की परिस्थितियों में यह 7 प्रतिशत रहने का पूर्वानुमान बैंक ने अक्टूबर 2011 में व्यक्त किया है।

3 मई, 2011 को मौद्रिक एवं साख नीति (2011-12) की घोषणा करते हुए रिजर्व बैंक के गवर्नर डॉ. डी. सुब्बाराव ने कहा था कि माइक्रो फाइनेंस इंस्टीट्यूशंस (MFIs) के विनियमन के लिए मालेगाम समिति द्वारा प्रस्तुत सुझावों को RBI ने आमतौर पर स्वीकार कर लिया है तथा इन संस्थानों को 1 अप्रैल, 2011 के बाद प्रदत्त ऋणों के रूप में वर्गीकृत किए जाएंगे। माइक्रो फाइनेंस इंस्टीट्यूशन ऐसे ऋणों पर अधिकतम 26 प्रतिशत सालाना ब्याज ही उपभोक्ताओं से ले सकेंगे (मालेगाम समिति ने यह दर अधिकतम 24 प्रतिशत रखने की संस्तुति अपनी रिपोर्ट में की थी)। इस मामले में मालेगाम समिति के सुझाव के अनुरूप एक समिति का गठन भी रिजर्व बैंक द्वारा किया जाएगा। मुद्रास्फीति के प्रति चेतावनी देते हुए डॉ. सुब्बाराव ने कहा था कि ऊँची मुद्रास्फीति भविष्य की आर्थिक वृद्धि के लिए खतरा है। ऐसे में इससे पहले निपटने की आवश्यकता है, भले ही इसके चलते इस समय आर्थिक वृद्धि की कुछ कुर्बानी देनी पड़े। आर्थिक वृद्धि की तुलना में मुद्रास्फीति पर नियंत्रण को अधिक प्राथमिकता देने के नई मौद्रिक नीति में अपनाए गए दृष्टिकोण के प्रति मिश्रित प्रतिक्रियाएँ व्यक्त की गई हैं। सरकार ने रिजर्व बैंक के इस दृष्टिकोण का जहाँ स्वागत किया है, वहीं उद्योग-व्यापार जगत् ने इस पर निराशा व्यक्त की है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

8.6 भारतीय रिजर्व बैंक के गवर्नरों की सूची

क्रम संख्या	गवर्नर	कार्यकाल
1.	सर ओसबोर्न स्मिथ	1-4-1935 से 30-6-1937
2.	सर जेम्स टेलर	1-7-1937 से 17-2-1943
3.	सर सी. डी. देशमुख	11-8-1943 से 30-6-1949
4.	सर बेनेगल रामाराउ	1-7-1949 से 14-1-1957
5.	के. जी. अंबेगांवकर	14-1-1957 से 28-2-1957
6.	एच. वी. आर. आयंगर	1-3-1957 से 28-2-1962
7.	पी. सी. भट्टाचार्य	1-3-1962 से 30-6-1967
8.	एल. के. झा	1-7-1967 से 3-5-1970
9.	बी. एन. अदारकर	4-5-1970 से 15-6-1970
10.	एस. जगन्नाथन	16-6-1970 से 19-5-1975
11.	एन. सी. सेनगुप्ता	19-5-1975 से 19-8-1975
12.	के. आर. पुरी	20-8-1975 से 2-5-1977
13.	एम. नरसिंहम	2-5-1977 से 30-11-1977
14.	आई. जी. पटेल	1-12-1977 से 15-9-1982
15.	डॉ मनमोहन सिंह	16-9-1982 से 14-1-1985
16.	ए. घोष	15-1-1985 से 4-2-1985
17.	आर. एन. मल्होत्रा	4-2-1985 से 22-12-1990
18.	एस. वेंकटारमणन	22-12-1990 से 21-12-1990
19.	डॉ सी. रंगराजन	22-12-1992 से 21-11-1997
20.	डॉ विमल जालान	22-12-1997 से 6-9-2003
21.	डॉ वाई. वी. रेड्डी	6-9-2003 से 5-9-2008
22.	डी. सुब्बाराव	5-9-2008 से अब तक

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–9 (Unit– 9)

राजकोषीय नीति : भाग–1
Fiscal Policy : Part-1

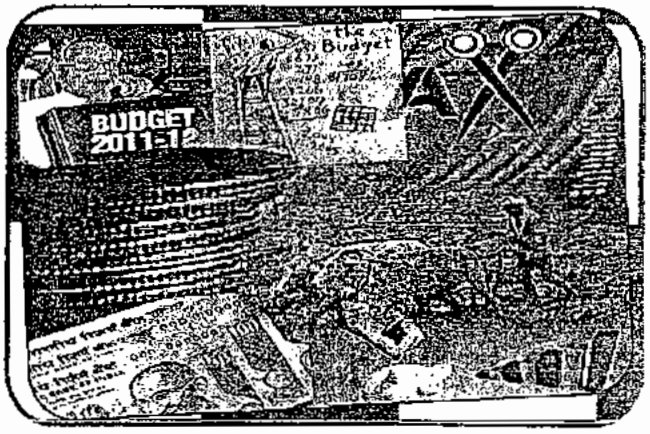

9.1 भारत में बजट की व्यवस्था
(Budgetary System in India)

9.2 बजट के प्राप्तियों और व्यय का विवरण
(Description of Receipts and Expenditures of Budget)

9.3 राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं प्रबंधन एक्ट, 2003
(Fiscal Responsibility And Budget Management Act 2003 - FRBM Act)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

9.1 भारत में बजट की व्यवस्था *(Budgetary System in India)*

संविधान के अनुच्छेद-112 के अंतर्गत हर वित्तीय वर्ष के लिये केन्द्र सरकार की अनुमानित प्राप्तियों (Receipts) तथा व्ययों (Expenditures) का एक विवरण संसद के सामने रखना आवश्यक होता है और इसी वार्षिक वित्तीय विवरण को केन्द्र सरकार का बजट (Budget) कहा जाता है।

ध्यातव्य है कि बजट में तीन लगातार वर्षों के प्राप्तियों और व्ययों का विवरण दिया जाता है-

1. आने वाले वर्ष के लिए बजट अनुमान।
2. चालू वर्ष के लिये संशोधित अनुमान।
3. एक वर्ष पीछे के लिए वास्तविक प्राप्तियाँ तथा व्यय।

राज्य सरकारों की बजट के संबंध में व्यवस्था अनुच्छेद-202 में दी गई है। राष्ट्रपति द्वारा निर्धारित तिथि पर लोकसभा में बजट पेश किया जाता है। हालाँकि, परंपरागत रूप से बजट प्रत्येक वर्ष फरवरी के अंतिम कार्य दिवस पर लोकसभा तथा राज्यसभा में पेश किया जाता है।

संविधान के अनुच्छेद-266 और 267 में बजट के ढाँचे का विवरण दिया गया है, जिसके अनुसार तीन प्रकार के खातों को सरकारी व्यवहार में प्रस्तुत किया जाता है-

1. समेकित कोष (Consolidated Fund)
2. सार्वजनिक खाता (Public Accounts)
3. आकस्मिक कोष (Contingency Fund)

1. समेकित कोष (Consolidated Fund) : अनुच्छेद-266(1) के अनुसार भारत के समेकित कोष (Consolidated Fund) में भारत सरकार की संपूर्ण राजस्व प्राप्तियाँ, सरकार के ट्रेजरी बिल, अर्थोपाय अग्रिम (Ways and Means) के माध्यम से उगाही किये गये ऋण तथा वे सारी मुद्राएँ जो ऋणों के वसूली से प्राप्त होती हैं, रिकार्ड की जाती हैं।

बिना संसद की अनुमति के इस कोष से किसी भी रकम की निकासी नहीं हो सकती। जब तक विनियोग अधिनियम (Appropriate Act) द्वारा इस व्यय को अधिकृत नहीं किया जाय, तब तक इस कोष से धन नहीं निकाला जा सकता। इसी तर्ज पर जिस फंड में राज्य प्राप्तियाँ रिकार्ड की जाती हैं, उसे राज्य समेकित फंड कहते हैं।

2. सार्वजनिक खाता (Public Accounts) : संविधान के अनुच्छेद 266 के तहत इसका उल्लेख किया गया है। इसके अंतर्गत ऐसी प्राप्तियाँ होती हैं, जो वास्तव में सरकार की नहीं होती, लेकिन सरकार दूसरों के लिए इसे अपने पास रखती है और बाद में उन्हें लौटा देती है। ऐसे खातों को सार्वजनिक खाते में प्रदर्शित किया जाता है। इससे पूँजी निकालने के संबंध में संसद से स्वीकृति नहीं ली जाती और इस संबंध में सरकार केवल एक बैंक का काम करती है।

3. आकस्मिक कोष (Contingency Fund) : संविधान के अनुच्छेद 267 के तहत इसका प्रावधान किया गया है, जिसके अंतर्गत आकस्मिक व्यय को पूरा करने के लिये राशि का निर्धारण किया जाता है, जो केन्द्र सरकार के संबंध में राष्ट्रपति तथा राज्य सरकार के संबंध में राज्यपाल के पास प्रयोग के लिये रहता है।

इस रूप में एक निश्चित राशि सुरक्षित की जाती है और एक निश्चित अवधि में इसका प्रयोग किया जाता है। राष्ट्रपति इस पूँजी का प्रयोग प्रधानमंत्री की सलाह से करता है। इस कोष के पीछे उद्देश्य यह है कि आकस्मिक व अनिश्चित व्ययों की पूर्ति के लिए समय के अभाव में इसे संसद की स्वीकृति के लिए न टाला जा सके।

ऐसे आकस्मिक व्ययों के लिए धन, आकस्मिक कोष के द्वारा पूरा किया जाता है और बाद में संसद से अधिकृत होने पर संचित फंड से निकालकर इसमें डाल दिया जाता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

अनुच्छेद-112(2) के अंतर्गत प्रतिवर्ष वित्त मंत्री संसद में एक वित्तीय वक्तव्य प्रस्तुत करते हैं। सरकार के वार्षिक वित्तीय वक्तव्यों को सरकार का बजट कहते हैं। इसे दो भागों में पेश किया जाता है।

भाग (क)
में वित्त मंत्री सरकार के व्ययों का विवरण देते हैं। इसलिए इसे **व्यय बजट** कहते हैं।

भाग (ख)
वित्त मंत्री सरकार की प्राप्तियों का विवरण देते हैं। इसलिए इसे **प्राप्ति बजट** कहते हैं।

संविधान के अनुच्छेद 112(2) के अंतर्गत यह आवश्यक है कि सरकार अपने राजस्व व्ययों तथा अन्य व्ययों के बीच अंतर को दिखाये और इसके लिए बजट को दो भाग में बाँटकर प्रस्तुत किया जाता है-

1. राजस्व बजट (Revenue Budget)
2. पूँजी बजट (Capital Budget)

राजस्व बजट और पूँजी बजट दोनों को पुनः दो-दो भागों में बाँटकर देखा जा सकता है-

- राजस्व बजट (Revenue Budget)
  - राजस्व प्राप्तियाँ (Revenue Receipt)
  - राजस्व व्यय (Revenue Expenditure)
- पूँजी बजट (Capital Budget)
  - पूँजीगत प्राप्तियाँ (Capital Receipt)
  - पूँजीगत व्यय (Capital Expenditure)

राजस्व प्राप्तियों को पुनः दो प्रकार से समझा जा सकता है-

राजस्व प्राप्तियाँ (Revenue Receipt)
- कर राजस्व
- गैर कर राजस्व

पूँजी प्राप्तियों को भी दो प्रकार से समझा जा सकता है-

पूँजीगत प्राप्तियाँ (Revenue Receipt)
- ऐसी प्राप्तियाँ जो केन्द्र सरकार के दायित्व या ऋण में वृद्धि लाती हैं।
- ऐसी प्राप्तियाँ जो केन्द्र सरकार की संपत्तियों में कमी लाती हैं, जैसे- विनिवेश से प्राप्ति।

पूँजीगत व्ययों तथा राजस्व घाटे को पूरा करने के लिए पूँजीगत प्राप्तियों की आवश्यकता होती है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

9.2 बजट के प्राप्तियों और व्यय का विवरण
(Discription of Receipts and Expenditure of Budget)

	प्राप्तियाँ (Receipts)			व्यय (Expenditure)	
राजस्व प्राप्तियाँ (Revenue Receipt)	कर	प्रत्यक्ष कर (Direct Tax)	1. PIT 2. CIT	1. ब्याज व्यय (IP) 2. प्रतिरक्षा व्यय 3. प्रमुख राज-सहायता 4. रख-रखाव व्यय (क) प्रशासनिक व्यय (ख) पुराने कार्यक्रमों पर व्यय 5. अन्य	राजस्व/चालू व्यय Revenue Expenditure RD = RE – RR RS = RR – RE RD = Revenue Deficit RS = Revenue Surplus
		अप्रत्यक्ष कर (Indirect Tax)	3. CD 4. ED 5. ST		
	गैर कर	1. PSU'S द्वारा लाभ 2. ब्याज प्राप्ति 3. अन्य			
पूँजीगत प्राप्तियाँ (Capital Receipt)	1. बाजार उधार (i) घरेलू (ii) विदेशी 2. अन्य (विनिवेश प्राप्ति) 3. ऋण वसूली			1. निवेश (i) घरेलू लोक उद्यम में (क) विभागीय उद्यम में (ख) गैर-विभागीय उद्यम में (ii) बुनियादी ढाँचे में (क) भौतिक बुनियादी ढाँचा (ख) सामाजिक बुनियादी ढाँचा 2. ऋण भुगतान 3. ऋण वितरण - केन्द्रीय कामगारों को - राज्य सरकारों को - मित्र देशों को	पूँजीगत व्यय (Capital Expenditure) CD = CE – CR CS = CR – CE CD = Capital Deficit CS = Capital Surplus

Copyright – Drishti The Vision Foundation

केंद्र सरकार की अनुमानित प्राप्तियों तथा व्ययों का एक विवरण Parliament (संसद) के समक्ष रखना आवश्यक होता है। ध्यातव्य है कि बजट में तीन लगातार वर्षों के व्ययों तथा प्राप्तियों का विवरण होता है। आने वाले वर्ष के लिए बजट अनुमान, चालू वर्ष के लिए संशोधित अनुमान तथा एक वर्ष पीछे के लिए वास्तविक प्राप्ति तथा व्यय का विवरण।

राष्ट्रपति द्वारा तय की गई तिथि पर लोकसभा में बजट पेश किया जाता है और परंपरा यह है कि प्रत्येक वर्ष फरवरी के अंतिम कार्य दिवस पर लोकसभा और राज्यसभा में बजट पेश किया जाता है। हालाँकि, उस दिन बजट पर कोई बहस नहीं होती। इस वर्ष बजट 16 मार्च 2012 को पेश होगा। राज्य सरकारों की बजट के संबंध में व्यवस्था अनुच्छेद 202 में दी गई है।

अब हम बजट में प्रयुक्त शब्दावलियों का अध्ययन करेंगे।

(i) राजस्व व्यय (Revenue Expenditure) : सरकार के जिन व्ययों से न तो परिसंपत्ति में वृद्धि हो और न ही देयता में कमी आए, उन्हें राजस्व व्यय कहते हैं। अर्थात् राजस्व व्यय सरकार द्वारा किया गया ऐसा व्यय है जो सरकार अपनी संस्थागत संस्थाओं को चलाने के लिए करती है। यानी कि परिसंपत्ति या देयता को बनाए रखने के लिए किया गया व्यय राजस्व व्यय कहलाता है।

(ii) पूँजीगत व्यय (Capital Expenditure) : सरकार के जिन व्ययों से या तो परिसंपत्तियों में वृद्धि हो या देयता में कमी आए उसे पूँजीगत व्यय कहते हैं। इस प्रकार यदि सरकार द्वारा किया गया व्यय पूँजी निर्माण करें तो इसे पूँजीगत व्यय कहते हैं। ऋण वितरण भी एक प्रकार से परिसंपत्ति निर्माता की क्रिया है। क्योंकि ज्यादा ऋण वितरण से सरकार ज्यादा ब्याज कमायेगी।

योजनागत एवं गैर-योजनागत व्यय

वर्ष 2011 के बजट तक राजस्व तथा पूँजीगत व्यय को योजनागत तथा गैर-योजनागत में बाँट कर देखा जाता था, लेकिन अब इस परंपरा को समाप्त कर दिया गया है।

(iii) राजस्व प्राप्ति (Revenue Receipt) : सरकार की जो प्राप्तियाँ न तो परिसंपत्ति में गिरावट का प्रतिफल हो और न ही जिसके कारण देयता में वृद्धि हो, उन्हें राजस्व प्राप्तियाँ कहते हैं।

(iv) पूँजीगत प्राप्तियाँ (Capital Receipt) : सरकार की जो प्राप्तियाँ या तो परिसंपत्ति में विपलन या गलावट या गिरावट का प्रतिफल हो या जिनके कारण देयता में वृद्धि हो पूँजीगत प्राप्तियाँ कहलाती हैं।

अतः स्पष्ट है कि-

RE > RR– राजस्व घाटा

CE > CR– पूँजीगत घाटा

Budget Deficit = Total expenditure–Total Receipt

TE (Total Expenditure)

TE - IP = PE (गैर-ब्याज व्यय) — IP (ब्याज व्यय)

गैर-ब्याज व्यय को प्राथमिक व्यय (Primary Expenditure - PE) कहते हैं।

ब्याज व्यय को द्वितीयक व्यय (Secondary Expenditure - SE) भी कहते हैं।

TR (Total Receipts)

TR - MB = PR or PR (Primary Receipts) (गैर-ऋणकारी प्राप्ति)

MB (बाजार उधार) or SR (Secondary Receipts) (ऋणकारी प्राप्ति)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

लोक ऋण (Public Debt)—सरकार के ऊपर जितना ऋण होता है उसे लोक ऋण (Public Debt) कहते हैं। जाहिर है यदि सरकार उधार लेगी तो लोक ऋण बढ़ेगा। बाजार उधार से लोक ऋण (Public Debt) में वृद्धि होती है इसलिए इसे ऋणकारी प्राप्ति कहते हैं। और, बाकी प्राप्तियों को गैर-ऋण प्राप्ति कहते हैं।

जो प्राप्ति लोक ऋण को प्रभावित करती है उसे **द्वितीयक प्राप्ति (Secondary Receipts)** कहते हैं और जो प्राप्ति लोक ऋण को प्रभावित न करे उसे **प्राथमिक प्राप्ति (Primary Receipts)** कहते हैं।

FD (राजकोषीय घाटा - Fiscal Deficit) = TE (कुल व्यय) – PR (प्राथमिक प्राप्ति)

$$= TE - (TR - MB)$$

$$= (TE - TR) + MB$$

$$= BD + MB$$

यदि TE > PR तो इस स्थिति को **राजकोषीय घाटा (Fiscal Deficit)** कहते हैं।

$$\text{अब, } FD = BD + MB$$

चूँकि, 1998 से BD (बजट घाटा) को शून्य कर दिया गया है।

$$\text{अतः } \boxed{FD = MB}$$

राजकोषीय घाटे की आधुनिक परिभाषा उपरोक्त सूत्र के माध्यम से ही दी जाती है। सरकार द्वारा लिये गये बाजार उधार को राजकोषीय घाटा (Fiscal Deficit) कहते हैं। लोक ऋण (Public Debt) में होने वाली वार्षिक वृद्धि को भी राजकोषीय घाटा कहते हैं।

बाजार उधार (MB)

सकल बाजार उधार (Gross Market Borrowing)

किसी राजकोषीय वर्ष में सरकार द्वारा ली गई कुल उधार राशि में से उधार उगाहने की लागत घटाने के बाद शेष राशि को सकल बाजार उधार कहते हैं। जैसे-10000 रु. की उगाही में यदि 200 रु. उगाहने में खर्च होते हैं तो सकल बाजार उधार 9800 रु. होगी।

निवल बाजार उधार (Net Market Borrowing)

सकल बाजार उधार में से पुराने ऋण की किस्त चुकाने के बाद शेष राशि को निवल उधार कहते हैं। जैसे-9800 रु. सकल बाजार उधार है और 1800 रु. की पुरानी किस्त चुकायी जा रही है तो 8000 रु. निवल बाजार उधार होगा।

अब, क्योंकि बाजार उधार (Market Borrowing) दो प्रकार का है और आधुनिक परिभाषा से हम जानते हैं कि

$$\boxed{FD = MB}$$

अतः इस आधार पर FD भी दो प्रकार का होता है-

राजकोषीय घाटा (Fiscal Deficit-FD)

सकल राजकोषीय घाटा (Gross Fiscal Deficit)
सकल बाजार उधार को ही सकल राजकोषीय घाटा कहते हैं।

निवल राजकोषीय घाटा (Net Fiscal Deficit)
निवल बाजार उधार को ही निवल राजकोषीय घाटा कहते हैं।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

प्राथमिक प्राप्तियों के मुकाबले प्राथमिक व्यय के अधिकतम को **प्राथमिक घाटा (Primary Deficit -PD)** कहते हैं।

$$PD = PE - PR$$
$$= (TE - IP) - (TR - MB)$$
$$= TE - IP - TR + MB$$
$$= \underbrace{TE - TR + MB}_{FD} - IP$$

$$\boxed{PD = FD - IP}$$

प्राथमिक घाटा (Primary Deficit) : ब्याज व्यय (IP) के सापेक्ष राजकोषीय घाटे के आधिक्य को प्राथमिक घाटा (Primary Deficit) कहते हैं। चूँकि, अब आधुनिक परिभाषा के अनुसार बाजार उधार ही FD (Fiscal Deficit) है।

इसलिए $\boxed{PD = MB - IP}$

Or

$$\boxed{MB - IP = PD}$$

अतः स्पष्ट है कि ब्याज व्यय के मुकाबले बाजार उधार के आधिक्य को **प्राथमिक घाटा (Primary Deficit)** कहते हैं, या लिये गये ऋण में से ब्याज चुकाने के बाद जितना पैसा वैकल्पिक उपयोग के लिए बच जाता है उसी को प्राथमिक घाटा कहते हैं। अब चूँकि बाजार उधार दो प्रकार का होता है और

$$\boxed{PD = MB - IP}$$

इस आधार पर प्राथमिक घाटा भी दो प्रकार का होता है।

सकल प्राथमिक घाटा (Gross Primary Deficit)

निवल प्राथमिक घाटा (Net Primary Deficit)

1991 के आर्थिक सुधारों के बाद कई वित्तीय सुधार किये गये। और, 1996 से इन्हीं वित्तीय सुधारों का विस्तारीकरण और गहनीकरण किया गया। 1991 में RD, BD, FD सबकुछ बहुत ज्यादा था और भारत की आर्थिक स्थिति किसी भी प्रकार से अच्छी नहीं कही जा सकती थी।

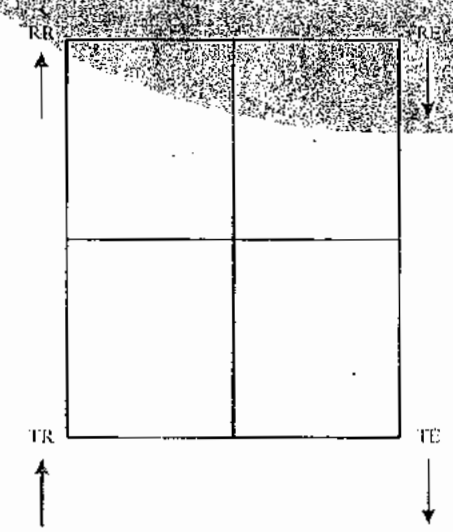

जैसा कि अब हम जानते हैं कि–

RD = RE - RR

RD = Revenue Deficit

RE = Revenue Expenditure

RR = Revenue Receipt

RS = RR - RE

RS = Revenue Surplus

RR = Revenue Receipt

RE = Revenue Expenditure

Copyright – Drishti The Vision Foundation

पुन: FD = TE - PR

अत: TE में कमी के साथ FD में भी कमी आएगी। राजस्व प्राप्ति में वृद्धि करके RD, BD और FD में कमी लाई जा सकती है। पूँजीगत प्राप्ति में वृद्धि करके BD और FD में कमी की जा सकती है।

इसी प्रकार पूँजीगत व्यय CE (Capital Expenditure) और पूँजीगत प्राप्तियाँ (Capital Receipt) के आधार पर विभिन्न घाटों के उतार-चढ़ाव का अध्ययन किया जा सकता है। घाटों को बजट की कमजोरियाँ कहते हैं और घाटों को कम करना बजट का सबलीकरण/सुदृढ़ीकरण कहलाता है।

अब यदि FRBM Act के अनुसार RD में कमी लानी है तो RE (Revenue Expenditure) में कमी लाते हुए RR (Revenue Receipt) में पुन: वृद्धि करनी होगी क्योंकि,

TE = RE + CE

अत: RE (Revenue Expenditure) के बढ़ने से TE (Total Expenditure) में भी वृद्धि होती है, जिसकी परिणति FD के कम होने में होती है।

9.3 राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं प्रबंधन एक्ट, 2003
Fiscal Responsibility And Budget Management Act (FRBM Act)

2003 में संसद ने राजकोषीय सुदृढ़ीकरण तथा सार्वजनिक व्यय के प्रबंधन की दिशा में राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं प्रबंधन एक्ट 2003 (Fiscal Responsibility and budget management act - FRBM Act) के रूप में एक महत्वपूर्ण और प्रभावी कदम उठाया। FRBM बिल दिसंबर 2000 में संसद में रखा गया और कुछ सुधारों के बाद 26 अगस्त-2003 को FRBM Act के रूप में पारित हुआ।

FRBM Act (2003) की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

- सरकार राजकोषीय घाटा (Fiscal Deficit - FD) तथा राजस्व घाटा (Revenue Deficit - RD) को कम करने के लिए पर्याप्त कदम उठाए, जिससे राजस्व घाटा (Revenue Deficit) 30th March 2008 तक समाप्त हो जाए और बाद में पर्याप्त राजस्व आधिक्य का सृजन किया जा सके।
- इसी आधार पर केंद्र सरकार ने राजकोषीय घाटा (Fiscal Deficit - FD) को GDP (Gross Domestic Product) के 3 प्रतिशत स्तर तक कम करने का लक्ष्य रखा।

उपर्युक्त दोनों विशेषताओं को FRBM Act का मात्रात्मक (Quantitative) लक्ष्य (target) कहा जा सकता है तथा निम्नलिखित को गुणात्मक लक्ष्य के रूप में समझा जा सकता है–

- केंद्र सरकार रिजर्व बैंक से उधार नहीं लेगी। उधार उसी स्थिति में लेगी जब नकद प्राप्ति की अपेक्षा नकद व्यय अस्थायी रूप से अधिक हो। ऐसी स्थिति में सरकार अग्रिम के रूप में रिजर्व बैंक से उधार ले सकती है।
- केंद्र सरकार अपने राजकोषीय क्रियाकलापों में अधिक से अधिक पारदर्शिता लाने का प्रयास करे।
- प्रतिवर्ष केंद्र सरकार संसद के दोनों सदनों में वार्षिक वित्तीय विवरण (Annual Financial Statement) तथा माँग अनुदान (Demand for Grant) के साथ तीन विवरण प्रस्तुत करेगी जो इस प्रकार हैं–

  (a) Macro Economic Framework statement

  (b) Medium Term fiscal Policy Statement

  (c) Fiscal Policy strategy statement

- प्रतिवर्ष बजट के साथ सरकार समष्टि आर्थिक समीक्षा वक्तव्य पेश करे। (तिमाही और छमाही आर्थिक समीक्षा भी पेश करना सरकार के लिये आवश्यक है)
- बजट के साथ मध्यमकालिक पंचवर्षीय राजकोषीय नीति का वक्तव्य भी सरकार पेश करे।
- बजट के साथ मध्यमकालिक राजकोषीय रणनीति वक्तव्य पेश करे। इसी आधार पर जुलाई 2003 में पहली तिमाही आर्थिक समीक्षा पेश की गई थी और December 2003 में पहली छमाही आर्थिक समीक्षा पेश की गई थी।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

FRBM के लक्ष्यों के अनुसार यदि (Revenue Deficit-RD) को शून्य और Fiscal Deficit-FD को GDP के तीन प्रतिशत के स्तर तक लाना है तो सरकार को अपने कर प्राप्ति को बढ़ाना होगा और साथ ही व्यय को कम करना होगा। लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए समयबद्ध कार्यक्रम की सिफारिश आमंत्रित करने के लिए तृतीय केलकर समिति (Kelkar Committee– III) का गठन किया गया और इसी आधार पर 2004 में FRBM नियमावली (FRBM Rules) अपनायी गई।

FRBM नियमावली के कुछ प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

(i) 2004-05 से शुरू होकर प्रत्येक वित्तीय वर्ष में राजस्व घाटे को GDP के प्रतिशत के रूप में 0.5 प्रतिशत या अधिक कम करना।

(ii) 2004-05 से शुरू होकर प्रत्येक वित्तीय वर्ष में राजकोषीय घाटे को GDP के प्रतिशत रूप में 0.3 प्रतिशत या अधिक कम करना।

(iii) 2004-05 में GDP के 9 प्रतिशत से अधिक अतिरिक्त देयता न सृजित करना जिसमें विदेशी ऋण भी शामिल है तथा आने वाले वर्षों में इससे GDP के प्रतिशत रूप में कम से कम 1 प्रतिशत की कमी लाना।

कर्नाटक FRBM नियमावली को लागू करने वाला पहला राज्य था।

लेकिन सितंबर 2008 में आयी वैश्विक आर्थिक मंदी के कारण भारत के निर्यात क्षेत्र में तेजी से गिरावट आयी और निर्यात क्षेत्र में काम करने वाले लोगों की नौकरियाँ असुरक्षित होने लगी, जिससे सरकार की कर प्राप्ति में कमी आई तथा राजस्व घाटा (Revenue Deficit–RD) और राजकोषीय घाटा (Fiscal Deficit–FD) में वृद्धि हुई। इन समस्याओं को देखते हुए अर्जुन सिंह गुप्त आयोग ने सरकार से सिफारिश की कि मंदी से राहत दिलाने के लिए कर में छूट देनी चाहिए या कर वसूली को आगे के लिए माफ कर देना चाहिए। पुनः जिन लोगों के रोजगार खतरे में हैं, उन्हें राज-सहायता (Subsidy) देनी चाहिए। हालाँकि राज-सहायता बढ़ाने से सरकारी व्यय में भी वृद्धि हुई जिसके कारण RD और FD में भी बढ़ोतरी हुई। लेकिन यह सब करना सरकार के लिए आवश्यक था क्योंकि मंदी की शिकार अर्थव्यवस्था को Fiscal Stimulation देकर अर्थव्यवस्था को रास्ते पर लाने का कार्य देश के लिए अधिक हितकारी है। अतः घाटे हमेशा अहितकारी नहीं बल्कि कभी-कभी हितकारी भी होते हैं।

इस तरह से जानबूझकर कर प्राप्ति से अधिक व्यय करके आर्थिक गतिशीलता बढ़ाने की नीति को घाटे का वित्त पोषण (Deficit Financing) कहते हैं। दूसरी भाषा में बाजार से ऋण लेकर व्यय बढ़ाते हुए आर्थिक गतिशीलता को बढ़ाने की नीति को घाटे का वित्त पोषण या Deficit Financing कहते हैं।

ऐसा माना जाता है कि ऐसा करने पर अर्थव्यवस्था जल्दी ही मंदी से बाहर निकल आती है। मंदी से Recovery के बाद सरकार द्वारा कर वसूली को पुराने दर पर लाने के लिए RD और FD को पुनः कम करने की प्रक्रिया को **Fiscal withdrawal** (राजकोषीय निकासी) कहा जाता है। राजकोषीय निकासी के बाद कर की दर को धीरे-धीरे बढ़ाते हुए Subsidy को विभिन्न क्षेत्रों में कम करते हैं।

FRBM लक्ष्यों की पूर्ति के लिए 2008-09 का वर्ष निर्धारित था लेकिन वैश्विक मंदी के कारण इसे पूरा करने में बाधा आयी और अब इसे 2012-13 तक पूरा करने का लक्ष्य रखा गया है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–9 (Unit– 9)

राजकोषीय नीति : भाग–2
Fiscal Policy : Part-2

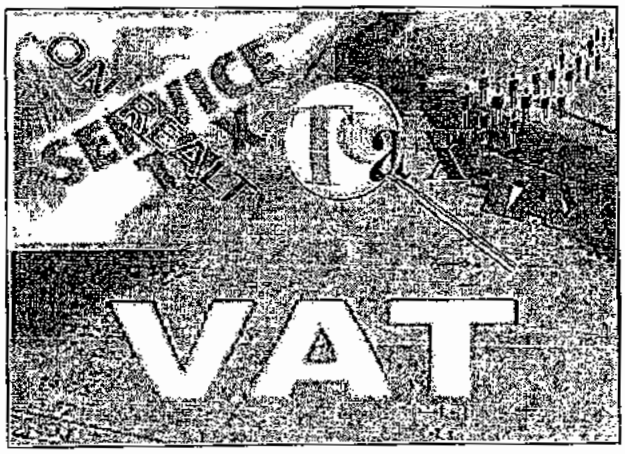

9.4 करारोपण की पद्धतियाँ *(Methods of Taxation)*

9.5 अच्छी कर प्रणाली के गुण *(Attributes of a Better Tax System)*

9.6 भारत में कर ढाँचा *(Indian Tax Structure)*

9.7 लैफर वक्र *(Laffer Curve)*

9.8 कर, उपकर तथा अधिभार (Surcharge) *(Tax, Cess & Surcharge)*

9.9 *(TOT Vs VAT)*

9.10 *(Turn Over Taxation-TOT)*

9.11 *Value Added Tax-VAT*

9.12 *VAT* विधि का इतिहास *(History of VAT System)*

9.13 *GST* लागू करने के लिए 115वाँ संविधान संशोधन विधेयक

9.14 नया 'डायरेक्ट टैक्स कोड' *(Direct Tax Code – DTC)*

9.15 13वाँ (तेरहवाँ) वित्त आयोग

Copyright – Drishti The Vision Foundation

9.4 करारोपण की पद्धतियाँ *(Methods of Taxation)*

करारोपण की पद्धतियों को तीन प्रकार से समझा जा सकता है-

1. **प्रतिगामी कर प्रणाली (Regressive Tax System)**
यदि कर की दर आय में वृद्धि के साथ क्रमशः घटती जाये, तो उसे प्रतिगामी कर प्रणाली कहते हैं।

2. **आनुपातिक कर प्रणाली (Proportional Tax System)**
यदि कर की दर आय में परिवर्तन के साथ भी परिवर्तित न हो तो ऐसी कर प्रणाली को आनुपातिक कर प्रणाली कहते हैं।

3. **प्रगतिशील कर प्रणाली (Progressive Tax System)**
यदि कर की दर में आय में वृद्धि के साथ वृद्धि हो, तो ऐसी कर प्रणाली को प्रगतिशील कर प्रणाली कहते हैं।

इसे इस तालिका से समझा जा सकता है-

आय	प्रतिगामी		आनुपातिक		प्रगतिशील	
	दर	कुल कर	दर	कुल कर	दर	कुल कर
1000	10	100	100	10	10	100
5000	8	10	500	20	20	1000
10000	6	10	1000	30	30	3000
15000	5	10	1500	40	40	6000

इस प्रकार कोई भी कर, चाहे वह प्रत्यक्ष हो या परोक्ष, प्रगतिशील/आनुपातिक या प्रतिगामी हो सकता है-

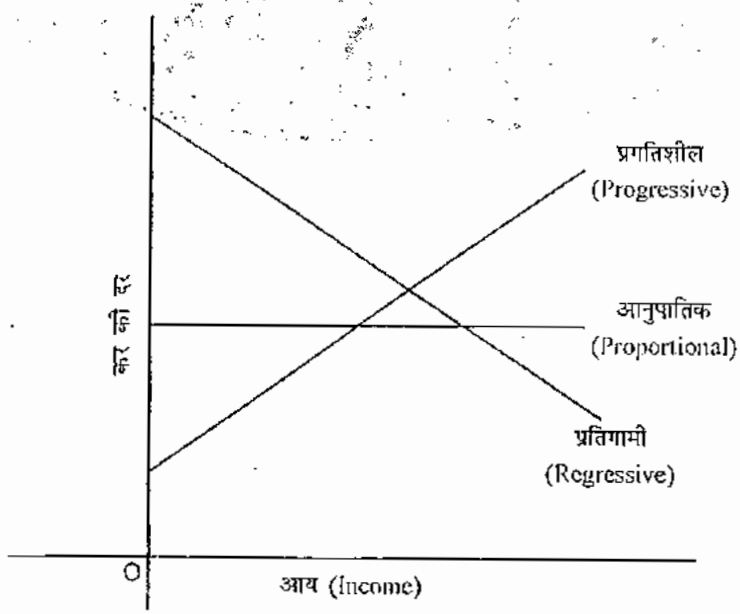

Copyright – Drishti The Vision Foundation

9.5 अच्छी कर प्रणाली के गुण *(Attributes of a Better Tax System)*

अच्छी कर प्रणाली के 6 गुण माने जाते हैं।

- समता (Equity)
- उत्पादकता (Productivity)
- मितव्ययिता (Economy)
- उत्प्लावकता (Buoyancy)
- लोच (Elasticity)
- सुविधाजनक (Convenience)

(i) समता (Equity)–भारतीय कर प्रणाली कुल मिलाकर प्रगामी (Progressive) बताई जाती है, यद्यपि कुछ वस्तुओं पर उत्पादन शुल्क और बिक्री कर प्रतिगामी (Regressive) है। भारतीय आयकर का ढाँचा प्रगामी है। एक सीमा तक आयकर मुक्त है और इस सीमा के आगे आय बढ़ने पर आयकर की दर बढ़ती जाती है। परोक्ष करों के बारे में आम धारणा यह है कि वे प्रतिगामी हैं क्योंकि उत्पादन शुल्क से राजस्व का अधिकांश भाग जनसाधारण के उपभोग की वस्तुओं जैसे सूती वस्त्र, चाय, चीनी, तंबाकू, पेट्रोलियम उत्पादों इत्यादि से प्राप्त होता है।

(ii) उत्पादकता (Productivity)–कर प्रणाली की व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि देश की पूरी अर्थव्यवस्था का ICOR (Incremental Capital Output Ratio) कम हो। कर ढाँचे की व्यवस्था इस प्रकार होनी चाहिए कि संसाधनों का कुशलतम प्रयोग करने वाले के ऊपर कर भार कम हो और अकुशल दोहन करने वाले पर कर का भार अधिक रखा जाय। जैसे– देश में बड़ी कारों के प्रयोग पर अधिक Tax लगाना चाहिए क्योंकि इससे सड़क आदि का दुरुपयोग होता है और Public Transport को बढ़ावा देने के उपाय सरकार की कर नीतियों के द्वारा होने चाहिए।

(iii) मितव्ययिता (Economy)–कर प्रणाली इस प्रकार की होनी चाहिए कि संभाव्य कर का अधिकतम संभव अंश न्यूनतम वसूली लागत के आधार पर किया जाय। समाज जब मितव्ययी होगा तो सरकार की संचित निधि में धन आयेगा।

(iv) उत्प्लावकता (Buoyancy)–कर प्रणाली इस प्रकार से निर्धारित होनी चाहिए कि आर्थिक क्रियाकलापों में विस्तार होने पर कर संग्रह स्वतः बढ़ जाय और आर्थिक क्रियाकलापों में संकुचन होने पर कर-संग्रह स्वतः कम हो जाए अर्थात् कर उत्पादन अनुपात (Tax Production Ratio) एवं कर उपभोग अनुपात (Tax Consumption Ratio) में स्थायित्व बना रहे। यदि उत्पादन बढ़ता है और कर संग्रह में वृद्धि न हो तो इसे कर के उत्प्लावकता में कमी कहेंगे। कर उत्पादन अनुपात में गिरावट उत्पादकता के अभाव का सूचक होता है।

(v) लोच (Elasticity)–कर प्रणाली ऐसी होनी चाहिए कि नीतिगत सुधार का परिणाम उत्साहवर्धक हो। नीतिगत परिवर्तन के प्रति कर प्रणाली में संवेदनशीलता होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में कर प्रणाली में जड़ता नहीं होनी चाहिए।

कर प्रणाली में लचीलेपन का अर्थ होता है करों में आय लोच (Income Elasticity) काफी हो। जब राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है तो कर राजस्व में अनुपात से अधिक वृद्धि हो जाती है तो इस कर ढाँचे को लचीला माना जा सकता है। करों की दरों में परिवर्तन कराधान के आधार में विस्तार यानि कि नये लोगों और नयी वस्तुओं पर आरोपित करों को भी जब व्यय में रखकर आय के प्रति कर राजस्व की प्रतिक्रिया की जाँच की जाती है तो वास्तव में हम करों के लचीलेपन को ही मालूम करते होते हैं।

(vi) सुविधा (Convenience)–भारतीय कर ढाँचा प्रशासनिक रूप से कार्य-कुशल नहीं माना जा सकता। करदाताओं के लिए प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों कर बहुत जटिल हैं। सरकार के करदान की प्रक्रिया और कानून इतने सरल होने चाहिए कि करदाताओं को करदान में आने वाली असुविधाओं को न्यूनतम किया जा सके।

9.6 भारत में कर ढाँचा *(Indian Tax Structure)*

भारत के संघात्मक संविधान में सरकार के तीनों स्तरों केन्द्र सरकार, राज्य सरकार और स्थानीय सरकार में कराधान के अधिकारों का आबंटन किया गया है। हालाँकि, स्थानीय सरकारों को जो कि सीधे तौर पर राज्य सरकारों के अंतर्गत आती है, को स्पष्ट रूप से कोई हिस्सा नहीं दिया गया है। राज्य सरकारों को कराधान की दृष्टि से कुछ अधिकार दिये गये हैं, लेकिन ज्यादातर अधिकार केंद्र सरकार के पास हैं।

केंद्र और राज्य सरकारों के बीच कराधान के अधिकारों का स्पष्ट विभाजन है और ऐसा कोई भी कर नहीं है जिसे लगाने का अधिकार केंद्र और राज्य दोनों सरकारों को दिया गया हो। वर्तमान में केंद्र सरकार द्वारा लगाये जाने वाले करों में सीमा शुल्क (Customs Duty), केंद्रीय उत्पादन शुल्क (Union Excise Duty), आयकर (Income Tax), निगम कर (Corporation Tax) और सेवा कर (Service Tax) हैं। ये सभी कर हालाँकि केंद्र सरकार द्वारा लगाये जाते हैं, लेकिन इनसे प्राप्त राजस्व को केंद्र और राज्य सरकारों में बाँटा जाता है। करों का वितरण केंद्र और राज्य सरकारों में किस प्रकार होगा, यह वित्त आयोग (Finance Commission) की सिफारिशों से तय होता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

जिन करों को लगाने का अधिकार राज्य सरकारों को है, उनसे एकत्रित किये गये समस्त राजस्व को वे अपने कार्यों पर व्यय करते है। इस श्रेणी में उल्लेखनीय कर हैं–बिक्री कर (Sales Tax), राज्य उत्पादन शुल्क (State Excise Duties), कृषि आय पर कर (Tax on Agricultural Income), मनोरंजन कर (Entertainment Tax) आदि।

कुछ कर हालाँकि केंद्र सरकार द्वारा लगाये जाते हैं लेकिन उन्हें एकत्रित करने का उत्तरदायित्व भी उसी पर होता है। लेकिन केंद्र जो भी राजस्व प्राप्त करता है, उसे राज्य सरकारों में बाँटा जाता है। इस श्रेणी में मुख्य कर और शुल्क हैं- रेल किराए और भाड़े पर शुल्क, समुद्र और वायु से यात्रा करने और माल की ढुलाई पर कर, समाचार पत्रों के क्रय-विक्रय और उनके विज्ञापन पर कर आदि।

कुछ कर ऐसे भी होते हैं, जो केंद्र सरकारों द्वारा बस लगाये भर जाते हैं, लेकिन उनको एकत्रित करने की जिम्मेदारी राज्य सरकारों की होती है और राज्य सरकारें ही इस राशि को खर्च करती हैं। इन्हीं जटिलताओं के कारण लोगों को करों से कानूनी ढंग से बचने और करों की चोरी करने का मौका मिल जाता है। भारतीय कर प्रणाली में सरलता और निश्चितता के सिद्धांतों की अवहेलना तो की ही गई है, अर्थशास्त्री केल्डोर के अनुसार भारत के कर कानूनों की परिभाषा में भी दोष है। और, इसका परिणाम यह होता है कि कर अधिकारी अपने ढंग से कर के लिये कानूनों की व्याख्या करके करदाताओं को परेशान करता है। कर विभाग में व्याप्त भ्रष्टाचार को बढ़ाने में इन कारकों का अत्यधिक योगदान है।

9.7 लैफर वक्र *(Laffer Curve)*

अमेरिकन अर्थशास्त्री आर्थर लैफर (Arthur Laffer) ने कर से राजस्व की प्राप्ति और कर की दर को बीच संबंध को प्रतिपादित किया है। उन्होंने कहा कि करों की दर का एक इष्टतम स्तर (Optimum Level) होता है जिससे ऊपर की गई कर में वृद्धि के साथ कर राजस्व में कमी आती है तथा उसके नीचे की करों की दर में कमी करके राजस्व में कमी की जाती है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि करों की अधिक ऊंची दर पर उत्पादन हतोत्साहित होता है, जिसके फलस्वरूप कर राजस्व में कमी होती है। इस स्थिति में अर्थव्यवस्था में उत्पादन तथा आय में वृद्धि के फलस्वरूप कर-राजस्व में वृद्धि हेतु कर की दर में कटौती अनिवार्य है। जैसे-जैसे कर की दर में कटौती होती है वैसे-वैसे कर-राजस्व में वृद्धि होती है। यह तब तक होती है जब तक कि इष्टतम स्तर की प्राप्ति नहीं हो जाती। लैफर के निष्कर्ष को व्यक्तिगत आयकर तथा निगम कर के संदर्भ में देखा जाता है।

अगर आधार अक्ष पर हम करों की दर तथा लम्बे अक्ष पर कुल कर राजस्व प्रदर्शित करते हैं तो दोनों के बीच संबंध दर्शाने वाला जो वक्र प्राप्त होती है, उसे हम 'लैफर वक्र' कहते हैं।

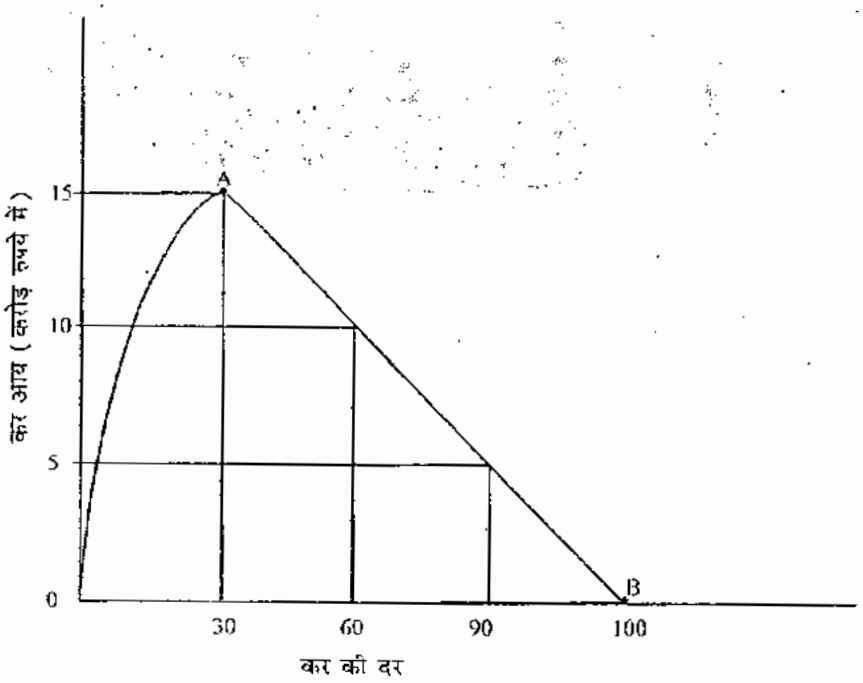

Copyright – Drishti The Vision Foundation

चित्र से स्पष्ट है कि यदि कर की दर 100% है, तब कर राजस्व शून्य है। लेकिन, जैसे-जैसे हम बिंदु B से A की ओर जाते हैं अर्थात् जैसे-जैसे कर की दर कम होती है, वैसे ही कर राजस्व में वृद्धि होती है। कर की दर जब 90% है, तब कर आय 5 करोड़ रु० है और जब दर 60% है तब कर आय 10 करोड़ रु० है। जब दर 30% है तब सर्वाधिक कर आय 15 करोड़ रु० है। कर की दर में कटौती के बाद राजस्व में वृद्धि तब तक होती है, जब तक यह 30% नहीं हो जाती। इसके बाद कर की दरें में कटौती कर राजस्व में वृद्धि नहीं आती है। लैफर वक्र 'पूर्ति पक्षीय अर्थशास्त्र' (Supply Side Economics) का एक पक्ष प्रदर्शित करता है।

भारत में चाणक्य द्वारा ने भी कहा था कि कर की दर को इतना कम रखना चाहिए कि करदाता को इसका अहसास ही न हो और कर का भार लोगों पर वैसा ही हो जैसे हाथी के कंधे पर धूलकण का भार हो। इसका अर्थ हुआ कि कर का भार इतना कम होना चाहिए कि लोग स्वेच्छा से कर दें। एक सीमा तक करदाता कर का भार सहन कर सकता है लेकिन सीमा पार करने के बाद कर की राशि कम होने लगती है जैसा कि आर्थर लाफर ने कहा है।

1970 में भारत सरकार द्वारा व्यक्तिगत आयकर की उच्चतम सीमा को 92.5 प्रतिशत कर दिया गया। अर्थात् यदि कोई व्यक्ति वर्ष में एक लाख रुपये अर्जित करता है तो उसे 92.5 हजार रुपये सरकार के पास कर के रूप में चुकता करना होगा। निश्चित रूप से यह कानून दुविधाजनक था और इसके खिलाफ जन-प्रतिक्रिया इस रूप में हुई कि लोगों ने 'कितना कमाया' यह बताना बंद कर दिया। कर व्यवस्था कुछ इस प्रकार थी–

0 – 5000 k — कर – 0%

500k – 10000k — कर – 10% (10000 की आय में 9000 रुपये प्राप्त होंगे)

10000k – 100000k — कर – 92.5% (100000 की आय में 7500 रुपये प्राप्त होंगे)

अतः जाहिर है कि ऐसी कर प्रणाली में ज्यादातर लोग कर वंचना का अनुसरण करेंगे और काले धन की मात्रा बढ़ेगी। आय के जिस अंश की सूचना सरकार को न दी जाए वह काला धन कहलाता है। काला धन 1970 के दशक में भारत सरकार के गलत कर नीतियों के कारण था। उस समय भारत सरकार CPM के बाहरी दबाव के कारण चल रही थी तथा व्यापक लाइसेंसिंग नीति तथा बैंकों का राष्ट्रीयकरण सरकार की नीतियों में सर्वोपरि थी।

1978 में मोरारजी देसाई की सरकार ने उस दर को 97.5 प्रतिशत कर दिया। और उसी अनुपात में कर वंचना और बढ़ी। यदि काली अर्थव्यवस्था, सफेद अर्थव्यवस्था के साथ लगातार बढ़ती जाए तो ऐसी गतिशील काली अर्थव्यवस्था को समानांतर अर्थव्यवस्था (Parallel Economy) कहते हैं। 1970-80 के दशक में काले धन के रूप में भ्रष्टाचार का प्रसार हुआ और इसे व्यापक सामाजिक मान्यता मिली, नई पीढ़ी के दिमाग में गलत संदेश गया।

1991 के आर्थिक सुधारों के बाद सरकार ने सुधार करना शुरू किया और कर की दर को धीरे-धीरे कम करना शुरू किया। ऐसी बहुत सी वस्तुएँ तथा सेवाएँ जिन पर कर नहीं लगाया गया था, उन पर कर भी लगाया गया। साथ ही कर की दर को कम करके दायरे का विस्तार किया गया। सरकार लगातार सेवाओं को प्रोत्साहित कर रही थी इसलिए कई ऐसी सेवाओं को जैसे हवाई यात्रा, रेलयात्रा पर सरकार ने सेवा कर आरोपित किया और लोगों ने इसे सहजता से स्वीकार भी किया।

9.8 कर, उपकर तथा अधिभार *(Tax, Cess & Surcharge)*

कर ऐसा अनिवार्य अंशदान है जिसे करदाता बिना प्रतिफल के कर आधार से संबंधित होने के लिए सरकार को देता है। कर किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए नहीं लगाया जाता जबकि, उपकर (Cess) तथा अधिभार (Surcharge) दोनों किसी उद्देश्य विशेष की पूर्ति हेतु राजस्व की उगाही के लिए लगाया जाता है। कर के साथ कर आधार पर किसी विशेष प्रयोजन के लिए लगाया गया कर, उपकर (Cess) होता है जबकि कर के ऊपर कर-अधिभार (Surcharge) होता है। इसकी गणना कर दायित्व पर की जाती है। सामान्यतः अधिभार (Surcharge) प्रत्यक्ष कर पर लगाया जाता है परन्तु उपकर (Cess) प्रत्यक्ष एवं परोक्ष दोनों करों के साथ लगाया जाता है। सैद्धांतिक रूप से उपकर (Cess) (शिक्षा आदि) कर आधार पर लगाया जाता है तथा अधिभार (Surcharge) कर दायित्व पर लगाया जाता है। हाल में भारत में उपकर (Cess), अधिभार (Surcharge) की तरह कर दायित्व पर लगाया जा रहा है।

अधिभार (Surcharge) (Surcharge) कर राशि के ऊपर लगाया जाता है। यदि 100 रुपये की ट्रेन के टिकट के ऊपर 10 प्रतिशत का परिवहन कर लगाया जा रहा है तो इसका मतलब हुआ कि परिवहन कर 10 रुपये है। 10 रुपये के ऊपर यदि 10% अधिभार (Surcharge) है, तो अधिभार का मान एक रुपये होगा।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

उपकर (Cess) भी एक प्रकार का Surcharge ही है लेकिन उपकर (Cess) तथा अधिभार (Surcharge) में गुणात्मक अंतर है। नैसर्गिक विपदाओं से निपटने के लिए अधिभार (Surcharge) जैसे भूकंप अधिभार (Earthquake surcharge), चक्रवात अधिभार (Cyclone Surcharge) आदि लगाये जाते हैं तो नियमित विकास कार्यों जैसे शिक्षा उपकर (Education Cess), सड़क उपकर (Road Cess), पेट्रोलियम उपकर (Petroleum Cess) आदि का प्रावधान किया जाता है।

1991 के बाद से जहाँ वांछित करों की दर ऊँची थी उन्हें धीरे-धीरे कम किया गया है और जहाँ करों की दर वांछित से कम थी, उन्हें बढ़ाया गया है। कर के जिस दर के सापेक्ष, कर राशि अधिकतम हो जाए उस दर को ईष्टतम दर (Optimum Rate) कहते हैं। कर की दरों को घटाने आदि की प्रक्रिया को करों का विवेकीकरण कहते हैं। कर की दर के विवेकीकरण को Convergence of Tax भी कहा जाता है।

कर के विवेकीकरण से तात्पर्य है कि करदान की प्रक्रिया पारदर्शी एवं सुविधाजनक हो, कर के दायरे को फैलाया जाए और कर की दर को कम किया जाये। क्योंकि, कर का दायरा बढ़ने से ही करदान की प्रक्रिया में उत्पलावकता (Buoyancy) का गुण विकसित होता है। यदि कर का भार कम किया जाता है, तो लोगों का मनोबल बढ़ता है और वे कर की राशि को स्वेच्छा से जमा करते हैं। और, इस प्रकार कर की दर कम होने से कर वंचना में भी कमी आती है। कर वंचना में कमी आने से काली अर्थव्यवस्था में गिरावट आती है और सरकार धन का प्रयोग कल्याणकारी कार्यों में कर पाती है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

9.9 (TOT Vs VAT)

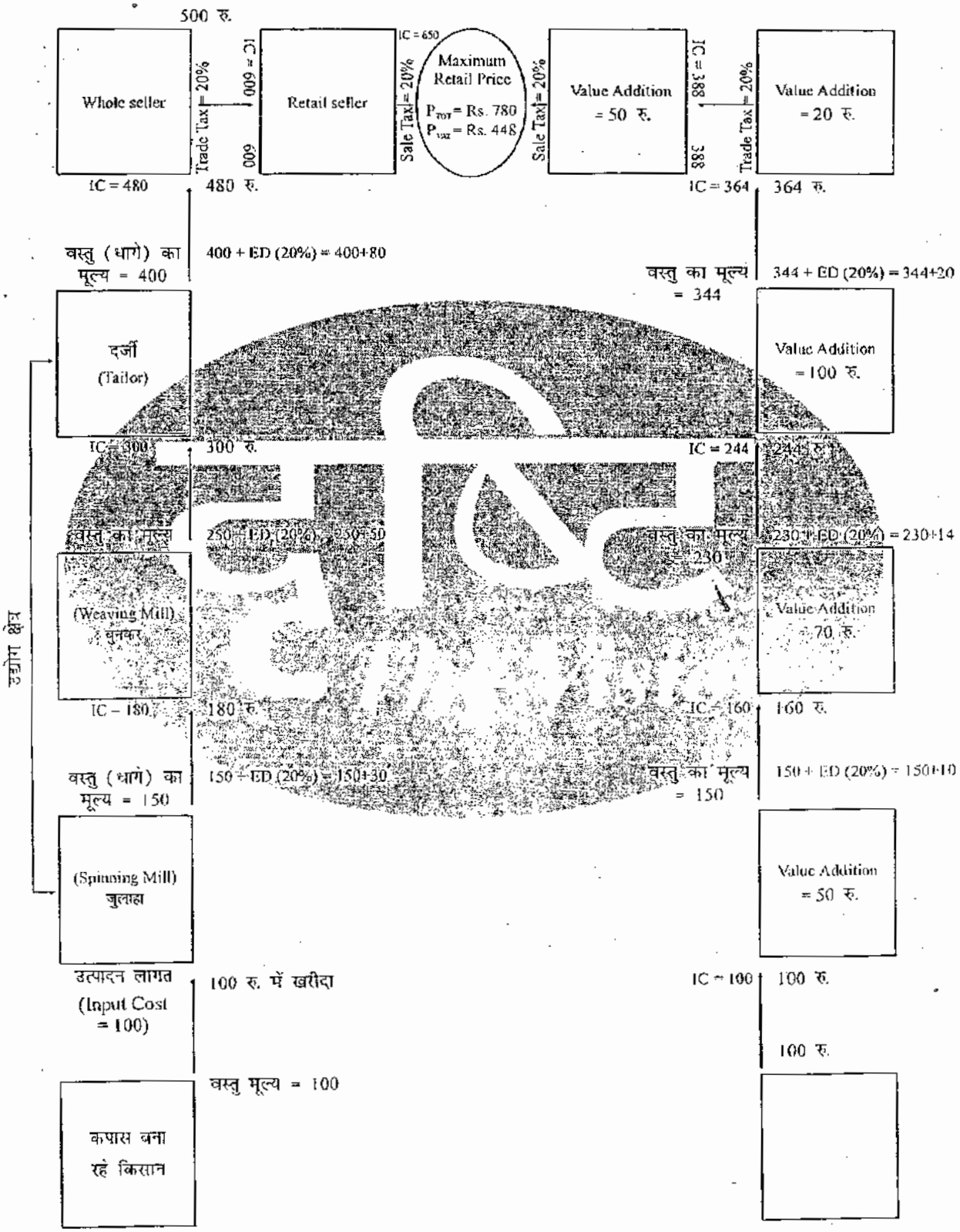

Copyright – Drishti The Vision Foundation

9.10 Turn Over Taxation-TOT

यदि उत्पादन शृंखला के प्रत्येक स्तर पर वस्तु के मूल्य के आधार पर कर आकलन किया जाए तो इस आकलन विधि को TOT (Turn Over Taxation) कहा जाता है।

9.11 Value Added Tax-VAT

यदि उत्पादन शृंखला के प्रत्येक स्तर पर वस्तु के मूल्य के बजाय मूल्य संवर्धन के आधार पर कर का आकलन किया जाए तो इस आकलन विधि को मूल्य वर्धित कर या value Added Tax कहते हैं।

उपभोक्ता वर्ग पर VAT प्रणाली का प्रभाव

प्रति इकाई कर भार कम हो जाने के कारण VAT पद्धति के अनुसार कीमतों में गिरावट आने लगती है, जिससे उपभोक्ता वर्ग अपना उपभोग बढ़ा पाते हैं और कई वंचित उपभोक्ता उपभोग शुरू कर पाते हैं यानी कि न सिर्फ उपभोग का स्तर उन्नत होता है बल्कि उपभोग संबंधी सामाजिक विषमता भी कम होती है।

उपभोग स्तर उन्नत होने से Human Development Index – HDI, Gender Development Index – GDI आदि के स्तर में वृद्धि होती है तो लॉरेंज वक्र के ढाल में वृद्धि होती है। और इसप्रकार यदि उपभोग की विषमता में कमी आयेगी तो विभिन्न वर्गों के बीच विषमताकारी चेतना कम होगी और सामाजिक सांस्कृतिक चेतना में सुधार होगा।

उत्पादक वर्ग पर VAT प्रणाली का प्रभाव

उपभोक्ताओं के सबसे करीबी खुदरा विक्रेता ही होते हैं और उपभोग बढ़ने से खुदरा व्यापारियों का विक्रय बढ़ने लगता है। विक्रय बढ़ने से उनके आय में वृद्धि होती है और आय में वृद्धि होने के साथ उन्हें अपना उपभोग बढ़ाने में मदद मिलती है। इस पूरी प्रक्रिया में उत्पादक वर्ग अपना बचत बढ़ाने में सफल होते हैं और ज्यादा ग्राहकों के आने पर अपना क्षमता विस्तार भी कर पाते हैं और इस प्रकार रोजगार के अवसरों में पुनः वृद्धि होती है।

खुदरा विक्रेताओं की तरह ही थोक विक्रेताओं पर भी VAT का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। क्योंकि, खुदरा व्यापार और थोक व्यापार मिलकर घरेलू व्यापार (Domestic Trade) का निर्माण करते हैं, अतः इस प्रकार घरेलू व्यापार पर भी VAT का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। थोक व्यापार की उत्पादकता बढ़ने से समाज के ऐसे लोग इसमें शामिल हो पाते हैं, जो परंपरागत रूप से इससे अलग रहते हैं, और इस प्रकार घरेलू व्यापार के सामाजिक दायरे का विस्तार होता है, परंपरागत पेशों में अन्य वर्ग के लोग निवेश करते हैं और इस प्रकार वर्गभेद की भी चेतना धीरे-धीरे कम होती है, और इस प्रकार सामाजिक विषमता में कमी आती है और राष्ट्रीय एकता को इस प्रक्रिया में बल मिलता है।

विदेश व्यापार पर VAT प्रणाली का प्रभाव

मूल्य संवर्धन विधि अपनाने से घरेलू वस्तुओं के मूल्य में कमी आती है और उनके आयात में कमी के साथ निर्यात में वृद्धि होती है, जैसे-- यदि किसी Jeans का मूल्य TOT प्रणाली के अंतर्गत 1400 रु. है लेकिन VAT प्रणाली अपनाने के बाद वही Jeans अब 800 रु. में उपलब्ध है, तो जाहिर है कि अब जींसों का निर्यात पहले से काफी बढ़ जायेगा और भुगतान संतुलन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

सरकार की कर प्रणाली पर VAT प्रणाली का प्रभाव

जैसा कि हम आर्थर लाफर वक्र के माध्यम से पढ़ चुके हैं कि यदि कर का भार कम होगा तो कर वंचना में भी कमी आएगी। कर कानून के अनुपालन की प्रक्रिया भी करभार कम होने से तेज होती है, और लोग स्वेच्छा से कर देने लगते हैं। यदि प्रति इकाई कर की राशि कम होगी तो सकल कर राशि में वृद्धि होगी, साथ ही कर वंचना कम होने से सकल कर राशि में वृद्धि होती है। यह पूरी प्रक्रिया धीरे-धीरे होती है।

पूर्व में TOT प्रणाली के माध्यम से उद्योगपतियों को बस 'कितने में बेचा' वाला प्रमाण पत्र ही दिखाना होता था, लेकिन VAT प्रणाली के माध्यम से आकलन एक आधुनिक लेखांकन व्यवस्था पर आधारित है, इसलिए इसमें प्रशिक्षित लेखाकारों (Trained Accountants) की आवश्यकता होती है अतः इनकी खपत भी बढ़ जाती है, और कई लेखाकारों को इसमें रोजगार प्राप्त होता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

हालाँकि, व्यापारियों तथा उद्योगपतियों ने इस पूरी प्रक्रिया का विरोध किया, क्योंकि इससे लेखांकन लागत बढ़ जाती है। TOT की प्रक्रिया में यदि व्यापारी झूठ भी बोले कि उन्होंने सामान कम में बेचा तो इसकी पुष्टिकरण का कोई तरीका नहीं होता था, लेकिन VAT के माध्यम से व्यापारी ऐसा नहीं कर पायेंगे, क्योंकि (a)की तुलना में (b) के अतिशयोक्तिपूर्ण आकलन से की गयी गलती को आसानी से पकड़ा जा सकता है।

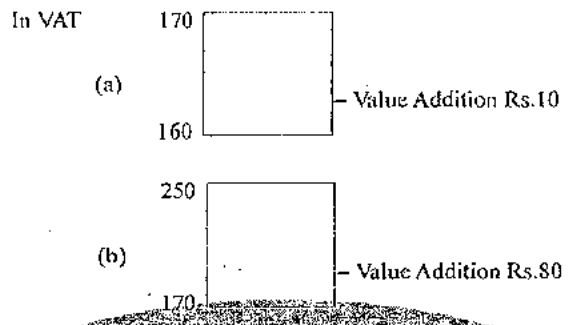

चूँकि, यह पूरी प्रक्रिया आर्थिक लेखांकन पर आधारित है और प्रत्येक स्तर पर आगत और लागत के साक्ष्य उपस्थित होते हैं और भ्रष्टाचार की संभावना न्यूनतम हो जाती है।

9.12 VAT विधि का इतिहास *(History of VAT System)*

VAT विधि का प्रतिपादन Siemens नामक एक व्यक्ति ने 1918 में किया और फ्रांस की सरकार ने इसे सबसे पहले 1954 में अपना कर निर्धारित बढ़ाया। धीरे-धीरे पश्चिमी यूरोप के देशों ने भी इस पद्धति को अपनाया और अब दुनिया के लगभग 140 देशों में VAT प्रणाली को अपनाया जाता है। हालांकि अमेरिका ने अब तक VAT नहीं अपनाया है लेकिन आम जनता पर कर का भार Subsidy के माध्यम से काफी कम किया हुआ है।

भारत में 1976 में एक 'परोक्ष कर सुधार समिति' का गठन L.K. Jha की अध्यक्षता में किया गया और इसे L.K. Jha समिति का नाम दिया गया। L.K.Jha समिति की सिफारिशें 1977 में आयीं। हालांकि, चुनाव के कारण प्रत्यक्ष कार्यवाही नहीं की जा सकती।

1986 में केंद्र ने दीर्घकालीन राजकोषीय नीति अपनायी और तय किया कि चरणबद्ध रूप से विभिन्न करों के माध्यम से VAT पद्धति अपनायी जायेगी। पहले चरण में सिर्फ उत्पादक शुल्क (Excise duty) के मामले में VAT अपनाया जायेगा और उन्हीं कंपनियों पर लागू किया जायेगा जो अपना लेखा परीक्षण कराते हैं और विभिन्न दरों का अभिसरण (Centralization) धीरे-धीरे किया जायेगा। इस VAT पद्धति को संशोधित VAT कार्यक्रम (Modified VAT scheme – MOD VAT scheme) नाम दिया गया है। और, इस प्रकार तय किया गया कि धीरे-धीरे अधिकाधिक कंपनियों को MODVAT के दायरे में लाया जाए और धीरे-धीरे कर की दरों का अभिसरण करके एक ही दर तय की जाए। इसके लिए शनै-शनै अन्य प्रकार के करों को भी VAT पद्धति के दायरे में लाया जाए और इसी का अनुसरण करते हुए 1996-97 तक उन सभी कंपनियों को इस दायरे में ले लिया गया, जिन पर सरकार कर लगाना चाहती थी।

उस समय दरों की संख्या 20 से ज्यादा थी, जिन्हें कम करके 3 तक लाने की योजना बनाई गई।

Maximum — 24%
Medium — 16%
Minimum — 8%

1998 में सरकार ने यह नीतिगत घोषणा की थी कि दीर्घकाल में 16% की दर रखी जायेगी और बाकी दरों को धीरे-धीरे समाप्त कर दिया जायेगा। इसे केंद्र सरकार की VAT पद्धति के तहत Central Government VAT Rate – CENVAT RATE (16%) का नाम दिया गया।

जैसा कि चाणक्य ने कहा भी था कि कर वंचना को रोकने के लिये कर का भार 1/6 (almost 16%) से ज्यादा नहीं होना चाहिए। अतः उस हिसाब से CEN VAT की दर उचित ही रखी गयी थी। 1997 में यह भी घोषणा की गई कि विक्रय कर के मामले में भी VAT पद्धति अपनाने का निर्णय लिया जाए। और राज्य सरकारों को इसके लिए निर्णय की छूट दी गई। 1997 से ही राज्य स्तर पर यह परिचर्चा शुरू हुई कि State VAT या Sales VAT Tax लगाया जाए, जिस पर अंतिम राय 2004 में बनी।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

1 April, 2003 को State VAT लगा दिया गया और इस प्रकार विक्रय कर के मामले में VAT प्रणाली अपना ली गई, जिसे विभिन्न राज्य सरकारों ने धीरे-धीरे अपनाया। हरियाणा 2003 में ही State VAT लगाकर पहला VAT प्रांत बन गया, वहीं, 1 जुलाई 2008 को VAT अपनाने की घोषणा करने के बाद VAT प्रणाली अपनाने वाला अंतिम राज्य बना।

Trade Tax (व्यापार कर), Sales Tax (विक्रय कर) सभी का मान अभी अलग-अलग है। लक्ष्य यह है कि एक समन्वित और समान दर पर आधारित कर प्रणाली वस्तुओं और सेवाओं पर अपनाया जाए, जिसकी पद्धति VAT की होगी।

GST (Goods and services Tax) VAT से अलग कोई प्रणाली नहीं है, बल्कि VAT लागू करने का अगला सोपान है। GST एक ऐसी कर प्रणाली है जिसके तहत वस्तुओं और सेवाओं पर कर की दर एक समान कर दी जाती है और उसका समन्वय कर दिया जाता है क्योंकि समन्वित करने से कर संग्रह की प्रक्रिया अधिक समतापूर्ण, उत्पादक, मितव्ययी, उत्पलावक, लोचपूर्ण और सुविधाजनक हो जाती है। VAT केवल परोक्ष करों पर लगाया जाता है, जिसमें तीन प्रकार के कर शामिल हैं (i) उत्पादक शुल्क (Excise Duty – ED), (ii) सेवाकर (Service Tax) तथा (iii) विक्रयकर (Sales Tax)। इन तीनों परोक्ष करों का समन्वय VAT के माध्यम से करने की योजना है।

Excise Duty और Service Tax से अभी तक जितने पैसे वसूले जाते हैं, वो केंद्र और राज्य सरकारों के बीच बटँते हैं। लेकिन Sales Tax (विक्रय कर) पूरा-पूरा राज्य सरकार के जिम्मे होता है। GST की नयी प्रक्रिया के अनुसार इसका विभाजन इस प्रकार समझा जा सकता है-

यदि Excise Duty 10 इकाई हो, Service Tax 6 इकाई हो और विक्रय कर 4 इकाई हो तो अभी की प्रक्रिया के अनुसार इन 20 इकाइयों का बंटवारा इस प्रकार होता है-

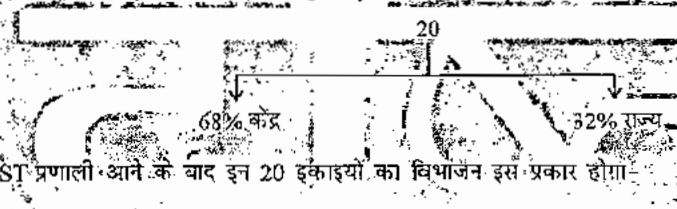

लेकिन GST प्रणाली आने के बाद इन 20 इकाइयों का विभाजन इस प्रकार होगा-

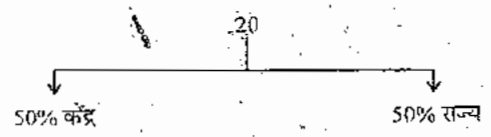

GST प्रणाली से पहले जहाँ राज्यों को केवल 32 प्रतिशत हिस्सा मिल रहा था वहाँ अब 18% प्रतिशत बढ़कर यह 50 [32+18] प्रतिशत हो गया है। लेकिन, फिर भी कई ऐसे राज्य दुविधा में हैं, जिनका विक्रय कर काफी अधिक है, क्योंकि पहले की प्रणाली में विक्रय कर की पूरी आय राज्यों को प्राप्त होती थी, लेकिन GST की नयी प्रणाली के अनुसार अब यह राज्य और केंद्र दोनों में वितरित होगी। अतः, यही कारण है कि अगड़े प्रांतों को GST से नुकसान लगता है तो पिछड़ों को फायदा। लेकिन अंतिम रूप से यह निश्चित है कि इस प्रणाली से क्षेत्रीय विषमता में कमी आयेगी।

क्योंकि कर की दर को सीधे 16 प्रतिशत के निम्न स्तर पर नहीं लाया जा सकता अतः धीरे-धीरे इसकी शुरूआत 20 प्रतिशत से करके 18 प्रतिशत होते हुए 16 प्रतिशत तक पहुँचाने की योजना है। GST का एक अन्य फायदा यह भी है कि इन दिनों विभिन्न प्रांतों में विक्रय-कर कम करने की एक अस्वस्थ प्रतिस्पर्द्धा है, जैसे– यदि नोएडा में सामान सस्ता मिल रहा है तो दिल्ली की जनता नोएडा जाकर सामानों का क्रय करते हैं उसे कम करने में मदद मिलेगी।

9.13 *GST* लागू करने के लिए 115वाँ संविधान संशोधन विधेयक

वस्तु एवं सेवा कर (Goods and Services Tax) के माध्यम से पूरी कर-प्रणाली को सरलीकृत करने तथा कर वंचना को रोकने हेतु वित्त मंत्री प्रणव मुखर्जी ने लोकसभा में 22 March 2011 को एक विधेयक प्रस्तुत किया, इसमें संविधान संशोधन की आवश्यकता इसलिए है, क्योंकि वर्तमान स्थिति में केंद्र सरकार विनिर्माण के चरण से ऊपर (Beyond Manufacturing Stage) कर नहीं लगा सकते, वहीं राज्य सरकारों को सेवाओं पर कर लगाने का कोई अधिकार नहीं है। इस विधेयक हेतु मूल-मसौदा जुलाई 2010 में सरकार ने तैयार किया था, जिसमें तीन बार संशोधन के बाद अब इसे संसद में पेश किया गया।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

GST की इस नयी विधि से देश के आर्थिक एकीकरण में सहायता मिलेगी, क्योंकि कर प्रणाली समान होने से पूरे देश को एक ही बाजार के रूप में देखा जा सकेगा और पूरे देश में उत्पादन और वितरण प्रणाली (Production and Distribution System) सामान्य तौर पर स्थापित की जा सकेगी। GST प्रणाली में वस्तुओं और सेवाओं में कोई भी भेद नहीं होगा और उत्पादन प्रणाली में कर की दृष्टि से दोनों की समान स्थिति होगी। इस प्रकार उत्पादन प्रणाली में दीर्घकालिक लाभ से उत्पादन को बढ़ाने में सहायता मिलेगी। ऐसा अनुमान है कि आर्थिक संवृद्धि दर में भी 1–1.5 प्रतिशत का उछाल आयेगा।

इन्हीं कारणों से विश्व के अधिकतर प्रमुख क्षेत्रों जैसे यूरोपियन यूनियन– EU, चीन, ब्राजील, अर्जेंटीना, जापान, दक्षिण अफ्रीका जैसी उभरती अर्थव्यवस्थाओं में GST प्रणाली लागू है।

संविधान संशोधन और अन्य प्रस्तावों पर कई राज्यों को ऐतराज है, हालाँकि सरकार ने कहा है कि इस नयी प्रणाली से जिन राज्यों को घाटा होगा, उनकी आरंभिक पूर्ति सरकार करेगी। इसमें दो संस्थाओं का सुझाव है–

GST Council

इसमें केंद्र और राज्य के प्रतिनिधि शामिल होंगे जो आम सहमति पर काम करेंगे। साथ ही एक सलाहकार संस्था की भूमिका भी निभायेगा।

GST Dispute Settlement Authority

इनका मुख्य कार्य विवादों का निपटारा करना होगा। यह एक संवैधानिक संस्था होगी जिसके निर्णय बाध्यकारी होंगे और राज्य सरकारों को मानने होंगे। इसके खिलाफ केवल एक अपील माननीय सर्वोच्च न्यायालय में संभव है।

राज्यों का आक्षेप

- दरों के निर्धारण में राज्यों की शक्ति समाप्त होगी और उन्हें केंद्र के निर्णयों का पालन करना होगा और इस प्रकार संघीय ढाँचा कमजोर होगा। कुछ राज्यों ने इसे मूल ढाँचे के विरुद्ध भी बताया है।
- राज्यों के राजस्व पर प्रतिकूल असर पड़ सकता है।

राज्यों के विरोध के कारण केंद्र सरकार ने कुछ हद तक इस दिशा में सहमति बनाने के दृष्टिकोण से बिहार के वित्तमंत्री सुशील कुमार मोदी को Impowered Committee (विभिन्न राज्यों के वित्तमंत्री इसके सदस्य हैं) का अध्यक्ष बनाया गया है।

GST से माना जा रहा है कि निर्यात में भी सहायता होगी, क्योंकि इसमें (Zero Rating) प्रणाली को अपनाया जा रहा है।

GST Bill अभी आरंभिक चरण में ही है, और केंद्र सरकार का कहना था कि इसे 2012 में ही लागू किया जायेगा, लेकिन अभी तक इस पर कोई सहमति नहीं बन पायी है।

9.14 नया 'डायरेक्ट टैक्स कोड' *(Direct Tax Code – DTC)*

प्रत्यक्ष कर संहिता (Direct Tax Code – DTC) को 1961 के आयकर अधिनियम के स्थान पर नया प्रत्यक्ष कर कानून लाने हेतु केन्द्रीय मंत्रिमण्डल द्वारा 26 अगस्त 2010 की बैठक में मंजूरी दे दी गई। बाद में इसे 30 अगस्त, 2010 को लोकसभा में पेश किया गया। अधिनियमित होने पर यह आयकर अधिनियम (1961) को विस्थापित करेगा। 1 अप्रैल 2011 से नए डायरेक्ट टैक्स कोड को लागू करने का इरादा सरकार का था। लेकिन कुछ तकनीकी समस्याओं के बावजूद इसे 1 April 2012 से लागू करने की घोषणा लोकसभा में 30 अगस्त 2010 को की गई।

इस डायरेक्ट टैक्स बिल में हालाँकि वैयक्तिक आयकर ढाँचे में कोई परिवर्तन नहीं आया है और कर की दरों को 10 प्रतिशत, 20 प्रतिशत और 30 प्रतिशत रखा गया है, फिर भी मौजूदा आयकर छूट की सीमा को वर्तमान 1.6 लाख रुपये से बढ़ाकर 2 लाख

Copyright – Drishti The Vision Foundation

रुपये करने का प्रस्ताव है। नये प्रस्ताव में 5 लाख रुपये तक की सालाना आय पर 10% टैक्स, 5-10 लाख रुपये की आय तक 20 प्रतिशत टैक्स, और 10 लाख से अधिक की वार्षिक आय पर 30 प्रतिशत की आय से आयकर देय होगा।

नये प्रस्ताव में वरिष्ठ नागरिकों के लिये 2.4 लाख की सलाना आय से आयकर से मुक्ति के लिए सीमा बढ़ाकर 2.5 लाख रुपये कर दी गई है। मंत्रिमंडल द्वारा मंजूर किए गये DTC के मसौदे में कराधान की EEE (Exempt, Exempt, Exempt) मॉडल को अपनाते हुए बचत योजनाओं की परिपक्वता राशि को कर मुक्त रखने का प्रस्ताव किया गया है।

कंपनियों को वर्तमान में 30 प्रतिशत निगम कर पर Surcharge और शैक्षिक Cess मिलाकर कुल 33.2 प्रतिशत का Tax देना होता था, लेकिन अब यह Surcharge सहित कुल 30 प्रतिशत की दर तक बाँध दिया गया है। इसके अतिरिक्त Minimum Alternative Tax MAT (न्यूनतम वैकल्पिक कर) को 18 प्रतिशत की बजाय 20 प्रतिशत रखने का प्रस्ताव है और यह Tax कंपनी के Book Profit पर लागू होगा।

9.15 13वाँ (तेरहवाँ) वित्त आयोग

13 नवंबर 2007 को केंद्र और राज्यों के बीच राजस्व के बँटवारे के लिए मानक तय करने हेतु पूर्व वित्त सचिव डॉ. विजय केलकर को इस आयोग का अध्यक्ष बनाया गया, जिसने 30 दिसंबर 2009 को अपनी रिपोर्ट राष्ट्रपति को सौंप दी।

इस आयोग का मुख्य उद्देश्य समावेशी और हरित समृद्धि के साथ एक उन्नत राजकोषीय संघवाद रहा है। 13वें वित्त आयोग में ऋण घटाने के एक ढाँचे के भीतर राजकोषीय सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया पर बल दिया है, और केंद्र तथा राज्यों के समग्र ऋण को GDP अनुपात के वर्ष 2014-15 तक 2009-10 के 82 प्रतिशत को घटाकर 68 प्रतिशत तक लाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया।

13वें वित्त आयोग ने केंद्र एवं राज्यों दोनों के राजस्व घाटे (Revenue Dificit - RD) को शून्य स्तर पर लाकर राजकोषीय सुदृढ़ीकरण (Fiscal Consolidation) का सुझाव दिया है।

भारत के वित्त आयोग

क्रमांक	गठन का वर्ष	अध्यक्ष का नाम	क्रियान्वयन वर्ष	रिपोर्ट देने का वर्ष
पहला	1951	के.सी. नियोगी	1952-57	1952
दूसरा	1956	के. सन्थानम	1957-62	1956 व 1957
तीसरा	1960	ए.के. चन्द्रा	1962-66	1961
चौथा	1964	डॉ. पी.वी. राजामन्नार	1966-69	1965
पाँचवाँ	1968	महावीर त्यागी	1969-74	1968 व 1969
छठा	1972	ब्रह्मानन्द रेड्डी	1974-79	1973
सातवाँ	1977	पी.एम. शेलेट	1979-84	1978
आठवाँ	1983	वाई.बी. चाव्हाण	1984-89	1983 व 1984
नवाँ	1987	एन.के.पी. साल्वे	1989-95	1988 व 1989
दसवाँ	1992	के.सी. पन्त	1995-2000	1994 (26 नवंबर)
ग्यारहवाँ	1998	ए.एम. खुसरो	2000-05	15 जनवरी, 2000 7 जुलाई, 2000 एवं 30 अगस्त, 2000
बारहवाँ	1 नवंबर 2002	सी.रंगराजन	2005-10	30 नवंबर, 2004 30 दिसंबर, 2009
तेरहवाँ	नवंबर 2007	विजय एन. केलकर	2010-15	30 नवंबर, 2004 30 दिसंबर, 2009

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–10 (Unit– 10)

भारत के अंतर्राष्ट्रीय जगत से आर्थिक संबंध-1 : भाग-1

India's Economic Relations with The International Community-1 : Part-1

10.1 (Balance of Payment - BOP Account

641, प्रथम तल, मुखर्जी नगर, दिल्ली-9. दूरभाष : 27604128, 8800367905, 9560362210, 9313992[illegible]
ई-मेल: drishtiacademy@gmail.com, वेब: drishtithevisionfoundation.com
Copyright – Drishti The Vision Foundation

10.1 (Balance of Payment - BOP Account)

चालू खाता (Current Account)	व्यापार खाता	1. निर्यात (X) 2. आयात (M) 3. व्यापार शेष (X – M)
	अदृश्य खाता	4. अदृश्य शेष (क) कारक सेवा व्यापार शेष (i) निजी अंतरण/प्रेषण (ii) निवेश आय (ख) गैर-कारक सेवा व्यापार शेष
	वस्तु एवं सेवा खाता	5. वस्तु एवं सेवा शेष (3 + 4 ख)
	चालू खाता	6. चालू शेष (3 + 4 क + 4 ख)
पूँजी खाता (Capital Account)	ऋण पूँजी	7. बाह्य सहायता (External Assistance) 8. बाह्य कारोबारी उधार (External Commercial Borrowing - ECB) 9. अनिवासी जमा राशि (NR Deposit)
	गैर-ऋण पूँजी	10. बाह्य निवेश (क) FDI (ख) FPI or PII 11. अन्य
	पूँजी खाता	12. पूँजी शेष
FXR Account	विदेशी विनिमय कोष (Foreign Exchange Reserve)	

Copyright – Drishti The Vision Foundation

अब हम BOP- Account के विभिन्न घटकों का एक-एक कर अध्ययन करेंगे-

1. निर्यात *(Export - 'X')*

कृषि एवं उद्योग वस्तुओं के निर्यात के मूल्य को व्यापार खाते में निर्यात कहते हैं। अर्थात् इसमें सेवाओं के निर्यात को शामिल नहीं किया जाता है।

2. आयात *(Import - 'M')*

कृषि एवं उद्योग वस्तुओं के आयात मूल्य को व्यापार खाते में आयात के रूप में दर्ज करते हैं। व्यापार खाते में दृश्य वस्तुओं के निर्यात एवं आयात का लेखा-जोखा रखा जाता है।

3. व्यापार शेष *(Trade Balance)*

निर्यात-आयात के साथ उनके सापेक्षिक मूल्य के आकलन को व्यापार शेष के माध्यम में मापा जाता है।

— Say X > M = (+ve) शेष = व्यापार अधिशेष (Trade Surplus)

X < M = (–ve) शेष = व्यापार घाटा (Trade Deficit)

X = M = 0 = व्यापार संतुलन (Trade Balance)

4. अदृश्य खाता *(Invisible Account)*

(क) कारक सेवा व्यापार शेष : यदि कोई व्यक्ति विदेश में जाकर नौकरी करता है, तो इस क्रिया को श्रम का निर्यात कहते हैं वहीं, यदि कोई विदेशी अपने देश में आकर कार्य करे तो इसे श्रम का आयात कहते हैं।

जिस प्रकार उत्पादित वस्तुओं का व्यापार होता है, उसी प्रकार कारक सेवाओं का भी व्यापार होता है, और जो व्यापार शेष आता है उसे कारक सेवा व्यापार शेष कहते हैं। इसका अध्ययन निजी अंतरण तथा निवेश आय के रूप में करते हैं।

निजी अंतरण/प्रेषण राशि

श्रम के निर्यात से प्राप्त होने वाली राशि को निजी अंतरण / प्रेषण राशि कहते हैं। प्रेषण (Remittance) का अर्थ ही है, कहीं जाकर वहाँ से पैसे भेजना।

निजी का तात्पर्य है कि जो व्यक्ति वहाँ से गया है, वह निजी रूप से गया है, और पैसे भी परिजनों को निजी रूप से भेजता है।

निवेश आय

पूँजी एवं उद्यम के निर्यात से प्राप्त होने वाली ब्याज राशि एवं लाभ राशि को सम्मिलित रूप से निवेश आय कहते हैं।

जमीन का कारोबार अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर नहीं हो पाता, क्योंकि वह अचल कारक है लेकिन बाकी तीनों श्रम, पूँजी तथा उद्यम का अंतर्राष्ट्रीय कारोबार संभव है।

(ख) गैर-कारक व्यापार शेष : जो सेवा तो हो, लेकिन कारक सेवा न हो, गैर-कारक सेवा कहलाता है। उत्पादन क्षेत्र जो उत्पादित सेवाएँ हैं, वे कारक सेवाओं से भिन्न हैं, इसलिए उनके अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को गैर-कारक सेवा व्यापार कहते हैं।

गैर-कारक सेवा, जिनका व्यापार भारत में होता है, उनके मुख्य 6 घटक हैं, जो निम्नलिखित हैं–

(i) सॉफ्टवेयर (Software)

(ii) ITES (Information Technology Enabled Serviecs)

(iii) पर्यटन (Tourism)

(iv) स्वास्थ्य सेवा (Health Services)

(v) शिक्षा सेवा (Education Services)

(vi) अन्य सेवाएँ (Other Services)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

(i) **सॉफ्टवेयर :** भारत का सॉफ्टवेयर उद्योग विश्व के सबसे तेज़ी से बढ़ते हुए उद्योगों में से एक है। क्योंकि, इसमें निर्यात की मात्रा आयात से अधिक है, अतः व्यापार अधिशेष की स्थिति में है, जो कि एक अच्छी स्थिति है। बैंगलूर, भिलाई, भुवनेश्वर, कालीकट, कोयंबटूर, कोच्चि, चंडीगढ़, चेन्नई, दिल्ली, गुड़गाँव, हैदराबाद, कलकत्ता, मुंबई, नोएडा, पुणे, त्रिवेन्द्रम में भारत के सॉफ्टवेयर डेवलपमेंट सेंटर है।

(ii) **ITES (Information Technology Enabled Services) :** सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग (Industry) भारत के GDP के 5.9 प्रतिशत के बराबर है और यह सेवा क्षेत्र में काफी मात्रा में रोजगार उपलब्ध कराता है। भारत के 2.5 मिलियन लोग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इस उद्योग से जुड़े हैं। भारत में IT–BPO का वार्षिक राजस्व 54.33 मिलियन डॉलर रहा, जो चीन के 35.76 मिलियन डॉलर के आँकड़े से कहीं अधिक है। उम्मीद है कि 2020 तक यह आँकड़ा 225 मिलियन डॉलर को पार कर जायेगा।

भारत में ITES Industry निम्न क्षेत्रों के आधार पर कार्य करती है–

(a) Call Centre Business

(b) Business process outsourcing (BPO)

(c) Knowledge process outsourcing (KPO)

(d) Accounting process outsourcing (APO)

(e) Legal process outsourcing (LPO)

(f) Tutorial process outsourcing (TPO)

इन्हें पुनः दो भागों में इस प्रकार विभक्त किया जा सकता है–

घरेलू BPO

यदि व्यावसायिक प्रक्रिया का बाह्य-स्त्रोतिकरण एक देश की संस्था उसी देश को करे तो यह घरेलू BPO कहलायेगा।

अंतर्राष्ट्रीय BPO

यदि व्यावसायिक प्रक्रिया का बाह्य स्त्रोतिकरण, एक देश की संस्था अन्य देश को करे, अपने ही देश की संस्था को न करे तो वह अंतर्राष्ट्रीय BPO कहलाता है।

फिलहाल अमेरिकी कंपनियाँ अपनी कंपनियों के कार्य भारत को आउटसोर्स (Outsource) करती है, जैसे– Genpact, HCL आदि। अब भूमंडलीकरण के बाद (1995 में WTO की स्थापना के बाद) से विभिन्न देशों, खासकर विकसित एवं विकासशील देशों के बीच स्पर्धा बढ़ी है और विकसित देशों की कंपनियों का नव-औपनिवेशिक पकड़ कमजोर होती जा रही है। विकसित देशों की कंपनियाँ अपना लागत कम करने की कोशिश कर रही हैं ताकि बाजार में बनी रह सकें।

लेकिन पश्चिमी देशों में मजदूरी लागत बहुत ऊँची है, वहीं विकासशील देशों में मजदूरी लागत कम है। इसलिए पश्चिमी देशों के बाह्य-स्रोतीकरण (Outsourcing) के कारण कम मजदूरी लागत में भी काम हो जाता है।

भारत में ITES के कारण रोजगार में अत्यधिक विस्तार तो हुआ ही है, विदेशी मुद्रा की आय भी बढ़ी है जिस कारण उत्पादन बढ़ाने में मदद मिली है और उत्पादन बढ़ने के साथ भारत के GDP में वृद्धि हुई है। BPO के कर्मचारियों पर Tax आदि के आरोपण से सरकार के कर प्राप्ति में वृद्धि हुई है, साथ ही बुनियादी ढाँचे का बेहतर दोहन (सड़कों का रात में भी प्रयोग आदि) यानि कि ICOR कम हो सका है।

भारत दुनिया में ITES सेवाओं का सबसे बड़ा निर्यातक देश है। वहीं चीन दूसरे स्थान पर है तो मलेशिया तीसरे स्थान पर। आजकल दक्षिण अफ्रीका में ITES का तेजी से विस्तार हो रहा है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

(iii) पर्यटन सेवा (Tourism Services)

पर्यटन को दो भागों में बाँट कर देखा जाता है–

- नैसर्गिक पर्यटन (Natural Tourism)
- सांस्कृतिक सौंदर्य वाले स्थानों के पर्यटन (Cultural Tourism)
  - धार्मिक पर्यटन (Religious Tourism)
  - ऐतिहासिक/विरासत पर्यटन (Heritage Tourism)
  - लोक सांस्कृतिक पर्यटन (Folk Cultural Tourism)

धार्मिक पर्यटन

- धार्मिक स्थानों की अधिक उपलब्धता के कारण धार्मिक पर्यटन की क्षमता में विकास होता है।
- आध्यात्मिक सेवाओं के उपभोग की इच्छा आमतौर पर अमीरों में अधिक होती है।
- जब अर्थव्यवस्था नीचे की तरफ जाती है तो धार्मिक सेवाओं की खपत भी कम हो जाती है।

धार्मिक सेवाओं की माँग पिछले 50-60 सालों में बढ़ी है। जिन देशों में बौद्ध अनुयायी हैं, जैसे–चीन, जापान, थाईलैंड [illegible] वहाँ से भारी संख्या में पर्यटक भ्रमण के लिए भारत आते हैं और यही कारण है बौद्ध सेवाओं के प्रचार प्रसार में भारत काफी [illegible] से भाग ले रहा है।

ध्यान देने योग्य बात है कि धार्मिक सेवाओं के क्रय/विनिमय में क्रेताओं द्वारा मोल भाव की आशंका भी कम [illegible] तरह धार्मिक सेवाओं को अपेक्षाकृत ऊँचे दाम पर बेचा जा सकता है। बौद्ध सेवाओं के साथ-साथ भारत को जैन स्मारकों का [illegible] प्रसार करना चाहिए और इस्लामिक सेवाओं के निर्यात में भी तेजी दिखानी चाहिए।

विदेशी पर्यटकों के आने के कारण धार्मिक स्थलों के इर्द-गिर्द बसे हुए कारीगरों का विक्रय बढ़ता है। भारत को [illegible] से होने वाले फायदों का अनुमान इस बात से ही लगाया जा सकता है कि एक साधारण कंपनी का वार्षिक कारोबार [illegible] में 700 करोड़ के आसपास होता है तो वहीं तिरुपति मंदिर का वार्षिक कारोबार 1500 करोड़ रुपये के आसपास है।

(iv) स्वास्थ्य सेवाएँ (Health Services) : इस मद का विश्लेषण का भी इसी आधार पर होना चाहिए कि हमारे [illegible] मद यानि स्वास्थ्य सेवाओं के निर्यात की क्षमताएँ क्या हैं? भारत में स्वास्थ्य सेवा को इन दो भागों में बाँटकर समझा जा सकता है–

स्वास्थ्य सेवा

- नैसर्गिक स्वास्थ्य सेवा (AYUSH)
- आधुनिक स्वास्थ्य सेवा (Allopathy)

Copyright – Drishti The Vision [illegible]

नैसर्गिक स्वास्थ्य सेवाओं के अंतर्गत निम्नलिखित पाँच प्रकार की स्वास्थ्य सेवाओं का वर्णन किया जाता है-

A : Ayurved

Y : Yog

U : Unani

S : Siddh - सर्वाधिक पुरानी चिकित्सा पद्धति है।

H : Homeopathy

भारत में आयुर्वेद चिकित्सा के साक्ष्य उत्तर-वैदिक काल से ही मिलते हैं लेकिन, आयुर्वेद पद्धति से पहले जो चिकित्सा पद्धति थी, वह भारत के जनजातीय इलाकों में प्रचलित सिद्ध-चिकित्सा पद्धति थी। अब, CSIR और WHO दोनों ने सिद्ध चिकित्सा पद्धति को एक वैज्ञानिक चिकित्सा पद्धति के रूप में मान्यता दी है।

योग (Yog) चिकित्सा पद्धति का सूत्रपात संभवत: वैदिकोत्तर काल में ही हो गया था। यूनानी चिकित्सा पद्धति की शुरूआत भारत में पूर्व-मध्यकाल से मानी जाती है और यह भी माना जाता है कि ईरान तथा दक्षिण अफगानिस्तान में पहले से प्रचलित यह पद्धति सूफी संतों द्वारा भारत में लाई गयी। होम्योपैथिक चिकित्सा पद्धति का आगमन जर्मनी से माना जाता है और एलोपैथी को भारत में अंग्रेज लेकर आयें।

उन्नीसवीं शताब्दी में अंग्रेजों के आगमन के साथ भारत की परम्परागत चिकित्सा पद्धति का अत्यधिक पतन हुआ। 1972 तक उक्त पाँचों चिकित्सा पद्धतियों को मान्यता मिली हुई थी, लेकिन 1972 में इनकी मान्यता रद्द कर दी गयी और उसके बाद 1993 में ही इन्हें पुन: मान्यता मिल पाई। उसके बाद से लगातार इन सेवाओं के उत्पादन तथा घरेलू उपभोग में वृद्धि हो रही है।

ध्यातव्य है कि इन दिनों पश्चिमी दुनिया में नैसर्गिक चिकित्सा पद्धति काफी लोकप्रिय हो रही है क्योंकि देखा जा रहा है कि आधुनिक चिकित्सा (Allopathy) के Side Effects काफी अधिक और खतरनाक हैं।

हमारे देश में आधुनिक चिकित्सा सेवा के साथ नैसर्गिक सेवा पद्धतियों को काफी बढ़ावा दिया जा रहा है। विदेशों से भारी संख्या में पर्यटक इलाज कराने हेतु भारत आ रहे हैं, जिससे भारत के विदेशी मुद्रा भंडार में तेजी से वृद्धि हो रही है तथा रोजगार की गुणवत्ता में सुधार के साथ रोजगार का मात्रात्मक विस्तार भी हो रहा है।

(v) शिक्षा सेवा (Education Services) : प्राचीन काल से ही भारत की शिक्षा पद्धति की धाक रही है आज भी दुनिया के लोग भारत को नॉलेज सोसाइटी (Knowledge Society) बोलते हैं। विश्व की GDP बढ़ने के साथ-साथ शिक्षा सेवा की मांग तेजी से बढ़ रही है और उस अनुपात में पश्चिमी देश शिक्षा तथा शिक्षकों की आपूर्ति नहीं कर पा रहे हैं और ऐसे में भारत और चीन विश्व शिक्षा केन्द्र के रूप में उभर रहे हैं। दोनों द्वारा पुनर्जीवित किया जा रहा नालंदा विश्वविद्यालय इसका एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

(vi) अन्य सेवाएँ (Other Services) : संचार, मनोरंजन, परिवहन ऐसे कई क्षेत्र हैं जिनका निर्यात आयात से कम होता है। भारत को अन्य सेवाओं के व्यापार के लिए दीर्घकालिक रणनीति (Long Term Strategy) बनाने की आवश्यकता है और भारत इस पथ पर तेजी से अग्रसर है।

भारत दुनिया में हवाई-जहाजों का सबसे बड़ा खरीददार है और ज्यादा खरीद के कारण भारत की Bargaining Power भी काफी अधिक है। भारत दुनिया की दो सबसे बड़ी कंपनियों Air Bus (Europe), Boeing (US) का सबसे बड़ा ग्राहक है। स्थिति यह है कि भारत की माँग इतनी अधिक है कि उस अनुपात में ये कंपनियाँ सप्लाई नहीं कर पा रही है। भारत सरकार काफी संख्या में जलपोत भी खरीद रहा है, तेल व्यापार में भी अब भारत विश्व-स्तर पर एक बड़े खरीददार के रूप में उभरा है और इसकी Bargaining Power अब इतनी अधिक है कि वह विश्व स्तर पर तेल के दाम अपने मुताबिक बढ़ाने और घटाने की शक्ति रखता है।

5. वस्तु एवं सेवा शेष (3 + 4 ख)

व्यापार शेष और गैर-कारक व्यापार शेष की सम्मिलित राशि को वस्तु एवं सेवा शेष के नाम से जाना जाता है। अत: कहा जा सकता है कि-

3 + 4 ख = उत्पादित वस्तुओं का व्यापार + उत्पादित सेवाओं का व्यापार

6. चालू शेष (3 + 4ख + 4क)

व्यापार शेष, कारक सेवा व्यापार शेष एवं गैर-कारक व्यापार शेष के योग को चालू शेष के रूप में जाना जाता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

7. बाह्य सहायता *(External Assistance)*

अगर विदेशों से कम ब्याज और ऋण वापसी की नरम शर्त पर वित्त उगाही की जाए तो इसे बाह्य सहायता (External Assistance) कहते हैं।

बाह्य सहायता के दो स्रोत हैं-

द्विपक्षीय बाह्य सहायता

यदि देश को दूसरे देश से बाह्य सहायता मिलती है तो यह द्विपक्षीय सहायता कहलाती है। संभव है कि भारत ब्रिटेन से ऋण लेकर बांग्लादेश को देकर वैश्विक स्तर पर अपनी साख बढ़ायें।

भारत आजकल ऋण लेने के बजाय ऋण देने की नीति को वरीयता दे रहा है।

बहुपक्षीय बाह्य सहायता

अंतर्राष्ट्रीय वित्त संस्थाओं (विश्व बैंक, Asian Development Bank आदि) से जो सहायता मिलती है, उसे बहुपक्षीय बाह्य सहायता कहते हैं।

भारत ने कुछ दिनों पहले अति पिछड़े देशों को 5 मिलियन डॉलर के अनुदान के साथ 500 मिलियन डॉलर का सस्ता ऋण दिया। इस प्रकार बाह्य सहायता का उपयोग न सिर्फ आर्थिक लाभ के लिए किया जाता है, बल्कि राजनीतिक और कूटनीतिक लाभ के लिए भी।

8. बाह्य कारोबारी उधार *(External Commercial Barrowing)*

बाजार परिवेश में बाजार शर्तों के आधार पर विदेशों से लिये गये ऋण को बाह्य कारोबारी उधार (External Commercial Borrowing) कहते हैं।

9. अनिवासी जमा राशि *(Non-Residence Deposit)*

अनिवासी व्यक्ति भारतीय बैंकों में जो पैसे जमा करते हैं, उसे अनिवासी जमा (NR-Deposits) कहते हैं। इसके लिए तीन के खातों का प्रयोग किया जाता है-

(i) FCNR (B) A/c (Foreign Currency Non-Resident)

(ii) NRER A/c (Non-Resident External Rupees)

(iii) NRO A/c (Non-Resident Ordinary)

(i) **FCNR (B) A/c (Foreign Currency Non-Resident) :** इस खाते में चार प्रकार की विदेशी मुद्राएँ स्वीकार की जाती हैं (a) US-डॉलर (b) ब्रिटिश-पाउंड (c) यूरो (d) येन।

यह एक प्रकार का Term Deposit है, और इसमें एक से तीन वर्ष के लिए राशि स्वीकार की जाती है। इस खाते अंतर्गत जो मुद्रा स्वीकार की जाती है, परिपक्वता के बाद वही मुद्रा लौटाई जाती है। इसका अर्थ यह हुआ कि एक मुद्रा से दूसरे मुद्रा में परिवर्तन की सुविधा नहीं रखी गई है। अलग-अलग मुद्राओं के लिए अलग-अलग ब्याज-दर होते हैं। Account के माध्यम से विदेशी मुद्रा के उगाही में मदद मिलती है और यह ECB (External Commercial Borrowing) के एक बेहतर विकल्प के रूप में उपस्थित है।

(ii) **NRER (Non-Resident External Rupees) :** इस खाते में NRI विदेशी मुद्रा रख सकता है एवं रुपया निकाल सकते हैं। यह Saving Account जैसा होता है और इसमें एकतरफा परिवर्तनीयता होती है अर्थात् डॉलर से रुपए में परिवर्तित किया जा सकता है लेकिन रुपए से डॉलर में नहीं।

(iii) **NRO A/c (Non-Resident Ordinary) :** इस Account में किसी भी विदेशी मुद्रा को जमा किया जा सकता है और कोई भी मुद्रा प्राप्त की जा सकता है। जो ग्लोबल इंडियन हैं, और जिनका हर देश में कारोबार है उनके लिए NRO Account काफी उपयोगी है। पुन: जो लोग किसी एक ही देश में लंबे समय तक बस गये हैं उनके लिए NRER Account अधिक उपयोगी है। NR Deposit की रकम आजकल तेजी से बढ़ रही है और यही कारण है कि FXR (विदेशी विनिमय कोष) में 1991 में धन की मात्रा 2.1 अरब डॉलर थी, तो 2011 के बाद यह राशि 60 अरब डॉलर को पार कर चुकी है।

641, प्रथम तल, मुखर्जी नगर, दिल्ली-9. दूरभाष : 27604128, 8800367905, 9560362210, 9313988616
ई-मेल: drishtiacademy@gmail.com, वेब: drishtithevisionfoundation.com
Copyright – Drishti The Vision Foundation

BOP खाते का गुणात्मक विश्लेषण *(Qualitative Analysis of BOP Account)*

विनिमय दर में परिवर्तन के कारण BOP खाते के विभिन्न मदों में होने वाले परिवर्तन के विश्लेषण को गुणात्मक विश्लेषण कहते हैं।

विनिमय दर

- अवधारणा
- प्रकार
- व्यवस्था
- परिवर्तन
- परिवर्तन के प्रभाव

विनिमय दर की अवधारणा

किसी मुद्रा की अंतर्राष्ट्रीय क्रय शक्ति को उनका विनिमय दर (Exchange Rate) कहते हैं। देशी मुद्रा की इकाई मात्रा के बदले प्राप्य विदेशी मुद्रा की मात्रा को देशी मुद्रा का विनिमय दर कहते हैं।

यदि 1 रु. = 1/50 डॉलर है, तो यह रुपए की अंतर्राष्ट्रीय क्रय शक्ति है। विनिमय दर तीन प्रकार के होते हैं-

विनिमय दर के तीन प्रकार

- **NER (Nominal Exchange Rate)**: चालू कीमतों पर देशी मुद्रा की इकाई मात्रा के बदले प्राप्य किसी एक देश की विदेशी मुद्रा की मात्रा को (Nominal Exchange Rate-NER) कहते हैं।
- **NEER (Nominal Effective Exchange Rate)**: चालू कीमतों पर देशी मुद्रा की इकाई मात्रा के बदले प्राप्य कई विदेशी मुद्राओं की औसत मात्रा को (Nominal Effective Exchange Rate-NEER) कहते हैं।
- **REER (Real Effective Exchange Rate)**: स्थित कीमतों पर देशी मुद्रा के इकाई मात्रा के बदले प्राप्य कई विदेशी मुद्रा की औसत मात्रा को (Real Effective Exchange Rate-REER) कहते हैं।

इन दोनों में परिवर्तन चालू कीमतों के संदर्भ में होता है।

इसमें परिवर्तन स्थिर कीमतों के संदर्भ में होता है।

NEER and REER का उपयोग RBI अपने आन्तरिक नीतिगत विश्लेषण के लिए करता है। अन्य सभी मंचों पर NER का उपयोग किया जाता है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

विनिमय दर व्यवस्था (Exchange Rate Regime)

Currency Regime (मुद्रा व्यवस्था) को विनिमय दर व्यवस्था (Exchange Rate Regime) भी कहते हैं। यानि कि, किसी देश में विनिमय दर के निर्धारण एवं समय-समय पर इसके समायोजन हेतु स्थापित कानूनी संस्था एवं नीतियों की समग्र संरचना को विनिमय दर व्यवस्था कहते हैं। अलग-अलग देशों में 3 प्रकार की विनिमय दर व्यवस्थाएँ हैं-

1. **जड़ विनिमय दर व्यवस्था (Fixed Exchange Rate Regime)**
2. **प्लवित विनिमय दर व्यवस्था (Floating Exchange Rate Regime)**
3. **प्रबंधित विनिमय दर व्यवस्था (Managed Exchange Rate Regime)**

1. **जड़ विनिमय दर व्यवस्था (Fixed Exchange Rate Regime) :** यदि किसी देश का कानून विनिमय दर निर्धारण एवं समायोजन की समस्त शक्तियाँ एक प्रशासनिक निकाय को आवंटित करे, बाजार की माँग एवं आपूर्ति शक्तियों को कोई स्वतंत्रता न दे, तो इस व्यवस्था को जड़ विनिमय दर व्यवस्था (Fixed Exchange Rate Regime) कहते हैं। चीन, उत्तरी कोरिया, क्यूबा में ऐसी ही व्यवस्था है।
2. **प्लवित विनिमय दर व्यवस्था (Floating Exchange Rate Regime) :** यदि किसी देश का कानून विनिमय दर निर्धारण एवं समायोजन के लिए बाजार की माँग एवं आपूर्ति शक्तियों को पूर्णतः स्वतंत्र रखे, प्रशासनिक हस्तक्षेप की कतई अनुमति न दे, इस व्यवस्था को Floating Exchange Rate Regime कहते हैं। माना जाता है कि ज्यादातर पश्चिम देशों में प्लावित विनिमय दर व्यवस्था (Floating Exchange Rate Regime) है।
3. **प्रबंधित विनिमय दर व्यवस्था (Managed Exchange Rate Regime) :** यदि किसी देश का कानून विनिमय दर निर्धारण एवं समायोजन के लिए बाजार की माँग एवं आपूर्ति शक्तियों को सामान्यतः स्वतंत्र रखे, और साथ ही वांछित दिशा में उनके प्रबंधन के लिए प्रशासनिक निकाय को भी शक्ति आवंटित करे तो इस व्यवस्था को प्रबंधित मुद्रा व्यवस्था कहते हैं।

भारत में ऐसा 2000 से है और यह Foreign Exchange Management Act-FEMA के तहत आया। 1991-99 की अवधि विनिमय दर में सुधार/रूपांतरण/संक्रमण की अवधि थी। 1975-91 तक (Foreign Exchange Regulation Act-FERA 1973 लागू था। 1991 से 1999 की अवधि में FERA, 1973 में लगातार संशोधन किया।

विनिमय दर में परिवर्तन

- **विनिमय दर में वृद्धि**
  - **मूल्य वृद्धि (Appreciation)**: विनिमय दर में बाजार प्रेरित वृद्धि को, जो धीमी गति से एवं नियमित रूप से होती है, मूल्य वृद्धि कहते हैं।
  - **अधिमूल्यन (Revaluation)**: प्रशासनिक निर्णय द्वारा विनिमय दर में की गई वृद्धि को, जो यदा-कदा बड़ी मात्रा में की जाती है, अधिमूल्यन कहते हैं।
    2005 में चीन ने अपनी मुद्रा का अधिमूल्यन किया था। 2010 में भी चीन ने US के दबाव में अपनी मुद्रा का अधिमूल्यन किया।
    [भारत ने आजादी के बाद कभी नहीं किया]
- **विनिमय दर में गिरावट**
  - **मूल्य वृद्धि (Depreciation)**: विनिमय दर में बाजार प्रेरित गिरावट को, जो धीमीगति से एवं नियमित रूप से होती है, मूल्य ह्रास कहते हैं।
  - **अधिमूल्यन (Devaluation)**: प्रशासनिक [illegible] विनिमय दर में [illegible] जो यदा-कदा बड़ी मात्रा में की जाती है, [illegible] कहते हैं।
    (आजादी के बाद से [illegible] में मुद्रा का [illegible] अवमूल्यन किया [illegible] पहली बार अवमूल्यन [illegible] के राष्ट्रीयकरण के [illegible] (Jan 1949) किया गया।

मूल्य वृद्धि	$\frac{1}{45} \rightarrow \frac{1}{40}$
अवमूल्यन	$\frac{1}{45} \rightarrow \frac{1}{50}$

1st – Jan. [illegible]
2nd – June [illegible]
3rd – 1 July 1991
4th – 3 July 1991

Copyright – Drishti The Vision Foundation

भारतीय अर्थव्यवस्था
(Indian Economy)

इकाई–10 (Unit–10)

भारत के अंतर्राष्ट्रीय जगत से आर्थिक संबंध-1 : भाग-2

India's Economic Relations with The International Community-I : Part-2

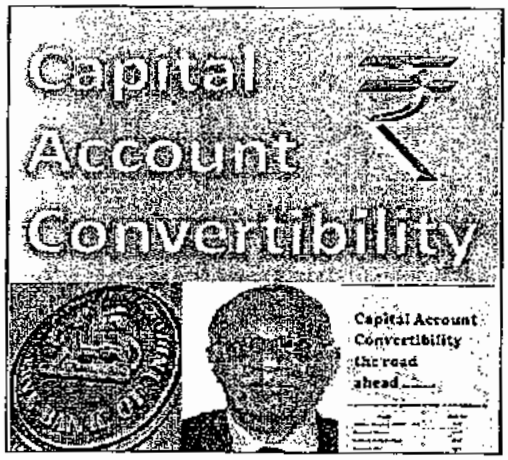

10.2 अवमूल्यन *(Devaluation)*

10.3 परिवर्तनीयता *(Convertibility)*

10.4 विदेशी मुद्रा नियमन कानून *(FERA)* की समाप्ति

10.5 विदेशी मुद्रा प्रबंधन अधिनियम *(Foreign Exchange Management Act – FEMA)*

10.6 *'FERA'* एवं *'FEMA'* में मुख्य अंतर

10.7 विदेश व्यापार नीति 2009-14

10.8 रुपए की पूर्ण परिवर्तनीयता हेतु तारापोर समिति की रिपोर्ट

10.9 विदेशों में भारतीय निवेश हेतु रियायतें

10.10 फोकस मार्केट योजना

10.11 विदेशों में निवेश के रूट्स

Copyright – Drishti The Vision Foundation

10.2 अवमूल्यन *(Devaluation)*

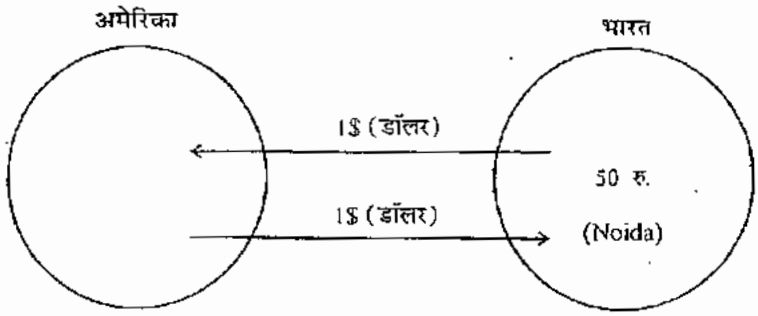

अवमूल्यन से फायदे

यदि RBI रु. का अवमूल्यन (Devaluation) करना तय कर इसे 1$=1/50 से 1$=1/52 कर दे तो Noida के व्यापारियों को 1 डॉलर भुनाने के लिए 50 के स्थान पर 52 रु. खर्च करने पड़ेंगे।

अवमूल्यन (Devaluation) से निर्यात का रु. मूल्य बढ़ जाता है, जिससे निर्यातकों का मुनाफा बढ़ जाता है और वे घरेलू आपूर्ति रोककर विदेशी बाजार में निर्यात बढ़ाने लगते हैं, जिससे देश का निर्यात मूल्य बढ़ जाता है।

जैसा कि हम पढ़ चुके हैं कि व्यापार शेष = X (निर्यात) – M (आयात)

क्योंकि अवमूल्यन (Devaluation) से निर्यात (Export) बढ़ जाता है अतः व्यापार शेष पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। पुनः, अवमूल्यन (Devaluation) से अदृश्य शेष पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है अतः व्यापार शेष और अदृश्य शेष के साथ वस्तु एवं सेवा शेष पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है और क्योंकि इन तीनों का योग चालू शेष होता है अतः निर्यात बढ़ने से चालू शेष पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

अवमूल्यन (Devaluation) के माध्यम से, क्योंकि डॉलर का रुपया मूल्य बढ़ जाता है इसलिए भारत में ECB (External Commercial Borrowing) की क्रय शक्ति भी बढ़ जाती है। पुनः क्योंकि अवमूल्यन (Devaluation) की वजह से रु. मूल्य बढ़ जाता है, अतः NRI's द्वारा जमा किये गये धन पर उन्हें ब्याज भी अधिक मिलने लगता है। यदि अवमूल्यन (Devaluation) के माध्यम से रु. का मूल्य देश में बढ़ेगा तो FPIs (Foreign Portfolio Investors) 5000 Crore रु. में जितना शेयर खरीद पा रहे थे, 5200 crore में निश्चित रूप से उससे अधिक शेयर खरीद पायेंगे। इस प्रकार पुनः घाटे में कमी होगी और अधिशेष में भी वृद्धि होगी और FXR (विदेशी विनिमय कोष) में डालने हेतु ज्यादा पैसे बचेंगे और इस प्रकार FXR में वृद्धि से आयेगी और विदेशी विनिमय बढ़ेगा।

लेकिन उपरोक्त कथन केवल निर्यात (Export) के सापेक्ष में कहे गये हैं। अवमूल्यन (Devaluation) के कारण आयात के लिए रुपया लागत में वृद्धि हो जाती है और आयातकों का मुनाफा कम हो जाता है। मुनाफा कम होने से उनका मनोबल गिरता है और जिससे कई आयातक व्यापारी, आयात पेशा छोड़कर निर्यात पेशे की तरफ झुकने लगते हैं जिसे **Import Switching Effect** भी कहा जाता है।

समझना कठिन नहीं है कि आयात की मात्रा में गिरावट आने से व्यापार घाटे में कमी आती है, दृश्य घाटे में कमी आती है, चालू घाटा भी कम हो जाता है और FXR (विदेशी विनिमय कोष) में वृद्धि होती है। और इस प्रकार भुगतान संतुलन खाते के दबाव में कमी आती है जो राहत पहुँचाती है।

अवमूल्यन से नुकसान

1. लेकिन यह केवल एक तरफ का परिवेश है क्योंकि अवमूल्यन (Devaluation) से कई नुकसान होते हैं। एक देश का आयात दूसरे देश के लिए निर्यात होता है, और दूसरे देश का निर्यात पहले देश के लिए आयात होता है। और इस प्रकार अवमूल्यन (Devaluation) से व्यापारिक साझेदार देश के भुगतान संतुलन खाते पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। क्योंकि उसके आयात में वृद्धि के साथ निर्यात में कमी हो जाती है।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

अवमूल्यन (Devaluation) नीति को *'Beggar Thy Neighbour Policy'* भी कहा जाता है क्योंकि इससे साझेदार देश कमजोर होते हैं। अवमूल्यन के कारण वैदेशिक संबंधों में तनाव आ सकता है और Foreign Relation Policy के लिए यह **'Irritation'** पैदा कर सकते हैं।

साधारणतः ऐसा देखा जाता है कि एक देश के अवमूल्यन (Devaluation) के दुष्प्रभाव से बचने के लिए अन्य देश भी अपनी मुद्रा का अवमूल्यन (Devaluation) करने लगते हैं और ऐसी स्थिति को वैश्विक अर्थव्यवस्था (Global Economy) में **प्रतिस्पर्द्धी अवमूल्यन (Competitive Devaluation)** कहते हैं। इस प्रकार एक देश से शुरू होकर यह पूरे विश्व को अपनी लपेट में ले लेता है, और यदि विभिन्न देश प्रतिस्पर्द्धी अवमूल्यन (Competitive Devaluation) पर आमादा हो जाए तो इस प्रक्रिया को **मुद्रा युद्ध (Currency War)** कहते हैं।

ऐसा माहौल 2010 में बन गया था और मुद्रा अवमूल्यन (Currency Devaluation) की शुरूआत के लिये चीन को जिम्मेदार ठहराया जा रहा था। इसी के मद्देनजर नवंबर 2010 में G-20 के स्पेशल बैठक में मुद्रा युद्ध महत्वपूर्ण मुद्दा बना रहा और सभी राष्ट्राध्यक्षों ने बैठक में संकल्प लिया कि इसे रोकने के पर्याप्त उपाय किये जायेंगे।

विश्व भर में यह चर्चा गर्म बनी रही कि चीन छिपकर अपनी मुद्रा का अवमूल्यन (Devaluation) करता जा रहा है। इस पर RBI के गवर्नर डी. सुब्बाराव ने कहा कि चीन के ऐसा करने पर भारत की अर्थव्यवस्था पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ऐसा माना जाता है कि डॉलर का सबसे बड़ा भण्डार चीन के पास है। विभिन्न देशों के बीच मुद्रा संबंधी कूटनीतिक संधियाँ होती रहती हैं। और इस प्रकार कूटनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए मुद्रा के उपयोग को मुद्रा कूटनीति कहते हैं, और दुनिया में यह बहुत प्रचलित है।

लेकिन यह भी सत्य है कि डॉलर धीरे-धीरे वैश्विक स्तर पर कमजोर हो रहा है और देखना यह है कि भारत, ब्राजील, चीन, रूस, ईरान आदि क्या कोई संधि कर सकते हैं? क्या भारत किसी एशियाई मुद्रा को बढ़ावा दे सकता है? क्या यूरोपियन यूनियन से मुक्त व्यापार समझौता होने के बाद यूरो का प्रचलन डॉलर से अधिक हो जायेगा और डॉलर के प्रति लोगों की श्रद्धा कम हो जायेगी? क्या डॉलर का Fiduciary value कम हो जायेगा और उसके अंतर्राष्ट्रीय क्रय-शक्ति में गिरावट आयेगी? ऐसे कई प्रश्नों के उत्तर भविष्य में मिलने की संभावना है।

विनिमय दर में समायोजन संबंधी दायित्व IMF (International Monetary Fund) के तत्वावधान में सामूहिक निर्णय लेकर किया जाता है। अब 1991 में 1st और 3rd July को भारत ने तीसरी और चौथी बार अवमूल्यन (Devaluation) किया तो भारत ने IMF (International Monetary Fund) से ही सहायता ली।

2. अवमूल्यन (Devaluation) के कारण दूसरा नुकसान यह है कि निर्यात में वृद्धि होने से वस्तुओं की घरेलू आपूर्ति घट जाती है, क्योंकि अवमूल्यन से आयात भी घट जाता है अतः इस कारण भी घरेलू आपूर्ति में पुनः कमी आती है, लेकिन क्योंकि माँग यथावत बनी रहती है इसलिए मँहगाई दर में वृद्धि हो जाती है।

3. तीसरा नुकसान इस संदर्भ में देखा जा सकता है कि भारत को कई वस्तुओं के निर्यात करने से पहले आयात करना पड़ता है। जैसे– आभूषण के निर्यात से पहले कच्चे माल का आयात करना पड़ता है, और क्योंकि अवमूल्यन (Devaluation) के कारण वस्तुओं के आयात में पहले से अधिक मुद्रा की आवश्यकता होती है इसलिए आयात आधारित निर्यात पर कुछ प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

4. जिन चीजों का आयात लचीला होता है, जैसे– स्वर्ण के लिए कच्चा माल आदि उन पर उतना प्रभाव नहीं पड़ता लेकिन, कुछ कच्चे सामानों का आयात लोचदार नहीं होता क्योंकि उनके आयात में कमी नहीं हो सकती। जैसे– Crude oil (कच्चा तेल) जिसका आयात लचीला नहीं है इसलिए इस संदर्भ में लागतजन्य मँहगाई (Cost Push Inflation) की आशंका उत्पन्न हो जाती है और पेट्रोलियम पदार्थों के दाम बढ़ सकते हैं।

5. अवमूल्यन करने से रुपये की प्रतिष्ठा (Fiduciary Value) में गिरावट आती है, अतः उपरोक्त विवेचन से यह समझना कठिन नहीं है कि अवमूल्यन (Devaluation) एक संकटमोचक विकल्प जरूर हो सकता है लेकिन विदेश व्यापार को प्रोत्साहित करने के लिये यह एक नियमित विकल्प कभी नहीं हो सकता।

यह सही है कि चीन के पास अभी डॉलर का विशाल भंडार पड़ा है लेकिन आने वाले वर्षों में यदि अमेरिका ने 1500 अरब डॉलर Bail Out Package पर खर्च कर दिया या नये वैश्विक समीकरणों के कारण डॉलर की क्रय-शक्ति काफी गिर जाती है तो चीन का FXR मिट्टी का ढेर बन कर रह जायेगा। और ऐसा संभव है कि चीन अपने इस डॉलर भंडार का प्रयोग EURO Zone को Crisis (संकट) से बचाने या इसे अन्य देशों में किसी प्रकार खपाने की कोशिश करे। ऐसी स्थिति में वैश्विक स्तर पर मुद्रा अराजकता आ सकती है और यह भी संभव है कि अमेरिका अपने डॉलर का व्यापक रूप से खुलकर दुरुपयोग करे। क्या यह विचार पैदा होना स्वाभाविक है कि भारत को अपने डॉलर भंडार का कुछ अंश IMF से स्वर्ण के रूप में परिवर्तित कर रख लेना चाहिए?

Copyright © Drishti The Vision Foundation

इस मुद्रा अराजकता को संभावित ही सही, दूसरी मंदी के खतरों के कारण के रूप में देखा जा रहा है। और इसलिए Fragile Recovery कहा जा रहा है। Euro Zone की समस्याओं और वैश्विक स्तर पर अमेरिका की अस्थिरता जैसे कई कारण हैं जो 2008 से भी अधिक गहरी मंदी की संभावनाओं को बल प्रदान करते हैं।

10.3 परिवर्तनीयता *(Convertibility)*

Foreign Exchange Regulation Act, 1973 :- 75-91 के तहत FERA (1973) के अंतर्गत बाजार में क्रय और विक्रय पर पूर्ण प्रतिबंध था और RBI का एकाधिकार था। यद्यपि स्पष्ट रूप से FERA (Foreign Exchange Regulation Act) अपनी प्रस्तावना में विदेशी पूंजी के नियमन का उल्लेख नहीं करता, लेकिन यह इस अधिनियम का एक मुख्य उद्देश्य रहा है। इस अधिनियम के द्वारा बहुराष्ट्रीय निगमों के संगठन एवं उनकी क्रियाविधि पर नियंत्रण लगाया गया। FERA की धारा 29 के अनुसार सभी गैर-बैंकिंग विदेशी शाखा कंपनियों एवं ऐसी रुपया कंपनियों के लिए जिसमें विदेशी जोखिम पूंजी 40 प्रतिशत से ज्यादा है, को व्यवसाय करने के लिए रिजर्व बैंक से अनुमति लेना अनिवार्य था। यदि इस प्रकार की कोई कंपनी किसी दूसरी कंपनी को आंशिक या पूर्ण रूप से खरीदना चाहती है अथवा उसके शेयर खरीदना चाहती है तो इसके लिए भी रिजर्व बैंक की अनुमति अनिवार्य थी।

इससे तात्पर्य यह है कि सभी विदेशी कंपनियों को भारत में स्थित शाखाओं को भारत में ही रजिस्टर करवाना आवश्यक था तथा उसमें विदेशी जोखिम पूंजी का अंश (शेयर) 40 प्रतिशत से कम रखने की शर्त थी।

FERA के अंतर्गत भारतीय बाजार की 1975-1991 तक की स्थिति निम्नलिखित थी:-

	RBI	बाजार
निर्यात-X	100%	100%
आयात-M	100%	100%

उस समय-अंतराल में कोई भी वैध विदेशी मुद्रा बाजार भारत में नहीं था, हवाला का बोलबाला था जिसका कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है। माना जाता है कि उस समय तीन प्रकार के लोगों-कारोबारी, भ्रष्ट, प्रशासकों और भ्रष्ट नेताओं का एक स्वर्णिम त्रिभुज कार्य करता था और इस अवैध गठजोड़ के माध्यम से विस्फोटक एवं मादक पदार्थों और सोने का अवैध व्यापार होता था।

21 June, 1991 को पी.वी. नरसिंह राव ने प्रधानमंत्री की शपथ ली और RBI के गवर्नर के रूप में डॉक्टर सी. रंगराजन की नियुक्ति की और चालू खाते की परिवर्तनीयता की सिफारिश के लिए चक्रवर्ती रंगराजन समिति का गठन किया। इसी समिति की सिफारिशों के आधार पर 1992 में परिवर्तनीयता लायी गई।

परिवर्तनीयता (Convertibility)

बाजार परिवेश में आपस में मुक्त सौदेबाजी के आधार पर निर्धारित विनिमय दर के अनुसार रुपया एवं विदेशी मुद्रा के विनिमय की स्वतंत्रता को 'परिवर्तनीयता' (Convertibility) कहते हैं।

इसे व्यवहार में लाने के लिए एक विदेशी मुद्रा बाजार की आवश्यकता हुई और 1992 से FERA कानून में क्रमिक रूप में संशोधन किया जाने लगा। वस्तुओं के निर्यातकों को यह अधिकार दिया गया कि अर्जित विदेशी मुद्रा का 60 प्रतिशत अंश जिसे मर्जी उसे अर्थात् बाजार में सौदेबाजी द्वारा जो भी तय हो उस पर बेच सकते हैं। इसी प्रकार वस्तुओं के आयातकों को अनुमति दी गई कि जरूरत का 40 प्रतिशत RBI से और 60% बाजार के माध्यम से सौदेबाजी के आधार पर खरीदें। इस प्रकार वैध Foreign currency market का धीरे-धीरे क्षेत्र विस्तार होने लगा।

	RBI	बाजार
निर्यात-X	40%	60%
आयात-M	40%	60%

1992 में आयी नरसिंहम् समिति की सिफारिशों के अनुसार बैंकों को विदेशी मुद्रा बाजार में प्रवेश की अनुमति दी गई और 1992 में एक वैध विदेशी मुद्रा बाजार का उदय हुआ और परिणामस्वरूप हवाला कारोबारियों के व्यापार में कमी आयी और इस प्रकार सरकार द्वारा अवैध विदेशी बाजार के ऊपर वैध विदेशी मुद्रा बाजार की प्रतिस्पर्द्धा खड़ी की गई और एक कदम आगे बढ़ते हुए रुपया को व्यापार खाते के संदर्भ में 1993 में पूर्णतः परिवर्तनीय कर दिया गया।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

	RBI	बाजार
निर्यात-X	0%	100%
आयात-M	0%	100%

इस प्रकार 1993 की परिवर्तनीयता के बाद Black Economy पर और अधिक दबाव पड़ा और व्यापार खाते के सापेक्ष 1992 में जो रुपया अंशतः अर्थात् 60 प्रतिशत परिवर्तनीय था, उसे 1993 में पूर्णतः परिवर्तनीय कर दिया गया।

परिवर्तनीयता के बाद स्थिति यह है कि व्यापारी बाजार से सौदेबाजी के माध्यम से डॉलर खरीद सकता है और समय रहते हुए स्वर्ण खरीदकर अपनी आवश्यकताएँ पूरी कर सकते हैं।

	निर्यात (X)	आयात (M)
1990-91	18½ अरब $	182 अरब $
2009-10	18 अरब $	301 अरब $

इस प्रकार परिवर्तनीयता आने से आयात और निर्यात की क्रियाओं में लालफीताशाही की कमी हुई और इस प्रकार इन दोनों की मात्रा में वृद्धि हुई, जो ऊपर की सारणी से स्पष्ट है। राजकोषीय सुधारों के साथ-साथ क्षमता विस्तार भी हुआ और GDP के growth Rate में भी वृद्धि हुई।

1991 से ही सरकार ने **'Look East Policy'** की नीति अपनायी और नीतिगत प्रयासों द्वारा व्यापार को पूरब की ओर मोड़ना शुरू किया और इसी नीति के तहत **(Association of South East Asian Nation – ASEAN)** से भी वार्ता शुरू हुई और वार्ता को संस्थागत धरातल (Institutional Base), (Asean Regional forum – ASF) के गठन का निर्णय लिया गया और 1993 से वार्ता शुरू हो गयी। 1991 में जैसा कि हम पढ़ चुके हैं कि न केवल आर्थिक क्षेत्र में परिवर्तन आया बल्कि, विधायिका, न्यायपालिका आदि में भी संरचनात्मक सुधारों की प्रक्रिया शुरू हुई। भारत 1991 के बाद से आदर्शात्मक विदेश नीति (Idealistic Foreign Policy) के स्थान पर व्यवहारपरक विदेश नीति (Pragmatic Foreign Policy) पर बल देता है, 1991 से ही न्यायिक सक्रियता का सिद्धांत अपनाया गया और 1991 से ही समिति आधारित विधायन अपनाया गया। 1993 में AYUSH को 1972 के बाद पुनः मान्यता दी गई।

वस्तु व्यापार में परिवर्तनीयता के बाद अब सेवा क्षेत्र की बारी थी। 1994 में अदृश्य खाते को भी पूर्णतः परिवर्तनीय कर दिया गया यानी कि सेवा क्षेत्र में मुद्रा की परिवर्तनीयता RBI के अधिकार क्षेत्र से बाहर निकलकर बाजार आधारित हो गई और इस प्रकार 1994 में FERA कानून में तीसरा संशोधन किया गया।

	RBI	बाजार
X सेवा	0%	100%
M सेवा	0%	100%

इस प्रकार सेवा क्षेत्र के आयात और निर्यात को अनुमति दी गई कि वे मुद्रा का विनियमन बाजार परिवेश में करें। 1994 से ITES (Information Technology & Engineering Services) पर्यटन, शिक्षा, स्वास्थ्य सभी के निर्यात में वृद्धि हुई। परिवर्तनीयता लाने से चालू खाते पर अनुकूल प्रभाव पड़ा। निर्यात बढ़ाने के उद्देश्य से उत्पादन की मात्रा में वृद्धि की गई, निवेश बढ़ा, कामगारों की भागीदारी बढ़ी और रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई। और इस प्रकार परिवर्तनीयता का अर्थव्यवस्था के पाँचों क्षेत्रों/डब्बों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

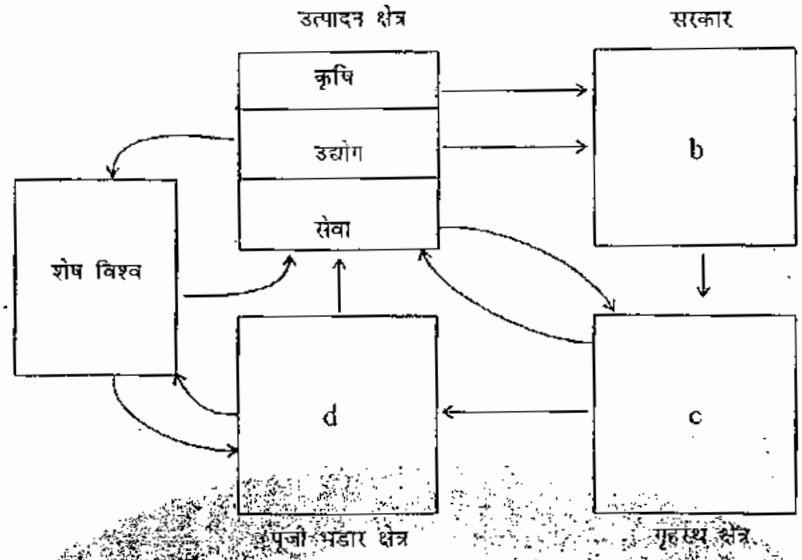

1991 के बाद से ही विश्व में हमारी प्रतिष्ठा बढ़ी और यह सब हमारे गंभीर नीतिगत सुधारों का परिणाम था। पूंजी खाते में पूर्ण परिवर्तनीयता पर सिफारिश देने के लिये 1996 में RBI के डेप्युटी गवर्नर S.S. Tarapore की अध्यक्षता में एक विशेषज्ञ समिति का गठन किया गया, जिसने अपनी सिफारिशें 1997 में दी और इसी आधार पर वर्ष 1999 में FEMA (Foreign Exchange Management Act) को पारित किया गया, जिसे 2000 में लागू किया गया।

10.4 विदेशी मुद्रा नियमन कानून (FERA) की समाप्ति

FERA (Foreign Exchange Management Act) – 1973, जिसे अत्यधिक कठोर कहा जाता है, अब इतिहास की बात हो गई है। इस अधिनियम का अस्तित्व 31 मई, 2002 से पूर्णतः समाप्त हो गया एवं इसके तहत किसी के विरुद्ध अब मुकदमा प्रारम्भ नहीं किया जायेगा।

ध्यातव्य है कि 1 जून, 2000 से 'FERA' के स्थान पर एक नया कानून 'FEMA' अस्तित्व में आ चुका है, लेकिन 'FERA' के तहत लम्बित मामलों की जाँच एवं मुकदमे की कार्यवाही आरंभ करने के लिए 'सनसेट क्लॉज' (Sunset Clause) के तहत निदेशालय को 2 वर्ष का समय प्रवर्तन प्रदान किया गया था। 31 मई, 2002 तक इस प्रावधान के चलते जिन मामलों में मुकदमे की कार्यवाही शुरू नहीं हो सकी थी, उन्हें समाप्त माना जाएगा।

10.5 विदेशी मुद्रा प्रबंधन अधिनियम (Foreign Exchange Management Act – FEMA)

केन्द्र सरकार ने विदेशी मुद्रा बाजार में लेन-देनों को उदार बनाने तथा देश में विदेशी मुद्रा बाजार के समुचित तथा सुव्यवस्थित विकास को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से 'FERA' (Foreign Exchange Regulation Act) के स्थान पर 1 June, 2000 से FEMA (Foreign Exchange Management Act) विधेयक लागू कर दिया गया है। 'FEMA', 'FERA' की अपेक्षा अति उदार अधिनियम है। 1973 में कठोर प्रावधानों वाले 'FERA' को ऐसे समय में लागू किया गया था, जब देश में विदेशी मुद्रा की बहुत कमी थी।

'FEMA' में सबसे बड़ा उदारीकरण यह किया गया है कि अधिनियम के उल्लंघनकर्ताओं को केवल अब मौद्रिक दंड ही भुगतना होगा, जो सम्बद्ध राशि का अधिकतम तीन गुणा तक होगा। जबकि 'FERA' के तहत यह दण्ड पाँच गुना तक था और साथ ही साथ कारावास के दण्ड का भी प्रावधान था। 'FEMA' के तहत् यदि दंडित उल्लंघनकर्ता अर्थ-दण्ड चुकाने में असफल हो, तो इस स्थिति में उन्हें जेल भेजने की कार्यवाही की जा सकेगी। इस स्थिति में भी जेल में उनकी स्थिति एक 'सिविल अपराधी' की होगी जिसे अपने जेल प्रवास का खर्च स्वयं उठाना होगा। FEMA के तहत विभिन्न उद्देश्यों के लिए विदेशी मुद्रा आहरण सीमाओं में भी पर्याप्त वृद्धि की गई है। व्यापारिक उद्देश्य या किसी सेमिनार या सम्मेलन में भाग लेने के लिए विदेश जाने वालों को अब 25 हजार डॉलर प्रति फेरे तक की राशि के लिए रिजर्व बैंक की स्वीकृति आवश्यक नहीं होती भले ही विदेश प्रवास की अवधि कितनी भी हो। यात्रा कोटे की बेसिक राशि को 3000 डॉलर से बढ़ाकर 5000 डॉलर कर दिया गया है। 'FEMA' के तहत अब कोई व्यक्ति अपने किसी रिश्तेदार अथवा मित्र को एक वर्ष में 5 हजार डॉलर तक की राशि उपहार में भेज सकता है। (पहले यह 1 हजार डॉलर तक के लिए थी)

Copyright – Drishti The Vision Foundation

इसी प्रकार अब एक हजार डॉलर के स्थान पर पाँच हजार डॉलर तक की राशि रिजर्व बैंक की अनुमति के बिना दान के रूप में प्रेषित की जा सकेगी। अन्य उद्देश्यों के लिए भी विदेशी मुद्रा आहरण में वृद्धि 'FEMA' के अंतर्गत की गई है। 'FEMA' में एक अन्य प्रमुख परिवर्तन जो 'FERA' से हटकर है वह यह है कि जहाँ दोष सिद्ध करने का दायित्व आरोपी का था, वहीं 'FEMA' में यह दायित्व प्रवर्तन एजेंसी का होगा।

उद्योग-व्यापार जगत ने जहाँ 'FEMA' का स्वागत किया है, वहीं आलोचकों का कहना है कि विदेशों में अवैध रूप से विदेशी मुद्रा प्रेषित करने वालों के लिए 'FERA' जैसा अत्यधिक कठोर कानून आवश्यक है।

10.6 'FERA' एवं 'FEMA' में मुख्य अंतर

- FERA –1973 का मुख्य उद्देश्य जहाँ विदेशी मुद्राओं का संरक्षण करना था, वहीं FEMA– 1999 का उद्देश्य विदेशी व्यापार एवं भुगतानों को सुविधाजनक बनाना तथा देश में विदेशी मुद्रा बाजार के सुव्यवस्थित रखरखाव को बढ़ावा देना है।
- भारत में विदेशी निवेश एवं विदेशों में भारतीय निवेश सम्बन्धी नियम 'FERA' की अपेक्षा 'FEMA' में अधिक उदार व पारदर्शी हैं।
- भारत में रहा कोई व्यक्ति भारत के बाहर का निवासी हो जाने पर भी उन शेयरों, प्रतिभूतियों तथा संपत्तियों को धारण कर सकेगा, जो उसने भारत प्रवास के दौरान धारण की थीं।
- आहरण की सीमाएँ FERA की तुलना में FEMA में काफी अधिक निर्धारित की गई हैं।
- 'FERA' के उल्लंघन के मामलों का निपटान सिविल अपराधों के तरीके से किया जाएगा। अर्थात् केवल अर्थदंड ही वहन करना होगा।
- 'FERA' उल्लंघन के मामले में दंड की राशि जहाँ सम्बद्ध राशि के पाँच गुना तक हो सकती थी, वहीं 'FEMA' के तहत यह अधिकतम तीन गुनी ही होगी।
- 'FEMA' के तहत दोष सिद्ध करने का दायित्व अभियुक्त का होता था, जबकि 'FEMA' के तहत यह प्रवर्तन एजेंसी का होगा।

10.7 विदेश व्यापार नीति 2009–14

2009–14 की अवधि के लिए केंद्र द्वारा विदेश व्यापार नीति की घोषणा वाणिज्य मंत्री आनन्द शर्मा ने 27 अगस्त, 2009 को की।

विदेश व्यापार नीति (2009–14) के कुछ मुख्य बिंदु इस प्रकार हैं–

- 2014 तक देश के निर्यात को दुगुना करना
- मार्च 2011 तक निर्यात को 200 अरब डॉलर तक पहुँचाना
- शुल्क हकदारी पासुक योजना दिसम्बर 2010 तक बढ़ाई गई
- निर्यातकों को 2 प्रतिशत स्थान अनुदान की योजना 31 मार्च, 2010 तक बढ़ाई गई।
- 2010–11 में निर्यातोन्मुख और एसटीपीआई इकाइयों को आयकर में छूट जारी रहेगी।
- ईसीजीसी (ECGC) योजना का लाभ 2010 तक जारी रहेगा
- फोकस बाजार स्कीम के तहत 26 नए बाजार को शामिल किया गया तथा प्रोत्साहन भी बढ़ाया गया।
- निर्यात उत्कृष्टता नगर के रूप में जयपुर, अनंतनाग श्रीनगर, कानपुर, देवास, मलीहाबाद एवं अंबूर को मान्यता दी गई।
- उत्तर–पूर्वी राज्यों के बागवानी उत्पादों को फोकस उत्पाद योजना का लाभ मिला।
- भारत को हीरे का अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र बनाने के लक्ष्य से हीरा एक्सचेंज स्थापित करने की योजना रखी गई।
- समुद्री उत्पाद, रत्न-आभूषण क्षेत्र के निर्यातकों के लिए विशेष प्रोत्साहन दिया गया।
- मंदी से प्रभावित चमड़ा निर्यातकों को कच्चे चमड़े के रूप में पुन: निर्यात की सुविधा दी गई।
- चाय निर्यातकों को मूल्यवर्द्धन की शर्तों में ढीलापन लाया गया।
- जल्दी खराब होने वाली कृषि उपायों हेतु एकल खिड़की व्यवस्था को मंजूरी प्रदान की गई।
- समुद्र उत्पाद औषधि तथा हथकरघा क्षेत्र के लिए भी रियायतें।
- निर्यातोन्मुख इकाइयों को अपने उत्पादों का 90 प्रतिशत हिस्सा घरेलू बाजार में बेचने की अनुमति दी गई।
- निर्यातकों की डॉलर ऋण की जरूरतों के संबंध में उच्चस्तरीय समिति का गठन किया गया।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

2000 में 'FEMA' के लागू होने के बाद पूंजी खाते को अंशतः परिवर्तनीय बनाया गया। पहले जो कंपनियाँ विदेशों से ECB (External Commercial Borrowing) लेकर आती थी, उन्हें पहले आदेश होता था कि वे पहले अपने सारे धन को RBI को सौंपे। परिवर्तनीयता के बाद पहले वर्ष उन्हें 20 प्रतिशत की पूंजी बाजार में बेचने की अनुमति दी गई और बाकी RBI को बेचना अनिवार्य था। दूसरे वर्ष यही पूंजी 20 प्रतिशत से 30 प्रतिशत कर दी गई।

10.8 रुपए की पूर्ण परिवर्तनीयता हेतु तारापोर समिति की रिपोर्ट

पूंजी खाते में रुपए की पूर्ण परिवर्तनीयता से संबद्ध विभिन्न पहलुओं पर विचार हेतु RBI के पूर्व डिप्टी गवर्नर एस. एस. तारापोर की अध्यक्षता में एक समिति का गठन 20 मार्च, 2006 को किया था, जिसकी रिपोर्ट 31 जुलाई 2006 को समिति द्वारा प्रस्तुत की गई थी तथा जिसे रिजर्व बैंक ने 1 सितम्बर 2006 को सार्वजनिक किया था-

समिति के प्रमुख सुझाव थे-

1. रुपए की पूर्ण परिवर्तनीयता को 2010-11 तक तीन चरणों में लागू करना-
   - पहला चरण 2006-07 से
   - दूसरा चरण 2007-08 से 2008-09
   - तीसरा चरण 2009-10 से 2010-11
2. उपर्युक्त तीनों चरणों में बाह्य वाणिज्यिक उधारियों (ECBs) की सीमा बढ़ाने तथा विदेशों में भारतीय कंपनियों के लिए सीमा बढ़ाने की संस्तुति।
3. उपर्युक्त तीनों चरणों के अंत तक व्यक्तियों द्वारा विदेशी खातों में प्रेषित की जा सकने वाली राशि की उच्चतम सीमा 25 हजार डॉलर के मौजूदा स्तर से बढ़ाकर 3 लाख डॉलर करने की संस्तुति।
4. चालू खाता घाटे का GDP के 3% से कम करना।
5. गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (NBFCs) को बैंकों के रूप में रूपांतरित करने का सुझाव।
6. म्यूचुअल फण्डों में विदेश में निवेश की उच्चतम सीमा को 2 अरब डॉलर के मौजूदा स्तर को तीसरे चरण के अंत तक बढ़ाकर 5 अरब डॉलर करने का सुझाव (यह सुविधा म्यूचुअल फण्डों के साथ-साथ सेबी (SEBI) के पास पंजीकृत पोर्टफोलियो मैनेजमेण्ट इकाइयों को भी उपलब्ध कराने का सुझाव।)
7. सभी अप्रवासी भारतीयों (NRIs) को सेबी में पंजीकृत म्यूचुअल फण्डों एवं पोर्टफोलियो मैनेजमेण्ट इकाइयों के जरिए भारतीय स्टॉक मार्केट में निवेश हेतु अनुमति देने की संस्तुति।
8. मौद्रिक नीति निर्धारण में केन्द्र सरकार एवं RBI की संयुक्त भागीदारी की वकालत करते हुए नीति के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए रणनीति निर्धारण में RBI को स्वायत्तता देने का सुझाव।
9. बैंकों के लिए विदेशों से उधार प्राप्ति की सीमा बैंकों की Tier-I पूँजी से संबद्ध किए जाने के बजाय बैंकों की चुकता पूँजी एवं स्वतंत्र कोषों से संबद्ध किए जाने का प्रस्ताव और साथ ही इस सीमा में तीसरे चरण तक 100% वृद्धि का सुझाव।
10. भारतीय कंपनियों द्वारा विदेशों में किए जाने वाले निवेश की सीमा को नेटवर्थ के 200% से बढ़ाकर तीसरे चरण के अंत तक 400% करने का सुझाव।
11. सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में सरकार/RBI की हिस्सेदारी की न्यूनतम सीमा को 51% (SBI के लिए 55%) से घटाकर 33% करने का सुझाव।
12. देश के बैंकिंग जगत में विदेशी बैंकों की मौजूदगी को बढ़ाने का सुझाव।

10.9 विदेशों में भारतीय निवेश हेतु रियायतें

भारतीय नागरिकों, कंपनियों व म्यूचुअल फण्डों के लिए विदेशों में निवेश की दशाओं को और अधिक उदार बनाने की घोषणा वित्त मंत्री ने 10 जनवरी, 2003 को नई दिल्ली में प्रवासी भारतीय सम्मेलन में की थी। विदेशों में निवेश के लिए 8 सूत्रीय घोषणा में निम्नलिखित रियायतें शामिल हैं-

1. म्यूचुअल फण्ड अब एक अरब डॉलर तक का निवेश विदेशों में पंजीकृत ऐसी कंपनियों में कर सकेंगे जिनके पास भारत में सूचीबद्ध किसी कंपनी के कम से कम 10% शेयर निवेश वर्ष के पहले दिन (1 जनवरी को) हों। अभी तक म्यूचुअल फण्डों के लिए ऐसे निवेश की अधिकतम अनुमान्य सीमा 50 करोड़ डॉलर थी।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

2. भारतीय निवेशक व्यक्तिगत रूप से भी विदेशों में पंजीकृत ऐसी कंपनियों में निवेश कर सकेंगे, जो उपर्युक्त दशाओं को पूरा करती हों। वैयक्तिक निवेशकों के लिए ऐसे निवेश की कोई उच्चतम सीमा अभी घोषित नहीं की गई है।
3. पंजीकृत भारतीय कंपनियों को भी विदेशों में पंजीकृत ऐसी कंपनियों में निवेश की अनुमति प्रदान की गई है, जो उपर्युक्त दशाओं को पूरा करती हों अर्थात् जिनके पास भारत में सूचीबद्ध किसी कंपनी के कम से कम 10% शेयर निवेश वर्ष के पहले दिन (1 जनवरी को) हों। भारतीय कंपनियाँ अपनी नेटवर्थ का अधिकतम 25% निवेश विदेशी कंपनियों में कर सकेंगी।
4. भारतीय कंपनियों को एडीआर व जीडीआर के जरिए विदेशों में जुटाए गए धन के भविष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विदेशों में ही रखने की छूट प्रदान की गई है। अभी तक इसके लिए 10 हजार डॉलर तक की सीमा निर्धारित थी, जो अब हटा ली गई है।
5. विदेशों में शाखाएँ व कार्यालय खोलने वाली कंपनियों को ऐसे कार्यालयों के लिए व अपने स्टाफ के लिए विदेशों में संपत्ति खरीदने की अनुमति प्रदान की गई है।
6. एम्पलॉयीज स्टॉक ऑप्शन प्रोग्राम (ESOP) के तहत अधिकतम 20 हजार डॉलर के सम्प्रेषण की सीमा हटा ली गई है। इससे विदेशी कंपनियों में कार्यरत भारतीय कर्मचारी ESOP के तहत ऑफर किए गए शेयर अधिक मात्रा में खरीद सकेंगे।
7. निर्यात आय विदेशी मुद्रा (Export Earners Foreign Currency - EEFC) खाता धारकों की व्यापार संबंधी ऋण सीमाओं को समाप्त कर दिया गया है, किंतु ऐसे सभी लेन-देन की सूचना रिजर्व बैंक को देना अनिवार्य होगा।
8. प्रवासी भारतीयों (NRIs) को भारत में अपनी संपत्ति की बिक्री से प्राप्त अधिकतम एक लाख डॉलर तक की राशि विदेशी मुद्रा में भारत से बाहर ले जाने की अनुमति होगी। वित्त मंत्री द्वारा घोषित आठ सूत्रीय रियायतों में केवल यही ऐसी रियायत है जिसका लाभ प्रवासी भारतीयों को होगा।

10.10 फोकस मार्केट योजना

वित्तीय वर्ष 2006-07 के लिए पूरक विदेशी व्यापार नीति, जो अप्रैल 2006 में घोषित की गई थी, में फोकस बाजार योजना की घोषणा केन्द्रीय वाणिज्य मंत्री कमलनाथ ने की थी। देश के निर्यात संवर्द्धन हेतु इन बाजारों (देशों) पर विशेष ध्यान केन्द्रित करने की बात वाणिज्य मंत्री ने कही थी। इस योजना के लिए कुल मिलाकर 57 बाजारों (देशों) की पहचान की गई है। विदेशी व्यापार के महानिदेशालय (Director General of Foreign Trade-DGFT) ने इन्हें 13 जून, 2006 को अधिसूचित कर दिया था। इनमें 8 देश लैटिन अमरीका के तथा शेष 49 देश अफ्रीकी महाद्वीप के हैं। अधिसूचित लैटिन अमरीकी देश अर्जेन्टीना, बोलीविया, चिली इक्वाडोर, पराग्वे, पेरू एवं वेनेजुएला हैं, जबकि अफ्रीका के 49 अधिसूचित देशों में अंगोला, बोत्सवाना, बुरुंडी, कैमरून मॉरिशस व जिम्बाब्वे आदि शामिल हैं। इन देशों को किए गए निर्यात के लिए निर्यात के f.o.b. (Free on board) मूल्य का 2.5% ड्यूटी क्रेडिट निर्यातकों को मिलेगा।

ज्ञातव्य है कि अप्रैल 2006 की विदेशी व्यापार नीति में घोषित फोकस मार्केट स्कीम व फोकस प्रोडक्ट स्कीम ने पूर्व प्रचलित टार्गेट प्लस स्कीम को विस्थापित किया है।

10.11 विदेशों में निवेश के रूट्स

उदारीकृत नीति में निम्नलिखित रूट्स की व्यवस्था है-

1. **ऑटोमेटिक रूट :** इस योजना के अंतर्गत भारतीय कंपनियाँ 10 करोड़ अमरीकी डॉलर (दक्षेस देशों में 15 करोड़ अमरीकी डॉलर) का निवेश कर सकती है। पाकिस्तान में यह निवेश दर लागू नहीं होगी। नेपाल और भूटान में एक साल में 700 करोड़ रुपए तक का निवेश किया जा सकता है। इसके लिए रिजर्व बैंक या भारत सरकार की अनुमति की जरूरत नहीं होगी। शर्त यह है कि यह निवेश भू-संपत्ति उन्मुख न हो। इस प्रकार के निवेश का वित्तपोषण भारतीय कंपनी के मुद्रा-अर्जक विदेशी मुद्रा खाते से किया जा सकता है। इस प्रकार के निवेश की जानकारी बाद में रिजर्व बैंक को दे देनी चाहिए।
2. **विशेष आर्थिक क्षेत्र इकाइयाँ :** ये इकाइयाँ ऑटोमेटिक रूट से 10 करोड़ अमरीकी डॉलर की सीमा के बाहर भी विदेश में कितना भी पूँजी-निवेश कर सकती है। इसमें कंपनी के मुद्रा अर्जक विदेशी मुद्रा खाते से निवेश किया जा सकता है। विशेष आर्थिक क्षेत्र इकाई द्वारा ऐसे निवेश कुल मिलाकर (सभी विशेष आर्थिक इकाइयों द्वारा) 50 करोड़ अमरीकी डॉलर से ज्यादा नहीं होने चाहिए।
3. **ए.डी.आर./जी.डी.आर. ऑटोमेटिक रूट :** इस स्कीम के तहत भारतीय कंपनियाँ ए.डी.आर./जी.डी.आर. से मिली राशि का शत-प्रतिशत उपयोग किसी सीमा के बिना ऑटोमेटिक रूट से विदेशी निवेश कर सकती हैं। शर्त यह है कि बाद में इसकी सूचना रिजर्व बैंक को दे दी जाए।

Copyright – Drishti The Vision Foundation

4. ए.डी.आर./जी.डी.आर. ऑटोमेटिक शेयर/अदला-बदली रूट : इस तरीके के अंतर्गत भारतीय कंपनियाँ अपने ए.डी.आर./जी.डी.आर. के नए निर्गम के बदले उतने ही महत्व वाली गतिविधि में 10 करोड़ अमरीकी डॉलर या पिछले साल की निर्यात कमाई के दस गुने के बराबर की अदला-बदली कर सकती हैं, शर्त यह है कि बाद में रिजर्व बैंक को इसकी सूचना दे दी जाए।

5. भागीदारी फर्मों द्वारा निवेश (Portfolio Investment) : भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 के अधीन कोई भागीदारी फर्म भी, जो विनिर्दिष्ट व्यावसायिक सेवा देती हो, बिना रिजर्व बैंक की पूर्वानुमति (बाद में रिपोर्ट दे दे) किसी एक वित्त वर्ष में वैसी ही गतिविधि में लगी विदेशी कंपनी में 10 लाख अमरीकी डॉलर या इसके बराबर राशि लगा सकती है। यह राशि भारत से ले जाई जा सकती है या शुल्क के रूप में या किसी अन्य हकदारी के रूप में विदेशी फर्मों से मिली राशि हो सकती है। शर्त यह है कि निवेशकर्ता फर्म संबद्ध क्षेत्र के अखिल भारतीय व्यावसायिक संगठन/संस्था की सदस्य हो।

6. सामान्य रूट : जो प्रस्ताव उक्त रूटों के अंतर्गत नहीं आते, उन पर समुद्रपारीय निवेश की समिति विचार करती है। रिजर्व बैंक का डिप्टी गवर्नर इस समिति की अध्यक्षता करता है। रिजर्व बैंक इस समिति का सचिवालय होता है।

◆◆◆

Copyright – Drishti The Vision Foundation

Fact Sheet on Special Economic Zones

(Dedicated website: www.sezindia.nic.in)

Number of Formal approvals	585	
Number of notified SEZs *(As on 5.10.2011)*	381 *(out of 585)* *(7 Central Govt. + 12 State/Pvt. SEZs)*	
No. of valid In-Principle Approvals	39	
Operational SEZs *(As on 30th June, 2011)*	143 *(Break up: 17 are multi product SEZs, remaining are IT/ITES, Engineering, electronic hardware, textiles, Biotechnology, Gem & Jewellery and other sector specific Special Economic Zones)*	
Units approved in SEZs *(As on 30th June, 2011)*	3,240	
Land for SEZs	*Notified SEZs*	*Formally Approved (FA) incl. notified SEZs*
	45,897 Hectare	67,066 Hectare
	Land is a state subject. Land for SEZs is procured as per the policy and procedures of the respective State Governments.	
INVESTMENT *(As on 30th June, 2011)*	Incremental Investment	Total Investment
SEZs Notified under the Act	Rs.1,94,567.16 cr.	Rs.1,94,567.16 cr.
State/Pvt. SEZs set up before 2006	Rs. 6,918.73 cr.	Rs. 7,775.04 cr.
Central Government SEZs	Rs. 8,292.96 cr.	Rs. 10,572.16 cr.
Total	Rs.2,08,878.85 cr.	Rs.2,12,914.36 cr.
EMPLOYMENT *(As on 30th June, 2011)*	Incremental Employment	Total Employment
SEZs Notified under the Act	4,33,876 persons	4,33,876 persons
State/Pvt. SEZs set up before 2006	54,718 persons	67,186 persons
Central Government SEZs	91,114 persons	2,13,350 persons
Total	5,79,708 persons	7,14,412 persons
Exports in 2009-10	Rs. 2,20,711.39 crore(Growth of 121.40% over 2008-09)	
DTA Sale (Counted for +ve NFE)	*Rs. 13937.04 Crore (6.32% of total production)*	
DTA Sale (Not counted for +ve NFE)	*Rs. 19201.78 Crore (8.70% of total production)*	
Exports in 2010-11 *(As on 31st March, 2011)*	Rs. 3,15,867.85 crore (Growth of 43.11% over 2009-10)	
DTA Sale (Counted for +ve NFE)	*Rs. 29093.02 Crore (8.11% of total production)*	
DTA Sale (Not counted for +ve NFE)	*Rs. 13881.20 Crore (3.87% of total production)*	
Exports in 2011-12 *(As on 30th June,2011)*	Rs. 72,255.49 crore (Growth of 23.12% over the exports of the corresponding period of FY 2010-11)	
DTA Sale (Counted for +ve NFE)	*Rs. 6,235.64 Crore (8% of total production)*	
DTA Sale (Not counted for +ve NFE)	*Rs. 4,548.9 Crore (4% of total production)*	

******

G. STATEMENT ON RBI'S REGIONAL OFFICES (WITH STATE COVERED) RECEIVED FDI EQUITY INFLOWS[1] *(from April 2000 to April 2011)*:

Amount Rupees in crores (US$ in million)

S. No.	RBI's - Regional Office[2]	State covered	2009-10 (Apr.-Mar.)	2010-11 (Apr.-March)	2011-12 (for April-2011)	Cumulative Inflows (April '00 – April '11)	%age to total Inflows (in terms of US$)
1	MUMBAI	MAHARASHTRA, DADRA & NAGAR HAVELI, DAMAN & DIU	39,409 (8,249)	27,669 (6,097)	3,381 (762)	204,852 (45,830)	35
2	NEW DELHI	DELHI, PART OF UP AND HARYANA	46,197 (9,695)	12,184 (2,677)	4,495 (1,013)	118,184 (26,101)	20
3	BANGALORE	KARNATAKA	4,852 (1,029)	6,133 (1,332)	576 (130)	37,233 (8,358)	6
4.	CHENNAI	TAMIL NADU, PONDICHERRY	3,653 (774)	6,115 (1,352)	2,177 (491)	33,024 (7,341)	6
5	AHMEDABAD	GUJARAT	3,876 (807)	3,294 (724)	559 (130)	32,252 (7,282)	5
6	HYDERABAD	ANDHRA PRADESH	5,710 (1,203)	5,753 (1,262)	575 (130)	27,137 (6,090)	5
7	KOLKATA	WEST BENGAL, SIKKIM, ANDAMAN & NICOBAR ISLANDS	531 (115)	426 (95)	550 (124)	6,918 (1,611)	1
8	CHANDIGARH	CHANDIGARH, PUNJAB, HARYANA, HIMACHAL PRADESH	1,038 (224)	1,892 (416)	24 (5)	4,709 (1,030)	1
9	PANAJI	GOA	808 (169)	1,376 (302)	0.08 (0.02)	3,326 (725)	1
10	BHOPAL	MADHYA PRADESH, CHATTISGARH	255 (54)	2,093 (451)	1 (0.32)	3,011 (654)	0.5
11	JAIPUR	RAJASTHAN	149 (31)	230 (51)	3 (0.7)	2,453 (521)	0.4
12	KOCHI	KERALA, LAKSHADWEEP	606 (128)	167 (37)	268 (60)	1,926 (428)	0.3
13	BHUBANESHWAR	ORISSA	702 (149)	68 (15)	90 (20)	1,297 (281)	0.2
14	KANPUR	UTTAR PRADESH, UTTRANCHAL	227 (48)	514 (112)	247 (56)	1,059 (233)	0.2
15	GUWAHATI	ASSAM, ARUNACHAL PRADESH, MANIPUR, MEGHALAYA, MIZORAM, NAGALAND, TRIPURA	51 (11)	37 (8)	-	316 (72)	0.1
16	PATNA	BIHAR, JHARKHAND	-	25 (5)	-	27 (6)	0
17	REGION NOT INDICATED[3]		15,056 (3,148)	20,543 (4,491)	901 (203)	116,844 (26,273)	20
Sub. Total			123,120 (25,834)	88,520 (19,427)	13,846 (3,121)	594,569 (132,837)	100
18	RBI'S-NRI SCHEMES *(from 2000 to 2002)*		0	0	0	533 (121)	-
GRAND TOTAL			123,120 (25,834)	88,520 (19,427)	13,846 (3,121)	595,102 (132,958)	-

million dollar

II. FINANCIAL YEAR-WISE FDI INFLOWS DATA:

[1] *Includes 'equity capital components' only.*
[2] *The Region-wise FDI inflows are classified as per RBI's – Regional Office received FDI inflows, furnished by RBI, Mumbai.*
[3] *Represents, FDI inflows through acquisition of existing shares by transfer from residents to non residents. For this, RBI Regional wise information is not provided by Reserve Bank of India.*

Amount Rupees in crores (US$ in million)

Ranks	Country	2009-10 (April-March)	2010-11 (April-March)	2011-12 (for April 2011)	Cumulative Inflows (April '00 - April '11)	%age to total inflows (in terms of US $)
1.	MAURITIUS	49,633 (10,376)	31,855 (6,987)	4,332 (976)	247,092 (55,203)	42 %
2.	SINGAPORE	11,295 (2,379)	7,730 (1,705)	5,214 (1,175)	58,090 (13,070)	10 %
3.	U.S.A.	9,230 (1,943)	5,353 (1,170)	356 (80)	42,898 (9,529)	7 %
4.	U.K.	3,094 (657)	3,434 (755)	19 (4)	29,451 (6,643)	5 %
5.	NETHERLANDS	4,283 (899)	5,501 (1,213)	172 (39)	25,799 (5,739)	4 %
6.	JAPAN	5,670 (1,183)	7,063 (1,562)	1,043 (235)	25,001 (5,511)	4 %
7.	CYPRUS	7,728 (1,627)	4,171 (913)	754 (170)	22,702 (4,982)	4 %
8.	GERMANY	2,980 (626)	908 (200)	231 (52)	13,607 (3,051)	2 %
9	FRANCE	1,437 (303)	3,349 (734)	977 (220)	11,244 (2,484)	2 %
10.	U.A.E.	3,017 (629)	1,569 (341)	91 (21)	8,683 (1,910)	1 %
TOTAL FDI INFLOWS *		123,120 (25,834)	88,520 (19,427)	13,846 (3,121)	594,569 (132,837)	-

Note: (i) *Includes inflows under NRI Schemes of RBI.
(ii) Cumulative country-wise FDI equity inflows (from April 2000 to April 2011) – Annex-'A'.
(iii) %age worked out in US$ terms & FDI inflows received through FIPB/SIA+ RBI's Automatic Route+ acquisition of existing shares only.

F. SECTORS ATTRACTING HIGHEST FDI EQUITY INFLOWS:

Amount inRs. crores (US$ in million)

Ranks	Sector	2009-10 (April-March)	2010-11 (April-March)	2011-12 (for April 2011)	Cumulative Inflows (April '00 - April '11)	% age to total inflows (in terms of US$)
1.	SERVICES SECTOR (financial & non-financial)	20,776 (4,353)	15,539 (3,403)	2,922 (658)	123,708 (27,668)	21 %
2.	COMPUTER SOFTWARE & HARDWARE	4,351 (919)	3,571 (784)	425 (96)	48,135 (10,821)	8 %
3.	TELECOMMUNICATIONS (radio paging, cellular mobile, basic telephone services)	12,338 (2,554)	7,546 (1,665)	205 (46)	48,313 (10,611)	8 %
4.	HOUSING & REAL ESTATE	13,586 (2,844)	5,149 (1,127)	167 (38)	43,288 (9,655)	7 %
5.	CONSTRUCTION ACTIVITIES (including roads & highways)	13,516 (2,862)	5,077 (1,125)	1,381 (311)	42,160 (9,491)	7 %
6.	AUTOMOBILE INDUSTRY	5,754 (1,208)	6,008 (1,331)	1,182 (266)	28,037 (6,199)	5 %
7.	POWER	6,908 (1,437)	5,709 (1,252)	1,136 (256)	27,848 (6,156)	5 %
8.	METALLURGICAL INDUSTRIES	1,935 (407)	5,055 (1,105)	229 (52)	18,724 (4,286)	3 %
9.	PETROLEUM & NATURAL GAS	1,328 (272)	2,621 (574)	28 (6)	13,763 (3,159)	2 %
10.	CHEMICALS (other than fertilizers)	1,707 (362)	1,610 (398)	152 (34)	13,234 (2,927)	2 %

Note: Cumulative Sector- wise FDI equity inflows (from April 2000 to April 2011) - Annex-'B'.

SEZs - Sectorwise Distribution

Sectors	Formal approvals	In-principle approvals	Notified SEZs
Agro	6	2	5
Airport based multi-product	4	0	0
Auto and related	3	1	1
Aviation/Aerospace /Copper	2	1	1
Beach & mineral/metals	2	0	2
Bio-tech	31	0	20
Building product/material	1	2	1
Electronic prod/ind	3	0	3
Engineering	21	1	17
Food Processing	5	0	4
Footwear/Leather	7	0	5
FTWZ	13	4	6
Gems and Jewellery	12	3	6
Granite processing Industries	1	0	1
Handicrafts	5	0	3
IT/ITES/Electronic Hardware/Semiconductor	356	1	235
Metal/Stain. Steel/Alum/Foundary	8	2	4
Metallurgical Engineering	1	0	0
Multi-Product	24	16	15
Multi-Services/Services	16	3	9
Non-Conventional Energy	6	0	4
Petrochemicals & petro.	4	1	2
Pharma/chemicals	23	3	20
Plastic Processing	0	2	0
Port-based multi-product	8	0	2
Power/alternate energy/solar	3	1	3
Strategic Manufacturing	0	1	0
Textiles/Apparel/Wool	18	1	12
Writing and printing paper mills	2	0	1
GRAND TOTAL	585	45	382

Formal

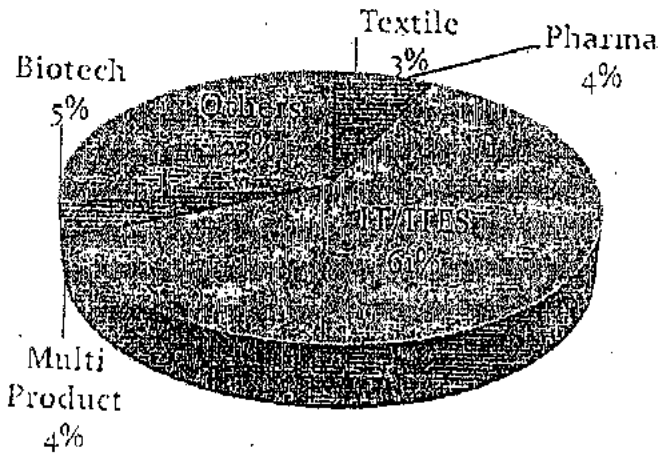
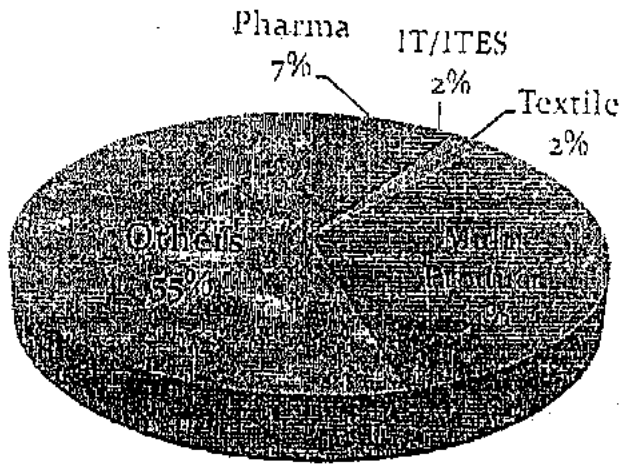
In-principle